भूमिका ।

विदितहो कि धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष ये चार पदार्थ इस असार संसार में सारभूत हैं इसीलिये सब मनुष्य अपनी अपनी रुचिके अनुसार इनकी प्राप्तिके लिये यत्न करते हैं। इन चारोंमें भी धर्म प्रधान है धर्म के सेवन से ये सब प्राप्तहोते हैं। श्रीवेदव्यासजीने भी कहा है कि (ऊर्ध्वबाहुर्विरौम्येष नच कश्चिच्छृणोति मे । धर्मादर्थश्च कामश्च स किमर्थं न सेव्यते) धर्म की प्राप्ति अपने अपने वर्ण और आश्रम के लिये कथित वैदिक कर्म के अनुष्ठानसे सदा होतीरही। इसीसे पूर्वकाल में सब त्रैवर्णिक अर्थात् ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य वेद पढ़ने में अतिपरिश्रम करते थे और वेदपढ़ तदुक्त कर्म का अनुष्ठान कर अपना अभीष्ट फल पाते थे। परंतु कलियुग के मनुष्य ऐसे अल्पायुष् और मन्दबुद्धि होंगे कि जो जन्मभर में अतिपरिश्रम करने से भी संपूर्ण वेद न पढ़सकेंगे। यह विचार कलियुग के मनुष्योंपर दयाकर परमकारुणिक श्रीकृष्णद्वैपायन मुनि ने वेदके चार विभाग करदिये इसीसे उनका नाम वेदव्यास हुआ और वेदकाही आशय लेकर अठारहपुराण और महाभारत नाम इतिहास द्वापर युग के अन्त में रचे कि जिनके पठनआदिसे थोड़े परिश्रम करके भी कलियुगके मन्दबुद्धि आर्यजनों को धर्मका ज्ञान भलीभांति होजाता था और धर्माचरण करनेसे उत्तम उत्तम फल पातेथे। परंतु पुराणआदि का तात्पर्य समझने के लिये संस्कृत का बोध होना चाहिये। वर्तमान समय में आर्य लोकों से प्रायः संस्कृत विद्याका अभ्यास छूटगया है। इसीसे पुराण आदिका परिशीलन नहीं करसक्ते और वर्णाश्रम धर्म को नहीं जानते। जब धर्म का ज्ञानही न हुआ तो धर्माचरण क्योंकर होसक्ता है और धर्माचरण के विना आयुष्, बुद्धि, बल, ऐश्वर्य, तेज, विद्या, धन, पौरुष, संतान, कीर्ति आदि से हीन होगये और प्रतिदिन होते जाते हैं। यह दुर्दशा अपने बन्धु आर्यजनों की देख और सब पुरुषार्थ प्राप्तिका मूल ज्ञानपूर्वक धर्माचरण और धर्मज्ञानका मूल पुराण इतिहास आदिका परिशीलन जान और आर्यजनों को प्रायः संस्कृत भाषा के अनभिज्ञ देख विज्ञातिविज्ञ भारतवर्ष के परमहितैषी आर्यजनों की वृद्धि होने के लिये बद्धकक्ष अतिदक्ष दूसर वंशावतंस अवधसमाचारपत्रसम्पादक श्रीमुंशी नवलकिशोर साहब ने यह इच्छा की कि सब पुराण यदि आर्यभाषामें अनुवाद किये जावें तो सब आर्यजन उनका अभिप्राय सुगमता से जानसकें और यथार्थ धर्मका स्वरूप पहिचान दुराचरणों से निवृत्तहो सत्कर्म में प्रवृत्तहोवें और ईश्वरके अनुग्रहसे सब प्रकारके क्लेशोंसे छुट अपरिमित आनन्द पावें यह मनमें निश्चयकर मुंशी साहबने इस कार्य में सत्कारपूर्वक हम को नियुक्त किया। हमने भी उनकी इच्छानुसार अठारह पुराणों में ग्यारहवें पुराण और ग्यारह सहस्र श्लोक प्रमाण श्रीलिङ्गपुराण का आर्यभाषा में अनुवाद किया। इस पुराण में अनेक उत्तम उत्तम विषय भरे हैं। जिनके पठनसे धर्मका स्वरूप और श्रीसदाशिव का प्रभाव ज्ञात होता है। अब हम आशा रखते हैं कि सरल हृदय और क्षमाशील सज्जन इस पुराण के पाठक आर्यजन अशुद्धता आदि दोषों पर दृष्टि न देकर केवल गुण ग्रहणही करेंगे और ईश्वरके अनुग्रह से कल्याण के भागी होंगे शुभम् ॥

जयपुर
मई सन् १८८१ ई० } श्रीपण्डित दुर्गाप्रसाद

श्रीलिङ्गपुराणभाषा का सूचीपत्र।

अ०	विषय	पृष्ठ
	पूर्वार्द्ध।	
१	नारदजी का नैमिषारण्य में आना, सूतजीकाभी वहां आना, सूतजी के प्रति मुनियों का प्रश्न, सूतजी के लिङ्गपुराण कहने का उपक्रम ...	१
२	लिङ्गपुराण की अनुक्रमणिका	२
३	पञ्चतन्मात्रा और पञ्चभूतों की उत्पत्ति, परमेश्वर का वर्णन	७
४	युग आदिकी संख्या, कल्पों के नाम, ब्रह्माजी की सृष्टि रचने की इच्छा	१०
५	नव प्रकार के सर्गों का वर्णन, ब्रह्माजी के पुत्रों का वंश ...	१३
६	अग्निके वंश का वर्णन, रुद्रों की उत्पत्ति	१७
७	अट्ठाईस व्यास वैवस्वतमन्वन्तरके योगाचार्य और उनके शिष्यों का वर्णन ...	१६
८	अङ्गों सहित योग का वर्णन	२२
६	योगके दशविघ्न, योग सिद्धि और पृथिव्यादिके चौंसठगुण वर्णन	३०
१०	भक्ति और श्रद्धा का माहात्म्य	३५
११	सद्योजात की उत्पत्ति ...	३८
१२	वामदेव की उत्पत्ति ...	३६
१३	तत्पुरुष और रुद्रगायत्री की उत्पत्ति	४०
१४	अघोर की उत्पत्ति ...	४१
१५	अघोर मन्त्रका माहात्म्य, पञ्चगव्य का विधान, सर्वपाप प्रायश्चित्त	४२
१६	ईशानकी उत्पत्ति और ब्रह्माजी से की ईशानस्तुति ...	४५
१७	ब्रह्मा विष्णु का परस्पर कलह और लिङ्गका प्रादुर्भाव तथा पञ्चब्रह्म मन्त्रों की उत्पत्ति, विष्णुजी को शिवजी का दर्शन होना	४८
१८	विष्णुजी से की शिव स्तुति	५०
१६	विष्णुजी और ब्रह्माजी को शिवजी का वरप्रदान ...	५६
२०	प्रलय के समय ब्रह्माजी की नाभिकमल से उत्पत्ति और ब्रह्माजी तथा विष्णुजी को शिवजी का दर्शन होना ...	५७
२१	विष्णुजी और ब्रह्माजी से की शिवस्तुति	६३
२२	विष्णुजी और ब्रह्माजी को शिवजी का वरदेना, ब्रह्माजी का तप करना और सर्पों की उत्पत्ति	६६
२३	सद्योजात आदि अवतारों का होना, लोक वर्णन ...	७०
२४	अट्ठाईस द्वापरों के व्यास, शिव अवतार और उनके शिष्य पाशुपत सिद्धि का वर्णन ...	७३
२५	स्नानविधान	८१
२६	संध्या, तर्पण, पञ्चयज्ञ और भस्मस्नान का विधान ...	८३
२७	शिवपूजनका संक्षेपसे विधान	८६
२८	आभ्यन्तर पूजन का वर्णन ...	६०
२६	देवदारु वन में शिवजी का आना, वहांके मुनियों का शिव जी पर क्रोध आदि और सुदर्शन मुनि का वृत्तान्त ...	६३
३०	श्वेतमुनि की कथा और काल का पराजय	६८

अ०	विषय	पृष्ठ
३१	शिवपूजनविधान, मुनियों को शिवदर्शन, मुनियोंसे की शिव स्तुति	१०१
३२	मुनियोंका किया शिवस्तोत्र	१०४
३३	मुनियों के प्रति शिवजी का उपदेश देना, मुनिकृत स्तुति ...	१०५
३४	भस्ममाहात्म्य, मुनियों के प्रति पाशुपतयोग का उपदेश ...	१०७
३५	दधीचिमुनि और क्षुपराजा का विवाद, शुक्राचार्यका किया दधीचिके प्रति मृत्युंजय मन्त्रोपदेश, मृत्युंजय मन्त्रका अर्थ	१०९
३६	दधीचि का विष्णुजी से युद्ध, दधीचि का जय	१११
३७	शिलादमुनि का तप, इन्द्र का वहां आगमन और शिलाद प्रति उपदेश	११७
३८	सृष्टिके उत्पन्न करनेका वर्णन	११९
३९	सत्ययुग आदि तीन युगों का वर्णन	१२०
४०	कलियुग के धर्म, युग की सन्ध्या के धर्म और सत्ययुग के आरम्भ का वर्णन ...	१२४
४१	ब्रह्माजी की उत्पत्ति, ब्रह्माजी का मरण और पुनर्जीवन ...	१२९
४२	नन्दी की उत्पत्ति	१३३
४३	नन्दी के प्रति शिवजी का वरप्रदान, जटोदकादि पांच नदियों की उत्पत्ति ...	१३५
४४	नन्दी के अभिषेक का वर्णन	१३८
४५	पातालों का वर्णन ...	१४१
४६	सप्तद्वीपों का वर्णन ...	१४३
४७	जम्बूद्वीप का वर्णन ...	१४५
४८	सुमेरुपर्वत और इन्द्र आदि दिक्पालों की पुरियों का वर्णन	१४७
४९	पर्वतों का वर्णन ...	१५०
५०	पर्वतों के निवासियों का वर्णन	१५४
५१	शिवक्षेत्रों का वर्णन ...	१५५
५२	जम्बूद्वीप के खण्डों में रहने वालों का वर्णन	१५७
५३	द्वीपों के पर्वत और सप्तलोकों का वर्णन, देवताओं को शिव जी का दर्शन	१६१
५४	सूर्यकी गति और मेघोंका वर्णन	१६४
५५	सूर्य भगवान्‌के रथ और उनके साथ रहनेवाले देवता आदि का वर्णन	१६८
५६	चन्द्र का वर्णन	१७२
५७	ग्रहोंके प्रमाण और गति आदि का वर्णन	१७३
५८	सबके स्वामियों का वर्णन जो सृष्टि के प्रारम्भ में ब्रह्माजीने बनाये	१७५
५९	तीन प्रकार के अग्नियों की उत्पत्ति, सूर्य का वर्णन ...	१७६
६०	मङ्गल आदि पांचग्रहोंका वर्णन	१७९
६१	ग्रह नक्षत्र ताराआदि का वर्णन	१८१
६२	ध्रुवकी कथा और द्वादशाक्षर मन्त्र का माहात्म्य ...	१८४
६३	देवता दैत्य आदि सब सृष्टि की उत्पत्ति का वर्णन ...	१८७
६४	वशिष्ठजी की कथा और पराशर मुनि की उत्पत्ति ...	१९३
६५	सूर्यवंश वर्णन और तण्डिमुनि प्रोक्त शिवसहस्रनाम ...	२००
६६	सूर्यवंशवर्णन, चन्द्रवंशवर्णन	२१२
६७	ययाति राजा की कथा ...	२१७
६८	यदु के वंश का वर्णन ...	२२१
६९	यादवोंके वंश का वर्णन, श्रीकृष्णावतार की संक्षेप कथा	२२४
७०	आदिसर्गका विस्तार से वर्णन	२२९

अ०	विषय	पृष्ठ
७१	त्रिपुरसंहार की विस्तारपूर्वक कथा	२५०
७२	तथा	२६२
७३	देवताओं के प्रति ब्रह्माजी का किया पाशुपतव्रत का उपदेश	२७५
७४	देवपूज्यों का वर्णन, लिङ्गभेद, लिङ्गपूजन और लिङ्गस्थापन का फल	२७७
७५	परमेश्वरके सगुण होनेका वर्णन	२७६
७६	शिवजी की अनेक प्रकार की प्रतिमाओं के स्थापनका फल	२८२
७७	शिवजी के अनेक भांति के प्रासाद निर्माण करनेका फल, शिवक्षेत्रों में प्राण त्याग का फल, शिवलिङ्ग दर्शन का फल, मण्डल पूजन का विधान	२८६
७८	शुद्ध और छनेहुये जलकी प्रशंसा, अहिंसाकी प्रशंसा और अहिंसा का निषेध ...	२६४
७६	शिवपूजन का फल और विधान	२६७
८०	देवताओं का कैलासगमन, शिवजीके नगर का वर्णन	३००
८१	लिङ्गव्रत का विधान और फल	३०४
८२	व्यपोहनस्तोत्र और उसके पाठ का फल	३०८
८३	बारह महीनों के व्रतका विधान और फल	३१६
८४	उमामहेश्वरव्रत का विधान और भी स्त्रियोंके लिये अनेक प्रकार के व्रत और दानों का विधान और उनका फल ...	३२०
८५	शिवपञ्चाक्षर मन्त्र का प्रभाव न्यास उपदेश, पुरश्चरण, जपमाला आदि का विधान, सदाचार का वर्णन, काम्य प्रयोग और सन्ध्या वन्दन आदि कर्मों का लोप होने पर प्रायश्चित्त	३२५
८६	वैराग्य, ज्ञान, ध्यान पाशुपत योग का विस्तार से वर्णन	३४१
८७	मुनियों को मोक्ष प्राप्ति और शिवपार्वती का एकत्व वर्णन	३५३
८८	अणिमाआदि आठ सिद्धियों का लक्षण और पाशुपत ज्ञान का वर्णन	३५५
८६	शौच, आचार, द्रव्यशुद्धि, अशौच, रजस्वला का आचरण और षोड़श रात्रियों तक सङ्ग करनेसे जैसी जैसी संतान हो उन सबका वर्णन ...	३६३
६०	यतियों के लिये प्रायश्चित्त	३७४
६१	अरिष्टों का वर्णन और अरिष्ट देख मृत्युकाल समीप आया जान धारणा करे उसका वर्णन	३७६
६२	काशी का माहात्म्य वर्णन, वहां के अनेक शिवलिङ्गों के दर्शन का फल, और श्री शैलपर्वत के मल्लिकार्जुन आदि शिवक्षेत्रों का माहात्म्य ...	३८२
६३	अन्धकासुरकी कथा ...	३६५
६४	वराह भगवान् और हिरण्याक्ष की कथा, वराहजी की स्तुति	३६७
६५	नृसिंहजीकी कथा, नृसिंह स्तुति और शिवस्तुति ...	४००
६६	शरभावतार की कथा, नृसिंह जी से की शिवस्तुति और नृसिंह का संहार ...	४०५
६७	जलन्धर दैत्य के वधकी कथा	४१४
६८	सुदर्शन प्राप्त्यर्थ विष्णुभगवान् के तप करने का वर्णन, विष्णु भगवान् का किया शिवसहस्र	

अ०	विषय	पृष्ठ
	नाम और विष्णु भगवान् को सुदर्शन चक्र की प्राप्ति ...	४१८
९९	संक्षेप से सतीजी की कथा ...	४३१
१००	दक्षयज्ञविध्वंस का वर्णन ...	४३३
१०१	तारकासुरका किया देवताओं का पराजय, कामदेव का शिवजी की नेत्राग्निसे दग्ध होना	४३६
१०२	पार्वती जी का स्वयम्वर में शिवजी को वरना ...	४३९
१०३	शिवजी और पार्वती जी के विवाह का वर्णन ...	४४३
१०४	देवताओंकी की शिवस्तुति	४४८
१०५	गणेशजी के जन्मका वर्णन	४५०
१०६	काली भगवती की उत्पत्ति, दारुक दैत्यका वध, क्षेत्रपाल की उत्पत्ति	४५२
१०७	उपमन्यु की कथा ...	४५४
१०८	श्रीकृष्णजी का उपमन्यु के शिष्यहोना और पाशुपत योग का माहात्म्य	४५६

उत्तरार्ध।

अ०	विषय	पृष्ठ
१	कौशिक आदि विष्णुभक्तों की कथा, ब्रह्माजी का भगवान् के दर्शनार्थ श्वेतद्वीपमें गमन, विष्णुभगवान् करके किया तुम्बुरुका सत्कार देख क्षुब्ध हो नारदजी का तप करना	४६१
२	सङ्गीतकी प्रशंसा और सङ्गीत से भगवान्की प्रसन्नता होती है इसका कथन	४६७
३	गानबन्धु नाम उलूकराज से नारदजी का सङ्गीतविद्या सीखना	४६७
४	विष्णुभक्तों की प्रशंसा ...	४७५
५	राजाअम्बरीष, नारद, पर्वत और अम्बरीषकी कन्या श्रीमती की कथा ...	४७७
६	अलक्ष्मी की कथा और उसके निवास योग्य स्थानों का कथन	४८८
७	अष्टाक्षर और द्वादशाक्षर विष्णु मन्त्रका माहात्म्य और द्वादशाक्षरके उपासक एक ब्राह्मणकी कथा ...	४९४
८	शिवपञ्चाक्षर और षडक्षर मन्त्र माहात्म्य व एक दुराचार ब्राह्मणकी कथा ...	४९७
९	पशुपाशों का वर्णन और परमेश्वर का प्रतिपादन ...	५००
१०	शिवकी आज्ञा का वर्णन ...	५०३
११	शिव पार्वती की विभूतियोंका वर्णन	५०६
१२	शिवजीकी आठ मूर्तियों का वर्णन	५०८
१३	शिवजी की शर्व आदि आठ मूर्तियों का वर्णन ...	५११
१४	ईशान आदि पञ्च ब्रह्मोंकावर्णन	५१३
१५	सत् असत् आदि रूपोंसे शिव का प्रतिपादन ...	५१५
१६	शिवके क्षेत्रज्ञ आदि नामों का प्रतिपादन	५१६
१७	शिवका सर्वरूपत्व से वर्णन	५१८
१८	देवताओं से की शिवस्तुति, पाशुपतव्रतका विधान, भस्म धारण की आवश्यकता, देवताओं को शिवजी का दर्शन होना	५२०
१९	सूर्यमण्डल में स्थित शिवका मुनियों के प्रति दर्शन व मुनियोंसे की शिवस्तुति ...	५२५

अ०	विषय	पृष्ठ
२०	गुरुशिष्य लक्षण और षडध्व वर्णन ...	५२८
२१	शैवदीक्षा का विधान ...	५३२
२२	सौरस्नान, सन्ध्या, तर्पण, सूर्यार्घ्य व सूर्यपूजन कुण्डका लक्षण व हवनविधि ...	५३८
२३	शिवजीका आभ्यन्तर पूजन	५४४
२४	भूत शुद्धि आदिका और शिव पूजनका विधान ...	५४७
२५	कुण्ड स्रुक्स्रुव और प्रणीता पात्रादि हवन के पात्रों के लक्षण हवन का विधान	५५३
२६	अघोर मन्त्र और अघोर परमेश्वर के पूजनका विधान	५६२
२७	जयाभिषेकका विधान ...	५६५
२८	तुलादान का विधान ...	५८३
२९	हिरण्यगर्भ दानका विधान	५८६
३०	तिलपर्वतके दानका विधान	५९०
३१	तिल पर्वतके दान का दूसरा विधान	५९१
३२	सुवर्ण पृथिवी दानका विधान	५९१
३३	कल्पवृक्षदानका विधान ...	५९२
३४	गणेशदानका विधान ...	५९३
३५	सुवर्णधेनुदानका विधान ...	५९३
३६	लक्ष्मीदानका विधान ...	५९४
३७	तिलधेनुदानका विधान ...	५९५
३८	गोसहस्रदानका विधान ...	५९६
३९	सुवर्णाश्वदानका विधान ...	५९६
४०	कन्यादानका विधान ...	५९७
४१	सुवर्णवृष दानका विधान ...	५९७
४२	सुवर्णगजदानका विधान ...	५९८
४३	अष्टलोकपालदानकाविधान	५९८
४४	विमूर्तिदान का विधान ...	५९९
४५	जीवच्छ्राद्ध का विधान ...	६००
४६	शिवलिङ्गस्थापन का फल ...	६०५
४७	शिवलिङ्गस्थापन का विधान	६०६
४८	अन्य देवताओं के स्थापनका विधान और उनकी गायत्री	६०९
४९	अघोर विष्णु के स्थापनादि का विधान व अघोर मन्त्र के जप व हवन का फल ...	६१२
५०	अघोरमन्त्र करके शत्रुनिग्रह का विधान	६१४
५१	वज्रवाहनिकानाम शत्रुसंहार करनेहारे मन्त्र की प्रशंसा वृत्रासुर की उत्पत्ति और वज्रवाहनिका नाम मन्त्र ...	६१८
५२	वज्रवाहनिका विद्याके काम्य-प्रयोगों का विधान ...	६१९
५३	मृत्युंजय मन्त्रका संक्षेप से विधान	६२१
५४	मृत्युंजय मन्त्रका विस्तार से विधान फल और मन्त्रार्थ	६२१
५५	पांच प्रकारके योग और ज्ञान का वर्णन, लिङ्गपुराण के पठन और श्रवण का माहात्म्य और समाप्ति ...	६२४

श्रीलिङ्गपुराण भाषा ।

पूर्वार्ध ॥

पहिला अध्याय

दो० विबुधमुकुटमणि दीपिका, नीराजित दिवरैन ।
विघन हरैं हेरम्ब के, चरण कमल सुखदैन १
भजौं नित्य गौरी गिरिश, सकल सिद्धि के हेतु ।
भक्त मनोरथ कल्पतरु, भवसागर के सेतु २
ब्रह्म विष्णु शिव रूपसे, सृष्टि स्थिति संहार ।
करत ताहि जगदीश को, विनवौं वारंवार ३

एकसमय श्रीनारदमुनि शैलेश, संगमेश्वर, हिरण्यगर्भ, स्वर्लीन, अविमुक्त, महालय, रौद्र, गोप्रेक्षक पाशुपत, विघ्नेश्वर, केदार, गोमायुकेश्वर, हिरण्य- चन्द्रेश्वर, ईशान, त्रिविष्टप और शुक्रेश्वर आ- उत्तम शिवक्षेत्रों में श्रीमहादेव जीका- और संसार का चमत्कार देख- पहुँचे वहां सब शौनक आ- अतिमुदित भये और ब-

उत्तम आसनपर बैठाय उनका सत्कारसे पूजन करते भये। नारदजी भी परमभक्तिसे मुनियों के प्रति शिवजी का माहात्म्य सुनाने लगे इसी अवसरमें व्यासजीके शिष्य और सब पुराण इतिहास आदिके जाननेहारे श्री सूतजी भी ऋषियों के दर्शन के अर्थ नैमिषारण्य में आये उनको देख सब मुनि मुदित भये और भली भांति सत्कारकर आदरसे बैठाय कहने लगे कि हे सूतजी! आपने श्रीवेदव्यासजी का बहुत आराधन किया है और उन्होंने भी अनुग्रह से सब पुराण आपको पढ़ाये अब आप वह संहिता हमको सुनाइये जिसमें शिवलिङ्गका माहात्म्य विशेष करके वर्णितहै इस समय अनेक क्षेत्रों में शिवपूजन करतेहुये नारद मुनि भी यहां प्राप्तभये हैं ये परम शिवभक्त हैं और आप तथा हमभी महादेवजी के चरणारविंदके आराधनमें तत्पर हैं इसलिये अब आप नारदजी के सम्मुखही पुराण सुनावें कि आपका भी परिश्रम सफल होय। यह मुनियों का वचन सुन अति हर्षित हो सब मुनियों को तथा नारदजी को प्रणामकर सूतजी पुराण कहने लगे॥

दो० पञ्चानन चतुराननहिं, व्यासहि विष्णु समान।
बार बार शिर नायकै, वरणौं लिङ्गपुरान १

[...]ब्द ब्रह्मस्वरूप और शब्द ब्रह्मका प्रकाश करनेहारा [...] जिसके अवयव अर्थात् अंग हैं वह परमात्मा [...]स्थित है तोभी अव्यक्त अर्थात् अप्र- [...] उपकार, मकार रूपसे स्थूल और [...]अर्थात् स्थूल सूक्ष्म और परात्पर

ये तीन जिसकी अवस्था हैं वह ओंकारस्वरूप परमात्मा कि ऋग्वेद जिसका मुख, सामवेद जिसकी जिह्वा, यजुर्वेद ग्रीवा अर्थात् गर्दन और अथर्वण वेद जिसका हृदयहै और वह जन्म मरण आदि से रहित सर्व व्यापक है और वही तमोगुणसे कालरुद्र, रजोगुणसे हिरण्यगर्भ अर्थात् ब्रह्मा, सत्त्वगुण करिके विष्णु होताहै और जब निर्गुण अर्थात् सत्त्व, रज, तम इनतीनों गुणों से रहित होता है तब महेश्वर अर्थात् परमात्मास्वरूपहै और जो परमात्मा अव्यक्त और जीवको व्याप्त करके महत्तत्त्व, अहंकार, शब्द, रस, रूप, गंध, स्पर्श इन सात रूपों से और पांच ज्ञानेन्द्रिय, पांचकर्मेन्द्रिय, पंचमहाभूत और मन, इन सोलह प्रकारोंसे तथा महत्तत्त्व आदि सात पांच कर्मेन्द्रिय, पांच ज्ञानेन्द्रिय, पांच महाभूत, मन, अव्यक्त, ध्याता, ध्येय इन छब्बीसों भेदों से स्थित है और अजोद्भव अर्थात् माया अथवा ब्रह्मा का उत्पत्ति स्थान है और लिंगरूपसे संसार का सृष्टि स्थिति संहार जो परमात्मा करताहै उसको बारबार प्रणाम कर परम मंगलदायक और सब पाप दूर करनेहारा लिंगपुराण हे मुनीश्वरो! अब हम आपको श्रवण कराते हैं आपभी प्रीति से सुनें ॥

दूसरा अध्याय ॥

सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो! जो अति उत्तम लिंग-पुराण ईशानकल्पका वृत्तान्त लेकर संसार के उद्धार के लिये श्रीब्रह्माजी ने रचाहै वह कोटि श्लोक प्रमाणहै।

और सब पुराणोंकी संख्या सौकरोर श्लोकथी उसका सार लेकर श्री वेदव्यास जी ने कलियुग के जीवोंका कल्याण होने के लिये चारलक्ष श्लोकों में अठारहपुराण द्वापरमें रचे उन पुराणोंमें पहिला ब्रह्मपुराणहै और ग्यारहवां यह लिंगपुराण है और ग्यारहसहस्र श्लोक इसकी संख्याहै और इसमें जो विषय वर्णित हैं उनकी अनुक्रमणिका हम कहते हैं प्राधानिकसर्ग, प्राकृतसर्ग, वैकृतसर्ग, अंडकी उत्पत्ति, अंडके आठआवरण, रजोगुणसे विष्णुकाउद्भव, कालरुद्रका वर्णन, विष्णु का जलमें शयन, प्रजापतियों का सर्ग, पृथ्वीका उद्धार, ब्रह्माका दिन रात, ब्रह्मा का आयुष, ब्रह्मसवनयुग, कल्प, दिव्य, मानुष, आर्ष, पितृ, औ ध्रुववर्षोंकी संख्या, पितरोंकी उत्पत्ति, आश्रमियोंका धर्म, जगत् का संक्षेप, देवी की उत्पत्ति, ब्रह्मा का स्त्री पुरुष भाव मिथुनसे सृष्टि, रुद्रकी आठ आख्या जो रोदनांतर में कही हैं ब्रह्मा विष्णुका विवाद और लिंगकी उत्पत्ति, शिलाद का तप और इन्द्रका दर्शन देना, पुत्रकी प्रार्थना, पुत्रका दुर्लभत्व कहना, इन्द्रका शिलाद से संवाद, ब्रह्माकी कमल से उत्पत्ति, कलियुगमें गुरु शिष्य को शिवका दर्शन, व्यासजी के अवतार कल्प मन्वन्तर आदिका कथन, कल्पों के नाम, वाराह कल्पमें विष्णुका वराहत्व, मेघवाहन कल्प का वृत्तान्त और रुद्र का गौरव, ऋषियों के मध्य में शिवजी के लिंग का प्रादुर्भाव, लिंग का आराधन स्नानकी विधि, शौच का लक्षण, काशी के तथा अन्य क्षेत्रों के माहात्म्य का वर्णन, भूमि पर शिवालय तथा विष्णुमन्दिरों की

संख्या, इस ब्रह्मांड के अन्तरिक्ष में देवालयों का वर्णन, दक्षका भूमि पर गिरना, स्वारोचिषमन्वन्तरमें दक्षको शाप और शापमोक्ष कैलासका वर्णन पाशुपति योग चार युगों का प्रमाण और युगों का धर्म, सन्ध्यांश का वर्णन सन्ध्यासमय में शिवजी का वृत्तान्त शिवका श्मशानबास चन्द्रकलाओं की उत्पत्ति, शिवजी का विवाह, पुत्रों का उत्पन्न करना, बहुत काल मैथुन के कारण जगत् का क्षय होना, देवताओं प्रति सतीजीका शाप, त्रिपुरवध करके विष्णुकी रक्षा, शिवजी का वीर्य त्याग और स्कन्दकी उत्पत्ति, ग्रहण आदि कालों में लिंगस्नानका फल, क्षुप और दधीचि का विवाद, दधीचि और विष्णु का विवाद, नन्दी नाम करिके शिवजी की उत्पत्ति पतिव्रता का आख्यान, पशुपाश का विचार, प्रवृत्ति और निवृत्तिका लक्षण, वशिष्ठ जी के पुत्रों की उत्पत्ति और उनके वंशका वर्णन, राजाओं की शक्तिका नाश, कौशिक की दुष्टता, कामधेनु का बंधन, वशिष्ठजी का पुत्रशोक, अरुंधती का विलाप, स्नुषाका भेजना और गर्भमेंस्थित बाल का वचन, पराशर, व्यास और शुकदेव जी के अवतार का वर्णन वशिष्ठ जीका किया राक्षसों का संहार, देवताओं का परमार्थ विज्ञान और प्रसाद, पुलस्त्य गुरुकी आज्ञा से पुराण का रचना, भुवनों का प्रमाण, ग्रह नक्षत्र आदिकोंकी गति जीवित पुरुष के श्राद्ध का विधान, श्राद्ध के अधिकारी, श्राद्ध की विधि, नांदीश्राद्धकी विधि, अध्ययन की विधि, पंच-यज्ञ का प्रभाव, पंचयज्ञकी विधि, रजस्वला स्त्रीकीवृत्ति,

पुत्र की विशिष्टता, चारों वर्णों में मैथुन की विधि, सब वर्णों में भक्ष्याभक्ष्यका विधान, सब का प्रायश्चित्त, नरकों का स्वरूप कर्मानुसार दंडका वर्णन, स्वर्गी और नारकी जीवों के दूसरे जन्म में चिह्न, अनेक प्रकार के दानों का वर्णन, प्रेतराज के नगर का वर्णन, पंचाक्षर मंत्रका कल्प रुद्रका माहात्म्य, वृत्रका और इन्द्रका घोरयुद्ध, विश्वरूप का विमर्दन, श्वेतमुनि और मृत्यु का संवाद, श्वेत के अर्थ मृत्यु का नाश, देवदारु वन में शिवजी का प्रवेश, शिवजी का और सुदर्शन का आख्यान, क्रम सन्न्यास का लक्षण, श्रद्धा करिकेही रुद्र की प्रसन्नता, ब्रह्माजी की मधुकैटभ नाम दैत्यों करिके नष्ट ज्ञानता ब्रह्माजीको ज्ञान उपदेश करनेके अर्थ विष्णु जीका मत्स्य अवतार, सर्व अवस्थाओं में लीलासे ही विष्णुजी के अवतार शिवजी के अनुग्रह से कृष्ण तथा प्रद्युम्न की उत्पत्ति, मंदराचल धारण के लिये विष्णु का कूर्मावतार, संकर्षण और कौशिकी का अवतार, यादवों की उत्पत्ति, विष्णुका यादवों में अवतार, श्रीकृष्णके मातुल कंसकी दुष्टता, कृष्णकी बालक्रीड़ा, पुत्र प्राप्ति के लिये श्रीकृष्ण जीने किया शिवाराधन रुद्रसे कपाल विषे जलकी उत्पत्ति, पृथुराजका किया भूमि दोहन, देवासुर संग्राम विषे विष्णु जी के प्रति भृगुमुनि का शाप, कृष्ण का द्वारका में निवास, दुर्वासा मुनिका विष्णु के प्रति शाप, वृष्णि और अंधकोंके नाश के लिये पिंडारक क्षेत्र निवासी ऋषियों का शाप, समुद्र में एरका नाम तृणकी उत्पत्ति और एरकासे यादवों का

परस्पर युद्ध और सबका संहार सब यादवों का संहारकर श्री कृष्णजी का भी अपनी इच्छा से अपने लोक को गमन, ब्रह्मा के मोक्षका ज्ञान विस्तार पूर्वक, इन्द्र हस्ती मृगरूपी अंधक, अग्नि, दक्ष और कामदेव, तथा ब्रह्मा जी, असुर, हलाहल, दैत्य इनकी अवज्ञा महादेवजीने करीहुई, जलंधर का वध, सुदर्शन की उत्पत्ति विष्णु जी को उत्तम आयुधों की प्राप्ति, रुद्रके चरित्र, विष्णु ब्रह्मा और इन्द्र का प्रभाव, शिवलोक का वर्णन, भूमि पर रुद्रलोक, पाताल में हाटकेश्वर का वर्णन, तपका लक्षण, ब्राह्मणों का वैभव, सब मूर्तियों में लिंगमूर्ति का आधिक्य इतने विषय इस लिंगपुराण में विस्तार से अपने अपने अवसर में वर्णन किये हैं यह सब पुराण का संक्षेप जो पुरुष जाने और कीर्तन करे वह सब पापोंसे मुक्त हो ब्रह्मलोक पावे ॥

तीसरा [illegible]

सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो ! वह परमेश्वर अलिंग अर्थात् निर्गुण है लिंग अर्थात् प्रकृतिका मूल है उसीको शिव कहते हैं और प्रधान प्रकृति; अव्यक्त ये लिंगके नाम हैं वह शिव शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गन्ध, वर्ण से हीन निर्गुण, ध्रुव, अक्षय्य है उसको अलिंग कहते हैं और वह शब्द स्पर्शादिकों करके युक्त होता है तब स्थूल स्वरूप लिंग कहाता है उस परमेश्वर के लिंग माया करके पूर्वोक्त छब्बीस रूपों करके विस्तारको प्राप्त होरहे हैं उन्होंसेही तीन देवता उत्पन्न भये उन तीनों

देवोंमें एक संसारको उत्पन्न करता है दूसरा पालन और तीसरा संहार करता है और वह शिव सब जगत्में व्याप्त है इससे जगत् भी परब्रह्म का स्वरूपही है और उस परमेश्वर से उत्पन्न हुये ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र ये विश्व, प्राज्ञ और तैजस संज्ञक हैं वह रुद्रही जगत्का बीज अर्थात् कारण है और इसी रुद्रको नित्य बुद्धि स्वभाव से पुराणों में परमात्मा अर्थात् तुरीय, ब्रह्मा, मुनि, शिव आदि नामोंसे कहते हैं और सृष्टि के आदि में वह प्रकृति शिव की इच्छा से व्यक्त अर्थात् प्रकट होती है उसीसे मह-त्तत्त्व आदि स्थूल भूतों पर्यंत जगत् उत्पन्न होताहै वह माया अजा कहाती है और लोहित, शुक्ल कृष्ण उसके वर्ण हैं एकहै और अनेकप्रकारकी प्रजाको उत्पन्न करती है वह जीव प्रीति से उसकी सेवा करता हुआ उसके आधीन रहताहै जब वह जीव मायाको भली भांति भोग लेता है तब उसको त्याग देता है वह माया परमेश्वर करके अधिष्ठित हुई २ सब जगत् को उत्पन्न करती है सृष्टि के समय तीन गुणों करके युक्त प्रधानसे ईश्वरकी इच्छा करके महत्तत्त्व उत्पन्न होता है वह महत्तत्त्व आत्मा करके अधिष्ठित परमेश्वर की प्रेरणा से अव्यक्तमें प्रवेशकर व्यक्त सृष्टि को उत्पन्न करताहै उस महत्तत्त्वसे संकल्पाध्यवसायिकावृत्ति अर्थात् सात्त्विक, अहङ्कार, त्रिगुण, रजोधिक, अहङ्कार उत्पन्न भये और रजोगुण करके अधिक व्याप्तही तामस अहंकार उत्पन्न हुआ और महत्तत्त्व सेही सृष्टि करनेवाले भूत तन्मात्र अर्थात् शब्द स्पर्शादिक उत्पन्न भये अहंकार से शब्द

तन्मात्र और शब्द तन्मात्रसे आकाश उत्पन्न हुआ और आकाश ने शब्द को आवरण किया इसीसे आकाश शब्द का कारण कहाया आकाशसे स्पर्श तन्मात्र और स्पर्श तन्मात्र से वायु उत्पन्न भया वायुसे रूप तन्मात्र और रूप तन्मात्र से अग्नि, अग्निसे रस तन्मात्र और रस तन्मात्रसे जल, जलसे गन्ध तन्मात्र और गन्ध तन्मात्रसे भूमि उत्पन्न भई आकाशने स्पर्शमात्र को आवरण किया वायु ने रूपमात्र को अग्नि ने रसमात्र को जल ने गन्धमात्र को आवरण किया पृथ्वी में पांच गुण हैं जल में चार अग्नि में तीन वायु में दो गुण और आकाश में एक गुण है। इस प्रकार तन्मात्रा और पंच महाभूतों की उत्पत्ति परस्पर जाननी चाहिये। सात्त्विक राजस तामस सर्गकी प्रवृत्ति युगपत् अर्थात् एककाल मेंही होती है परंतु यहां अहंकार सेही सबकी सर्ग अर्थात् उत्पत्ति लिखी है और इस जीव को शब्दादिकों का बोध होनेके अर्थ परमेश्वर ने पांच ज्ञानेन्द्रिय और पांच कर्मेन्द्रिय रचे और मन उभयात्मक अर्थात् ज्ञानेन्द्रिय और कर्मेन्द्रिय दोनोंके गुणसे रचा। महत्तत्त्व आदिकोंने जल बुद्बुद की भांति इस अंड को उत्पन्न किया और ब्रह्मा विष्णु रुद्र और यह संपूर्ण विश्व उसके भीतर उत्पन्न भया और यह अंड चारों ओर आकाशसे व्याप्तहै और आकाश अहंकारकर के वेष्टितहै अहंकार महत्तत्त्व करके और महत्तत्त्व प्रधान करके वेष्टित है। और इस अंडका आत्मा ब्रह्माहै। इस प्रकारके कई कोटि ब्रह्मांड और हैं और सब में ब्रह्मा

विष्णु शिव पृथक् पृथक् रहैं। इसप्रकार सर्ग और प्रति-सर्ग का करनेवाला वही परमेश्वर है। रजोगुण करके युक्तहो सृष्टि करता है सत्वगुणको अवलंबन कर पालन और तमोगुण से सब सृष्टिका संहार वही करता है। इस प्रकार वही परमेश्वर तीन रूप धारण कर सृष्टि स्थिति संहार सदा किया करता है इससे ब्रह्मा विष्णु रुद्र यह एकही परमेश्वर है वह ब्रह्मा इस सृष्टिका रचनेहारा इस अंडके मध्यमें स्थित है। हे मुनीश्वरो! यह हमने प्रथम प्राकृत सर्ग आपको सुनाया है॥

चौथा अध्याय॥

सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो! इस सर्ग का जितना समय है वही ब्रह्माजीका दिन है और दिनके बराबरही उनकी रात्रि है। दिन में सब देवता ऋषि मनुष्य आदिक उत्पन्न होते हैं और रात्रिको सब लीन हो जाते हैं। वह ब्रह्माजी का दिन चार सहस्र युगका है इतने समयमें चौदह मनु बीत जाते हैं १ चारयुगोंका प्रमाण क्रमसे दिव्य वर्ष चार सहस्र तीन सहस्र दो सहस्र और एक सहस्र है। और इनकी सन्ध्या क्रम से चार सौ तीन सौ दो सौ और एक सौ वर्ष है। आरोग्य पुरुष जितने समय में पंद्रह निमेष करे उतने काल का नाम काष्ठा है। तीस काष्ठा की एक कला तीस कलाका एक मुहूर्त पंद्रह मुहूर्त का दिन और पंद्रह मुहूर्त की रात्रि पंद्रह दिनका पक्ष वही पितरों का दिन और दूसरा पक्ष पितरों की रात्रि होती है। अर्थात् कृष्णपक्ष

पितरों का दिन और शुक्लपक्ष रात्रि है। और मनुष्यों के तीस महीने में पितरों का एक महीना पूरा होता है। और मनुष्यों के तीनसौ साठ महीने में पितरों का एक वर्ष होता है। और मनुष्यों के सौवर्ष करके पितरों के तीन वर्ष और दश महीने होते हैं मनुष्यों का एक वर्ष देवताओं का दिनरात्रि है जिसमें उत्तरायण दिन और दक्षिणायन रात्रि होती है। इस प्रकार मनुष्यों के तीन वर्ष का देवताओं का महीना होता है। मनुष्यों के सौ वर्ष करके देवताओं के तीन महीने और दश दिन होते हैं। मनुष्यों के तीनसौ साठ वर्ष करके देवताओं का एक वर्ष होता है। तीन हज़ार और तीस वर्ष का एक सप्तर्षि वर्ष होता है। और मनुष्यों के नौ हज़ार वर्ष और नब्बे वर्ष करके ध्रुव का एक वर्ष होता है। मनुष्यों के छत्तीस हज़ार वर्ष का एक दिव्य वर्ष होताहै तीन लाख साठ हज़ार मनुष्य वर्षोंके दिव्यहज़ार वर्ष होते हैं। दिव्य प्रमाण से ही युगों की कल्पना है पहिला कृतयुग दूसरा त्रेता तीसरा द्वापर और चौथा कलियुग कहाता है कृतयुग का प्रमाण १४४०००० वर्ष हैं और त्रेताका प्रमाण १०८०००० द्वापर का प्रमाण ७२०००० कलियुगका प्रमाण ३६०००० यह चारों युगोंका काल अपनी अपनी सन्ध्या बिना कहा है और यह सब मिलकर ३६००००० होता है और चारोंयुगों की संख्या का प्रमाण ३६०००० यहहै इतने इकहत्तर गुणे चारोंयुगों के तीन काल में एक मनु व्यतीत होता है इस वर्षों के समूह करके मन्वन्तर की संख्या कही है मनुष्य मान

से ३०६७२०००० इतने वर्ष सब मनुओंके होते हैं एक सहस्र चतुर्युगका एक कल्प होताहै इसप्रकार ब्रह्मा जी अपने दिन के आरंभ में सृष्टि करते हैं और रात्रि को सबका संहार होता है। उसमें अट्ठाइस करोड़ देवताहैं। और मन्वन्तरमें ३९२०००००००यह संख्या है और कल्प व्यतीत होनेपर ७८०००००००००० यह संख्या होती है। और प्रलय के समय महर्लोक में रहनेवाले भी जनलोक में चले जाते हैं। दो सहस्र कोटि आठसौ कोटि दो सहस्र कल्प आठसौ कोटि तिरसठ कोटि सत्तर नियुत यह आधे दिव्य कल्प की संख्या है। इसीसे कल्प की संख्या भी ज्ञात होती है। और हज़ार कल्प करके ब्रह्मा का एक वर्ष होताहै और आठ हज़ार ब्रह्माके वर्षों करके ब्रह्माका युग होता है और ब्रह्मा के सहस्र युग करके एक विष्णुदिन होताहै और विष्णु के नौ हज़ार दिन करके एक रुद्रदिन होता है। अब कल्पों के नाम कहते हैं भवोद्भव, तप, भव्य, रंभकतु, वह्नि, हव्यवाह, सावित्र, सर्व, उशिक, कुशिक, गांधार, ऋषभ, षड्ज, गांधारीय, मध्यम, वैराज, निषाद, मेघवाहन, पंचम, चित्रक, सांकृत, ज्ञान, मन, दर्शी, बृंह, श्वेतलोहित, रक्त, पीतवासा, असित ये ब्रह्मा के कल्प कहे हैं। इस प्रकार ब्रह्माकी रात्रि दिनमें करोड़ों कल्पबीतगये और करोड़ोंही बीतेंगे। महाप्रलय के समय में सब विश्व प्रलय होते हैं और पीछे शिव की आज्ञा से प्रलय का भी प्रलय होजाता है। इस प्रकार सबका प्रलय होनेके अनन्तर प्रकृति और पुरुष

दोही शेष रहते हैं। इस प्रकार गुणोंके वैधर्म्य से सृष्टि और समता से प्रलय होताहै और इसका हेतु वही महेश्वर है। इसप्रकार अनगिनत सर्ग वह परमेश्वर करता है और असंख्यात कल्प तथा ब्रह्मा विष्णु रुद्र भी असंख्यातही उत्पन्न होते हैं परंतु वह महेश्वर एकही है। इस भांति प्रकृति से प्राकृत सर्ग होते हैं। और उस परमेश्वर की वृत्ति सत्त्व, रज, तम इन तीन गुणों करके तीन प्रकार की है। उस अप्राकृतिक का आदि मध्य अन्त नहीं है। ब्रह्मा का आयुष् दो परार्ध है और जो कुछ ब्रह्मा अपने दिन में रचता है रात्रि में उसका नाश होजाता है। और भूः, भुवः, स्वः ये लोक तो नष्ट हो जाते हैं और इनसे ऊपर के लोक बचते हैं। इस रीतिसे सब का संहार कर जलमें ब्रह्माजी शयन करते हैं इससे उन्हींका नाम नारायण है। फिर रात्रि व्यतीत होने पर ब्रह्माजी उठे और देखा कि सब शून्य पड़ा है तब सृष्टिकरने का विचार किया और जलमें डूबीहुई भूमिको वराहरूप धरके निकाला और पहिली रीति से अपने स्थान पर स्थापन किया। और उसमें नदी, नद, समुद्र सब अपने अपने स्थानपर बनाय पर्वतों को रचकर भू आदि चारलोक रचतेभये और सब जीवों के सिरजने का विचार किया॥

पांचवां अध्याय॥

सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो! जब ब्रह्माजीने सृष्टि रचने की इच्छाकरी तब उनको तम, मोह, महामोह,

तामिस्र, अंध इस पांचप्रकार की अविद्या ने घेरा उस काल में जो ब्रह्माजी ने सृष्टि रची वह मुख्य न भई और ब्रह्माजीने विचार किया कि यह सृष्टि कुछ कार्य साधक नहीं और रचनी चाहिये तब वृक्ष रचे पीछे उनसे पशु देवता और मनुष्य क्रमसे उत्पन्न भये और ब्रह्माजी से महत्तत्त्वआदि भूततन्मात्रा सर्ग दूसरा भया तीसरा इन्द्रियोंका सर्गहुआ चौथा मुख्य सर्ग अर्थात् वृक्ष आदि उत्पन्न भये पांचवांसर्ग पशु आदि छठवां देवता सातवां मनुष्य आठवां अनुग्रह सर्ग और नवां कौमार सर्ग ब्रह्मा जीने किया ये नव प्रकार के प्राकृतसर्गही वैकृत कहातेहैं फिर ब्रह्माजीने अपने अग्रभागसे सनक सनन्दन सनातन आदि मुनि उत्पन्न किये जोकि नैष्कर्म्य अर्थात् कर्मके त्यागसे जीवन्मुक्त भये फिर योगविद्या करके मरीचि, भृगु, अंगिरा, पुलस्त्य, पुलह, क्रतु, दक्ष, अत्रि, वशिष्ठ ये नवपुत्र ब्रह्मवादी और अपने तुल्य ब्रह्माजीने उत्पन्न किये। संकल्प धर्म और अधर्मको भी उत्पन्न किया। इस प्रकार बारह प्रजा ब्रह्माजी की भई और आदि में ऋभु और सनत्कुमारको सनातनने उत्पन्न किया वे दोनों ब्रह्मवादी ऊर्ध्वरेता और ब्रह्माजीके तुल्य भये। फिर ब्रह्माजी ने राजास्वायंभुवमनु और रानीशतरूपाको उत्पन्न किया। और शतरूपा रानीमें स्वायंभुवमनु से दोपुत्र एकका नाम प्रियव्रत और दूसरेका नाम उत्तानपाद भये और तीन कन्या भी बड़ीका नाम आकूति बिचली का नाम देवहूति और छोटीका नाम प्रसूति उत्पन्न भईं उनमें आकूति को रुचिनामक प्रजापतिने व्याहा और देवहूति को कर्दम

ऋषिने ब्याहा और प्रसूति दक्षप्रजापतिके संग विवाही गई। दक्षिणा सहित यज्ञ आकूति से उत्पन्न भये। फिर दक्षिणानेभी दिव्य बारह कन्या उत्पन्न करीं और देवहूति के अरुंधती इत्यादि १० कन्या और कपिल नामक पुत्र जिनको श्रीविष्णु के २४ अवतारों में एक अवतार गिनते हैं। और प्रसूति में भी दक्षप्रजापति से चौबीस कन्या उत्पन्न भईं जिनके नाम ये हैं। श्रद्धा, लक्ष्मी, धृति, पुष्टि, तुष्टि, मेधा, क्रिया, बुद्धि, लज्जा, वपु, शांति, सिद्धि, कीर्ति, ख्याति, कांति, संभूति, स्मृति, प्रीति, क्षमा, संतति, अनसूया, ऊर्जा, स्वाहा, स्वधा इनमें से श्रद्धासे लेकर कीर्ति पर्यंत तेरह कन्या दक्षप्रजापति ने धर्मको विवाहीं। और ख्याति तथा कांति भार्गव मुनिसे ब्याही गईं। संभूतिको मरीचिने और स्मृति को अंगिरा मुनिने, प्रीति को पुलस्त्य ने, क्षमाको पुलहने, संतति को क्रतुने, अनसूया को अत्रिने, ऊर्जाको वशिष्ठने, स्वाहा को अग्निने, और स्वधाको पितरोंने ब्याहा। जो दक्षप्रजापति की मानसी कन्या सती नामथी वह रुद्रसे विवाही गई। सृष्टिके प्रारंभमें ब्रह्माजीने शिवजीको अर्धनारीश्वर देखकर कहा कि आप स्त्री पुरुष विभागकरें तब शिवजीके देहसे सतीजी पृथक् होगईं जगत् में जितनी स्त्रीजाति हैं सब सतीका अंशहैं। और संपूर्ण पुरुषजाति तथा ग्यारह रुद्र शिवजीका अंशहैं। ब्रह्माजीने सतीजी को देखकर दक्षप्रजापतिसे कहा कि यह सती हम सबकी माता है इसको तुम अपनी पुत्री बनाओ क्योंकि पुत् नाम नरक से पुत्रीही रक्षा करती है इसलिये

यह विश्व की माता आपकी पुत्री होगी । यह ब्रह्माजी का वचन सुन दक्षप्रजापतिने सतीजीको अपनी कन्या बनाय बड़े आदर से रुद्र को विवाह दिया । जो धर्मकी तेरह पत्नी श्रद्धाआदि पीछे कहीं उनमें काम, दर्प, निलय, संतोष, लाभ, श्रुत, दंड, समय, बोध, अप्रमाद, विनय, व्यवसाय, क्षेम, सुख और यश ये उत्पन्न भये उनमें क्रिया से दण्ड समय उत्पन्न भये और बुद्धिमें अप्रमाद और बोध ये दो पुत्र धर्मसे उत्पन्न भये इस प्रकार पन्द्रह पुत्र धर्म के भये । भृगु की पत्नी ख्यातिमें लक्ष्मी उत्पन्न भई जो विष्णुजी की प्रिया भई और धाता तथा विधाता नामक दो पुत्रभी भये जो मेरु पर्वत के जामाता बने । मरीचि की पत्नी प्रसूति में मारीच नाम पुत्र जिसका नाम पूर्णमास भी है और तुष्टि, दृष्टि, कृषि और अपचिति ये चार कन्या भी उत्पन्न भई । पुलह से क्षमा में कर्दम नाम एक पुत्र और एक अति उत्तम पुत्री उत्पन्न भई पुलस्त्य से प्रीति में दत्तोर्णा वेदबाहु और दृषद्वती नाम कन्या भई । क्रतुसे सन्नति में साठहज़ार पुत्र उत्पन्न भये जो बालखिल्य कहाये । अंगिरा मुनिकी पत्नी स्मृति से सिनीवाली, कुहू, राका और अनुमति ये चार कन्या और अग्नि नाम पुत्र उत्पन्न भया और अत्रि मुनिकी अनसूया स्त्री में एक श्रुतिनाम कन्या और सत्यनेत्र, भाव्य, मूर्ति, शनैश्चर, आप, सोम ये पांचपुत्र भये । वशिष्ठजी से ऊर्जा में रज, ह्रस्व, ऊर्ध्वबाहु, सवन, अनघ, सुतपा और शुक्र ये सात पुत्र उत्पन्न भये । जो अभिमानी भगवान् रुद्ररूप ब्रह्माका

पुत्र और जगत् का प्राण अग्नि है उससे स्वाहा में तीनों लोक के कल्याण के अर्थ तीन पुत्र उत्पन्न भये ॥

छठवां अध्याय ॥

सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो ! पहिले अध्यायके अन्तमें हमने कहा कि अग्नि के तीन पुत्र भये उनके नाम पवमान, पावक और शुचि ये हैं जिनमें पवमान तो अरणी आदि में संघर्ष से उत्पन्न हुआ पावक विद्युत् अर्थात् बिजली से निकला और शुचि सूर्यकी प्रभासे भया ये तीनों स्वाहा के पुत्र हैं । अब इनके पुत्र पौत्रों की संख्या सुनो कि सब मिलकर उञ्चास भये जो सब यज्ञों में आराधन कियेजाते हैं और सबके सब तपस्वी व्रतधारी प्रजाके पति और रुद्रस्वरूप भये पितर भी दो प्रकार के हैं एक यज्वा अर्थात् यज्ञ करनेवाले और दूसरे अयज्वा । उनमें यज्वाओं का नाम अग्निष्वात्ता है और दूसरे बर्हिषद् कहाते हैं । स्वधा में अग्निष्वात्ताओं से मानसी कन्या उत्पन्न भई उसका नाम मेना रक्खा गया । वह मेना हिमालय से विवाही गई और उससे मैनाक, क्रौंच ये दो पुत्र और उमा तथा सब जगत् को पावन करनेहारी गंगा ये दो कन्या भईं । मेरु पर्वत की स्वधानाम स्त्री में मानसी कन्या धरणी नाम भई अमृत पान करनेवाले पितर और ऋषियों का कुल अब हम विस्तार से कहेंगे । दक्षकी कन्या सती प्रथम रुद्रसे ब्याही गई फिर दक्ष की निंदाकर अपना देह त्याग किया और पार्वतीरूपसे फिर महादेवजीकेही संग

विवाह किया सतीजी के देहत्याग के समय ब्रह्माजी की प्रार्थना से अनेक रुद्र महादेवजी ने उत्पन्न किये जो सबलोक के पूज्य और महादेवजी के तुल्यथे जिन्होंने सब जगत् को व्याप्त करलिया जरामरणसे रहित बड़े प्रभाव करके युक्त उन अनेक रुद्रों को देख ब्रह्माजी ने कहा कि हे रुद्रो! तुम जो त्रिनेत्र, नीललोहित, दीर्घ, ह्रस्व, वामन, हिरण्यकेश, दृष्टिघ्न, नित्यबुद्ध, निर्मल, सर्वज्ञ, निर्द्वन्द्व, वीतराग, विश्वात्मा शिवजी के पुत्र और सर्वव्यापी हो तुम को नमस्कार होय। इसप्रकार रुद्रों की स्तुति करके ब्रह्मा जी शिवजी की प्रदक्षिणा और प्रणाम कर प्रार्थना करने लगे कि महाराज! यह अजर अमर प्रजा आपने उत्पन्न की परन्तु मृत्युयुक्त प्रजा होनी योग्य थी तब महादेवजी ने कहा कि हमारी प्रजा तो अमरही होगी परन्तु मृत्युयुक्त प्रजा तुम रचो यह महादेवजी की आज्ञा पाय सम्पूर्ण चराचर जगत् ब्रह्मा जीने रचा। और शिवजी भी अपने रुद्रोंसहित निवास करनेलगे। वह निष्फल परमात्मा ने अपनी इच्छा से शरीर धारण किया उसीको वेदके जाननेवाले ब्राह्मण स्थाणु कहतेहैं। वह दया करके संसार का कल्याण करताहै इसी से शंकर कहाया विरक्त पुरुष मुक्तिको ही कल्याण कहतेहैं। और पुरुष जो विषयका त्याग करे वही मुक्त है और वैराग्य से विषय का त्याग होता है। विशिष्ट ज्ञान अर्थात् संसारका निवर्तकज्ञान और त्याग इसका मेलन शिवजीके अनुग्रह सेही होसक्ताहै। धर्म ज्ञान वैराग्य और ऐश्वर्य शिवजीसे ही

शंकरही रुद्र है और कण्ठ उसका नील और सब देह लोहित होने से नीललोहित और पिनाक नाम धनुष के धारने से पिनाकी कहाता है। इससे रुद्र और सदाशिव में कुछ भेद नहीं। जगत् में बड़े बड़े पापी भी शिवजीके शरण होनेसे मुक्ति पाते हैं नरक में कभी नहीं जाते। इसप्रकार सूतजी से सुन मुनि बोले कि हे सूतजी! अहं-कारसे लेकर मायापर्यन्त अट्ठाईस करोड़ नरक हैं। उन में पापी पड़ेहुये अपने कर्मोंका फल भोगते हैं। और शिवजीका आश्रय नहीं लेते। जो सदाशिव सब जीवों का आश्रय अव्यय जगत् का स्वामी तमोगुण करके कालरुद्र को रजोगुण से ब्रह्माको और सत्त्वगुण करके विष्णुको उत्पन्न करते हैं और निर्गुण रहने से साक्षात् महेश्वर हैं उनका आश्रय करने से नरक में जीव नहीं जाते परन्तु अब आप यह सुनावें कि कौन से कर्म से नरक में जीव जाते हैं॥

सातवां अध्याय॥

यह मुनियोंका वचन सुनसूतजी बोले कि हे मुनीश्वरो! शिवजीका रहस्य और प्रभाव हम संक्षेप से वर्णन करते हैं सब तत्त्व के जाननेहारे परम वैराग्य में स्थित प्राणायाम आदि योग के आठ अङ्गों करके युक्त करुणा आदि गुणों से भूषित बड़े बड़े योगी भी कर्म के अनुसार स्वर्ग और नरकमें जातेहैं। शिवजी के अनुग्रह से ज्ञान उत्पन्न होता है ज्ञान से योग में प्रवृत्ति होती है योग से मुक्ति मिलती है इससे सबका मूलकारण वह शिवजी का

अनुग्रहहीहै। यह सुन ऋषियों ने सूतजी से पूंछा कि जो शिवजीके अनुग्रह से ही ज्ञान और योग होताहै तो दिव्य महेश्वर योग का स्वरूप आप हम से कहैं और वह परमेश्वर योगमार्ग करके किस प्रकार और किस काल में अनुग्रह करता है यह भी वर्णन कीजिये। यह सुन सूतजी कहनेलगे कि देवता! ऋषि और पितरोंकेसन्मुख नन्दीने जो योग सनत्कुमार को सुनाया है वह आप सुनें द्वापरके अन्तमें व्यासजीके अवतार योगाचार्यों के अवतार और कलिमें शिवजी के अवतार तथा प्रभु के चार शिष्य और उनके अनेक प्रशिष्य भये कि जिनसे जगत् में योगकी प्रवृत्ति भई इस प्रकार वह ज्ञान शिष्य परम्परा करके शिवजी के मुख से ही संसार में पहुँचा है। कि जिस के अधिकारी ब्राह्मण क्षत्रिय और वैश्य ये तीन वर्ण हैं यह सुन ऋषि पूछते भये कि हे सूतजी! कौन से कल्प और किस द्वापर में व्यास भये यह आप कहैं तब सूतजी ने कहा कि इस वाराहकल्प में और वैवस्वत मन्वन्तर में जो व्यास और रुद्र भये हैं इसभांति और मन्वन्तरों में भी जो भये उन सबको वेद और पुराण के अनुसार हम यथाक्रम कहतेहैं। क्रतु, सत्यभार्गव, अङ्गिरा, सविता, मृत्यु, शतक्रतु, वशिष्ठ, सारस्वत, त्रिधामा, त्रिवृत, शततेजा, नारायण, तरक्षु, अरुणि, देव, कृतंजय, ऋतंजय, भरद्वाज, गौतम, वाचश्रवा, शुष्मायणि, तृणबिन्दु, रुक्ष, शक्ति, पराशर, जातूकर्ण्य और साक्षात् विष्णुका स्वरूप कृष्ण द्वैपायन ये अट्ठाईस व्यास भये। और अब कल्प में जितने योगेश्वर हुये और कलिमें रुद्रके

अवतार तथा बारह कल्पके वैवस्वत मन्वन्तर में जो अवतार हुये उनको हम वर्णन करतेहैं आप श्रवण करें। यह सूतजीका वचन सुन मुनि बोले कि हे सूतजी! प्रथम तो आप वाराह कल्प तथा और कल्पों के मन्वन्तर वर्णन कीजिये। और वैवस्वत मन्वन्तर में जो सिद्ध भये हैं उनको भी कथन कीजिये। यह सुन सूतजी कहने लगे कि हे मुनीश्वरो! पहिला मनु स्वायम्भुव दूसरा स्वारोचिष तीसरा उत्तम इसीभांति तामस, रैवत, चाक्षुष वैवस्वत, सावर्णि, धर्मसावर्णिक, पिंग [illegible] शवल, वर्णाक ये चौदह मनु अकारसे लेकर औकारपर्यन्त चौदह स्वरोंका रूप हैं और श्वेत, पाण्डु, रक्त, ताम्र, पीत, कपिल, कृष्ण, श्याम, धूम्र, पिशङ्ग, विवर्ण, शवल, कालन्धुर ये चौदह मनुओंके वर्णहैं। इसप्रकार ये मनु स्वरस्वरूप हैं। यह वर्तमान वैवश्वत मनु ऋकाररूप कृष्णवर्ण सातवां है। इसमें हम परमेश्वर के योगावतार और शिष्यों की सन्तति वर्णन करते हैं। प्रथम कलिमें रुद्रका अवतार श्वेत नामक फिर सुतार, मदन, सुहोत्र, कंकण, कंक, लोकाक्षि, जैगीषव्य, दधिवाहन, ऋषभ, मुनि, उग्र, अत्रि, सुबालक, बालि, गोतम, वेदशीर्ष, गोकर्ण, गुहावासी, शिखंडभृत्, जटामाली, अट्टहास, दारुक, लांगली, महाकाय, शूली, मुंडीश्वर, सहिष्णु, सोमशर्मा, औलकुलीश ये अट्ठाईस योगाचार्य वैवस्वत मन्वन्तर के कहेहैं। और इन प्रत्येक के चार चार शिष्यहैं उनके नाम वर्णन करतेहैं। श्वेत, श्वेतशिखण्डी, श्वेतास्य, श्वेतलोहित, दुन्दुभि, शतरूप, ऋचीक, केतुमान,

विक्रोश, विकेश, विपाश, शापनाशन, । सुमुख, दुर्मुख दुर्दम, दुरतिक्रम, सनक, सनन्द, सनातन, सनत्कुमार, सुधामा, विरजा, शंखपाद, वैरज, मेघसारस्वत, सुवाहन, मेघवाहन, कपिल, आसुरि, पंचशिख, इल्वल, पराशर, गर्भभार्गव, अंगिरा, बलबंधु, निरामित्र, केतुशृङ्ग, तपोधनं, लंबोदर, लंब, लंबाक्ष, लंबकेश, । सर्वज्ञ, समबुद्धि, साध्य, सर्व, सुधामा, काश्यप, वशिष्ठ, विरजा, । अत्रि, देवसद, श्रवण, श्रविष्ट, कुणि, कुणिबाहु, कुशरीर, कुनेत्र, । काश्यप, उशना, च्यवन, बृहस्पति, उतथ्य, वामदेव, महायोग, महाबल, वाचःश्रवा, ऋचीक, श्यावश्व, यतीश्वर, । हिरण्यनाभ, कौशल्य, लोकाक्षि, कुथुमि, । सुमंतु, बर्बरी, कवंध, कुशिकंधर, । प्लक्ष, दाल्भ्यायनि, केतुमान, गौतम, । भल्लावि, मधुपिंग, श्वेतकेतु, तपोनिधि, । उशिक, बृहदश्व, देवल, कवि, । शालिहोत्र, अग्निवेश, युवनाश्व, शरद्वसु, छगल, कुंडकर्ण, कुंभ, प्रवाहक, उलूक, विद्युत, शंबूक, आश्वलायन, । अक्षपाद, कुमार, उलूकवत्स, कुशिक, गर्ग, मित्र, कौरुष्य ये योगाचार्यों के शिष्य महात्मा योग और ज्ञान में तत्पर। पाशुपत, सिद्ध और भस्म करके उद्धूलित जिनका सब शरीर है होतेभये। इनके हजारों शिष्य और प्रशिष्य पाशुपत योग को पाय रुद्रलोक को जाते भये। पिशाचसे देवतापर्यंत सब जीव पशु कहाते हैं उन सब का स्वामी होने से शिवजी का नाम पशुपति है उस पशुपतिका बनाया हुआ योग पाशुपति कहाता है। वह पाशुपतियोग सब जीवोंको परम ऐश्वर्य देनेहारा है॥

आठवां अध्याय ॥

सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो! अब हम योग के स्थानसे संक्षेप से वर्णन करते हैं जो शिवजीने जगत् के कल्याणके अर्थ आप कल्पना करेहैं। कंठसे नीचे और नाभिके ऊपर वितस्तिमात्र उत्तम योग स्थान हैं। नाभि से नीचे मूलाधार नाम और भ्रूमध्यमें आवर्त्त येभी योग स्थान हैं। आत्माको सर्वार्थ ज्ञानकी प्राप्तिहोनाही योग है। और आत्मा के प्रसाद से सब प्रकार की एकाग्रता होजाती है। परन्तु वह प्रसाद का स्वरूप स्वसंवेद्य है अर्थात् आत्मा के विना कोई दूसरा नहीं और ब्रह्मादिक भी उसका वर्णन नहीं करसके योगशब्द करके वह निर्वाण माहेश्वर पद कहाजाता है। और उस निर्वाणपदका हेतु ज्ञान है। ज्ञानसेही पाप दग्ध होते हैं जो सब इन्द्रियोंको रोकता है उसको योगसिद्धि होती है और चित्तवृत्ति के निरोध अर्थात् रोकने कोही योग कहते हैं उस योगके साधन आठ प्रकार के हैं। यम नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और आठवां समाधि। अब इनका क्रम से लक्षण कहते हैं तप और उपरम का नाम यम है। और यम का प्रथम हेतु अहिंसा है। सत्य अस्तेय अर्थात् चोरी न करना ब्रह्मचर्य अपरिग्रह ये नियमहैं परंतु नियम का हेतु यम ही है। अपने तुल्य सब जीवों को देखना और किसी को क्लेश न देना इसी का नाम अहिंसा है अहिंसा से आत्मज्ञान की सिद्धि होती है देखा सुना और यथार्थ

जिसका अनुभव किया हो उसका कथन करना यही सत्य है जिसमें किसी को पीड़ा न होय। अश्लील बात कभी न कहै। और दूसरे के दोष जानकर भी न कहै। पर द्रव्य को मन वचन कर्म करके आपदा में भी न लेना अस्तेय कहाता है मन वचन कर्म करके मैथुन से बचना ब्रह्मचर्य है यह यती और ब्रह्मचारियों का धर्म है जिनके पत्नी न हो। और जे गृहस्थ हैं वे अपनी स्त्री का समयपर प्रसंग करैं परस्त्रीसे विमुख रहैं उनकेलिये यही ब्रह्मचर्य है अपनी स्त्री भोगके समय पवित्र होती है पुरुष मैथुन के अनन्तर स्नान करलेवे। इसप्रकार रहनेवाला गृहस्थ भी ब्रह्मचारी ही होता है ब्राह्मण, देवता, अग्नि, गुरु आदि के पूजन में विधि करके जो हिंसा वह अहिंसाही है। बुद्धिमान् पुरुष सदा स्त्रियों का त्याग रक्खे और उनको शव अर्थात् मरे जीव के तुल्य समझै। जैसी बुद्धि विष्ठा और मूत्र त्याग करने के समय होती है वही बुद्धि अपनी स्त्री की रति के समय भी रखनी चाहिये। अंगार के तुल्य स्त्री है और घृतकुंभ के समान पुरुष है इसहेतु पुरुष को स्त्री से दूर रहना योग्य है। भोग से विषयों में तृप्ति नहीं होती केवल विचार से होती है। इसलिये मन वचन कर्म करके विषयों में वैराग्य करनाही योग्य है काम कभी विषयों के उपभोग से शांत नहीं होता उलटा बढ़ता है जैसे घी के गिरने से अग्नि। इसलिये सबका त्याग करना ही उचित है। वैराग्य न होने से मनुष्य अनेक योनियों में जन्म लेता फिरता है। न कर्म करके न प्रजा से न द्रव्य से मोक्ष होय केवल त्याग से ही मोक्ष होता है.

इसलिये तन मन वचन से वैराग्य करना उचित है। रति की निवृत्ति ब्रह्मचर्य है ये संक्षेप से हमने यम कहे। अब नियम कहते हैं। अनीहा अर्थात् किसी वस्तु की विशेष इच्छा न करना, शौच, तुष्टि, तप, जप, शिवका ध्यान, पद्मादिक आसन, आभ्यंतर शौच ये सब नियम हैं प्रथम बाह्यशौच करना चाहिये जो स्नानादि से होता है। स्नान तीन प्रकार का है एक आग्नेय अर्थात् भस्मस्नान, दूसरा वारुण अर्थात् जलसें, तीसरा ब्राह्म अर्थात् मंत्रस्नान है। परंतु बाहर से कितनाही शौच करे और मृत्तिका से देह को लीप लीप कर स्नान करे जो अन्तःकरण शुद्ध न होय तो वह सदा मलीनही है। क्योंकि मत्स्य, मंडूक आदि सदा जल में डूबे रहते हैं वे क्या शुद्ध होजाते हैं इससे आंतर शौचही मुख्य है वैराग्यरूप मृत्तिका से शरीर को लिप्त करके आत्मज्ञानरूप जलमें स्नान करे यह मुख्य शौच है। शुद्ध पुरुष को ही सिद्धि होती है अशुद्ध को नहीं। जो पुरुष न्याय से मिले धन करके संतुष्ट रहे और गये अर्थका स्मरण न करे वह संतोषी कहाता है। चांद्रायण आदि व्रतों का आचरण तप कहाता है प्रणव के स्वाध्याय का नाम जप है वह तीन प्रकार का है उनमें वाचिक जप, अधम उपांशु अर्थात् अपने को भलीप्रकार सुनिपरै मध्य और मानस जप उत्तमोत्तम। मन वचन कर्म करके शिवका प्रणिधान और गुरु में निश्चलभक्ति यह ही शिवका ध्यान है सब विषयोंसे निवृत्त करके इंद्रियों को रोकना प्रत्याहार कहाता है। चित्त को हृदयकमल

आदि स्थानों में रोकना धारणा कहाती है। और उसी धारणा का जो स्वस्थता से ध्यान वह समाधि है। उसी स्थान में जो सब विषयों से निवृत्त चित्तकी एकाग्रता उस का नाम ध्यान है। सम्पूर्ण अर्थ चैतन्यस्वरूप देखपड़े और स्थूल सूक्ष्म लिंग ये तीन प्रकारके देहलीन होजायँ उसका नाम समाधि है। सब समाधियों का कारण प्राणायाम है। देहके वायुका नाम प्राण है और उसके रोकने को यम कहते हैं। वह प्राणायाम मंद मध्य और उत्तम इन तीन प्रकार का होता है। मंद प्राणायाम बारह मात्रा का है अर्थात् बारह लघु अक्षर जितने काल में उच्चारण होय उतने काल प्राणवायु को रोकना मंद प्राणायाम है। चौबीस मात्रा का मध्य और छत्तीस मात्रा का प्राणायाम उत्तम होता है। मंद प्राणायाम करने से प्रस्वेद मध्य से कंप और उत्तम से उत्थान अर्थात् प्राणायाम के समय आसन से ऊंचा होजाय। आनंद के देनेहारे योगमें निद्राकी भांति घूर्णन। रोमांच ध्वनि करके युक्त अपने अंगों का कंपन होताहै उत्तम प्राणायाम में प्रस्वेद के अनंतर समाधिरूप मूर्च्छा होती है वह प्राणायाम सगर्भ और अगर्भ दो प्रकार का है जिस में मंत्रका जप करे वह सगर्भ जप विना अगर्भ प्राणायाम होताहै जिस भांति हाथी शरभ अथवा सिंह पहिले दुराधर्ष होताहै पीछे क्रमसे दमन करते करते अपने वश होजाता है इसीप्रकार वायु भी पहिले दुराधर्ष है पीछे अभ्यास से अपने वश होता है। इसप्रकार जो पुरुष रीति से प्राणायाम का अभ्यास करे उसके मल वाक

और देहके सब दोष दूर होजाते हैं। और प्राणायाम सेही शांति प्रशांति दीप्ति और प्रसाद सिद्ध होते हैं। सहज और आगंतुक पापों के नाशका नाम शांति है। वचनों का भलीभांति संयम प्रशांति कहाता है। सर्वत्र प्रकाश का नाम दीप्ति है इन्द्रिय, बुद्धि और प्राण आदि वायु की प्रसन्नता ही प्रसाद कहाता है। वायु दश प्रकार का है प्राण, अपान, समान, व्यान, उदान, नाग, कूर्म, कृकर, देवदत्त, धनंजय ये उनके नाम हैं। प्रयाण करनेसे प्राण आहार आदिको अपनयन अर्थात् नीचे लेजाने से अपान, अंग को व्यान मन अर्थात् नवानेसे व्यान कर्मोंके उद्वेजन करनेसे उदान और गात्रों की समता करनेसे समान कहाता है उद्गार अर्थात् डकार लेनेके समय नागनामा वायु है। उन्मीलन अर्थात् विकास में कूर्म छींक में कृकर उबासी लेने के समय देव-दत्त और धनंजन वायु बड़ा शब्द करनेके समय है जो सब अंगों में स्थित है। इन दश वायुओं का प्रसाद ही तुरीया कहाताहै। विस्वर, महान्, मन, ब्रह्म, चिति, स्मृति, ख्याति, संवित्, ईश्वर, मति ये सब महत्तत्वरूप बुद्धिके नाम हैं। द्वन्द्वोंके अर्थात् शीत उष्ण आदि जोड़ों के उपतापन न होने से विस्वर सब तत्वों के प्रथम उत्पन्न होने से महान् मनन करने से मन बृहत् अर्थात् बड़ा होने से और वृद्धि से ब्रह्मभोग के लिये सब कर्मों का संचय करने से चित्ति स्मरण करने से स्मृति जानने से संवित् प्रसिद्ध से ख्याति सब तत्वों के स्वामी होने से और सब पदार्थ जानने से ईश्वर मानने से मति

कहाती है। और अर्थ का बोध करने से बुद्धि कहाती है। इस बुद्धि का प्रसाद प्राणायाम सेही होता है। सब दोषों को प्राणायाम दग्ध कर्त्ता है धारणा से पातक दग्ध होते हैं। प्रत्याहार से विषयों को विषकी भांति जानता है। ध्यान से अनीश्वर गुण दूर होते हैं समाधि से बुद्धिकी वृद्धि होतीहै। उत्तम स्थान में प्राप्त होकर योगके आठ अंगोंको साधन करे और आसनों का भी अभ्यास करे। विना उत्तम स्थान और उत्तम काल के योगसिद्धि नहीं होतीहै इसलिये जलके समीप अग्निके समीप सूखे पत्ते जहां बहुत होयँ जीव बहुत होयँ श्मशान गोष्ठ चतुष्पथ जहां शब्द बहुत होय जहां भय होय चैत्य बल्मीक के समीप अशुभदेश जहां दुर्जन अथवा मच्छर बहुत होयँ ऐसे स्थानों में योगी न रहे। जहां देह को बाधा न होय चित्त प्रसन्न रहै ऐसे सुन्दर स्थान पर्वत की गुफा आदि में रहे अथवा कोई शिवक्षेत्र हो वा और कोई उत्तम स्थान हो जिस में कोई जीव न हो सुन्दर लिपाहुआ दर्पणोदर की भांति स्वच्छ अगुरु के धूप से धूपित अनेक पुष्प पत्र फलों से शोभित कुशा करके युक्त स्थान योगी के लिये होना चाहिये। ऐसे स्थानमें उत्तम आसन पर बैठकर गुरु, गणेश, शिव, पार्वती और शिष्यों करके सहित योगीश्वरों को प्रणाम करके योग का आरंभ करे। स्वस्तिक अथवा पद्मासन बांधकर दोनों जानु बराबर करके दोनों पार्ष्णि अर्थात् एँड़ियों के बीच वृषण और लिंग को करके शिरको कुछ ऊंचा उठाय मुखको थोड़ासा खोल दांतों का आपस में स्पर्श

बचाता हुआ सब ओर से दृष्टिको रोक नासिका के अग्र को देखता हुआ तमोगुण को रजोगुण से और रजोगुण को सत्त्वगुण से आच्छादन कर केवल सत्त्व में स्थिर होकर शिवध्यान का अभ्यास करे। वह परमात्मा शुद्ध दीपशिखाकार और ॐकार करके जो प्रतिपाद्य है उसका अपने हृदयकमल की कर्णिका में ध्यान करे। अथवा नाभि के नीचे तीन अंगुल पर एक कमल का ध्यान करे उसमें अष्टकोण अथवा पंचकोण और उसपर त्रिकोण ध्यावे फिर धर्म आदि चार का ध्यान कर उसमें सूर्य चंद्र और अग्निमंडल उसके ऊपर सत्त्व रज तम का ध्यान कर उनपर पार्वती जी सहित श्रीमहादेवजी का ध्यान करे। अथवा नाभि, गल, भ्रूमध्य, ललाट अथवा मस्तक में ध्यान करे। द्विदल, षोडशदल, द्वादशदल, दशदल, षट्दल और चतुर्दल ये कमल क्रमसे भ्रूमध्य, कंठ, वक्षस्थल, हृदय, नाभि और मूलाधार में हैं इनमें श्रीसदाशिवजी को ध्यावे नाभिकमल में सदाशिव को ललाट में चन्द्रचूड़ भ्रूमध्य में शंकर का ध्यान करे और उस दिव्य शाश्वत स्थान में निर्मल, निष्कल, शांत, ज्ञानस्वरूप, निरालंब, अतर्क्य, विनाश उत्पत्ति से रहित, आनंदस्वरूप, सूक्ष्मसे सूक्ष्म और स्थूल से स्थूल, ध्यानगम्य, शुद्ध चैतन्यस्वरूप श्रीमहादेवजी को हृदयकमलमें ध्यान करे। सुषुम्णा मार्ग करके मंद मध्यम और उत्तम कुंभकों से ध्यान करे। फिर बत्तीस मात्रा करके रेचक करे। अथवा रेचक पूरक को छोड़कर कुंभकही में स्थिर होजाय और सदाशिव का

स्मरण करे उस स्मरण से जीव और ईश्वर की एकता होती है और ब्रह्मानन्द उत्पन्न होताहै। बारह प्राणायाम की एक धारणा बारह धारणा का एक ध्यान और बारह ध्यान की समाधि होती है। ज्ञानी के संपर्क से अथवा यत्न करने से शीघ्र अथवा विलंब करके पूर्व जन्म के अभ्यास के अनुसार योगसिद्धि होती है। और योगाभ्यास करने के समय विघ्न भी बहुत होते हैं परंतु जो गुरु समीप होय तो सब विघ्न दूर होकर सिद्धि होती है॥

नवां अध्याय॥

सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो! अब हम योग के विघ्न कहते हैं। आलस्य, व्याधि, प्रमाद, संशय, चित्त की अनवस्थिति, अश्रद्धा, भ्रांति, तीनप्रकारका दुःख, दौर्मनस्य, अयोग्य विषयों में चित्तकी चंचलता। ये दश योग में विघ्न हैं। अब इनके लक्षण कहते हैं शरीर और चित्त के भारीपने से योग में प्रवृत्त न होना आलस्य कहाता है। धातुओं के न्यून अधिक होने से कर्मज अथवा दोषज जो रोग वे व्याधि कहाते हैं। समाधि साधनों का भावना न करना प्रमाद है। यह अथवा वह इस भांति के विकल्प का नाम संशय है योग में स्थिरता न रखनी अनवस्थिति कहाती है फलसिद्धि में संदेह का नाम अश्रद्धा है। गुरु देवता आदि में विपरीत देखना भ्रांति है। आध्यात्मिक अर्थात् शरीर और मानस दुःख आधिभौतिक अर्थात् दूसरे प्राणी का किया दुःख और आधिदैविक अर्थात् शीत उष्ण आदि का दुःख ये

तीन प्रकार के दुःख हैं तमोगुण और रजोगुण से जब मन मलीन हो जाय उसको दौर्मनस्य कहते हैं । योग्य अयोग्य विना समझे अनेक विषयों में चित्त को लेजाना विषयलोलता कहाती है । ये सब योगियों को विघ्न हैं । जो योगी अत्यन्त उत्साह से युक्त होता है उसके सब विघ्न दूर होजाते हैं । जब विघ्न दूर भये तो सिद्धि होती है । ये विघ्न भी सिद्धिके सूचन करनेहारे हैं । जो विघ्नों से बचजाय तो पहिली सिद्धि प्रतिभा है दूसरी श्रवणा, तीसरी वार्ता, चौथी दर्शना, पांचवीं आस्वादा और छठीं वेदना । ये छः छोटी सिद्धि हैं । जो योगी इनका त्याग करे तो बड़ी सिद्धि प्राप्त होती है । सब पदार्थों के ज्ञान का नाम प्रतिभा है । सब शब्दों का श्रवण होकर उनका यथार्थ ज्ञान होजाना श्रवणा सिद्धि है । स्पर्शका ठीक ज्ञान वेदना सिद्धि है । दिव्योंका भी विना यत्न ही दर्शन होना दर्शना सिद्धि है । दिव्य गंधों का ज्ञान वार्ता सिद्धि और दिव्य रसों का ठीक ठीक ज्ञान आस्वादा सिद्धि कहाती है । बुद्धिकरके योगी इस जगत् में ब्रह्मलोकपर्यंत सब अपने देह में जानता है । इस देह में चौंसठ गुण समान हैं और वे गुण सच्चिदानन्दरूप आत्मा को दुःखमें डालनेहारे हैं इसलिये उनका त्याग करना ठीक है । पिशाचमें उनकी पृथिवीसम्बन्धी, राक्षसों के पुरमें जलसम्बन्धी । यक्षों के तेजसम्बन्धी, गंधर्वों के वायुसम्बन्धी, इन्द्रलोक में आकाशसम्बन्धी, सोम-लोक में मनसम्बन्धी, प्रजापतिलोक में अहंकार-सम्बन्धी और ब्रह्मलोकमें बोधसम्बन्धी गुण है । पार्थिव

में आठ गुण हैं जल में सोलह, तेज में चौबीस, वायु में बत्तीस और आकाश में चालीस इस भांति और भी जानों। गन्ध, रस, रूप, शब्द स्पर्श ये प्रत्येक आठ आठ भेद के हैं। फिर बाकी मन आदि में भी आठ आठ गुण हैं अर्थात् मन में अरतालीस, अहंकार में छप्पन और ब्रह्मबोध में चौंसठ गुण हैं। जो योगी विचार कर ब्रह्म-लोकपर्यंत जो पदार्थ औपसर्गिक अर्थात् योग में विघ्न करनेवाला हो त्याग करे वही परमसुख को प्राप्त होता है। स्थूलता अर्थात् मोटापन, ह्रस्वता अर्थात् वामन होजाना, बालकपन, वृद्धता, यौवन, अनेक जाति के स्वरूप धारण, पृथ्वी बिना चारही तत्त्वों करके देह धारण, नित्य सुगन्धित रहना ये आठ पार्थिव ऐश्वर्य अर्थात् गुण हैं। जल में भूमि के भांति निवास करना, समुद्र पान करलेने की भी सामर्थ्य, जहां जलकी इच्छा हो वहांही जलका दर्शन, जो वस्तु भक्षण किया चाहै वह रसयुक्त होजाय, पृथ्वी और जल बिना तीन तत्त्वों करके देहधारण, बिना पात्रही हाथ में जल को धर लेना, शरीर में व्रण न होना, देहमें उत्तम कांति होना ये आठ और पहिले के आठ मिलकर सोलह ऐश्वर्य जलके हैं। देह से अग्नि का निर्माण, अग्नि के ताप का भय न होना, दग्ध हुये लोक को भी पूर्ववत् कर देना, जल में अग्नि को स्थापन करना, हाथमें अग्नि लेना, स्मरण करने से अग्नि का प्रकट होना, भस्म हुये पदार्थ को फिर वही पदार्थ बनादेना, दो तत्त्व अर्थात् वायु और आकाश करके देह धारण यों चौबीस अग्नि के ऐश्वर्य

हैं । मनोगति अर्थात् जहां मन की इच्छा हो वहां चले जाना, भूतों के बीचमें लीन होजाना, पर्वत आदि महाभार भी कंधेपर धरलेना, लघु अर्थात् हलके गुरु अर्थात् भारी होजाना, हाथ में वायु को धरलेना, अंगुलि के प्रहारसेही भूमि को कंपाय देना, एक आकाशतत्त्व करकेही देह धारण करना ये वायु के ऐश्वर्य हैं। देह की छाया न हो, इन्द्रियों का प्रत्यक्ष दर्शन होना, आकाशगमन, इन्द्रियों के अर्थ का ज्ञान, दूर से शब्द सुन लेना, सब शब्दों का ज्ञान होना, तन्मात्राओं के स्वरूप का ज्ञान, सब प्राणियों का दर्शन ये आकाश के ऐश्वर्य हैं। इन ऐश्वर्यों करके युक्त कायव्यूह सामर्थ्यवान् कहाता है । जो वस्तु चाहे उसकी प्राप्ति, जहां जाने की इच्छा करे वहां पहुँच जाय, सबको अपने प्रभाव से दबासके, सब गुप्तपदार्थों का ज्ञान होजाय, जैसी इच्छा हो वैसाही रूप होजाय, सब जीव वश होजायँ, अपना रूप सब को प्रिय लगे, सब संसार का दर्शन होवे ये मानस गुण हैं। छेदन, ताड़न, बन्ध, संसार का परिवर्तन, सर्व भूतप्रसाद, मृत्यु और काल का जय ये अहंकार के ऐश्वर्य हैं । विना कारण जगत् की सृष्टि, अनुग्रह, प्रलय, अधिकार, लोकवृत्ति का प्रवर्तन, असादृश्य इन व्यक्तियों का पृथक् पृथक् निर्माण, संसार रचने की सामर्थ्य ये ब्राह्म ऐश्वर्य हैं । यह ब्राह्म ऐश्वर्य का तत्त्व कहा है । यही प्रधानसम्बन्धी वैष्णवपद है इसके गुण ब्रह्माके विना कोई नहीं जान सकता है । परन्तु जो अनन्त गुणों करके युक्त सर्वदा वर्तमान शैव ऐश्वर्य है उसको विष्णु

भी नहीं जानसकते। ये चौंसठ ऐश्वर्य व्यवहार काल में तो सिद्ध कहाते हैं और समाधि के समय येही विघ्न हैं-इनको परम वैराग्य से रोकना चाहिये। विषयों का और भयों का नाश होना जान करके अश्रद्धा से सबका त्याग करना वैराग्य है। विषयों से चित्त को रोक कर जितने सिद्धरूप विघ्न ब्राह्म ऐश्वर्य तक होवें सबका त्याग करने से महेश्वर का अनुग्रह होता है और महेश्वर की प्रसन्नता से निर्मल मुक्ति होती है। जो योगी संसारी जीवों के अनुग्रह के अर्थ अथवा लीला के निमित्त सिद्धियों का त्याग न करे वह भी सुखी होता है। कभी भूमि को छोड़ आकाश में ही क्रीड़ा करता है। कभी वेद और उसके सूक्ष्म अर्थों कोही प्रकट करता है। कभी कोई बात सुनकर उसकी श्लोक रचनाही करता है। कभी अनेक दण्डक आदि छन्दों में अथवा पद्म आदि बन्धों में काव्यही रचता है। कभी मृग पक्षी आदि सब जीवों की भाषाही समझ रहा है। स्थावर से लेकर ब्रह्मा पर्यन्त सब संसार उसको हस्ता-मलक की भांति प्रत्यक्ष होजाता है। बहुत कहां तक कहें हजारों विज्ञान उस योगी में उत्पन्न होजाते हैं। अनेक तेजोरूप देवताओं के देह और विमान देखता है। ब्रह्मा, विष्णु, इन्द्र, यम, अग्नि, वरुण आदि सब देवताओं को देखता है। ग्रह, नक्षत्र, तारा, हजारों भुवन और पाताल में रहनेवालों को भी वह योगी अपने आत्मविद्यारूप दीपक करके समाधि के समय देखता है और प्रसादरूप अमृत करके पूर्ण सत्त्वरूप

पात्र में स्थित जो वह आत्मविद्यारूप दीपक उस करके सब तम को दूर कर आत्मा में ईश्वर को देखता है। उसी परमेश्वर के अनुग्रह से धर्म, ऐश्वर्य, ज्ञान, वैराग्य और मोक्ष होता है इसमें कुछ सन्देह नहीं है। शिव की महिमा विस्तार से तो करोड़ों वर्षोंमें भी वर्णन नहीं होसक्ती इसलिये शैवयोग में स्थिर रहना चाहिये ॥ ९ ॥

दशवां अध्याय ॥

सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो ! जो पुरुष सत्यवादी, जितेन्द्रिय, धर्मज्ञ, साधु, शिवात्मा, दयावान्, तपस्वी, संन्यासी, विरक्त, ज्ञानी, दानी, अलुब्ध, योगी, श्रुति स्मृति जाननेहारे और श्रौत स्मार्त कर्मका अनुष्ठान करनेहारे हैं उनके ऊपर परमेश्वर का अनुग्रह होता है। सत् शब्द का अर्थ ब्रह्म है अन्त में उसको जो पावे अर्थात् अन्त में ब्रह्म सायुज्य पावें वे सन्त कहाते हैं। दश इन्द्रियों के विषय में और पूर्वोक्त आठ प्रकार के ऐश्वर्य में जो पुरुष न तो हर्ष करे और न शोक करे वह जितात्मा कहाता है। स्वर्ग आदि सुख को देनेहारे श्रुति स्मृति प्रतिपादित वर्ण आश्रम आदि धर्म के जानने से धर्मज्ञ कहाता है। विद्याके साधन से साधु, गुरुकी सेवा करने से ब्रह्मचारी, क्रियाओं के साधन से गृहस्थ, वनमें तप करने से वानप्रस्थ, मोक्षके लिये यत्न करने से यति और योगसाधन से योगी कहाता है। इस प्रकार आश्रम धर्मोंके साधन से साधु कहाता है। ब्रह्मचारी, गृहस्थ, वानप्रस्थ और यति ये चार आश्रम हैं। धर्म और

अधर्म ये दोनों शब्द क्रिया के वाचक हैं कुशल कर्म को धर्म और अकुशल कर्म को अधर्म कहते हैं, जिससे इष्ट-फल की प्राप्ति हो उसका नाम धर्म और जिससे अनिष्ट-फल मिले वह अधर्म कहाता है। जो वृद्ध, अलोलुप, अदाम्भिक, जितेन्द्रिय, विनय करके युक्त और सरल स्वभाववाला पुरुष हो वह आचार्य कहाता है अथवा सब धर्मों का आचरण करे व सबको आचार में स्थापन करे वही आचार्य होता है। देखे हुये अर्थ को पूछने से जो न छिपावे यथार्थ कहदेवे वही सत्यवादी है। ब्रह्मचर्य, मौन, निराहार, अहिंसा, शान्ति इनका नाम तप है। जो पुरुष सब जीवों के हित अहित को अपनी भांति समझे उसका नाम दयावान् है। गुणवान् को जो पदार्थ देना उसका नाम दान है वह दान तीन भांति का है कनिष्ठ मध्य और ज्येष्ठ। श्रुति स्मृति करके कहा हुआ जो वर्णाश्रम धर्म और शिष्टाचार से विरुद्ध न हो वही धर्म साधु अर्थात् उत्तम है। माया-रूप जो कर्म का फल उसके त्यागने से योगी शिवात्मा होता है। सब सङ्गों से निवृत्तही युक्त योगी कहाता है। विषयों में अलुब्ध होने से संयमी कहाता है। अपने निमित्त अथवा और के निमित्त जिसके इन्द्रिय मिथ्या न प्रवृत्त होवें वह शमयुक्त कहाता है। जो अनिष्ट से उद्वेग न करे और इष्ट से प्रसन्न न हो और प्रीति संताप तथा विषाद से निवृत्त हो वही विरक्त है। भले बुरे सब भांति के कर्मों के न्यास अर्थात् त्याग का नाम संन्यास है। प्रधान से लेकर परमाणु पर्यन्त

जो जड़ चैतन्य उनसे पृथक् ईश्वर को जानना ज्ञान कहाता है। इस प्रकार के ज्ञान और श्रद्धा से युक्त जो पुरुष है उसके ऊपर अवश्यही शंकर का अनुग्रह होता है। परमेश्वर में भक्ति होने से ही मुक्ति मिलती है क्योंकि भक्ति करके युक्त अयोग्य पुरुष के ऊपर भी परमेश्वर प्रसन्न होता है। ज्ञान, ध्यान, पाठ, जप, तप, अध्ययन, अध्यापन, दान आदि सब उपाय भक्ति की प्राप्ति के लिये हैं। हज़ारों चान्द्रायण, सैकड़ों प्राजापत्य और भी अनेक भांति के मासोपवासों से भक्ति ही उत्तम है। जो परमेश्वर में भक्तिहीन हैं वे स्वर्गादिकों की प्राप्ति के लिये कर्मजाल में मग्न होते हैं परन्तु भक्त तो अपनी दृढ़भक्ति से ही सब कुछ पाते हैं। शिवभक्तों के दर्शन करने से ही स्वर्ग आदि उत्तम लोक मनुष्यों को प्राप्त होते हैं। ब्रह्मा, विष्णु, इन्द्र आदि देवता भक्ति करके ही उत्तम पद को प्राप्तहुये हैं। भक्तिसे ही मुनियों का बल और सौभाग्य है। इतनी कथा सुनाकर सूत जी बोले कि हे मुनीश्वरो ! शिवजी ने काशी में जिस प्रकार मधुर वाणी से पार्वतीजी को कथा सुनाई वह हम आप को श्रवण कराते हैं। एक समय काशीक्षेत्र में पार्वतीजी शिवजी से पूछती भई कि हे महाराज! आप किस कर्म करके वश होते हैं तप या विद्या अथवा योगाभ्यास करके आप का अनुग्रह होता है यह आप कृपाकर कहें। ऐसा पार्वतीजी का वचन सुन शिवजी हँसकर कहने लगे कि हे पार्वति ! जिस प्रकार तुमने पूछा इसी भांति ब्रह्माजीने भी हमसे पूर्वकाल में पूछा

था। जब श्वेतकल्प में श्वेतवर्ण सद्योजात नाम व रक्तकल्प में रक्तवर्ण वामदेव नाम और पीतकल्प में पीत वर्ण तत्पुरुष नाम तथा कृष्णकल्पमें कृष्णवर्ण अघोर नाम और विश्वरूपकल्प में विश्वरूप ईशान नाम से हम को देख ब्रह्माजीने कहा कि हे सद्योजात, वामदेव, तत्पुरुष, अघोर, ईशान! आपका दर्शन हम को हुआ अब आप कृपाकर कहें कि किस प्रकार आप वश होते हैं और कहां आप का ध्यान करना चाहिये। यह ब्रह्माजी का वचन सुन श्रीमहादेवजी ने कहा कि हे ब्रह्माजी! केवल श्रद्धा से ही हम वश होते हैं और जो लिङ्ग समुद्र में विष्णुजी ने और तुमने देखा था उसमें हमारी पूजा करनी चाहिये। सद्योजात आदि पांच मन्त्रों से पञ्चवक्त्र-रूपकी पूजा करनी चाहिये और आज भी आपने भक्तिसे ही हमारा दर्शन पाया है। जब ब्रह्माजी ने कहा कि आप में मेरी दृढ़ भक्ति हो यह मैं चाहताहूं तब हमने ब्रह्माजी को अपनी दृढ़भक्ति दी। इससे हे पार्वति! भक्तिही हमारे वश करने का उपाय है। द्विजों को उचित है कि लिङ्ग में सदा हम को पूजें। श्रद्धा परमधर्म है। श्रद्धाही ज्ञान, तप, हवन आदि सब कर्मों का फल देनेवालीहै। श्रद्धा से ही स्वर्ग व मोक्ष मिलता है और सदा श्रद्धा करनेसे ही मेरा दर्शन होता है॥

ग्यारहवां अध्याय॥

यह सूतजी के मुखकमल से शिवजीका माहात्म्य सुन कर मुनि पूछते भये कि हे सूतजी! किसप्रकार सद्योजात,

वामदेव, तत्पुरुष, अघोर और ईशान को ब्रह्माजीने देखा उसको आप वर्णन करें। तब सूतजी कहने लगे कि हे मुनीश्वरो! उन्तीसवां कल्प श्वेतलोहित नाम था उसमें ब्रह्माजी समाधि लगाये परमेश्वर का ध्यान कररहे थे कि एक कुमार शिखा करके युक्त श्वेतलोहित वर्ण सद्योजात नामक प्रकट भया। तब ब्रह्माजी उस कुमार को देख अतिप्रसन्न हो अपने हृदय में उसीका ध्यान करने लगे और ध्यान करते करते जाना कि यह साक्षात् परमेश्वर है फिर अतिमुदित हो प्रणाम करतेभये तब सद्योजात के चार शिष्य श्वेतवर्ण सुनन्द, नन्दन, विश्वनन्दन और उपनन्दन उत्पन्न भये जो सद्योजात परब्रह्मका सदा सेवन करते हैं फिर सद्योजात के आगे श्वेतमुनि उत्पन्न भये जिनका नाम हर भी है। ये सब सद्योजात महेश्वरको परम भक्तिसे वेदपाठ करतेहुये शरणागत भये। तबसे जो पुरुष विश्वेश्वर श्रीमहादेवजी को तद्गतचित्त होके प्राणायाम में ध्यान करते हैं वे सब पापों से मुक्त हो विष्णुलोक के भी ऊपर रुद्रलोक में प्राप्त होते हैं॥

बारहवां अध्याय॥

सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो! तीसवें कल्प का नाम रक्त है, जिसमें ब्रह्माजी ने रक्तवर्ण धारण किया। ब्रह्माजी पुत्रकामना से ध्यान करते थे कि एक कुमार रक्तवर्ण और रक्तवर्णकेही वस्त्र भूषण पहिने रक्त जिस के नेत्र बड़ा प्रतापी प्रकट भया। ब्रह्माजी ने भी उसको ध्यान से जाना कि यह परमेश्वर है तब प्रणाम किया

और बहुतसी स्तुति की। तब उस कुमार ने कहा कि हे ब्रह्मन्! तुमने पुत्रकामना से ध्यान किया और मेरा दर्शन पाकर बहुत विनय से स्तुति की. इसलिये कल्प कल्प में सब जगत् के प्रभु परमेश्वर मुझ को भलीभांति जानोगे। इसके अनन्तर चार कुमार विरजा, विवाहु, विशोक, विश्वभावन नामक और उत्पन्न भये। ये चारों भी ब्रह्मरय, ब्रह्माजी के तुल्य, वीर, रक्तवर्ण के वस्त्र भूषण माला आदि से भूषित थे। येभी हज़ार वर्ष के अनन्तर उस वामदेवरूप ब्रह्म का चिन्तन करते हुये लोकों के अनुग्रह के लिये और शिष्यों के कल्याण के अर्थ सम्पूर्ण धर्म का उपदेश करके महादेव की देह में ही लीन हो जाते भये। इस भांति और भी जो द्विजों में श्रेष्ठ भक्ति से वामदेव ईश्वर का ध्यान करेंगे वे भी सब पापों से मुक्त हो रुद्रलोक में प्राप्त होंगे जहां से फिर आवृत्ति अर्थात् संसार में आगमन नहीं होता है॥

तेरहवां अध्याय॥

सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो! इकतीसवां पीतवासा नाम कल्प है जिसमें ब्रह्माजी ने पीतवर्ण धारण किया। ब्रह्माजी पुत्र के अर्थ ध्यान करते थे कि पीतवर्ण एक कुमार प्रकट भया। जो पीतवर्ण के वस्त्र व भूषण आदि पहिने, पीत गन्धसे अनुलिप्त, सुवर्ण का यज्ञोपवीत धारे, पीतही पगड़ी बांधे था। ब्रह्माजी ने भी ध्यान से जाना कि यह जगत् का प्रभु परमेश्वर है। तब ब्रह्माजी महेश्वर का ध्यान करने लगे। इसी अवसर में एक गौ जो

महेश्वर के मुखसे निकली थी और जिसके चार चरण, चार हस्त, चार मुख, चार स्तन, चार नेत्र, चार शृङ्ग और चार दंष्ट्राङ्कुर थे ब्रह्माजीने देखी। बत्तीस गुणों करके युक्त महेश्वरी उस धेनु को देख महादेवजीने कहा कि हे माते! हे स्मृति! यहां आव। यह शिवजीका वचन सुन वह धेनु भी हाथ जोड़ सम्मुख खड़ी भई। तब महादेवजी ने कहा कि तू रुद्राणी हो और पुत्र के अर्थ तप करतेहुये ब्रह्माजी के प्रति ब्राह्मणों के हितके लिये उस धेनुको देते भये। ब्रह्माजी भी धेनुरूप तत्पुरुष गायत्री को पाकर जपने लगे और महादेवजी की शरण में प्राप्त भये। तब शिव जीने प्रसन्नहो ब्रह्माजी को ऐश्वर्य, ज्ञानकी सम्पत्ति, योग और वैराग्य दिया। फिर तत्पुरुष नाम महादेवके समीप दिव्य कुमार प्रकट भये जो पीतवस्त्र, भूषण, माल्य, अनुलेपन धारण किये थे। और बड़े तेजस्वी ब्राह्मणों का हित करनेहारे धर्म और योगबल करके युक्त थे। वे एक सहस्र वर्ष तक तत्पुरुष के समीप निवास करके यज्ञ करनेहारे मुनियों को महायोग का उपदेश कर महेश्वर की देह में प्रवेश करते भये। इस भांति और भी जो पुरुष नियतात्मा और जितेन्द्रिय होकर परमेश्वर की शरण में प्राप्त होते हैं वेभी सब पापों से मुक्त हो कर महादेवमें ही लीन होते हैं जहां लीन होनेपर फिर पुनरावृत्ति नहीं होती अर्थात् फिर जन्म नहीं होता है॥

चौदहवां अध्याय॥

सूतजी बोले कि हे मुनीश्वरो! जब वह पीतकल्प

बीत गया तब असित अर्थात् कृष्णकल्प प्रवृत्त भया। जब सर्वत्र जल व्याप्त होरहाथा ब्रह्माजीने सृष्टि रचने की इच्छा की और ध्यान करने लगे पुत्र की कामनासे ध्यान करते करते ब्रह्माजी का कृष्णवर्ण होगया तब एक कुमार कृष्णवर्ण बड़ा तेजस्वी कृष्णवर्ण के वस्त्र भूषण माल्य अनुलेपन धारण किये अघोर नाम उत्पन्न भया उसको देख ब्रह्माजीने ध्यानसे जाना कि यह परमेश्वर है तब प्रणाम किया और प्राणायाम के समय उस महेश्वर का ध्यान करने लगे ध्यान करते करते ब्रह्माजी को अघोर का दर्शन भया फिर अघोर के समीप चार कुमार उत्पन्न भये जो कृष्णवर्ण के वस्त्र भूषण माल्य अनुलेपन धारण किये थे और उनके नाम कृष्ण, कृष्णशिख, कृष्णास्य और कृष्णवस्त्र थे ये सहस्र वर्ष पर्यन्त योग करके परमेश्वर का आराधन कर और अपने शिष्योंको योगका उपदेश दे परमेश्वर में लीन होते भये। इस भांति जो और भी पुरुष परमेश्वर का स्मरण करते हैं वे रुद्रलोक पाते हैं॥

पन्द्रहवां अध्याय॥

सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो! जब वह अति-भयानक कृष्णकल्प समाप्त भया तब ब्रह्माजी परब्रह्म-स्वरूप अघोर की स्तुति करने लगे उनकी स्तुति सुन कर प्रसन्न हो अघोर कहने लगे कि हे ब्रह्माजी! ब्रह्म-हत्या आदि बड़े घोर पातक, अनेक उपपातक, कायिक पाप, वाचिक पाप, मानसिक पाप और भी अनेक भांति

के पाप जो जानकर अथवा विना जाने किये हों हम सब इसी रूपसे हरते हैं (अघोरेभ्योऽथघोरेभ्यः) इत्यादि हमारा मन्त्र एक लाख जपने से ब्रह्महत्या दूर होती है। उससे आधा जप करने से वाचिक पाप, उस से आधे जप से मानस और चारगुणा जप करनेसे जान कर किये पाप और आठ गुणा करनेसे क्रोधकर किये सब पातक उपपातक दूर होते हैं। लक्ष जप करने से वीरहत्या और कोटि जपसे भ्रूणहत्या और दश लक्ष जप से मातृ-हत्या दूर होती हैं। गोहत्या करनेहारा, कृतघ्न, स्त्रीघा-तक और भी अनेक पापों से युक्त मनुष्य दशहज़ार जप करनेसे निष्पाप होजाता है। पैष्टी सुरा पीनेवाला लक्ष जप करने से और वारुणी पीनेवाला पचास हज़ार जप करके, विना स्नान किये भोजन करनेहारा एकसहस्र जप से, गायत्री जप और अग्निहोत्र विना किये भोजन करनेहारा भी एक सहस्र जप करके शुद्ध होता है। ब्राह्मण का धन हरनेहारा और सुवर्ण चुरानेहारा दश लक्ष जप करने से शुद्ध होता है। गुरुस्त्री में गमन करनेवाला, माता का वध अथवा ब्राह्मण का वध क-रनेहारा भी दश लक्ष जपसे निष्पाप होजाता है। पापी पुरुषों के संसर्ग से भी पाप लगता है वह पाप दश हज़ार जप करने से दूर होता है। संसर्ग करके लगेहुये बड़े पातक की निवृत्ति के लिये एक लक्ष मानस जप करे अथवा चार लक्ष उपांशु जप करे अथवा आठ लक्ष वाचिक जप करे। महापातक से आधा जप उपपातक दूर होने के अर्थ करे। विना जाने किये पाप दूर होने

के लिये उपपातक के जपसे आधा जप करे। ब्रह्महत्या, सुरापान, सुवर्ण की चोरी और गुरुस्त्रीगमन ये महापातक कहाते हैं इनका करनेहारा ब्राह्मण रुद्र गायत्री करके कपिला गौ का मूत्र पीवे और (गन्धद्वारा) इस मन्त्र करके उसीका गोबर ऊपर ग्रहण करे भूमिपर न गिरने देवे (तेजोसिशुक्रं) इस मन्त्र करके कपिलाका घृत (आप्यायस्व) इस मन्त्र करके दूध और (दधिक्राव्णा) इस मन्त्र करके दही और (देवस्यत्वा) इस मन्त्र करके कुशोंका जल लेकर सबको सुवर्ण के पात्र में इकट्ठाकर अघोर मन्त्र से अभिमन्त्रित करे अथवा ताम्र के पात्रमें या कमल के अथवा पलाश के पत्रमें ही इकट्ठा करलेवे और उसमें सब रत्नों करके युक्त सुवर्ण भी गेरे फिर एक लक्ष अघोर मन्त्र जप कर घृत आदि से हवन भी करे घृत, चरु, समिध, तिल, यव, धान्य इन द्रव्यों से अलग अलग हवन करे सब की सात सात आहुति देवे जो ये वस्तु न मिलें तो केवल घृत सेही हवन करे पीछे आठ द्रोण घृत से अघोर मन्त्र करके सदाशिव को स्नान करावे और दिन रात्रि उपवास करे दूसरे दिन प्रभातही स्नानकर उस पञ्चगव्य को प्राशन करे अर्थात् पीजावे और आचमन कर गायत्री का जप करे इस विधि के करने से कृतघ्न, ब्रह्मघाती, भ्रूणहा, वीरघाती, गुरुघाती, मित्रघाती, विश्वासघातक, सुवर्ण की चोरी करनेहारा, गुरुदारगामी, परस्त्री का धर्षण करनेहारा, ब्राह्मण का धन हरनेहारा, गोघाती, माता पिता का घातक, देवता की मूर्ति आदि को उखाड़नेवाला ये सब बड़े बड़े पापी

शुद्ध होजाते हैं और भी कायिक, वाचिक, मानसिक पाप इस प्रायश्चित्त के करने से दूर होजाते हैं। अधिक माहात्म्य कहां तक वर्णन करें अनेक जन्मों के पाप इस विधि से दूर होतेहैं। यह विधि हमने प्रसङ्ग से वर्णन की। सब पाप निवृत्ति होनेके अर्थ इस अघोर मन्त्र का जप अवश्य द्विज अर्थात् ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य इन तीन वर्णों को करना उचित है॥

सोलहवां अध्याय॥

सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो! असितकल्प के अनन्तर विश्वरूप कल्प भया उसमें ब्रह्माजी पुत्रकामना से तप करते थे कि विश्वरूपा सरस्वती उत्पन्न भई जो विश्वके सब वर्णों से युक्त वस्त्र भूषण माला अनुलेपन आदि धारण किये और विश्वमाता विश्व के यज्ञोपवीत उष्णीष गन्ध आदि धारे थीं और वेही ईशान देव नामक भी थीं। उस ईशानदेव, परमेश्वर, शुद्ध, स्फटिक के तुल्य निर्मल, सब वस्त्र भूषण धारे हुये को देख मन में उस सर्वव्यापी और सब के स्वामी का ध्यान कर ब्रह्माजी स्तुति करने लगे—

स्तोत्र॥

ओमीशान नमस्तेऽस्तु महादेव नमोऽस्तु ते। नमोऽस्तु सर्वविद्यानामीशान परमेश्वर १ नमोऽस्तु सर्वभूतानमीशान वृषवाहन। ब्रह्मणोऽधिपते तुभ्यं ब्रह्मणो ब्रह्मपिणे २ नमो ब्रह्माधिपतये शिवं मेऽस्तु सदाशिव। ओङ्

मूर्ते देवेश सद्योजात नमोनमः ३ प्रपद्ये त्वां प्रपन्नोऽस्मि सद्योजाताय वै नमः। अभवे च भवे तुभ्यं तथा नातिभवे नमः ४ भवोद्भवभवेशान मां भजस्व महाद्युते। वामदेव नमस्तुभ्यं ज्येष्ठाय वरदाय च ५ नमो रुद्राय कालाय कलनाय नमोनमः। नमो विकरणायैव कालवर्णाय वर्णिने ६ बलाय बलिनां नित्यं सदा विकरणाय ते। बलप्रमथनायैव बलिने ब्रह्मरूपिणे ७ सर्वभूतेश्वरेशाय भूतानां दमनाय च। नमोन्मनाय देवाय नमस्तुभ्यं महाद्युते ८ वामदेवाय वामाय नमस्तुभ्यं महात्मने। ज्येष्ठाय चैव श्रेष्ठाय रुद्राय वरदाय च। कालहन्त्रे नमस्तुभ्यं नमस्तुभ्यं महात्मने ९॥

इस प्रकार ब्रह्माजी ईशानदेव की स्तुति करतेभये। जो पुरुष इस स्तोत्र का पाठ करे वह ब्रह्मलोक पावे और जो श्राद्ध के समय ब्राह्मणों को सुनावे उसके पितर उत्तम गति को प्राप्त होवें॥

इस भांति ब्रह्माजी को स्तुति करते और बार बार प्रणाम करते देख परमेश्वर ईशानदेव ने कहा कि मैं तेरे ऊपर प्रसन्न हूं मांग जो चाहता है तब ब्रह्माजी कर जोड़ बड़ी नम्रता और भक्ति से प्रार्थना करने लगे कि हे प्रभो! यह चतुष्पादा, चतुर्मुखी, चतुश्शृङ्गी, चतुस्स्तनी, चतुर्दंष्ट्रा, चतुर्हस्ता, चतुर्नेत्रा, विश्वरूपा गौ कौन है और इसका नाम गोत्र और प्रभाव क्या है यह आप अनुग्रह कर मुझे उपदेश कीजिये यह ब्रह्माजी का वचन सुन ईशानदेव सब मन्त्रों का रहस्य अतिपवित्र मंगल देनेहारा अपने पुत्र ब्रह्माजी के प्रति कथन करने लगे

कि हे ब्रह्माजी! अब जो कल्प वर्तमान है इसका विश्वरूपा कल्प नाम है इसमें तुमने तो ब्रह्मपद प्राप्त किया और मेरे वाम अङ्ग से उत्पन्न श्रीविष्णुजी को वैकुण्ठ पद मिला अब यह तेंतीसवां कल्प है और हज़ारों कल्प तथा हज़ारों ब्रह्मा तुमसे पहिले बीत चुके हैं [illegible] माण्डव्य गोत्र है और हमारे पुत्ररूप से उ[illegible] भये हो इसलिये तुमको वह परब्रह्मरूप आनन्द [illegible]ना योग्य है और तुम्हारे में योग, सांख्य, [illegible] [illegible]धि, क्रिया, प्रियभाषण, सत्य, दया, [illegible] [illegible]हिंसा, [illegible] बुद्धि, क्षमा, ध्यान, ध्येय, दम, शान्ति, ज्ञान, आ[illegible] [illegible], कान्ति, नीति, ख्याति, मेधा, लज्जा, दृष्टि, सरस्वती, तु[illegible], पुष्टि, कर्म और प्रसन्नता ये गुण हैं यह विश्वरूपा धेनु तुम्हारी उत्पत्ति करनेहारी है इसमें ये बत्तीस गुण हैं और ककार आदि बत्तीस अक्षर इसका स्वरूप है इसलिये वे गुण तुममें भी हैं सो यह भगवती चतुर्मुखी जगत् के उत्पन्न करनेहारी प्रकृति मुझ से उपजी है जिसको तत्त्ववेत्ता पुरुष गौरी, माया, विद्या, कृष्णा, हैमवती, प्रधान और प्रकृति इत्यादि नामों से पुकारते हैं। यह माया अजा अर्थात् उत्पन्न नहीं होती है। रक्त, शुक्ल और कृष्ण इसके वर्ण हैं। सब सृष्टि के सिर्जनेहारी है और मैंभी विश्वरूप अज अर्थात् किसीसे उत्पन्न नहीं होता हूं। इतना ब्रह्माजी के प्रति महादेवजी कथन कर अनेक प्रकार के कुमार उत्पन्न करते भये कोई उनमें जटा धारे, कोई आधा शिर और कोई कोई सम्पूर्ण शिर मुड़वाये, कोई मयूर के पङ्ख शिरपर धारेथे। वे सब दिव्य

हज़ार वर्ष तक योग करके महेश्वर का आराधन कर और योग का उपदेश अपने शिष्य प्रशिष्यों को देकर शिवमेंही लीन होते भये॥

सत्रहवां अध्याय॥

सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो! यह सद्योजात आदि शिवजी के अवतारों की कथा हमने संक्षेप से तुमको सुनाई। इस कथा को जो पढ़े और सुनावे अथवा सुने वह ब्रह्मलोक पावे। अब ऋषिलोग सूतजी से पूछते भये कि हे सूतजी! किस भांति लिङ्ग उत्पन्न भया और लिङ्ग में किस प्रकार शिवजी की पूजा करनी योग्य है यह आप कहें और लिङ्ग कौन है तथा लिङ्गी कौन है यह भी आप कथन कीजिये। यह मुनियों का प्रश्न सुन सूतजी कहने लगे कि हे मुनीश्वरो! यही प्रश्न सब देवता ब्रह्माजी के प्रति करते भये कि हे महाराज! यह लिङ्ग क्योंकर उत्पन्न भया और लिङ्ग में किस भांति शिवजी की पूजा करनी चाहिये। लिङ्ग क्या है और लिङ्गी कौन है। यह सुन ब्रह्माजी कहने लगे कि प्रधान का नाम लिङ्गी है और परमेश्वर लिङ्गी कहाता है जो समुद्र में हमारी और विष्णुजी की रक्षा के अर्थ प्रकट भया। जब वैमानिक सर्ग अर्थात् देवताओं की सृष्टि समाप्त भई और चार हज़ार युग के अन्त में वृष्टि न होनेसे स्थावर जङ्गम सब शुष्क होगये और पशु, पक्षी, मनुष्य, वृक्ष, पिशाच, राक्षस, गन्धर्व आदि सब सूर्य के किरणों से दग्ध होगये और पीछे समुद्र ने सबको अपने जलमें डुबोलिया

और अन्धकार सब ओर फैलगया तब वह योगात्मा निर्मल निरुपद्रव हज़ार जिसके नेत्र हज़ार शिर हज़ार जिसके चरण हज़ार भुज सब देवताओं को उत्पन्न करनेहारा रजोगुण करके ब्रह्मा, तमोगुण करके रुद्र और सत्वगुण करके विष्णु और सर्वगुणोंसे महेश्वरस्वरूप सर्वज्ञ नारायण कमलके तुल्य जिनके नेत्र प्रकट भये और उनको हमने सोतेहुये देखा। तब उनकी माया से मोहित हो क्रोध से हमने कहा कि तू कौन है और हाथसे पकड़ कर सोनेसे उठाया। वे भी शेषनागरूप शय्यासे उठे और उनके नेत्रकमलों में नींद भरीथी। तब वे सम्मुख बैठेहुये हमको देख हँसकर बोले कि हे पुत्र! तुम्हे स्वागत हो तबतो हमको औरभी क्रोध भया और हमने कहा कि सब जगत् की उत्पत्ति करनेहारे हमको पुत्र क्यों कहता है जैसे गुरु शिष्य को कहे उस भांति हमको क्यों कथन किया। साक्षात् जगत् का कर्ता और प्रकृति का प्रवर्तन करनेहारा मैंही हूं फिर तू मोहसे क्योंकर हमको पुत्र कहताहै। तब विष्णुजी ने कहा कि हे ब्रह्माजी! इस जगत् के कर्ता हर्ता हमीं हैं और तुमभी हमारे अङ्गसेही उत्पन्न भये हो पर जगत् के स्वामी हमको क्यों कर भूलगये। किन्तु यह तुम्हारा अपराध नहीं है यह सब हमारी मायाका चमत्कार है हे ब्रह्माजी! तुम सत्य मानो कि सब देवताओंके स्वामी हमीं हैं और जगत् के कर्ता हर्ता भी हमीं हैं हमारे तुल्य कोई दूसरा नहीं है। परब्रह्म, परतत्त्व, परमात्मा, परज्योति आदि हमीं हैं। जगत् में जो स्थावर जङ्गम दृष्टि आता है सब में हमीं

व्याप्त हैं। पूर्वकाल में अव्यक्त मैंने रचा और चौबीस तत्त्व रचे और तुम्हें तथा अनेक ब्रह्माण्ड निर्माण किये। बुद्धिको मैंने ही रचा और उसमें तीन प्रकार का अहङ्कार, पांच तन्मात्रा, मन, देह, इन्द्रिय, आकाश आदि पांचभूत सब मैंने रचे हैं। यह उनका वचन सुन हमको बहुत क्षोभ हुआ और उस प्रलयकालके समुद्र में दोनों का युद्ध होने लगा और बहुत काल तक हम दोनों का घोर युद्ध भया। तब हमारी कलहनिवृत्ति करने और हमको ज्ञान देने के अर्थ एक लिङ्ग हमारे सम्मुख प्रकट भया। जो हज़ारों अग्निकी ज्वालाओंसे व्याप्त और अतिप्रकाशमान मानो सैकड़ों प्रलयाग्नि इकट्ठे होगये हैं और क्षय वृद्धि से रहित जिसके आदि अन्त का ठीकही नहीं जिसको उपमा देने के लिये कोई पदार्थ बुद्धि पर ही नहीं ठहरता है। उस लिङ्गको देख हम दोनों मोहित हुये। तब विष्णुजी ने हमसे कहा कि यह अग्निका स्तम्भ सा खड़ा है। इसका अन्त लेनेको नीचे की ओर हम जाते हैं और ऊपर को तुम जाओ यह कहकर वे वाराहरूप धारते भये और हमने हंस का रूप धारा। उसी दिनसे हमको हंस कहते हैं। हम अतिवेग से ऊपरको उड़े और विष्णुजी भी अञ्जनके पर्वत सा जिसका आकार दश योजन चौड़ा और शत योजन लम्बा और मेरु पर्वत की भांति अति ऊंचा अतिश्वेत और तीक्ष्ण जिसकी दंष्ट्रा प्रलय के सूर्य की भांति अतितेजस्वी बड़ाघोर शब्द करनेहारा छोटे छोटे जिसके पैर अतिदृढ़ देह वाराह बनकर लिङ्ग के नीचे

की ओर प्रवेश करतेभये। इसभांति हज़ारवर्ष तक चले गये परन्तु लिङ्ग का अन्त न पाया और हमभी ऊपर को बहुत उड़े परन्तु लिङ्ग का अग्र न देखा। तब दोनों व्याकुल हो लौट आये और बार बार उस परमेश्वर को प्रणामकर उसकी माया से मोहित हो विचार करनेलगे कि यह क्या है कि जिसका कहीं अन्त न आदि, यह विचार करते करते एक ओर प्लुतस्वर से ॐ ॐ यह शब्द सुनपड़ा। तब हम दोनों विचार करनेलगे कि यह क्या शब्द है तो लिङ्ग के दक्षिण ओर ॐकारका स्वरूप देख पड़ा। जिसका प्रथम अक्षर अकार व दूसरा उकार और तीसरा मकार है। उनमें सूर्यमण्डल के तुल्य अकार दक्षिण की ओर प्रकाशमान है। अग्नि की भांति देदीप्यमान उकार उत्तर की ओर है। चन्द्र-मण्डल के सदृश मकार मध्य में विराजमान है। उसके ऊपर शुद्ध स्फटिक के तुल्य तुरीयातीत, अमृत, निष्फल, निरुपद्रव, निर्द्वन्द्व, शून्य, बाह्य व अभ्यन्तरसे रहित, आदि अन्त करके वर्जित, परम आनन्द का कारण विराजमान है। जिस प्रणव में तीन मात्रा ऋक्, यजु और सामरूप हैं और आधी मात्रा उसके ऊपरहै और उसी प्रणवसे वेद उत्पन्न भया और उस वेद सेही विष्णुजीने परमेश्वरको जाना। जिस रुद्रको मन और इन्द्रिय नहीं जान सकतीं वही प्रणव का वाचक है और उसी प्रणव के अकार अक्षर से ब्रह्मा, उकार से विष्णु और मकार से शिव उत्पन्न भये। अकार सृष्टिकर्ता है उकार सबको मोह करनेहाराहै और मकार सदा अनुग्रह

किया करता है। मकार प्रभु और बीजवान् है, अकार बीज है, प्रधान पुरुषेश्वर उकाररूप विष्णुयोनि है। उस बीजवान् के लिङ्ग से अकाररूप बीज उत्पन्न होकर उकाररूप योनिमें गिरा और चारों ओर वृद्धिको प्राप्त होने लगा और सुवर्ण का अण्ड होकर बहुत काल जल में रहा और कई हजार वर्ष के अनन्तर उस अण्ड के दो भाग परमेश्वर ने किये। जिनमें ऊपर का भाग आकाश और नीचे का पृथिवी भया और उसी अण्ड से चतुर्मुख ब्रह्मा उत्पन्न भये कि जिन्होंने सब लोक रचे। इस प्रकार ॐ ॐ शब्द से यह ब्रह्माण्ड भया, यह यजुर्वेद जाननेहारे कहते हैं तथा इसी भांति ऋग्वेद और सामवेद में भी कहा है। इस प्रकार हम दोनों उस लिङ्गरूप परमेश्वर को जान श्रुतियोंसे स्तुति करते भये। वह परमेश्वरभी हमारी स्तुतिसे प्रसन्न हो शब्द-मय रूप धार कर हँसते हुये हमारे सम्मुख उस लिङ्ग में प्रकट भये। अकार जिनका मस्तक, आकार ललाट, इकार दाहिना नेत्र, ईकार वामनेत्र, उकार दाहिना कर्ण, ऊकार वामकर्ण, ऋकार दक्षिण कपोल, ॠकार वाम कपोल, ऌकार दक्षिण नासिका, ॡकार वाम नासिका, एकार ऊपर का ओष्ठ, ऐकार नीचेका ओष्ठ, ओकार ऊपर की दन्तपङ्क्ति, औकार नीचे की दन्तपङ्क्ति, अं ऊपर का तालु और अः नीचे का है। इसी भांति ककार आदि पांच अक्षर दाहिनी ओरके पांच हाथ, चकार आदि पांच अक्षर बाईं ओर के पांच हाथ, टकार आदि पांच अक्षर दक्षिण पाद और तकार आदि पांच वर्ण वामपाद, पकार

उस परमेश्वर का उदर, फकार दक्षिण पार्श्व, बकार वाम पार्श्व, भकार स्कन्ध, मकार हृदय। यकार आदि सात वर्ण जिसके सातों धातु, हकार आत्मा और क्षकार जिस परमेश्वर का क्रोधरूप उस पार्वतीसहित परमेश्वर को देख विष्णु भगवान् बारबार प्रणामकर ऊपर को देखते भये कि ॐकार से उत्पन्न पांच कला करके युक्त शुद्धस्फटिक के तुल्य अड़तीस अक्षर का सब धर्म अर्थ का साधन करनेहारा बुद्धिका वर्धक (ईशानः सर्वविद्यानाम्) यह मन्त्र देखपड़ा। दूसरा मन्त्र (तत्पुरुषाय विद्महे) यह गायत्रीरूप हरितवर्ण वश्य करनेहारा चौबीस अक्षरों का और चार कला करके युक्त ऋग्वेद का देखा। तीसरा अघोरमन्त्र आठ कला करके युक्त तेंतीस अक्षर का आभिचारिक कृष्णवर्ण अथर्ववेदका देखा। चौथा सद्योजात मन्त्र यजुर्वेदका पैंतीस अक्षरों करके युक्त शान्ति करनेहारा श्वेतवर्ण दृष्टि आया। पांचवां वामदेव मन्त्र सामवेद का रक्तवर्ण तेरह कला करके युक्त, जगत् की वृद्धि और संहार करनेहारा छासठ वर्णों का देखा इन पांच मन्त्रों को पाकर विष्णुजी बहुत काल जप करते भये। बहुत कालके अनन्तर ऋक् यजु सामवेद स्वरूप चौंसठ कला जिसकी कान्ति, ईशान मन्त्र जिसका मुकुट, तत्पुरुष मन्त्र मुख, अघोरमन्त्र हृदय, वामदेवमन्त्र गुह्य और सद्योजातमन्त्र जिस परमेश्वर के चरण थे। बड़े बड़े सर्पों के भूषण धारे, चारों ओर जिसके हाथ पांव नेत्र मुख थे, सबके स्वामी और सृष्टि स्थिति संहार करनेहारे उस परमेश्वर को देखा और हाथ

जोड़ बड़ी भक्ति से श्रीविष्णुजी स्तुति करने लगे।

अठारहवां अध्याय ॥

शिवस्तुति ॥

विष्णुरुवाच। एकाक्षराय रुद्राय अकारायात्मरूपिणे। उकारायादिदेवाय विद्यादेहाय वै नमः १ तृतीयाय मकाराय शिवाय परमात्मने। सूर्याग्निसोमवर्णाय यजमानाय वै नमः २ अग्नये रुद्ररूपाय रुद्राणां पतये नमः। शिवाय शिवमन्त्राय सद्योजाताय वेधसे ३ वामाय वामदेवाय वरदायामृताय ते। अघोरायातिघोराय सद्योजाताय रंहसे ४ ईशानाय श्मशानाय अतिवेगाय वेगिने। नमोऽस्तु श्रुतिपादाय ऊर्ध्वलिङ्गाय लिङ्गिने ५ हेमलिङ्गाय हेमाय वारिलिङ्गाय चाम्भसे। शिवाय शिवलिङ्गाय व्यापिने व्योमव्यापिने ६ वायवे वायुवेगाय नमस्ते वायुव्यापिने। तेजसे तेजसांभर्त्रे नमस्तेजोधिव्यापिने ७ जलाय जलभूताय नमस्ते जलव्यापिने। पृथिव्यै चान्तरिक्षाय पृथिवीव्यापिने नमः ८ शब्दस्पर्शस्वरूपाय रसगन्धाय गन्धिने। गणाधिपतये तुभ्यं गुह्याद्गुह्यतमाय ते ९ अनन्ताय विरूपाय अनन्तानामयाय च। शाश्वताय वरिष्ठाय वारिगर्भाय योगिने १० संस्थितायाम्भसां मध्ये आवयोर्मध्यवर्चसे। गोप्त्रे हर्त्रे सदा कर्त्रे निधनायेश्वराय च ११ अचेतनाय चिन्त्याय चेतनायासहारिणे। अरूपाय सुरूपाय अनङ्गायाङ्गहारिणे १२ भस्मदिग्धशरीराय भानुसोमाग्निहेतवे। श्वेताय श्वेतवर्णाय तुहिनाद्रिचराय च १३ सुश्वेताय सुवक्त्राय नमः श्वेताशि-

खाय च। श्वेतास्याय महास्याय नमस्ते श्वेतलोहित १४
सुताराय विशिष्टाय नमो दुन्दुभिने हर। शतरूपविरूपाय
नमः केतुमते सदा १५ ऋद्धिशोकविशोकाय पिनाकाय
कपर्दिने। विपाशाय सुपाशाय नमस्ते पापनाशिने १६
सुहोत्राय हविष्याय सुब्रह्मण्याय सूरये। सुमुखाय सुव-
क्त्राय दुर्दमाय दमाय च १७ कङ्काय कङ्करूपाय कङ्कणी-
कृतपन्नग। सनकाय नमस्तुभ्यं सनातन सनन्दन १८
सनत्कुमार सारङ्गमारणाय महात्मने। लोकाक्षिणे त्रिधा-
माय नमो विरजसे सदा १९ शङ्खपालाय शेषाय रजसे
तमसे नमः। सारस्वताय मेघाय मेघवाहन ते नमः २०
सुवाहाय विवाहाय विवादवरदाय च। नमः शिवाय रुद्राय
प्रधानाय नमोनमः २१ त्रिगुणाय नमस्तुभ्यं चतुर्व्यूहा-
त्मने नमः। संसाराय नमस्तुभ्यं नमः संसारहेतवे २२
मोक्षाय मोक्षरूपाय मोक्षकर्त्रे नमोनमः। आत्मने ऋषये
तुभ्यं स्वामिने विष्णवे नमः २३ नमो भगवते तुभ्यं ना-
गानाम्पतये नमः। ॐकाराय नमस्तुभ्यं सर्वज्ञाय नमो
नमः २४ सर्वाय च नमस्तुभ्यं नमोनारायणाय च। नमो
हिरण्यगर्भाय आदिदेवाय ते नमः २५ नमोऽस्त्वजाय
पतये प्रजानां व्यूहहेतवे। महादेवाय देवानामीश्वराय
नमोनमः २६ शर्वाय च नमस्तुभ्यं सत्याय शमनाय च।
ब्रह्मणे चैव भूतानां सर्वज्ञाय नमोनमः २७ महात्मने
नमस्तुभ्यं प्रज्ञारूपाय वै नमः। चितये चितिरूपाय
स्मृतिरूपाय वै नमः २८ ज्ञानाय ज्ञानगम्याय नमस्ते
संविदे सदा। शिखराय नमस्तुभ्यं नीलकण्ठाय वै नमः २९
अर्धनारीशरीराय अव्यक्ताय नमोनमः। एकादशविभे-

दाय स्थाणवे ते नमः सदा ३० नमः सोमाय सूर्याय भवाय भवहारिणे । यशस्कराय देवाय शङ्करायेश्वराय च ३१ नमोऽम्बिकाधिपतये उमायाः पतये नमः । हिरण्यबाहवे तुभ्यं नमस्ते हेमरेतसे ३२ नीलकेशाय चित्राय शितिकण्ठाय वै नमः । कपर्दिने नमस्तुभ्यं नागाङ्गाभरणाय च ३३ वृषारूढाय सर्वस्य कर्त्रे हर्त्रे नमोनमः ॥

ब्रह्माजी कहते हैं कि हे देवताओ ! इस प्रकार विष्णुजी स्तुति कर बार बार प्रणाम करते भये । यह सब पापों का दूर करनेहारा स्तोत्र जो पाठ करे अथवा वेद के जाननेवाले ब्राह्मणोंको सुनावे वह पापी भी ब्रह्मलोक पावे । इसलिये यह विष्णुजी का कहा हुआ स्तोत्र सब पाप दूर करने के अर्थ नित्य पठन करना और ब्राह्मणोंको श्रवण कराना चाहिये ॥

उन्नीसवां अध्याय ॥

सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो ! इस प्रकार की स्तुतिको सुनकर महादेवजी प्रसन्न हो कहनेलगे कि हम तुमसे प्रसन्न हैं तुम भय छोड़ हमारा दर्शन करो । तुम दोनों मेरी देहसे उत्पन्न भये हो, यह सब सृष्टिका उत्पन्न करनेहारा ब्रह्मा मेरे दक्षिण अङ्गसे और विष्णु वाम अङ्गसे उत्पन्न भया है । अब मैं तुमसे बहुत प्रसन्न हूं जो वर तुमको चाहिये वह मांगो । इतना कह महादेवजी प्रीतिसे अपने हस्त करके हमारे शरीरको स्पर्श करते भये । यह महादेवजी का वचन सुन विष्णुजी कहने लगे कि हे नाथ ! जो आप हम पर प्रसन्न हैं और वर

देना चाहते हैं तो यही वर मिले कि आपके चरणों में हम दोनों की दृढ़ भक्ति होवे । यह उनकी प्रार्थना सुन श्रीमहादेवजी दृढ़भक्ति अपने चरणों में देते भये। विष्णुजी भूमि पर दण्डवत् प्रणाम कर कहने लगे कि हे महाराज ! आप हमारा विवाद दूर करने के अर्थ प्रकट भये, यह परम अनुग्रह किया । ऐसा कर जोड़ बिनती करते हुये श्रीविष्णुजी का वचन सुन हँसकर महादेव जी ने कहा कि हे विष्णुजी ! उत्पत्ति, स्थिति, संहार के कर्ता आप हैं, तुम इस चराचर जगत् का पालन करो। मैंही ब्रह्मा, विष्णु, रुद्ररूप से सृष्टि, स्थिति, संहार करता हूं इसलिये तुम तीनों मेराही रूप हो। तुम इस मोहको छोड़ कर जगत् का पालन करो । पाद्मकल्प में ब्रह्माजी तुम्हारे पुत्र होंगे तबभी तुम दोनों को मेरा दर्शन होगा। इतना कह महादेवजी वहांही अन्तर्धान भये । उसी दिनसे जगत् में शिवलिङ्गकी पूजाका प्रचार भया। लिङ्गकी वेदी अर्थात् जलहरी पार्वती और लिङ्ग साक्षात् शिवका रूप है । सब जगत् का उसीमें लय होता है इसलिये उसका नाम लिङ्ग है । यह लिङ्ग का आख्यान जो ब्राह्मण शिवलिङ्ग के समीप पठन करे वह भी शिव-रूप है [illegible] इसमें कुछ सन्देह नहीं है ॥

बीसवां अध्याय ॥

ऋषि [illegible] पूछते हैं कि हे सूतजी ! पाद्मकल्प में ब्रह्माजी प[illegible] किस भांति उपजे और ब्रह्माजी तथा विष्णुजी को [illegible]स भांति शिवजी का दर्शन भया, यह

सब वृत्तान्त आप विस्तार से कथन करें। यह मुनियों का वचन सुन सूतजी बोले कि हे मुनीश्वरो! उस प्रलय के समय सब जगत् जलमय होरहा था और अन्धकार चारों ओर व्याप्त होरहा था। उस समुद्र में शंख, चक्र, गदा, पद्म धारण किये, नील मेघ के तुल्य जिनका वर्ण, कमलसे नेत्र, मुकुट धारे, आठ जिनके भुज बड़े विस्तार और ऊँचाई करके युक्त, जो हज़ार फणों करके युक्त शेषनागरूप शय्यापर लक्ष्मीजी सहित अचिन्त्य योग में स्थित होकर श्रीविष्णुजी शयन करते भये। उस समय श्रीविष्णुजी ने अपनी क्रीड़ा के निमित्त शतयोजन विस्तारवाला एक कमल बड़े ऊंचे वज्रदण्ड करके युक्त अपनी नाभिसे उत्पन्न किया और उस कमल से क्रीड़ा करने लगे। इस अवसर में चतुर्मुख ब्रह्मा वहां आये और विष्णुजीको देख बड़े आश्चर्य से कहने लगे कि तुम कौन हो और इस समुद्रके बीचमें क्यों सोते हो। ऐसा ब्रह्माजीका वचन सुन विष्णु जी उठ बैठे और कहने लगे कि प्रतिकल्प में हम यहां ही शयन करते हैं और आकाश, भूमि, स्वर्ग आदिके हमीं प्रभु हैं, इतना कह फिर ब्रह्माजी से कहा कि तुम कौन हो और कहां से आये, कहां जावोगे, कहां रहते हो और हम तुम्हारा क्या सत्कार करें। यह विष्णुजी का वचन सुन शम्भुकी मायासे मोहित हुये विष्णुजी को विना जाने ब्रह्माजी कहने लगे कि जैसे तुम जगत् के प्रभु अपने को कहते हो इसीभांति हमभी जगत् के स्वामी और सिरजनेहारे हैं। ऐसा ब्रह्माजी का वचन सुन विष्णुजी

को बड़ा आश्चर्य भया और ब्रह्माजी की आज्ञा पाय विष्णुजी उनके मुख में प्रवेश करते भये। वहां ब्रह्माजी के उदर में अठारह द्वीप, सात समुद्र, बड़े बड़े पर्वत, सात लोक, ब्राह्मण आदि चारवर्ण और अनेक भांति के स्थावर जङ्गम विष्णुजी देखते भये और विस्मित हो विचार करने लगे कि बड़ा भारी तप ब्रह्माजी का है और इधर उधर विचरने लगे परन्तु हज़ारों वर्ष तक कभी अन्त न पाया तब फिर मुखके मार्ग बाहर निकल आये और ब्रह्माजी से कहने लगे कि आपके उदर का कुछ अन्त नहीं किन्तु मेरे उदर में भी आप प्रवेश करें और इन सब लोकों को देखें यह विष्णुजी की वाणी सुन ब्रह्माजी उनके उदर में प्रवेश करते भये और वहां सब लोकों को देख भ्रमण करनेलगे परन्तु अन्त न पाया और विष्णुजी भी अपने सब मुख आदि द्वारों को रोक कर शयन करते भये। ब्रह्माजी को बाहर निकलनेकी इच्छा भई जब किसी ओर भी राह न मिली तो सूक्ष्मरूप धार विष्णुजी की नाभि के मार्ग कमलनाल के सहारे बाहर निकल आये और उस नाभिकमल के ऊपर विराजमान होगये इसी अवसरमें शूल हस्तमें लिये सुन्दर वस्त्र धारे महादेवजी वहां आये और उनके चरणों से पीड़ित हुये समुद्रजलके बिन्दु आकाशतक पहुँचे और अतिशीतल कभी अतिउष्ण वायु चलने लगी। यह बड़ा आश्चर्य देख ब्रह्माजी विष्णुजी से कहनेलगे कि ये जल के बिन्दु और यह प्रचण्ड पवन इस कमल को कम्पायमान कररहा है यह क्या उपद्रव है यह आप कहें।

यह ब्रह्माजी का वचन सुन विष्णुजी मनमें विचार करने लगे कि यह हमारे नाभिकमल में कौन जीव है जो बहुत मीठी मीठी बातें बना रहा है यह मनमें विचार कर विष्णुजी बोले कि तुम कौन हो और क्या भय तुमको भया है। तब ब्रह्माजी बोले कि जिस प्रकार आपने हमारे उदर में प्रवेश कर सब लोक देखे इसी भांति हमने भी आपके उदरसें देखे परन्तु जब हमने बाहर निक-लना चाहा तब आपने ईर्षासे हमको वश करने के अर्थ सब द्वार रोक लिये तब हम सूक्ष्मरूप धार कमलनाल के मार्ग बाहर निकल आये इसमें आप कुछ बुरा न मानें और हमें जो आज्ञा करनी हो करें हम आपके अधीन हैं। यह ब्रह्माजी की बड़ी मधुर वाणी सुन विष्णुजी बोले कि हमने आपको बोध कराने के अर्थ सब द्वार रोके थे इसमें आप कुछ क्षोभ न करें। आप हमारे मान्य और पूज्य हैं इसलिये जो कुछ हमसे अप-कार बनपड़ा हो क्षमा करें और इस कमल से आप नीचे उतरें हम आपका भार नहीं सँभाल सक्ते हैं क्योंकि आप जगद्गुरु हैं। तब ब्रह्माजीने कहा कि आप वर मांगो हम देंगे। तब विष्णुजीने कहा कि यही वरहै किआपइस कमल से नीचे उतर आवें और हमारे पुत्र बनें तो आप भी परम हर्षको पावेंगे। आजसे तुम सबके स्वामी श्वेत उष्णीष अर्थात् पगड़ी धारे रहो और पद्मयोनि तुम्हारा नाम होगा और हमारे पुत्र होकर सात लोक के स्वामी होगे। यह तो विष्णुजी ने कहा और ब्रह्माजी भी जो वर विष्णुजी ने मांगे थे उनको देकर सब मनके विकल्प

दूर करते भये इसी अवसर में देखा कि सूर्यके तुल्य प्रकाशमान बड़ा जिनका मुख बड़ी बड़ी दंष्ट्रा ऊंचे जिनके केश दशभुजा त्रिशूल हाथ में लिये भयङ्कर रूप धारे मूंजकी मेखला पहिने बड़ा स्थूल जिनका मेढ़ भयानक शब्द करतेहुये शिवजी चले आते हैं ब्रह्माजी विष्णु जी से कहने लगे कि यह ऐसा भयङ्कर पुरुष कौन है जो सब दिशा और आकाश को व्याप्त किये तेजपुञ्जसा इधरही चला आता है तब विष्णुजी बोले कि ठीक है इनके चरणों से सब समुद्र व्याकुल होरहा है और जल के बिन्दुओं से तुम भीग गये और इनकी नासिका के पवन से यह हमारा नाभिकमल तुम्हारे सहित कांपता है ये साक्षात् पार्वतीप्राणनाथ जगत्के आदि अन्त करनेहारे महादेवजी हैं अब हम दोनों इनकी स्तुति करें। यह सुन क्रोध कर ब्रह्माजी बोले कि आप अपने स्वरूप को और हमारे स्वरूपको नहीं जानते। यह हमसे अधिक, महादेव नामक कौन है। यह सुन विष्णुजी बोले कि ब्रह्माजी! ऐसा आप न कहें ये जगत् के हेतु हैं और सब बीज इनके हैं ये बीजवान् हैं। पुराण पुरुष परमेश्वर इनकोही कहते हैं। यह जगत् इनका खिलौनाहै बीजवान् ये हैं। आप बीजहैं और हम योनिहैं। प्रधान, अव्यय, अव्यक्त, प्रकृति, तमयोनि ये सब हमारे नाम हैं। यह सुन ब्रह्माजी बोले कि हम क्योंकर बीज हैं और ये बीजवान् और आप योनि क्योंकर हैं यह मेरा सन्देह आप निवृत्त करें। तब विष्णुजी बोले कि इनसे अधिक कोई नहीं है इन्होंने अपने दो भाग किये हैं एक

प्रकृति दूसरा पुरुष इनका बीज सृष्टिके आदिमें हमारी जलरूप योनिमें गिरा और सुवर्णका अण्ड होगया और सहस्रवर्ष तक उसी जलमें रहा फिर वायुसे उसके दो भाग होगये एक पृथिवी दूसरा आकाश और यह मेरु पर्वत उसी अण्ड का उल्व अर्थात् जेर है जो गर्भ में अण्डेके ऊपर वेष्टन लिपटा रहता है। उस अण्ड के मध्य में हिरण्यगर्भ चतुर्मुख ब्रह्माजी उत्पन्न भये और उन्होंने सूर्य, चन्द्र, तारा, नक्षत्रपर्यन्त सब लोक शून्य देख विचार किया कि हम कौन हैं तब सब यतियों के स्वामी अतिसुन्दर स्वरूप वे कुमार उत्पन्न भये। फिर हज़ार वर्ष के अन्तर अतितेजस्वी कमल के तुल्य जिनके नेत्र श्रीमान् सनत्कुमार, ऋभु, सनक, सनातन, सनन्दन ये सब ऊर्ध्वरेता कुमार उत्पन्न भये। ये सब अति-ज्ञानी जगत् की स्थिति के हेतु तापत्रय करके रहित हैं थोड़ा सुख बहुत दुःख जीवन मरण बार बार जन्म लेना इत्यादि क्लेश इस संसारमें हैं स्वर्ग में भी थोड़ाही सुख है और नरक में केवल दुःख है और भावी कभी नहीं टलती यह विचार कर तीन तो ज्ञान में प्रवृत्त भये और ऋभु तथा सनत्कुमार दो तुम्हारे पास रहे जब वे सनक आदि ज्ञान में प्रवृत्त होगये तब तुम शिवजी की माया से मूढ़ भये और इसी भांति सब जीव ईश्वरकी माया से मोहित होरहे हैं। जिसप्रकार सब जगत् में मेरु पर्वत प्रसिद्ध है उसी भांति महादेवका माहात्म्य प्रसिद्ध है। इस प्रकार ईश्वर को जान और हमको समझ कर तथा सब जगत् के गुरु महादेवजी को मान

प्रणवयुक्त सामवेद करके स्तुति करो नहीं तो ये क्रोधसे तुमको और हमको दग्ध करदेंगे। इसलिये हम आपको आगे कर श्रीमहादेवजी की स्तुति करते हैं॥

इक्कीसवां अध्याय॥

सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो ! इसप्रकार विचार कर ब्रह्माजी को आगे कर व्यतीत, वर्तमान और भविष्य वैदिक नामों करके विष्णुजी श्रीमहादेवजी की स्तुति करने लगे॥

विष्णुरुवाच॥ नमस्तुभ्यं भगवते सुव्रतानन्ततेजसे। नमः क्षेत्राधिपतये बीजिने शूलिने नमः १ सुमेढ्रायाच्र्यमेढ्राय दण्डिने रूक्षरेतसे। नमो ज्येष्ठाय श्रेष्ठाय पूर्वाय प्रथमाय च २ नमो मान्याय पूज्याय सद्योजाताय वै नमः। गह्वराय घटेशाय व्योमवीराम्बराय च ३ नमस्ते ह्यस्मदादीनां भूतानां प्रभवे नमः। वेदानां प्रभवे चैव स्मृतीनां प्रभवे नमः ४ प्रभवे कर्मदानानां द्रव्याणां प्रभवे नमः। नमो योगस्य प्रभवे साङ्ख्यस्य प्रभवे नमः ५ नमो ध्रुवनिबद्धानां ऋषीणां प्रभवे नमः। ऋक्षाणां प्रभवे तुभ्यं ग्रहाणां प्रभवे नमः ६ वैद्युताशनिमेघानां गर्जितप्रभवे नमः। महोदधीनां प्रभवे द्वीपानां प्र[illegible] नमः ७ अद्रीणां प्रभवे चैव वर्षाणां प्रभवे नमः। [illegible] नदीनां प्रभवे नदानां प्रभवे नमः ८ महौषधीनां [illegible]भवे वृक्षाणां प्रभवे नमः। धर्मवृक्षाय धर्माय स्थितीनां [illegible]वे नमः ६ प्रभवे च परार्धस्य परस्य प्रभवे नमः। नमो [illegible]नां प्रभवे रत्नानां प्रभवे नमः १० क्षणानां प्रभवे चैव [illegible]नां

प्रभवे नमः। अहोरात्रार्धमासानां मासानां प्रभवे नमः ११ ऋतूनां प्रभवे तुभ्यं सङ्ख्यायाः प्रभवे नमः । प्रभवे चापरार्धस्य परार्धप्रभवे नमः १२ नमः पुराणप्रभवे सर्गाणां प्रभवे नमः। मन्वन्तराणां प्रभवे योगस्य प्रभवे नमः १३ चतुर्विधस्य सर्गस्य प्रभवेऽनन्तचक्षुषे । कल्पोदयनिबन्धानां वार्तानां प्रभवे नमः १४ नमो विश्वस्य प्रभवे ब्रह्माधिपतये नमः। विद्यानां प्रभवे चैव विद्याधिपतये नमः १५ नमो व्रताधिपतये व्रतानां प्रभवे नमः। मन्त्राणां प्रभवे तुभ्यं मन्त्राधिपतये नमः १६ पितॄणां पतये चैव पशूनां पतये नमः । वाग्वृषाय नमस्तुभ्यं पुराणवृषभाय च १७ नमः पशूनां पतये गोवृषेन्द्रध्वजाय च । प्रजापतीनां पतये सिद्धीनां पतये नमः १८ दैत्यदानवसङ्घानां रक्षसां पतये नमः । गन्धर्वाणां च पतये यक्षाणां पतये नमः १९ गरुडोरगसर्पाणां पक्षिणां पतये नमः। सर्वगुह्यपिशाचानां गुह्याधिपतये नमः२० गोकर्णाय च गोप्त्रे च शङ्कुकर्णाय वै नमः । वराहायाप्रमेयाय ऋक्षाय विरजाय च २१ नमो रसानां पतये गणानां पतये नमः। अम्भसां पतये चैव ओजसां पतये नमः २२ नमोस्तु लक्ष्मीपतये श्रीपते भूपते नमः। बलाबलसमूहाय अक्षोभ्यक्षोभणाय च २३ दीप्तशृङ्गैकशृङ्गाय वृषभाय ककुद्मिने । नमः स्थैर्याय वपुषे तेजसानुव्रताय च २४ अतीताय भविष्याय वर्तमानाय वै नमः। सुवर्चसे च वीर्याय शूराय ह्यजिताय च २५ वरदाय वरेण्याय पुरुषाय महात्मने । नमो भूताय भव्याय महते प्रभवाय च २६ जनाय च नमस्तुभ्यं तपसे वर-

दाय च। अणवे महते चैव नमः सर्वगताय च २७ नमो बन्धाय मोक्षाय स्वर्गाय नरकाय च। नमो भवाय देवाय इज्याय याजकाय च २८ प्रत्युदीर्णाय दीप्ताय तत्त्वायातिगुणाय च। नमः पाशाय शस्त्राय नमोऽस्त्वाभरणाय च २९ हुताय चोपहूताय प्रहृतप्राशिताय च। नमोऽस्त्विष्टाय पूर्ताय [illegible] नमश्चैव दक्षिण[illegible]थाय च। अहिंसायाप्रला[illegible] पशुमन्त्रौषधाय च [illegible] नमः पुष्टिप्रदानाय सुशीलाय सुशीलिने। अतीत[illegible] भविष्याय वर्तमानाय ते नमः ३२ सुवर्चसे च वीर्याय शूराय ह्यजिताय च। वरदाय वरेण्याय पुरुषाय महात्मने ३३ नमो भूताय भव्याय महते चाभयाय च। जरासिद्ध नमस्तुभ्यमयसे वरदाय च ३४ अधरे महते चैव नमोस्तु संस्तुताय च। नमश्चेन्द्रियपत्राणां लेलिहानाय स्रग्विणे ३५ विश्वाय विश्वरूपाय विश्वतः शिरसे नमः। सर्वतः पाणिपादाय रुद्रायाप्रतिमाय च ३६ नमो हव्याय कव्याय हव्यवाहाय वै नमः। नमः सिद्धमेध्याय इष्टायेज्यापराय च ३७ सुवीराय सुघोराय अक्षोभ्यक्षोभणाय च। सुप्रजाय सुमेधाय दीप्ताय भास्कराय च ३८ नमो बुद्धाय शुद्धाय विस्तृताय मताय च। नमः स्थूलाय सूक्ष्माय दृश्यादृश्याय सर्वशः ३९ वर्षते ज्वलते चैव वायवे शिशिराय च। नमस्ते वक्रकेशाय उरुवक्षःशिखाय च ४० नमोनमः सुवर्णाय तपनीयनिभाय च। विरूपाक्षाय लिङ्गाय पिङ्गलाय महौजसे ४१ वृष्टिघ्नाय नमश्चैव नमः सौम्येक्षणाय च। नमो धूम्राय श्वेताय कृष्णाय लोहिताय च ४२ पिशिताय पिशङ्गाय

पीताय च निषङ्गिणे । नमस्ते सविशेषाय निर्विशेषाय वै नमः ४३ नम इज्याय पूज्याय उपजीव्याय वै नमः । नमःक्षेम्याय वृद्धाय वत्सलाय नमोनमः ४४ नमो भूताय सत्याय सत्यासत्याय वै नमः । नमो वै पद्मवर्णाय मृत्युघ्नाय च मृत्यवे४५ नमो गौराय श्यामाय कद्रवे लोहिताय च । महासन्ध्याभ्रवर्णाय चारुदीप्ताय दीक्षिणे ४६ नमः कमलहस्ताय दिग्वासाय कपर्दिने । अप्रमाणाय सर्वाय अव्ययायामराय च४७नमो रूपाय गन्धाय शाश्वतायाक्षयाय च । पुरस्ताद्बृंहते चैव विभ्रान्ताय कृताय च ४८ दुर्गमाय महेशाय क्रोधाय कपिलाय च। तर्क्यातर्क्यशरीराय बलिने रंहसाय च ४९ सिकत्याय प्रबाह्याय स्थिताय प्रसृताय च । सुमेधसे कुलालाय नमस्ते शशिखण्डिने ५० चित्राय चित्रवेषाय चित्रवर्णाय मेधसे । चेकितानाय तुष्टाय नमस्ते निहिताय च ५१ नमः क्षान्ताय दान्ताय वज्रसंहननाय च । रक्षोघ्नाय विषघ्नाय शितिकण्ठोर्ध्वमन्यवे ५२ लेलिहाय कृतान्ताय तिग्मायुधधराय च । सम्मोदाय प्रमोदाय यतिवेद्याय ते नमः ५३ अनामयाय शर्वाय महाकालाय वै नमः । प्रणवप्रणवेशाय भगनेत्रान्तकाय च ५४ मृगव्याधाय दक्षाय दक्षयज्ञान्तकाय च । सर्वभूतात्मभूताय सर्वेशातिशयाय च ५५ पुरघ्नाय सुशस्त्राय धन्विनेऽथ परश्वधे । पूषदन्तविनाशाय भगनेत्रान्तकाय च ५६ कामदाय वरिष्ठाय कामाङ्गदहनाय च । रङ्गेकरालवक्त्राय नागेन्द्रवदनाय च ५७ दैत्यानामन्तकेशाय दैत्याक्रन्दकराय च । हिमघ्नाय च तीक्ष्णाय आर्द्रचर्मधराय च ५८

श्मशानरतिनित्याय नमोस्तूल्मुकधारिणे। नमस्ते प्राण-पालाय मुण्डमालाधराय च ५९ प्रहीणशोकैर्विविधैर्भूतैः परिवृताय च। नरनारीशरीराय देव्याः प्रियकराय च ६० जटिने मुण्डिने चैव व्यालयज्ञोपवीतिने। नमोस्तु नृत्य-शीलाय उपनृत्यप्रियाय च ६१ मन्यवे गीतशीलाय मुनिभिर्गीयते नमः। कटङ्कटाय तिग्माय अप्रियाय प्रियाय च ६२ विभीषणाय भीष्माय भगप्रमथनाय च। सिद्धसङ्घानुगीताय महाभागाय वै नमः ६३ नमो मुक्ता-दिहासाय क्ष्वेडितास्फोटिताय च। नर्दते कूर्दते चैव नमः प्रमुदितात्मने ६४ नमो मृडाय श्वसते धावते धिष्ठिते नमः। ध्यायते जृम्भते चैव रुदते द्रवते नमः ६५ वल्गते क्रीडते चैव लम्बोदरशरीरिणे। नमोकृत्याय कृत्याय मुण्डाय विकटाय च ६६ नम उन्मत्तदेहाय किङ्किणी-काय वै नमः। नमो विकृतवेषाय क्रूरायामर्षणाय च ६७ अप्रमेयाय गोप्त्रे च दीप्ताय निर्गुणाय च। वामप्रियाय वामाय चूडामणिधराय च ६८ नमस्तोकाय तनवे गुणैर-प्रमिताय च। नमो गुण्याय गुह्याय अगम्यगमनाय च ६९ लोकधात्री त्वियं भूमिः पादौ सज्जनसेवितौ। सर्वेषां सिद्धयोगानामधिष्ठानं तवोदरम् ७० मध्येऽन्त-रिक्षं विस्तीर्णं तारागणविभूषितम्। स्वातेःपथ इवा-भाति श्रीमान् हारस्तवोरसि ७१ दिशो दश भुजास्ते तु केयूराङ्गदभूषिताः। विस्तीर्णपरिणाहश्च नीलाञ्जन-चयोपमः ७२ कण्ठस्ते शोभते श्रीमान् हेमसूत्र-विभूषितः। दंष्ट्राकरालं दुर्धर्षमनौपम्यं मुखं तथा ७३ पद्ममालाकृतोष्णीषं शिरोद्यौःशोभतेऽधिकम्। दीप्तिः

सूर्ये वपुश्चन्द्रे स्थैर्यं शैलेऽनिले बलम् ७४ औष्ण्यमग्नौ तथा शैत्यमप्सु शब्दोऽम्बरे तथा। अक्षरान्तरनिष्पन्दात् गुणानेतान्विदुर्बुधाः ७५ जपो जप्यो महादेवो महायोगो महेश्वरः। पुरेशयो गुहावासी खेचरो रजनीचरः ७६ तपोनिधिर्गुहगुरुर्नन्दनो नन्दवर्धनः। हयशीर्षः पयोधाता विधाता भूतभावनः ७७ बोधव्यो बोधिता नेता दुर्धर्षो दुष्प्रकम्पनः। बृहद्रथो भीमकर्मा बृहत्कीर्तिर्धनञ्जयः ७८ घण्टाप्रियो ध्वजी छत्री पिनाकी ध्वजिनीपतिः। कवची पट्टिशी खड्गी धनुर्हस्तः परश्वधी ७९ अघस्मरोऽनघः शूरो देवराजोऽरिमर्दनः। त्वां प्रासाद्य पुरा स्माभिर्द्विषन्तो निहता युधि ८० अग्निः सदार्णवाम्भस्त्वं पिबन्नपि न तृप्यसे। क्रोधाकारः प्रसन्नात्मा कामदः कामगः प्रियः ८१ ब्रह्मचारी च गाधश्च ब्रह्मण्यः शिष्टपूजितः। देवानामक्षयः कोशस्त्वया यज्ञः प्रकल्पितः ८२ हव्यं तदेव वहति वेदोक्तं हव्यवाहनः। प्रीते त्वयि महादेव वयं प्रीता भवामहे ८३ भवानीशोनादिमांस्त्वं च सर्वलोकानां त्वं ब्रह्मकर्तादिसर्गः। साङ्ख्याः प्रकृतेः परमं त्वां विदित्वा क्षीणध्यानास्त्वाममृत्युं विशन्ति ८४ योगाश्च त्वां ध्यायिनो नित्यसिद्धिं ज्ञात्वा योगान्संत्यजन्ते पुनस्तान्। ये चाप्यन्ये त्वां प्रपन्ना विशुद्धाः स्वकर्मभिस्ते दिव्यभोगा भवन्ति ८५ अप्रसंख्येयतत्त्वस्य यथा विद्मः स्वशक्तितः। कीर्तितं तव माहात्म्यमपारस्य महात्मनः। शिवो नो भव सर्वत्र योऽसि सोऽसि नमोस्तु ते ८६ ॥

सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो! यह ब्रह्मा और विष्णु जी का किया स्तोत्र जो भक्ति से ब्राह्मणों को सुनावे

अथवा सुने वह दशहज़ार अश्वमेध का फल पावे । पापी मनुष्य भी इस स्तोत्र को शिवलिङ्ग के समीप बैठ सुने अथवा पाठ करे वह भी अवश्य ब्रह्मलोक पावे । श्राद्ध, देवकर्म, यज्ञ व सतपुरुषोंके समीप में जो इस स्तोत्र को पढ़े वह भी ब्रह्मलोक में निवास करे ॥

बाईसवां अध्याय ॥

सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो! इस भांति सत्य स्तुति ब्रह्मा और विष्णुजीसे सुन कर महादेवजी अत्यन्त प्रसन्न होते भये और उन दोनों को जानते भी थे परन्तु क्रीड़ा के निमित्त पूछते भये कि तुम दोनों कौन हो जो आपस में बड़ी प्रीति रखकर इस घोर समुद्रमें स्थित हो रहे हो । ऐसा महादेवजी का वचन सुन ब्रह्माजी और विष्णुजी आपसमें देख कहनेलगे कि हे भगवन्! क्या आप हमको नहीं जानते आपनेही तो हमको अपनी इच्छासे उत्पन्न किया है । ऐसा उनका वचन सुन महादेवजी प्रसन्न हो कहनेलगे कि हे ब्रह्माजी ! हे विष्णुजी ! हम इस तुम्हारी दृढ़ भक्ति व उत्तम स्तुति से बहुत प्रसन्न भये हैं जो कुछ वर आप को चाहिये मांगो । ऐसा शिवजी का वचन सुन विष्णुजी ने कहा कि महाराज! आपके दर्शन पाये इससे अधिक और क्या वर होगा जो आप मुझपर प्रसन्न हैं तो अपने चरणारविन्द में दृढ़भक्ति देवो यह विष्णुजीसे सुन उनको अपने में दृढ़ भक्ति देते भये और ब्रह्माजी से भी महादेवजी कहते भये कि तुम इस लोक के कर्ता और सब जगत् के

स्वामी होगे। इतना कह प्रीतिसे दोनोंकी पीठ पर हाथ फेर कर कहा कि तुम दोनों मुझे अतिप्रिय हो और मेरे तुल्यहो। अब हम जाते हैं तुमभी प्रसन्नरहो और अपना अपना व्यवहार करो। इतना कह महादेवजी तो वहांहीं अन्तर्धान भये और ब्रह्माजी भी विष्णुजी से ज्ञान पाय प्रजा सिरजने की इच्छा से उग्र तप करनेलगे। बहुतकाल तप किया परन्तु कुछ सिद्ध न भया तबतो ब्रह्माजी को दुःख और क्रोध भया नेत्रों से अश्रु के बिन्दु गिरे। उन वात, पित्त, कफरूप बिन्दुओं से महाविष करके युक्त बड़े भयानक सर्प उत्पन्न भये। उन सर्पोंको देख ब्रह्माजी बड़े दुःखी भये और कहनेलगे कि हमारे तपको धिक्कार है जो पहिलेही यह जगत् के संहार करनेहारी प्रजा उत्पन्न भई अब क्या करें। इतना कहतेही ब्रह्माजी दुःख से मूर्च्छित हो गिरपड़े और प्राण त्याग दिये। उस समय उनके देह से बड़ी दीनता के साथ रोतेहुये रुद्र निकले। रोने सेही उनका नाम रुद्र भया। वेही ब्रह्माजी के प्राण थे और सब जीवों के प्राणभी वेही हैं। शिवजी ने ब्रह्माजी की यह दशा देख दयासे फिर उनके प्राण दिये और चैतन्य किया। ब्रह्माजीभी शिवजीको देख बारबार प्रणाम कर स्तुति करते भये और यह भक्तिसे पूछते भये कि आपने सद्योजात आदि अवतार क्यों कर लिये॥

तेईसवां अध्याय॥

सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो! ऐसा ब्रह्माजी का वचन सुन ब्रह्माजीके बोधके लिये हँसकर शिवजी कहनेलगे

कि श्वेतकल्प में हम श्वेतवर्ण थे और श्वेत वस्त्र, श्वेत माला, श्वेत पगड़ी, श्वेत अस्थि, श्वेत रोम और श्वेतही हमारा रुधिर था इसीहेतु उस कल्प का नाम श्वेतकल्प भया। उस कल्प में मुझसे उत्पन्न भई गायत्री देवी भी श्वेतवर्ण ही थी। जब तुमने बड़े उग्र तप से हमको जाना तब हम सद्योजात भये। सद्योजात ब्रह्म को ही कहते हैं यह गुह्यबात है इसको जो जाने वह मेरे लोक में वास करे। जब फिर लोहितकल्प भया तब हमारे वर्ण, वस्त्र आदि सब रक्तवर्ण थे और गायत्री देवी के भी मांस, अस्थि, दुग्ध, स्तन, नेत्रआदि सब रक्तवर्ण थे। उस कल्प में वर्ण के बदल जाने और योग की वामता से हमारा नाम वामदेव भया और तुमने हमारा आराधन किया। इसभांति हम वामदेव नाम से भूमि पर प्रसिद्ध भये। इस हमारे वामदेव अवतार होने को जो कोई जाने वहभी जन्म मरण से रहित हो रुद्रलोक में निवास करे। फिर जब हम पीतवर्ण भये तब उस कल्प का नाम पीतकल्प भया और हमारे से उपजी हुई गायत्री देवी भी पीतवर्ण ही भई और उसके दुग्ध आदि सब पीतवर्ण थे। उस कल्पमेंभी तुमने योग करके हमारा आराधन किया तब हम तत्पुरुषरूप से प्रकटे। जो उस तत्पुरुषरूप को और वेदमाता गायत्री को जाने वह भी सदा शिवलोक में निवास करे। फिर जब हमने अतिभयङ्कर कृष्णवर्ण धारण किया उस कल्प का नाम कृष्णकल्प भया। उस कल्प में मुझसे उत्पन्न भई गायत्री भी कृष्णवर्ण थी और जब तुमने

हमारा आराधन किया तब हम अघोररूप से प्रकट भये। उस हमारे अघोररूप को जो पुरुष जाने उसके लिये हम अतिशान्त होते हैं। फिर हमने विश्वरूप धारण किया और हमसे उत्पन्न भई गायत्री देवी भी विश्वरूपा अर्थात् अनेकवर्णों से युक्त थी उस कल्प का नाम विश्वरूपकल्प भया। उस कल्पमें भी तुमने बड़ी समाधि से हमको जाना। उस हमारे विश्वरूप अवतार को जो कोई जाने उसको हम बहुत कल्याण देते हैं। ये चार अवतार हमारे भये। गायत्री देवी भी सब पातक दूर करनेहारी और अतिपवित्र चार रूप से होती भई और पांचवां विश्वरूप अवतार और विश्वरूपा गायत्री होती भई। मोक्ष, धर्म, अर्थ और काम ये चार पुरुषार्थ हैं और जीव भी जरायुज आदि भेदों से चार भांति के हैं। चार आश्रम हैं धर्म के पाद भी चार हैं और सद्योजात आदि हमारे पुत्र भी चार हैं और हम विश्वरूप हैं। यह लोक भी चार युगों के भेद से चार भांति का है। भूलोक, भुवर्लोक, स्वर्लोक, महर्लोक, जनलोक, तपोलोक, सत्यलोक और इन सब से परे विष्णुलोक है। पहिले सात लोक बड़े तप से मिलते हैं और विष्णुलोक तो बहुतही दुर्लभ है जहां से फिर आगमन नहीं होता है उसके आगे स्कन्दलोक है उसके आगे पार्वतीलोक है उसके भी आगे शिवलोक है। जिस शिवलोक में निर्मम निरहङ्कार काम क्रोध से रहित बड़े तपस्वी योगी जाते हैं और इस गायत्री देवी के विष्णुलोक, स्कन्दलोक, पार्वतीलोक और शिवलोक ये चार

चरण हैं। इससे और भी सब पशु चतुष्पाद होंगे और चार स्तन भी इनके होंगे और हमारे मुखसे गिराहुआ सोमरूप अमृत जगत् का जीवन उनके स्तन में निवास करेगा। फिर यही देवी द्विपदा होगी और क्रियारूप धारेगी तब इसके स्तन भी दो होंगे और तबसे ही नर नारी सब द्विपद और दो स्तनवाले होंगे। फिर जब इस देवी ने विश्वरूप धारा तबसे प्रजा भी अनेक वर्ण की भई। हम सर्वव्यापी हैं और अमोघवीर्य हैं हमारे मुख में अग्नि निवास करता है इसीसे अग्नि पवित्र है जो पुरुष तप के प्रभाव से सर्वव्यापी मुझको जानेंगे वे मनुष्यदेहको त्याग सदा मेरे समीप निवास करेंगे। यह शिवजीके मुखारविन्दसे सुन ब्रह्माजी प्रणाम कर कहनेलगे कि महाराज! इस आपके रूपको और इस देवी गायत्री के रूप को जो जाने उसको आप परम पद देवें। यह ब्रह्माजीकी प्रार्थना शिवजी महाराज ने अङ्गीकार की। सूतजी कहते हैं कि विद्वान् पुरुष उस सदाशिवको और उस देवी को सर्वव्यापी समझे जिस से ब्रह्मसायुज्यको प्राप्त होवे॥

चौबीसवां अध्याय॥

सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो! इस भांति शिव जी का वचन सुन ब्रह्माजी फिरभी शिवजी के प्रति पूछते भये कि हे नाथ! हे सब देवताओंके गुरु! ये जो आपके अवतार हैं इनका दर्शन कौन युग में किस ध्यानसे और किस तप से पुरुषों को होसक्ता है। यह ब्रह्माजी

का वचन सुन और उनको बड़ी भक्तिसे करजोड़ सम्मुख खड़े देख हँसकर कहनेलगे कि हे ब्रह्माजी! न तो तपसे, न शीलसे और न धर्मसे, न तीर्थों से, न बड़ी भारी दक्षिणावाले यज्ञोंसे, न वेदके पढ़नेसे, न धन से, न शास्त्रसे मनुष्य मेरा दर्शन पाते हैं केवल ध्यान से ही मुझे देखसक्ते हैं। वाराहकल्पके सातवें मन्वन्तरमें सबलोकों का प्रकाश करनेहारा और कल्पका स्वामी मेरा अवतार व तुम्हारा पौत्र वैवस्वत मनु होगा। उसी कल्पके द्वापर युगके अन्तमें लोकके अनुग्रहके अर्थ और ब्राह्मणों के हित के लिये हमारा अवतार होगा। जब द्वापरके अन्तमें व्यासजी होंगे तब ब्राह्मणों के अर्थ शिखायुक्त श्वेतमुनि नामक मेरा अवतार होगा और हिमालय पर्वत के छागल नामकशिखरमें मेरा निवास होगा और वहां मेरे शिष्य श्वेत, श्वेतशिख, श्वेतास्य, श्वेतलोहित ये चारों भी शिखायुत होंगे। ये चारों ब्राह्मण वेदके पारगामी ध्यान योग करके मेरे समीप प्राप्त होंगे। फिर दूसरे द्वापर में सत्यनामक व्यास होंगे और सुतारनामक हमारा अवतार जगत् के कल्याण के अर्थ होगा दुन्दुभि, शतरूप, ऋचीक और केतुमान् ये चार हमारे शिष्य होंगे। ये चारों भी ध्यानयोगको प्राप्त होकर शिवलोक में प्राप्त होंगे। तीसरे द्वापरमें भार्गव तो व्यास होंगे और दमननामक हमारा अवतारहोगा तबभी विकोश, विकेश, विपाश और शापनाशन ये चार शिष्य हमारे होंगे। ये चारों भी योग के बलसे रुद्रलोक को जायँगे। चौथे द्वापर में अङ्गिरा तो व्यास होंगे और सुहोत्रनामक हमारा अवतर

होगा । वहां भी बड़े तपस्वी ब्राह्मण दृढ़व्रत व योगाभ्यासी मेरे चार पुत्र अर्थात् शिष्य होंगे । जिनके नाम सुमुख, दुर्मुख, दुर्दम और दुरतिक्रम होंगे । ये सूक्ष्म योगगति को प्राप्त हो सब पापों को दग्धकर रुद्रलोक को जायँगे । पांचवें द्वापर में सविता व्यास होंगे और लोकों के अनुग्रह के अर्थ कङ्कनामक हमारा अवतार होगा और सनक, सनन्दन, सनातन व सनत्कुमार ये चार हमारे शिष्य होंगे और हमारे समीप निवास करेंगे। छठे द्वापरमें मृत्यु तो व्यास होंगे और लोकाक्षी नाम हमारा अवतार होगा । सुधामा, विरजा, शंखपाद, रज ये चार शिष्य हमारे बड़े महात्मा व योगी होंगे ध्यान करने से हमारे समीप पहुँचेंगे । सातवें द्वापर में इन्द्र व्यास होंगे और विभु नामक हमारा अवतार होगा व जैगीषव्यभी हमको कथन करेंगे। सारस्वत, मेघ, मेघवाहन और सुवाहन ये हमारे चार शिष्य बड़े योगी होंगे और हमारा ध्यान कर रुद्रलोक को प्राप्त होंगे। आठवें द्वापर में वशिष्ठ तो व्यास होंगे और दधिवाहन नाम हमारा अवतार होगा और कपिल, आसुरि, पञ्चशिख और इल्वल ये चार बड़े महात्मा हमारे शिष्य होंगे कि जिनके तुल्य कोई दूसरा न होगा । येभी उस माहेश्वरयोग को प्राप्त हो बहुत काल हमारा आराधन कर हमारे समीप पहुँचेंगे कि जहांसे फिर आवृत्ति न होगी । नवम द्वापरमें सारस्वत तो व्यास होंगे और ऋषभ नाम हमारा अवतार होगा । पराशर, गर्भ, भार्गव और अङ्गिरा ये चार हमारे शिष्य होंगे जो बड़े महात्मा

और वेदके पारगामी ज्ञानी ध्यानमार्गमें प्रवृत्त होके शिवलोक को प्राप्त होंगे। दशम द्वापर में त्रिधामानामक तो व्यास होंगे और हिमालय में भृगुनामक हमारा अवतार होगा जिनके नामसे वह पर्वतशृङ्ग भृगुतुङ्ग कहावेगा और अति पवित्र होगा। तबभी हमारे चार पुत्र दृढ़व्रत व बड़ेतपस्वी बलबन्धु, निरामित्र, केतुशृङ्ग और तपोधन ये होंगे। जो योग बलसे सब पापों को दग्धकर शिवलोकमें वास करेंगे। ग्यारहवें द्वापर में त्रिव्रत नामक व्यास होंगे और उग्र नामक हमारा अवतार गङ्गाद्वारक्षेत्र में होगा। लम्बोदर, लम्बाक्ष, लम्बकेश और प्रलम्ब ये चार हमारे शिष्य माहेश्वरयोगको प्राप्त हो शिवलोक पावेंगे। बारहवें द्वापर में शततेजा नामक व्यास होंगे और हैतुक वनमें अत्रिनामक हमारा अवतार होगा। सर्वज्ञ, समबुद्धि, साध्य, सर्व ये चार हमारे शिष्य परमशैव भस्म करके भूषितदेह बड़े तपस्वी होंगे और योगके सामर्थ्य से रुद्रलोक पावेंगे। तेरहवें द्वापरमें नारायण तो व्यास होंगे और महामुनि बालिनामक हमारा अवतार होगा। सुधामा, काश्यप, वशिष्ठ और विरजा ये चार हमारे पुत्र बड़े योगी और ऊर्ध्वरेता होंगे जो माहेश्वरयोगको पाय शिवलोकको जायँगे। चौदहवें द्वापरमें तरक्षु नामक व्यास होंगे और अङ्गिराके वंशमें गौतमनामक हमारा अवतार होगा जिनके नामसे वह स्थान गौतमवन कहावेगा। अत्रि, देवसद, श्रवण और श्रविष्ठक ये बड़े महात्मा व योगी माहेश्वरयोग को पाय रुद्रलोकमें जायँगे। पन्द्रहवें द्वापरमें त्रय्यारुणि

तो व्यास होंगे और वेदशिरा नामक हमारा अवतार होगा और वेदशिरानामक अस्त्र भी हम प्रकट करेंगे और हिमालयमें सरस्वतीके तटपर वेदशीर्ष नामक पर्वत हमारा स्थान होगा और कुणि, कुणिबाहु, कुशरीर और कुनेत्र ये चार बड़े योगी और ऊर्ध्वरेता होंगे जो माहेश्वर योगके प्रभाव से शिवलोकमें वास करेंगे। सोलहवें द्वापरमें देव नामक व्यास और गोकर्ण नामक हमारा अवतार होगा जिनके नामसे वह स्थान गोकर्णवन कहावेगा। वहां भी काश्यप, उशना, च्यवन और बृहस्पति ये हमारे पुत्र होंगे वे भी ध्यानयोग करके शिवलोक में सदा वास करेंगे। सत्रहवें द्वापरमें कृतंजय नामक व्यास और हिमालयके बड़े ऊंचे शिखरपर महालयक्षेत्र में गुहावासी नामक हमारा अवतार होगा। वह महालयक्षेत्र भी बड़ी सिद्धि और पुण्यका देनेवाला होगा। तबभी हमारे पुत्र ब्रह्मवादी योगके जाननेवाले निर्मम निरहंकार उतथ्य, वामदेव, महायोग और महाबल होंगे। इन चारों के हज़ारों शिष्य बड़े योगी कलियुगमें होंगे जो महालयक्षेत्र में हमारे चरणका दर्शन कर कैलासको प्राप्त होंगे। और भी जो पुरुष कलियुग में ध्यान में तत्पर होंगे और महालयक्षेत्र में जाकर माहेश्वर पदका दर्शन करेंगे वे अपना और दश पुरुष पहिले तथा दश पुरुष पिछले इन सबका उद्धार करेंगे और मेरे अनुग्रह से रुद्रलोकमें वास करेंगे। अठारहवें द्वापर में ऋतंजयनामकव्यास और हिमालयके शिखरमें शिखण्डी नामक हमारा अवतार होगा जिससे वह क्षेत्र बड़ा सिद्धि-

दायक होगा और शिखरिडवन कहावेगा। वाचःश्रवा, ऋचीक, श्यावाश्व और यतीश्वर ये चार हमारे शिष्य बड़े योगी व वेदपारग होंगे ये भी माहेश्वरयोग को पाय शिवलोक को जायँगे। उन्नीसवें द्वापर में भरद्वाज मुनि व्यास होंगे व जटामाली नामक हमारा अवतार हिमालय के जटायुपर्वत में होगा। हिरण्यनाभ, कौशल्य, लोकाक्षी और कुथुमि ये चार शिष्य बड़े योगी व ऊर्ध्वरेता होंगे और ध्यानयोगसे शिवलोक पावेंगे। बीसवें द्वापरमें गौतम मुनि व्यास होंगे और अट्टहास नामक हमारा अवतार होगा। जिनके नामसे वह स्थान हिमालय पर्वत में अट्टहास नामक कहावेगा जिस क्षेत्रको देवता, मनुष्य, यक्ष, सिद्ध, चारण सब सेवन करेंगे। सुमन्तु, बर्बरी, कबन्ध और कुशिकन्धर ये चार हमारे शिष्य बड़े महात्मा व नियतव्रत होंगे और माहेश्वरयोग को पाय शिवलोकमें वास करेंगे। इक्कीसवें द्वापरमें वाचःश्रवा मुनि तो व्यास होंगे और दारुक नाम हमारा अवतार होगा जिनके नामसे देवदारुवन बड़ाक्षेत्र होगा। प्लक्ष, दाल्भ्यायनि, केतुमान् और गौतम ये चार हमारे शिष्य होंगे जो नैष्ठिक व्रतसे शिवलोक को पावेंगे। बाईसवें द्वापरमें शुष्मायण नामक व्यास होंगे और हल धारण किये भीम नामक हमारा अवतार काशीमें होगा जहां इन्द्रादि सब देवता हमारा दर्शन करेंगे। सुधार्मिक, भल्लवी, मधुपिङ्ग और श्वेतकेतु ये चार हमारे शिष्य ध्यान में परायण माहेश्वरयोग को पाय रुद्रलोक में वास करेंगे। तेईसवें द्वापर में तृणविन्दु मुनि तो व्यास होंगे

और श्वेत नामक हमारा अवतार होगा तब हम जिस पर्वतमें कालको जीर्ण करेंगे वह कालंजर पर्वत कहावेगा। उशिक, बृहदश्व, देवल और कवि ये चार हमारे शिष्य होंगे जो माहेश्वरयोगको पाय रुद्रलोकको जायँगे। चौबीसवें द्वापर में रुक्षमुनि तो व्यास होंगे और शूलीनाम हमारा अवतार नैमिषारण्यमें होगा। शालिहोत्र, अग्निवेश, युवनाश्व और शरद्वसु ये चार शिष्य होंगे जो उसी मार्ग से शिवलोक को पावेंगे। पच्चीसवें द्वापर में वशिष्ठजी के पुत्र शक्ति मुनि तो व्यास होंगे और दण्ड धारण किये मुण्डीश्वर नामक हमारा अवतार होगा। छगल, कुण्डकर्ण, कुभाण्ड और प्रवाहक ये चार शिष्य होंगे जो माहेश्वरयोगको पाय शिवलोक को जायँगे। छब्बीसवें द्वापर में पराशर तो व्यास होंगे और पुरभद्र वटक्षेत्र में सहिष्णु नामक हमारा अवतार होगा। उलूक, विद्युत, शम्बूक और आश्वलायन ये चार हमारे शिष्य होंगे जो माहेश्वरयोग के माहात्म्य से रुद्रलोक को प्राप्त होंगे। सत्ताईसवें द्वापरमें जातूकर्ण्य तो व्यास होंगे और सोमशर्मा ब्राह्मण हमारा अवतार प्रभासक्षेत्र में होगा। अक्षपाद, कुमार, उलूक और वत्स ये चार हमारे शिष्य बड़े योगी और शुद्धबुद्धि होंगे जो माहेश्वरयोग को पाय रुद्रलोक को जायँगे। अट्ठाईसवें द्वापरके अन्त में पराशर के पुत्र कृष्ण द्वैपायन तो व्यास होंगे और छठे अंश करके वसुदेव के पुत्र यदुवंशमें विष्णु का अवतार श्रीकृष्ण होंगे और हम भी श्मशानमें पड़ा एक अनाथ ब्राह्मण ब्रह्मचारी

का शरीर देख लोकों को विस्मय करने के अर्थ योगमाया करके उस शरीर में प्रवेश करेंगे व दिव्य मेरुकी गुहा में तुम्हारे और विष्णुजी के साथ निवास करेंगे और लकुली हमारा नाम होगा और वह क्षेत्र जहां हमारा अवतार होगा कायावतार क्षेत्र नाम से प्रसिद्ध होगा और बड़ी सिद्धि का देनेहारा होगा और जब तक भूमि रहेगी तबतक उस क्षेत्रका प्रभाव रहेगा। बड़े तपस्वी कुशिक, गर्ग, मित्र और कौरुष्य ये चार शिष्य माहात्मा योगी ब्राह्मण वेद के पारगामी होंगे व माहेश्वरयोग को प्राप्त होकर रुद्रलोक को जायँगे। ये जितने पाशुपत सिद्ध हमने वर्णन किये सब भस्म करके भूषित लिङ्ग की पूजा में तत्पर हमारे परमभक्त, जितेन्द्रिय, ध्याननिष्ठ और योगी होंगे। संसारबन्धके छेदने और आत्मज्ञान की प्राप्ति के लिये बड़ाभारी उपाय पाशुपतयोग है। अनेक योगमार्ग व अनेक ज्ञानमार्ग जगत् में हैं परन्तु पञ्चाक्षरी विद्याके विना किसीसेभी सिद्धि नहीं होती। जो पुरुष सब द्वन्द्व छोड़कर तप करता है वही पके फल की भांति मुक्ति के लिये उपस्थित रहता है। पाशुपतयोगके एक दिन अभ्यास करने से भी जो गति मिलती है वह सांख्य और पञ्चरात्रसे नहीं मिलती है। यह अट्ठाईस युगों के अवतार मनुसे कृष्ण पर्यन्त कहे इनमें कृष्णद्वैपायन व्यास वेद का विभाग करेंगे। सूतजी कहते हैं कि इस प्रकार महादेवजी से सुन ब्रह्माजी प्रणाम करते भये और हाथ जोड़ प्रार्थना करने लगे कि महाराज! सब

वेद यही गाते हैं कि सब देवतागण विष्णुमय हैं और विष्णु के विना कोई दूसरी गति नहीं और विष्णु ही कल्याणदायक हैं इस भांति जिनकी महिमा वेद ने बखानी है वे बड़े ज्ञानी श्रीविष्णु भगवान् भी सदा आपकी पूजा और प्रणाम क्यों किया करते हैं। यह ब्रह्माजी का वचन सुन बड़ी प्रीति से महादेवजी ने कहा कि तुम, इन्द्र और विष्णु तथा बड़े बड़े मुनि सब हमारे लिङ्गकी पूजा कर कर अपने अपने पदों को प्राप्त भये हैं इससे सदा हमको पूजते हैं। लिङ्गपूजा विना निश्चल पद नहीं मिलता इसी हेतु सदा विष्णु भगवान् हमारे लिङ्गको भक्ति से पूजतेहैं। इस भांति ब्रह्माजी के ऊपर कृपा कर और सृष्टि रचने की आज्ञादे शिवजी वहांही अन्तर्धान होते भये ब्रह्माजी भी उनको बार बार प्रणाम कर उनकी आज्ञा पाय जगत् रचने में प्रवृत्त भये॥

पच्चीसवां अध्याय॥

सब ऋषिलोग पूछते हैं कि हे सूतजी! लिङ्ग में सदाशिव की पूजा किस विधि से होती है यह आप कृपा कर कहें। सूतजी कहते हैं कि यह पूजन का विधान एक समय नगनन्दिनी श्रीपार्वतीजी ने महादेवजी से पूछा था सो उनको श्रीमहादेवजीने बड़ी प्रीतिसे उपदेश किया उस समय शालङ्कायन का पुत्र नन्दी भी वहां था उसने सब पूजनविधान श्रवण किया और ब्रह्माजी के पुत्र सनत्कुमारजी के प्रति उपदेश किया सनत्कुमार जी ने श्रीवेदव्यास जी को सुनाया और

श्रीव्यासजी से हमने पाया वह सब पूजनविधान आप को हम सुनाते हैं। शैलादी अर्थात् नन्दी सनत्कुमारजी से कहते हैं कि अब हम ब्राह्मणों के कल्याण के अर्थ स्नानविधान कहते हैं जो साक्षात् शिवजी ने पार्वतीजी के प्रति कथन किया है। इस विधि से एक बार भी स्नान कर महादेवजी की पूजा करे और ब्रह्मकूर्च अर्थात् एक प्रकार का पञ्चगव्य जो पुरुष पान करे उसके सब पाप दूर होयँ। ब्राह्मणों के लिये तीन प्रकार का स्नान महादेव जीने कहा है पहिला वारुणस्नान, दूसरा आग्नेय अर्थात् भस्मस्नान, तीसरा मन्त्रस्नान इन तीनों स्नानों को विधि से कर परमेश्वर की पूजा करे। जिसका अन्तःकरण शुद्ध न हो वह चाहे जितने जल से अथवा भस्म से स्नान करे परन्तु शुद्ध नहीं होता। भावदुष्ट पुरुष चाहे जैसी नदी नद, सरोवर आदि में स्नान करे उसका शुद्ध होना कठिन है। मनुष्यों का चित्तकमल अज्ञानरूप रात्रि से संकुचित होरहा है इसको ज्ञानरूप सूर्य के किरणों से विकसित करना उचित है। मृत्तिका गोमय अर्थात् गौ का गोबर तिल पुष्प और भस्म ये सब वस्तु लेकर स्नान करने को नदी आदि के तटपर जाय तीरपर कुश रखकर तीर को धोय आचमन कर हाथ पांव शुद्ध कर शरीर का मल धोकर स्नान करे। (उद्धृतासि वराहेण) इत्यादि मन्त्र करके मृत्तिका लेकर शरीर में लेपकर स्नान करे पीछे सुन्दर वस्त्र धारणकर (गन्धद्वारां दुराधर्षाम्) इस मन्त्र से कपिला गौ के गोमय करके शरीर को लेपन कर स्नान करे फिर उस

मलिन वस्त्र को त्याग सुन्दर श्वेत वस्त्र पहिन जल में वरुण का ध्यान कर मानसिक उपचारों से वरुण की पूजा कर तीन आचमन ले जल को अभिमन्त्रणकर शिवका स्मरण करता हुआ जल में प्रवेश करे वहां गोता लगाय अघमर्षणमन्त्र को तीन बार जपे और जल में सूर्य, चन्द्र, अग्नि इन तीनों के मण्डलों का ध्यान करे फिर आचमन कर पुण्यकी वृद्धिके अर्थ उस जलसे निकल तीर्थ में प्रवेश करे। वहां गोशृङ्ग अथवा पलाशपत्र के पुटक अर्थात् दोना में कुश और पुष्पों के सहित जल लेकर रुद्रमन्त्र करके अथवा पवमान-त्वरित मन्त्र शान्तिमन्त्र और पञ्च ब्रह्ममन्त्रों करके इन मन्त्रों के देवता और ऋषियों का स्मरण करता हुआ अपने मस्तक पर अभिषेक करे फिर पञ्चवक्त्र श्रीसदा-शिवका अपने हृदय में ध्यान करे और अपने सूत्रकी रीति से आचमन करे। फिर कुश को पवित्र हाथ में लेकर सुन्दर पवित्र आसन पर बैठ कुशों के सहित जल से अभ्युक्षण कर दहिने हाथसे तीन आचमनकर सब हिंसा और पाप दूर होने के लिये तीन प्रदक्षिणा करे। हे सनत्कुमारजी! ब्राह्मणोंके कल्याण के अर्थ यह स्नान विधान हमने संक्षेप से वर्णन किया है॥

छब्बीसवां अध्याय॥

नन्दी कहते हैं कि हे सनत्कुमारजी! इस भांति स्नान कर वेदमाता गायत्री का (आयातु वरदा देवी) इस मन्त्रसे आवाहन करे और पाद्य आचमन अर्घ्य आदि

सब उपचारसे गायत्री का पूजन कर तीन प्राणायाम करे। फिर बैठ कर अथवा खड़ा होकर एक हज़ार अथवा पांचसौ वा अष्टोत्तरशतही प्रणव करके युक्त गायत्रीको नियमसे जपे जपके अनन्तर पूजनकर अर्घ्य दे शिरसे प्रणाम कर (उत्तरे शिखरे जाता) इस मन्त्र से गायत्री का विसर्जन करे। फिर (उदुत्यं जातवेदसम्) (चित्रं देवानाम्)। इन मन्त्रोंसे सूर्य को प्रणाम कर ऋग् यजु सामवेद में जो सूर्य के सूक्त हैं उनका पाठ करे पीछे तीन प्रदक्षिणा कर आत्मा अन्तरात्मा और परमात्मा का ध्यानकर सूर्य, ब्रह्मा, अग्नि को प्रणाम करे फिर मुनि, पितर, देवता इन सबका आवाहन कर पूर्वमुख अथवा उत्तरमुख होकर तीर्थ के जलसे तर्पण करे पुष्पयुक्त जलसे देवताओं का, कुशयुक्त जलसे मुनियों का, तिलयुक्त जलसे पितरों का और गन्धयुक्त जलसे सब जीवों का तर्पण करे। यज्ञोपवीती अर्थात् सव्य यज्ञोपवीत धारण कर देवतर्पण, कण्ठमें यज्ञोपवीत धारण कर ऋषितर्पण और अपसव्य यज्ञोपवीत धारण कर पितृतर्पण करे। अंगुलियों के अग्रसे देवतर्पण, कनिष्ठा अंगुलि से ऋषितर्पण और दहिने अंगुष्ठ से पितरों का तर्पण करे। फिर ब्रह्मयज्ञ, देवयज्ञ, मनुष्ययज्ञ, भूतयज्ञ और पितृयज्ञ करे। अपनी शाखा का पाठ करना ब्रह्मयज्ञ है, अग्नि में हवन करना देवयज्ञ है, वेदवेत्ता ब्राह्मणों को भक्तिसे प्रणाम कर अन्न आदि देना मनुष्ययज्ञ है, सब भूतोंको विधिसे बलि देना भूतयज्ञ है और पितरों के निमित्त श्राद्ध ब्राह्मण

भोजन आदि कराना पितृयज्ञ है। ये पांच यज्ञ सब
अर्थोंके सिद्ध होने के लिये सदा करने चाहिये। इन
सब यज्ञों में ब्रह्मयज्ञ मुख्य है जिसके करने से इन्द्र
आदि सब देवता प्रसन्न होते हैं। और करनेवाला
ब्रह्मलोक में निवास करता है। पितर, वेद, ब्रह्मा,
विष्णु, शिव सब ब्रह्मयज्ञ के करने से प्रसन्न होते हैं।
ब्रह्मयज्ञ करने को ब्राह्मण ग्राम के बाहर जाय जहांसे
ग्राम दृष्टि न आवे वहां बैठकर पूर्व उत्तर अथवा ईशान
को मुखकर आचमन करे। ऋग्वेद की प्रसन्नता के अर्थ
तीन आचमन, यजुर्वेद की प्रसन्नता के हेतु दोबार जल
से ओष्ठ मार्जन, सामवेद के प्रीत्यर्थ मस्तक में जल से
मार्जन, अथर्वणवेद की प्रसन्नता के लिये नेत्रों को जल
से स्पर्श, अठारह पुराणों के लिये पवित्र जलसे नासिका,
सौर आदि उपपुराण शैव आदि पुण्य इतिहासों की
प्रसन्नता के लिये कर्ण और सब कल्पों की प्रीति के
लिये हृदय को स्पर्श करे। इस भांति आचमन कर दर्भ
मुष्टि बिछाय सुवर्ण की अंगूठी पहिन कुश हाथ में लेकर
ब्रह्मयज्ञ करे। जो ब्राह्मण पञ्चयज्ञ किये विना भोजन करे
वह शूकर की योनि में जाता है इसलिये पञ्चयज्ञ अवश्य
करना चाहिये इस भांति ब्रह्मयज्ञ कर स्नान करे पीछे
तीर्थ का जल लेकर अपने स्थान पर आकर घर के
बाहर ही हाथ पांव धो भस्मस्नान करे अग्निहोत्र का
भस्म लेकर प्रणवसे उसका शोधन करे। परन्तु सूर्य
उदय होने के अनन्तर जो अग्निहोत्र कियाजाय उस
[illegible] लेवे क्योंकि दिन में सूर्य ज्योतिःस्वरूप है

और सायंकाल में अग्नि ज्योतिःस्वरूप है। इसलिये सूर्योदय विना जो अग्निहोत्र हो वह ठीक नहीं और उसकी भस्म भी ठीक नहीं है। ईशान मन्त्र से शिर तत्पुरुष से मुख, अघोर मन्त्रसे उरःस्थल अर्थात् हृदय वामदेव करके गुह्य, सद्योजात करके पाद और प्रणव करके सब अङ्गो में अभिषेक करे। इसभांति भस्मस्नान कर हाथ पांव धो शिव स्मरण करता हुआ कुश लेकर मन्त्रस्नान करे। आपोहिष्ठा आदि मन्त्र तथा और क वेदों के पवित्र मन्त्रों से स्नान करे। यह स्नानविधि ब्राह्मणों के कल्याण के हेतु हमने कहा है इस विधि से जो एक बार भी स्नान करे वह परमगति पावे॥

सत्ताईसवां अध्याय॥

नन्दी कहते हैं कि हे सनत्कुमारजी! अब हम संक्षेप से लिङ्गपूजा का विधान वर्णन करते हैं क्योंकि विस्तार से तो कई सौ वर्ष में भी वर्णन नहीं होसक्ता। इस विधि से स्नान कर पूजा के स्थान में प्रवेश करे और प्राणायाम कर श्रीत्र्यम्बक परमेश्वर का ध्यान करे कि पांच जिनके मुख, दशभुजा, शुद्ध स्फटिक के तुल्य वर्ण, सुन्दर वस्त्र-भूषण पहिने हैं। इस भांति ध्यान करने से अपनी देह शुद्धकर प्रणवयुक्त मूलमन्त्र से न्यास करे नमःशिवाय इस सूत्रमें सब वेद और मन्त्र सूक्ष्मरूप से निवास करते हैं जिस भांति वटके छोटे से बीज में इतना बड़ा वटवृक्ष रहता है इसी भांति इस छोटे मन्त्र में सब वेद निवास करते हैं पूजा के स्थान को चन्दन

के जलसे सेचन करे। पीछे सब पूजाद्रव्यों का क्षालन आदि से शोधन करे। सब द्रव्यों का शोधन प्रणव से करे। प्रोक्षण, अर्घ, पाद्य, आचमन आदि के पात्र स्थापन करे और इन सबको शुद्ध शीतल जल से पूर्ण कर दर्भों से ढकदे और अवगुण्ठन करे फिर इन सब पात्रोंमें उशीर, चन्दन, जाति, कङ्कोल, कर्पूर, शतावरी, तमाल इन सब को चूर्ण तथा अनेक भांति के पुष्पोंको प्रणव से इन पात्रों में गेरै। कुश, अक्षत, यव, धान, तिल, घृत, श्वेत सर्षप और भस्म ये सब अर्घ्यपात्र में गेरै। कुश, पुष्प, यव, धान, शतावरी, तमाल और भस्म ये प्रोक्षणीपात्र में गेरै पञ्चाक्षर मन्त्र, रुद्रगायत्री और प्रणव से इन पात्रों को अभिमन्त्रित करे फिर प्रोक्षणी-पात्र के जलसे प्रणवयुक्त ईशान आदि पञ्च मन्त्रों से सब पूजाद्रव्यों को प्रोक्षण करे। फिर शिवजी के दहिनी ओर नन्दी की अर्थात् मेरी पूजा करे और मेरा यह ध्यान करे कि देदीप्यमान अग्नि के तुल्य जिसका वर्ण, तीन नेत्र, चन्द्रकला मस्तक पर धरे, सम्पूर्ण भूषण और पुष्पमाला पहिने सौम्यस्वरूप और वानर के तुल्य जिसके चार मुख ऐसा मेरा ध्यान कर मेरे उत्तर भागमें मेरी भार्या का ध्यान करे कि अत्यन्त सुन्दर रूपवती और पतिव्रता है और पार्वतीजी के चरणों का मण्डन कर रही है इसभांति ध्यान कर दोनों की पूजा कर मन्दिर के भीतर जाय। शिवजीके पांच मस्तकों पर सद्योजात आदि पांच मन्त्रोंसे पुष्पाञ्जलि देवे पीछे गन्ध, पुष्प, धूप आदि अनेक उपचारों से साधारण पूजन

करके कार्त्तिकेय, गणपति और पार्वतीजी को पूज कर शिवलिङ्ग का निर्माल्य दूर करे। पीछे प्रणव आदि में ॐनमः जिनके अन्त में ऐसे सब मन्त्रों को पढ़ अष्टदल कमलरूप आसन परमेश्वर को निवेदन करे। जिस अष्टदल का पूर्वदल अणिमा सिद्धि है। दक्षिणदल लघिमा, पश्चिम महिमा, उत्तरदल प्राप्ति, अग्निकोण का दल प्राकाम्य, नैर्ऋत्य का दल ईशित्व, वायव्य का वशित्व और ईशान्य का दल सर्वज्ञत्व सिद्धि है। सोम-मण्डल जिसकी कर्णिका उसके नीचे सूर्यमण्डल उसके भी नीचे अग्निमण्डल है। धर्म आदि चारों कोणों में और अव्यक्त आदि चारों दिशाओं में हैं। सोममण्डल के ऊपर तीनगुण गुणों के ऊपर तीन आत्मा और उनके ऊपर शिवपीठिका अर्थात् शिवजी की जलहरी का कल्पना करे फिर (सद्योजातं प्रपद्यामि) इस मन्त्र से परमेश्वर को आवाहन कर वामदेव मन्त्र से आसन के ऊपर स्थापन करे। फिर रुद्रगायत्री करके सान्निध्य और अघोरमन्त्र से निरोधन तथा ईशानमन्त्र से पूजन करे। पाद्य, आचमन, अर्घ्य ये सब परमेश्वर को देवे फिर सुन्दर शीतल सुगन्ध चन्दन के जल से पञ्चगव्य से स्नान करावे फिर गौ के घृत से, शहद से, इक्षु रस से श्रीमहादेवजी को वेद के मन्त्र और प्रणव का पठन करता हुआ सुन्दर पात्रसे अभिषेक करे। और लिङ्ग को भली भांति धोवे शुद्ध श्वेत वस्त्र से पोंछ कर सम्मुख विराजमान करे। फिर सुवर्ण, चांदी, तांबा आदि के पात्र अथवा कमलपत्र, पलाशपत्र, शङ्ख

व मृत्तिकापात्र आदि को लेकर सुन्दर जल से पूर्ण करे और उस जल में कुश, अपामार्ग, कर्पूर, जातीपुष्प, चम्पा, श्वेत करवीर, मल्लिका, कमल, उत्पल, चन्दन आदि गेरकर (सद्योजात) आदि मन्त्रोंसे अभिमन्त्रण करके श्रीमहादेवजी को अभिषेक करे। और अभिषेक के मन्त्र ये हैं पवमान, वामदेव, सूक्त, रुद्राध्याय, नीलरुद्र, श्रीसूक्त, रात्रिसूक्त, चमक, होतार, अथर्वशिर, शान्तिमन्त्र, भारुण्ड, अरुण, वारुण, ज्येष्ठ, वेदव्रत, आन्तर, पुरुष-सूक्त, त्वरित, रुद्र, कपिकपर्दी, आवोराज, साम, बृह-च्चन्द्र, विष्णु, विरूपाक्ष, स्कन्द, शिवकी सौरिचा, पञ्च-ब्रह्म, मन्त्र, पञ्चाक्षर और केवल प्रणव इन सब मन्त्रों से जो महादेवजीको एक बारभी स्नान करावे उसके सब पाप दूर होते हैं। इस विधि से अभिषेक कर वस्त्र, यज्ञोपवीत, आचमनीय, गन्ध, पुष्प, धूप, दीप, नैवेद्य, सुगन्धित जल ये सब परमेश्वर को निवेदन करे फिर आचमन दे रत्नजटित मुकुट भूषण ताम्बूल ये सब उप-चार प्रणव से समर्पण करे। फिर लिङ्ग के मस्तक पर शिवजी का ध्यान करे कि शुद्ध स्फटिक के तुल्य जिनका वर्ण सबदेवों के कारण ब्रह्मा विष्णु आदि देवता और सब ऋषियों करके सेवित वेदवेत्ता और वेदान्तों के भी अगोचर आदि मध्य अन्त करके रहित संसार रोग करके पीड़ित जीवोंके लिये सिद्ध औषध इस भांति शिवतत्त्व का ध्यान करे और प्रणव करके ही लिङ्ग के मस्तकपर पूजन करे फिर नमस्कार और प्रदक्षिणा कर स्तोत्र पाठ करे और अर्घ्य देकर श्रीपरमेश्वर के

चरणों में पुष्पाञ्जलि देवे इस भांति पूजाकर अपने आत्मा में परमेश्वर को आरोपण कर पूजा समाप्त करे यह संक्षेप से पूजाविधान हमने कहा है अब आभ्यन्तर लिङ्गार्चन हम कहते हैं॥

अट्ठाईसवां अध्याय॥

नन्दी कहते हैं कि हे सनत्कुमारजी! अपने हृत्कमल में अग्निमण्डल का ध्यान करे उसके ऊपर सूर्यमण्डल, चन्द्रमण्डल, तीनगुण और तीन आत्मा का ध्यान कर उसके ऊपर शुद्ध चैतन्य परमेश्वर अर्धनारीश्वर का ध्यान करे। चिन्तन करने से अनेक पदार्थ ध्यान में आते हैं परन्तु सबसे चित्त को रोंक परमेश्वर के ध्यान में लगावे नहीं तो उस परमेश्वर का ज्ञान किसी भांति भी नहीं होसक्ता। ध्येय ध्यान यजमान पुरुष और प्रयोजन ये पदार्थ हैं। पुरनाम देहका है उसमें जो निवास करे वह पुरुष है। आज्य को जो यज्ञसे यजन करे वह यजमान है। महेश्वर ध्येयहै। परमेश्वरका चिंतन ध्यान कहाताहै। ज्ञान उत्पन्न होना प्रयोजन है जो इन पदार्थों को अच्छी रीति से जाने वह ठीक तत्वज्ञान पाताहै यहां छब्बीस तत्त्व हैं जिनमें छब्बीसवां ध्येय पचीसवां ध्याता चौबीसवां अव्यक्त महत्तत्त्व आदि सात तत्त्व अर्थात् महत्तत्त्व अहंकार शब्दादि पांच तन्मात्रा। पांच कर्मेन्द्रिय पांच ज्ञानेन्द्रिय मन पञ्च महाभूत ये छब्बीस तत्त्व हैं इनमें छब्बीसवां तत्त्व शिव ही वेद का और इस संसार का कर्ता भर्ता और हर्ता है। इसी परमेश्वर ने ब्रह्मा को उत्पन्न

किया है और वह विश्वाधिक विश्वात्मा और विश्वरूप है। जिस भांति माता पिता विना पुत्र नहीं उत्पन्न होता इसी भांति तीनों जगत् शिवके विना नहीं उत्पन्न हो सके। यह नन्दी से सुन सनत्कुमारजी पूछने लगे कि कर्ता अर्थात् करनेवाला और कारयिता अर्थात् करानेवाला जो वह परमेश्वर है और नित्य शुद्ध बुद्धि और निष्क्रिय है तो वह अल्पात्मा जीवको क्योंकर बन्ध मोक्ष दे सक्ता है? यह आप कहैं नन्दी कहते हैं हे सनत्कुमारजी! इस सब जगत् को कालही सिरजता है और वह काल परमेश्वर के आधीन है इसलिये सब जीवों को कालके द्वारा परमेश्वर कर्मानुसार बन्ध मोक्ष दे सक्ता है मनभी निष्क्रिय परमेश्वर का ध्यान करनेसे निष्क्रिय होजाता है उस परमेश्वर के रूपसे यह जगत् स्थित होरहा है क्योंकि सब जगत् परमेश्वर की अष्टमूर्ति है आकाश, पृथ्वी, वायु, तेज, जल, यजमान, सूर्य, चन्द्र ये परमेश्वर की आठ मूर्ति हैं इनके विना जगत् नहीं है। इसलिये विचार करने से यही ज्ञात होता है कि यह जगत् श्री सदाशिव का स्थूलरूपहै। और उस परमेश्वर का सूक्ष्म-रूप तो किसीभांति वर्णन नहीं होसक्ता क्योंकि वह रूप मन वचन के अगोचर है (आनन्दं ब्रह्मणो विद्वान्) इस श्रुति में आनन्द पद रुद्रका ही वाचक है और रुद्रकी विभूति ही सब जगत् में व्याप्त हो रही है (सर्वं-खल्विदंब्रह्म) इस श्रुति का भी अर्थ यही है कि सब जगत् रुद्र है इसलिये उसको विभु जानकर उसका ध्यान करना उचित है। चतुर्व्यूहमार्ग करके अर्थात् ध्येय,

ध्यान, यजमान और प्रयोजनरूप से जो विचार कर परमेश्वर को जाने वह मुक्त होता है। मोक्ष का कारण वैराग्य और संसार का हेतु ममत्व है। ब्रह्माजी ने बुद्धि के लिये बहुत सी चिन्ता रची। परन्तु रौद्री चिन्ता अर्थात् रुद्र का चिन्तन करना सब चिन्ताओं में मुख्य है। इन्द्र की चिन्ता ऐन्द्री और सौम्या अर्थात् सोम की चिन्ता तथा नारायण सूर्य अग्नि आदि की चिन्ता भी रुद्र की चिन्ता ही है परन्तु मुख्य नहीं है। वह परमेश्वर मैं ही हूं, परमेश्वर मैं हूं यह दो प्रकार की चिन्ता जिस को हो वह भक्त परमेश्वर से भिन्न नहीं है इसीसे इस चिन्ता को ब्राह्मी चिन्ता कहते हैं। हे सनत्कुमारजी! पहिले चराचर जगत् को परब्रह्मस्वरूप ध्यान करे। फिर परमेश्वर का ध्यान करता हुआ चर अचर का विभाग छोड़ देवे। जिस पुरुष को त्याज्य त्यागने के योग्य, ग्राह्य ग्रहण करने के योग्य, लभ्य, अलभ्य, कृत्य, अकृत्य नहीं है उसको ब्राह्मी चिन्ता कहते हैं और वह पुरुष सदा सन्तुष्ट रहता है। यह आभ्यन्तर पूजन हमने वर्णन किया। इस भांति पूजन करनेवाले पुरुष सदा नमस्कार आदि करके पूजनीय हैं चाहे वे कुरूप, विकृत कैसे ही हों कल्याण की इच्छावाला पुरुष कभी उनकी परीक्षा न करे और जो उनकी निन्दा करते हैं वे सदा दुःखभागी होते हैं जिस भांति देवदारु वनमें मुनि रुद्र की निन्दा कर दुःखी होते भये। इसलिये वर्णाश्रम में रहनेवाले पुरुषोंको ब्रह्मवेत्ता और वर्णाश्रम-हीन ज्ञानी पुरुष सदा सेवन और वन्दन करने चाहिये॥

उन्तीसवां अध्याय ॥

सनत्कुमारजी कहते हैं कि देवदारुवन में बड़े बड़े तपस्वी थे उनके साथ क्या वृत्तान्त भया और शिवजी क्योंकर देवदारुवन में गये यह हम सुनना चाहते हैं आप कृपा कर सुनावें। सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो! यह सनत्कुमारजी का प्रश्न सुन कुछ हँस कर नन्दी कहने लगे कि हे सनत्कुमारजी! एक समय देवदारुवन में शिवजी की प्रसन्नता के लिये अपने स्त्री पुत्रों के सहित मुनि बड़ा उग्र तप करते भये। श्रीमहादेवजीने भी प्रवृत्तिमार्ग में तत्पर उन मुनियों को ज्ञान देने के अर्थ और उनकी परीक्षा के लिये विकृतरूप धरा कि कृष्णवर्ण, दो भुजा, विषमनेत्र जिनके थे और नाचते गाते हँसते व भ्रूविलास करते दिव्य देवदारुवन में प्रवेश करते भये। और वहां मुनियों की स्त्रियों को देख ऐसा नृत्य व गान किया कि सब स्त्री उनपर मोहित होगईं और उठ पीछे लगीं। बड़ी बड़ी पतिव्रता भी अपनी पर्णकुटी छोड़ व्याकुल हो वस्त्र भूषण आदिकी सुध भूल उनके पीछे होगईं और उनको देख देख हाव भाव करने लगीं। और कोई कोई स्त्री हँसकर शिवजी को देख देख प्रसन्न होतीं और वस्त्र काञ्ची आदि गिर-जानेपर भी सुध नहीं करतीं और बड़े प्रेम से गाती थीं। कोई मूर्च्छित हो भूमिपर गिरीं कोई कोई कामके वश हो निर्लज्ज होगईं और आपस में आलिङ्गन करने लगीं। कोई अपने बन्धुओं के सम्मुख हो उनका मार्ग रोक रोक

खड़ी होगईं और अनेक प्रकार की चेष्टा करने लगीं इस भांति उनका चित्त विकृत हुआ देखकर भी श्रीशिवजी शुभ अशुभ कुछ भी न कहते भये। परन्तु वे मुनि अपनी प्राणप्यारियों की यह दशा देख बड़ा कोप करते भये और भांति भांति के कठोर वचन और शाप शिवजी के प्रति देने लगे परन्तु शिवजी के सम्मुख सबका प्रभाव अस्त होगया जिस भांति सूर्य के आगे ताराओं का तेज। सुनते हैं कि ब्रह्माजी का बड़ा उत्तम यज्ञ ऋषिशाप से नष्ट होगया भृगु के शाप से विष्णुजी को दश अवतार लेने पड़े। गौतममुनि ने क्रोध करके इन्द्र के वृषण भूमि पर गिरादिये वशिष्ठजी के शापसे वसुओं को गर्भ में वास करना पड़ा। अगस्त्यमुनि के शापसे राजा नहुष सर्प होगया। विष्णु का निवास क्षीरसमुद्र ब्राह्मणों ने क्षारसमुद्र करदिया। फिर विष्णुजी ने काशी में अविमुक्तेश्वर में जाय वहुतकाल दुग्ध से महादेवजी का अभिषेक किया और ब्रह्माजी तथा और मुनियों को सङ्ग ले बड़ी श्रद्धा से शिवजी को प्रसन्न कर उनके अनुग्रह से फिर अपने निवासस्थान क्षीरसमुद्र को पहिली भांति किया। धर्मने माण्डव्य का शाप पाया। यादव और राम लक्ष्मण दुर्वासामुनि से शापित होते भये। विष्णुजी को भृगुमुनि ने लात का प्रहार किया। इस भांति और भी कई ब्राह्मणों के वश भये परन्तु शिवजी कभी वश में न आये यह उन मुनियों ने न समझा और कठोर वचन कहने लगे तब महादेवजी वहां ही अन्तर्धान होगये। तबतो सब मुनि व्याकुल हो सबेरे

ही उठ उस देवदारुवन से ब्रह्माजी के समीप गये और घबड़ाकर अपना सब वृत्तान्त कह सुनाया ब्रह्माजी भी क्षणमात्र मनमें विचार और शिवजी को प्रणाम कर कहने लगे कि तुमको धिक्कार है हाथ लगी निधि तुमने गँवा दी तुम बड़े मन्दभागी और दुर्बुद्धि हो। गृहस्थी के घर कुरूप, सुरूप, मूर्ख, पण्डित, मलिन, नीच चाहे जैसा अतिथि जाय उसकी पूजा करनी उचित है फिर वह तो साक्षात् परमेश्वर देव दारुवन में प्राप्त भये थे कि जिनके दर्शन देवताओं को भी दुर्लभ हैं तुमसे उनका भी सत्कार न बनपड़ा देखो सुदर्शन मुनि ने अतिथि-पूजा से ही अकालमृत्यु जीति लिया गृहस्थ के उद्धार के लिये और आत्मशुद्धि के अर्थ अतिथिपूजा के विना कोई उपाय नहीं है। पूर्वकाल में सुदर्शन नाम गृहस्थी मुनि मृत्यु के जीतने को प्रतिज्ञा करताभया और अपनी पतिव्रता स्त्री से कहने लगा कि हे प्रिये! तुम्हारे घर में जो अतिथि आवे उसका कभी अपमान मत करो क्योंकि अतिथि साक्षात् शिवका स्वरूप है इसलिये अतिथि को अपना शरीर अर्पण करने में भी कुछ सन्देह मत करो यह पति का वचन सुन उस पतिव्रता को बड़ा दुःख हुआ और रुदन करती हुई कहने लगी कि यह आप क्यों कहते हैं कि शरीर भी अर्पण कर दो तब सुदर्शन मुनि ने कहा कि हे पतिव्रते! मेरे वचन में कुछ विकल्प मत कर अतिथि को शिवस्वरूप जान कर सब वस्तु जो उसको प्रिय हो अर्पण करो यह पति की आज्ञा पाय वह पतिव्रता अतिथिसत्कार में प्रवृत्त

हुई। इसभांति कुछ काल व्यतीत होने के अनन्तर उनकी श्रद्धा परीक्षा के लिये साक्षात् धर्म ब्राह्मण का रूप धार सुदर्शन मुनि के घर आये। उनको देख उस पतिव्रता ने बहुत सत्कार किया। धर्म भी उसका किया सत्कार स्वीकार कर कहने लगे कि हे भद्रे! तेरा पति कहां है। जो हमको प्रसन्न किया चाहती है तो अपना शरीर हमारे समर्पण कर भोजन आदि से हमको सन्तोष नहीं होगा। यह धर्म का वचन सुन लज्जित हो अपने पतिका वचन स्मरण करती हुई नेत्र बन्द कर धर्म के प्रति अपने को अर्पण करने के लिये प्रवृत्त हुई। इसी अवसर में घरके द्वारपर सुदर्शन मुनि आय पहुँचे और बाहर से पुकारे कि हे प्रिये! तू कहां है हमारे समीप आ तबतो अतिथि बोला कि हे सुदर्शन! तुम्हारी भार्या के साथ हम मैथुन में प्रवृत्त हैं और अब सुरत का अन्त है हम बहुत प्रसन्न भये हैं। तब सुदर्शन ने कहा कि आप प्रसन्नता से भोग करो हम भीतर नहीं आते। यह सुनते ही प्रसन्न हो धर्म ने अपना स्वरूप सुदर्शन को दिखाया और जो वर मांगा वह देकर कहा कि हे सुदर्शन! तुम कुछ सन्देह मत करना हमने तुम्हारी स्त्री से भोग नहीं किया है केवल तुम्हारी श्रद्धा देखने आये थे। तुमने अपने धर्म से मृत्यु जीति लिया इतना कह सुदर्शन के तपकी प्रशंसा करते हुये धर्म वहां ही अन्तर्धान भये। इतनी कथा सुनाय ब्रह्माजी कहने लगे कि अतिथियों की सदा पूजा करनी चाहिये परन्तु तुम भाग्यहीन हो कि शिवजीका भी तुमने अनादर किया

अब उनकी ही शरण में जाओ यह ब्रह्माजी का वचन सुन बड़े आकुल हो सब मुनि प्रार्थना करने लगे कि महाराज! हमसे बड़ा अनर्थ बनपड़ा कि साक्षात् महादेव जी की हमने निन्दा की और अज्ञान से उनको शाप दिया परन्तु हमारे शापकी शक्ति उन पर कुण्ठित होगई अब आप क्रम से ऐसा उपाय उपदेश करें कि जिससे महादेवजीका अनुग्रह हो और उनका दर्शन पावें। यह सुन ब्रह्माजी कहने लगे कि प्रथम तो श्रद्धा करके गुरुसे वेद पढ़े फिर उनका अर्थ विचार कर सब धर्मों को जाने इसप्रकार बारह वर्ष वेदाभ्यास कर विवाह करे और पुत्र उत्पन्न करे जो सदाचार हों और उनके लिये कुछ वृत्ति का उपाय करदेवे। फिर अग्निष्टोम आदि यज्ञों से परमेश्वर का यजन कर वन में जाय रहे और अग्निमें ही परमेश्वर का पूजन करे। इस भांति बारह वर्ष, एक वर्ष, छः महीने अथवा बारह दिनही शान्तचित्त हो दुग्धपान करके वन में निवास करे पीछे यज्ञ के सब पात्र जो काष्ठ के हों उनका अग्नि में हवन करदे मृत्तिका के पात्र जल में छोड़ दे धातु के पात्र गुरु को अर्पण कर और जो कुछ धन पास हो सब ब्राह्मणों को बांट गुरु को प्रणाम कर विरक्त यति अर्थात् संन्यासी होजावे शिखा और यज्ञोपवीत को त्याग (भूस्स्वाहा) इस मन्त्र से पांच आहुति जल में देवे। इस के अनन्तर मुक्तिके लिये अनशन व्रत करे अथवा केवल जल, वृक्षके पत्र, दुग्ध अथवा फलसे अपना निर्वाह करे इस प्रकार छः महीने अथवा एक वर्ष बितावे जो जीता

रह जावे तो प्रस्थान आदि करे। इस प्रकार से शिव-सायुज्य मिलती है परंतु जिसके अन्तःकरण में दृढ़ भक्ति हो वह उसी क्षण मुक्ति पाता है विधि, त्याग, यज्ञ, दान, व्रत, होम, शास्त्र, वेद आदि से कुछ प्रयोजन नहीं जो अन्तःकरण में दृढ़ शिवभक्ति हो। श्वेत-मुनि ने शिवभक्ति सेही मृत्युको जीता है इससे श्री महादेवजीमें तुमभी दृढ़भक्ति रक्खो॥

तीसवां अध्याय॥

नन्दी कहते हैं कि हे सनत्कुमारजी! यह ब्रह्माजीका वचन सुन सब मुनि पूछते भये कि महाराज! श्वेतमुनि कौन थे कृपाकर उनकी कथा आप हमको सुनावें यह मुनियोंका वचन सुन ब्रह्माजी कहने लगे कि एक पर्वत की कन्दरा में श्वेतमुनि तप किया करते थे उनकी मृत्यु समीप आई तब (नमस्ते रुद्रमन्यवे) इत्यादि रुद्राध्याय से श्रीमहादेवजी की स्तुति करने लगे इस अवसर में काल भगवान् भी श्वेतमुनिकी आयुष् समाप्त भई जान उनको लेजाने के अर्थ उनके आश्रम में आये श्वेतमुनि भी काल को देखकर त्र्यम्बक भगवान् का स्मरण करते हुये पूजन करने लगे और कहने लगे कि हमारी मृत्यु क्या करसक्ती है श्रीमहादेवजी के अनुग्रहसे हमीं मृत्युके भी मृत्यु होगये हैं। उनको देख काल भगवान् ने हँसकर कहा कि हे श्वेतमुनि! अब हमारे पास चले आओ इस पूजा पाठसे क्या फल है। शिव, ब्रह्मा, विष्णु आदि कोई भी हमारे ग्रास किये जीव के

छुटाने को समर्थ नहीं यह तुम्हारी रुद्रपूजा हमारा कुछ नहीं करसकी। तुम्हारी आयुष् समाप्त होगई है अब हम क्षणमात्रमें तुमको यमलोक लिये चलते हैं। यह कालका वचन सुन हा रुद्र! हा रुद्र! इस भांति ऊंचे स्वरसे श्वेतमुनि विलाप करनेलगा और शिवजी के लिङ्ग को दीनदृष्टि से देखता हुआ व्याकुल हो कालके प्रति कहने लगा कि हे काल! इस लिङ्गमें हमारे प्रभु; भक्तों का भय हरनेहारे, श्रीमहादेवजी विराजमान हैं इसलिये तुम अपने स्थानको जाओ हमारा कुछ नहीं करसक्के। ऐसा श्वेतमुनि का वाक्य सुनतेही बड़े क्रोध से गर्जकर काल भगवान् ने अपने पाश से श्वेतमुनिको बांधकर कहा कि हे श्वेतमुनि! यमलोक को लेजाने के अर्थ हमने तुझे बांध लिया अब रुद्र ने तेरा क्या सहाय किया कहां शिव कहां तेरी भक्ति कहां पूजा और पूजा का फल और कहां हम। इस लिङ्ग में जो रुद्र स्थित है वह निश्चेष्ट है इसलिये उसकी पूजा करनी उचित नहीं। इतना कहतेही नन्दीआदि गण तथा पार्वतीजी सहित श्रीमहादेवजी अतिशीघ्रता से वहां प्रकट भये और बड़ा घोर उनका रूप देखतेही कालके प्राण मुक्त होगये और भूमि पर गिरपड़ा। इस भांति शिवजी के दर्शनसेही काल को गिरा देख श्वेतमुनि अतिप्रसन्नता से बड़ा शब्द करते भये और पार्वती सहित श्रीमहादेवजीको भक्ति से प्रणाम किया और भी सब मुनियों ने श्रीमहादेवजी के चरणों पर मस्तक नवाया। आकाश से देवताओंने बहुत उत्तम सुगन्धित पुष्पों की

वर्षा की। इस भांति शिवजी का प्रभाव देख नन्दी ने प्रणाम कर कहा कि महाराज! यह मूर्ख काल अपने अज्ञान से मृत्युवश भया अब इसके ऊपर और इस ब्राह्मण के ऊपर आप अनुग्रह करें यह नन्दी का वचन स्वीकार कर दोनों पर अनुग्रह कर श्रीमहादेवजी अन्तर्धान होते भये। इसलिये मृत्युंजय परमेश्वर की सदा भक्ति से पूजा करनी चाहिये जिससे भुक्ति मुक्ति मिले। बहुत प्रलाप से क्या फल है हे मुनीश्वरो! तुम भी भक्ति से श्रीमहादेवजी का आराधन करो जिससे यह तुम्हारा शोक निवृत्त होवे नन्दी कहते हैं कि हे सनत्कुमारजी! यह ब्रह्माजीसे सुन सब मुनि पूछते भये कि महाराज! कौन से जप, यज्ञ अथवा व्रत से परमेश्वर के भक्त होजावें यह आप कृपा कर कहें। तब ब्रह्माजी ने कहा कि हे मुनीश्वरो! दान, यज्ञ, तप, विद्या, योग, होम, व्रत, वेद, शास्त्र आदि किसीसे भक्ति नहीं होती, केवल शिवजी के प्रसाद से ही भक्ति होती है इतना ब्रह्माजी से सुन प्रणाम कर सब मुनि अपने आश्रम में जाकर शिवजी का आराधन करने लगे। नन्दी कहते हैं कि शिवभक्ति धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष, विजय आदि देती है। पूर्वकालमें दधीचि मुनि देवताओं के सहित इन्द्र और विष्णुजी को जीत अपने पाद के प्रहार से राजा क्षुपको मारताभया और उनके अस्थि वज्रके होगये यह सब शिवभक्ति का प्रताप है। मैंने भी महादेव के कीर्तन से मृत्युको जीत लिया। और श्वेतमुनि भी महादेवजीके अनुग्रह करके मृत्युके मुखसे निकल आया॥

इकतीसवां अध्याय ॥

सनत्कुमारजी पूछते हैं कि हे नन्दीश्वरजी ! देवदारु वन के निवासी मुनि क्योंकर महादेवजी की शरण में प्राप्त हुये ? यह आप कहें नन्दी कहतेहैं कि हे सनत्कुमार जी ! ब्रह्माजी ने बड़े तपस्वी और तेज करके अग्नि के तुल्य देवदारुवन के निवासी उन मुनियों से कहा कि हे मुनीश्वरो ! देवदेव श्रीमहादेवजी को जानना चाहिये इससे अधिक कोई पदार्थ नहीं है । देवता, ऋषि, पितर आदि सबका वही प्रभु है । हजार युग के अन्त में कालरूप से सबका संहार वही करता है । वही अपने तेजसे सब प्रजाको सिरजता है । वही इन्द्र, रुद्र, चन्द्र, विष्णुरूप धरे है, सत्ययुग में वह योगी, त्रेतामें क्रतु, द्वापर में कालाग्नि और कलियुग में धर्मकेतु नाम से प्रसिद्ध है । इन रुद्र की चार मूर्तियों का पण्डितजन ध्यान करते हैं (बाहर चतुरस्र भीतर अष्टदलपिण्डिका समीप सुन्दर वृत्त इस भांति लिङ्ग को पूजे) तमोगुण अग्नि, रजोगुण ब्रह्मा, सत्त्वगुण विष्णु ये तीनों शिव की एक मूर्ति हैं । योग करके युक्त वह ब्रह्म शिव है । इस-लिये जितक्रोध और जितेन्द्रिय ब्राह्मण देवदेव उस ईशान का आराधन करते हैं । सब लक्षणों करके युक्त अंगुष्ठ प्रमाण अतिमनोहर वर्तुल शिवलिङ्ग लेवे वह लिङ्ग अष्टकोण हो षोड़श कोण हो चाहे वर्तुल ही हो परन्तु मनोहर हो उससे द्विगुण वेदिका अर्थात् जलहरी सोने चांदी अथवा पाषाणकी बनावे वह वेदी भी

त्रिकोण चतुष्कोण षट्कोण अथवा वर्तुल बनावे। जल निकलने के अर्थ उसके अग्रमें गौका मुख बनादेवे। इस भांति बहुत स्वच्छ निर्व्रण मनोहर वेदी निर्माण करे। फिर उसमें शिवलिङ्ग को विधिपूर्वक स्थापन करे और उसके समीप एक कलश स्थापन करे जिसमें सुवर्ण भी गेरै फिर पञ्चाक्षरमन्त्र और सद्योजात आदि पांचमन्त्रोंसे उसको अभिमन्त्रण कर उस कलश के जल करके महादेव जीको अभिषेककरे और जो उपचार मिले उनसे महादेव जी का भक्ति करके पूजन करे तो सब सिद्धि हों इसलिये हे मुनीश्वरो! इसी रीति से एकाग्र चित्त हो शिवजी की पूजा तुम भी करो और हाथ जोर भक्तिसे स्तुति करो तो उनका दर्शन पाओगे जो योगियों को भी दुर्लभ है और जिससे सब अज्ञान और अधर्म नष्ट होता है। यह ब्रह्माजी का वचन सुन उनकी प्रदक्षिणाकर सब मुनि देवदारुवन को जाते भये। वहां जाय ब्रह्माजी की आज्ञानुसार श्रीमहादेवजी का आराधन करने लगे अनेक प्रकार के स्थण्डिलों में पर्वतों की गुहाओं में नदियों के पवित्र और एकान्त तटोंपर कोई शैवालपर निवासकर कोई जल में बैठ कोई कोई दर्भशय्या बिछाय कोई पादके एक अंगूठेपर ठहरके कोई वीरासन में स्थिर हो तप करनेलगे इस भांति तप करते करते एक वर्ष पूरा हुआ तब वसन्तऋतु में उनके अनुग्रह के लिये भक्तोंपर दया कर प्रसन्न हो हिमालय के उस देवदारु वनमें शिवजी आये जो शरीरमें भस्म लपेटे विकृतरूप धरे उल्मुक अर्थात् जलता हुआ काष्ठ हाथ में लिये

लाल जिनके नेत्र कभी गाते कभी हँसते कभी नाचते और कभी रोते और आश्रमों में भिक्षा मांगते हुये फिरने लगे। इस माया से शिवजी को वनमें प्रवेश किये हुये देख सब मुनि उनको पहिंचान स्तुति करनेलगे और सुन्दर जल अनेक भांति की पुष्पमाला धूप गन्ध नैवेद्य आदि उपचारों से अपनी स्त्री पुत्रों सहित उनकी पूजा करते भये। और भक्तिसे हाथ जोर प्रार्थना करने लगे कि हे परमेश्वर! हमने अज्ञान से जो अपराध किया वह आप क्षमा करें। आपके चरित विचित्र और गहन हैं जिनको ब्रह्मादिक भी नहीं जानसक्के हमारी तो क्या कथा है। आपकी गति और अगतिको हम नहीं जानसक्के। आप जो हो सोई हो आपको बार बार नमस्कार है। हे देव! हे देव! महात्मा पुरुष आपकी स्तुति इस भांति करते हैं॥

ॐनमो भवाय भव्याय भावनायोद्भवाय च। अनन्तबलवीर्याय भूतानां पतये नमः १ संहर्त्रे च पिशङ्गाय अव्ययाय व्ययाय च। गङ्गासलिलधाराय आधाराय गुणात्मने २ त्र्यम्बकाय त्रिनेत्राय त्रिशूलवरधारिणे। कन्दर्पाय हुताशाय नमोऽस्तु परमात्मने ३ शङ्कराय वृषाङ्काय गणानां पतये नमः दण्डहस्ताय कालाय पाशहस्ताय वै नमः ४ वेदमन्त्रप्रधानाय शतजिह्वाय वै नमः ४ भूतं भव्यं भविष्यं च स्थावरं जङ्गमं च यत्। तव देहात्समुत्पन्नं देव सर्वमिदं जगत् ५ अज्ञानाद्यदि वाज्ञानाद्यत्किञ्चित्कुरुते नरः। तत्सर्वं भगवानेव कुरुते योगमायया ६ इस भांति भक्ति से स्तुतिकर सब मुनि यह

प्रार्थना करते भये कि हे परमेश्वर! हम आपके मुख्य रूप का दर्शन किया चाहते हैं। यह मुनियों की विनती सुन श्रीमहादेवजी अपना रूप देखने के अर्थ मुनियों को दिव्यदृष्टि देते भये। वेभी दिव्यदृष्टि पाय परमेश्वर के साक्षात् रूप का दर्शन कर भक्ति से स्तुति करनेलगे॥

बत्तीसवां अध्याय॥

ऋषय ऊचुः॥ नमो दिग्वाससे नित्यं कृतान्ताय त्रिशूलिने। विकटाय करालाय करालवदनाय च १ अरूपाय स्वरूपाय विश्वरूपाय ते नमः। कटंकटाय रुद्राय स्वाहाकाराय वै नमः २ सर्वप्रणतदेहाय स्वयं च प्रणतात्मने। नित्यं नीलशिखण्डाय श्रीखण्डाय नमोनमः ३ नीलकण्ठाय देवाय चिताभस्माङ्गधारिणे। त्वं ब्रह्मा सर्वदेवानां रुद्राणां नीललोहितः ४ आत्मा च सर्वभूतानां सांख्यैः पुरुष उच्यसे। पर्वतानां महामेरुः नक्षत्राणां च चन्द्रमाः ५ ऋषीणां च वशिष्ठस्त्वं देवानां वासवस्तथा। ॐकारस्सर्वदेवानां श्रेष्ठं साम च सामसु ६ आरण्यानां पशूनां च सिंहस्त्वं परमेश्वर। ग्राम्याणां ऋषभश्चासि भगवान् लोकपूजितः ७ सर्वथा वर्तमानोपि यो यो भावो भविष्यति। त्वामेव तत्र पश्यामो ब्रह्मणा कथितं यथा ८ कामः क्रोधश्च लोभश्च विषादो मद एव च। एतदिच्छामहे बोद्धुं प्रसीद परमेश्वर ९ महासंहरणे प्राप्ते त्वया देव कृतात्मना। करं ललाटे संविध्य वह्निरुत्पादितस्त्वया १० तेनाग्निना ततो लोका अर्चिभिस्सर्वतोवृताः। तस्मादग्निसमा ह्येते

बह[illegible] विकृताग्नयः ११ कामः क्रोधश्च लोभश्च मोहो दम्[illegible] उपद्रवः। यानि चान्यानि भूतानि स्थावराणि च[illegible] च १२ दह्यन्ते प्राणिनस्ते तु त्वत्समुत्थेन वह्निना। अस्माकं दह्यमानानां त्राता भव सुरेश्वर १३ त्वं च लोकहितार्थाय भूतानि परिषिञ्चसि। महेश्वर महाप्राज्ञ प्रभो शुभनिरीक्षक १४ आज्ञापय वयं नाथ कर्तारो वचनं तव। भूतकोटिसहस्रेषु रूपकोटिशतेषु च १५ अन्तं गन्तुं न शक्ताः स्मो देवदेव नमोस्तु ते १६॥

तेंतीसवां अध्याय॥

नन्दी कहते हैं कि हे सनत्कुमारजी! यह मुनियों से स्तुति सुन परमेश्वर अत्यन्त प्रसन्न हो उनसे कहने लगे कि यह तुम्हारा किया स्तोत्र जो पढ़े अथवा सुने वा ब्राह्मणों को श्रवण करावे वह हमारे गणों में मुख्य होगा हे मुनीश्वरो! हम तुमको हित उपदेश करते हैं। जगत् में जितने स्त्रीलिङ्ग हैं सब मेरे देहसे उत्पन्न हुई प्रकृति का स्वरूप हैं। और पुँल्लिङ्ग सब पुरुषरूप हमारा स्वरूप हैं यह सब सृष्टि प्रकृति पुरुषरूप नारी नरों से व्याप्त है। इसलिये किसी की भी निन्दा न करे विशेष करके ज्ञानीपुरुष जो दिगम्बर हों बालक, उन्मत्त, जड़ आदिकी चेष्टा में रहें उनकी कभी निन्दा न करे। जो भस्म धारण से सब अपने पाप दग्धकर जितेन्द्रिय हो ध्यान में तत्पर होकर परमेश्वर का आराधन करते हैं और मन वचन कर्म से श्रीमहादेव का अर्चन करते हैं वे रुद्रलोक में सदा वास करते हैं। इसलिये यह व्रत

अव्यक्त है और अव्यक्त लिङ्गी परमेश्वर है। जो भस्म धारे और मूड़ मुड़ाये व्रती हों उनकी कभी निन्दा न करे। न उनको हँसे न कुछ बुरी बात कहे जो पुरुष दोनों लोकों में अपना कल्याण चाहे वह सदा ऐसे पुरुषों का आदर करे। जो इनकी निन्दा करे वह साक्षात् शिवजी की निन्दा करता है। जो इनकी पूजा करे वह शिवजी की पूजा करता है। इसभांति श्रीमहादेवजी लोकहित के लिये युगयुग में भस्म करके अवगुण्ठित क्रीडा करते हैं। तुम भी इसी भांति का व्रत धारो जिससे सिद्धि मिले। इस प्रकार सब भय दूर करनेहारा श्रीमहादेवजी का वचन सुन लोभ मोह आदि को त्याग श्रीपरमेश्वर के चरणों पर प्रणाम करते भये और गन्ध, पुष्प, कुश आदि से युक्त सुन्दर शीतल जल के घटों करके श्रीमहादेवजी को स्नान कराते भये और भांति भांति के उपचारों से पूजन कर सुन्दर स्वरसे गानेलगे और स्तुति करतेभये कि॥ स्तुति॥

नमो देवाधिदेवाय महादेवाय वै नमः। अर्धनारीशरीराय सांख्ययोगप्रवर्तिने १ मेघवाहनकृष्णाय गजचर्मनिवासिने। कृष्णाजिनोत्तरीयाय व्यालयज्ञोपवीतिने २ सुरचितसुविचित्रकुण्डलाय सुरचितमाल्यविभूषणाय तुभ्यम्। मृगपतिवरचर्मवाससे च प्रथुयशसे च नमोस्तु शङ्कराय ३॥

इस प्रकार स्तुति सुन प्रसन्न हो श्रीमहादेवजी मुनियों के प्रति कहने लगे कि तुम्हारे तपसे हम प्रसन्न हैं वर मांगो तब वे सब मुनि भृगु, अङ्गिरा, वशिष्ठ,

विश्वामित्र, गौतम, अत्रि, सुकेश, पुलस्त्य, पुलह, क्रतु, मरीचि, कश्यप, कण्व, संवर्त आदि श्रीमहादेवजी को प्रणाम कर यह प्रार्थना करते भये कि हे नाथ! भस्म स्नान, नग्नता, वामता, काम्यमार्ग में प्रवृत्ति, सेव्य और असेव्य ये हम जानना चाहते हैं यह उनका वचन सुन श्रीमहादेवजी हँसकर सब मुनियों के प्रति कहने लगे ॥

चौंतीसवां अध्याय ॥

शिवजी कहते हैं कि हे मुनीश्वर! कथा का सार हम तुमसे कहते हैं सुनो अग्नि हम हैं सोम भी हमहीं हैं और सोमके कर्ता हम हैं इसलोक में रहने से सबके कर्मों का फल अग्नि धारण करता है। यह स्थावर जङ्गम-रूप जगत् अग्नि ने कई वेर दग्ध किया है। इसी भस्म से सोम सब जगत् को जिलाते हैं। अग्निहोत्र करके जो पुरुष भस्म से त्र्यायुष करे वह सब पापों से मुक्त होजाता है। लोकों को भासित अर्थात् प्रकाशमान करता है और सबके पापों को भक्षण करता है इसीसे इसका नाम भस्म है। पितर ऊष्मप हैं देवता सोमसम्भव हैं और स्थावर जङ्गमरूप यह जगत् अग्निसोमात्मक है। हम अग्नि हैं और ये पार्वती सब जगत् की जननी सोमरूप हैं इससे प्रकृति पुरुष सोम और अग्निस्वरूप हैं और भस्म हमारा वीर्य है। अपने वीर्य को हमने अपने शरीर में धारण किया है। उस दिन से ही लोकमें अशुभ से रक्षा भस्म करके करते हैं और सूतिका के घरों की रक्षा भी भस्म करके होती है। जो पुरुष क्रोध और इन्द्रियों को

जीत भस्म स्नान करके पवित्र होता है वह सदा मेरे समीप निवास करता है। यह पाशुपत योग और कापिल अर्थात् सांख्यशास्त्र ये हमने रचे इनमें पहिले पाशुपतयोग रचा इससे वह उत्तम है। बाकी सब शास्त्र ब्रह्माजीने रचे। और लज्जा भय मोह आदि करके युक्त यह सृष्टि हमने ही रची है। जगत् में देवता, मुनि, मनुष्य आदि जो उत्पन्न होते हैं पहिले सब नग्न ही उपजते हैं कपड़ा ओढ़े किसी का जन्म नहीं होता जो पुरुष जितेंद्रिय न हो वह कपड़ा पहिने भी नंगा ही है। जिसने इन्द्रिय जीतली वह नग्न भी वस्त्रोंसे ढँका ही है। इससे नग्नता का कारण वस्त्र नहीं। क्षमा, धृति, अहिंसा, वैराग्य, मान और अपमान में समता ये उत्तम वस्त्र हैं। श्वेत भस्म शरीर में लगावे और शिव का स्मरण करे वह सब पातकों को दग्ध कर देता है जिस भांति वनको अग्नि दग्ध करै। जो पुरुष यत्न से तीन काल भस्म स्नान करे वह हमारा गण होता है। जो पुरुष सब यज्ञोंको कर मनको एकाग्र कर परमेश्वर का ध्यान करते हैं वे मोक्ष पाते हैं। इस मार्ग को वाम अथवा उत्तर कहते हैं। और दक्षिणमार्ग अर्थात् काम्यकर्मों के लिये जो परमेश्वर का आराधन करते हैं वे अणिमा, गरिमा आदि सिद्धि पाते हैं और अमर होजाते हैं। इन्द्रादिक देवता काम्यव्रत से ही परमैश्वर्य को प्राप्त भये हैं। मद, मोह, राग, रज, तम आदिको छोड़ संसारको दूर करनेहारे पाशुपतयोग को जान इसका सदा सेवन करे। जो इसको जितेन्द्रिय हो श्रद्धा से पढ़े

सब पापों से मुक्त हो रुद्रलोक में जाता है । यह शिवजी का वचन सुन वशिष्ठ आदि सब मुनि पाशुपतयोग में प्रवृत्त भये और भस्म धारण करने लगे और कल्प के अन्त में शिवलोक के बीच निवास करते भये । नन्दी कहते हैं कि हे सनत्कुमारजी ! मलिन, विकृत, रूपवान् चाहे जिसभांति के हों परन्तु ब्राह्मणों की निन्दा न करे बहुत प्रलाप से क्या प्रयोजन है यह बात मुख्य है कि शिवजी के तुल्य शिवभक्तों को जानना चाहिये । देखो दधीचि ने शिवभक्ति सेही देवदेव श्रीनारायण को जीता इसलिये जगत् में जो पुरुष जटा-धारे अथवा मूड़ मुड़ाये भस्म लगाये दिगम्बर हों उनका मन वचन कर्म से शिवजी के तुल्य पूजन करना उचित है ॥

पैंतीसवां अध्याय ॥

सनत्कुमार जी पूछते हैं कि हे नन्दिकेश्वर जी ! दधीचिने अपने चरण से क्षुप राजा को किसभांति मारा और दधीचि के अस्थि वज्र के तुल्य क्योंकर भये । और तुमने मृत्यु किस प्रकार जीता यह सब आप कथन करें । यह सुन नन्दी कहने लगे कि हे सनत्कुमार जी ! ब्रह्माजी का पुत्र क्षुपनाम एक राजा दधीचि मुनि का परम मित्र था एक दिन उन दोनों का विवाद भया दधीचि ने कहा कि ब्राह्मण श्रेष्ठ हैं राजा ने कहा कि क्षत्रिय उत्तम होते हैं आठ लोकपालों का सामर्थ्य राजा में होता है इसलिये इन्द्र, अग्नि, यम, निर्ऋति, वरुण, वायु, सोम

और कुवेर मैंही हूं और ईश्वर हूं इसलिये हे च्यवन के पुत्र, दधीचि ! कभी हमारी अवज्ञा मत करो और हमको बड़ा भारी देवता जान सदा हमारी पूजा करो यह राजा का वचन सुन दधीचिमुनि को बड़ा क्रोध आया और बायें हाथ से एक मूका राजा के शिर में मारा, राजा ने दधीचि को वज्र से मार गिराया वह राजा ब्रह्मा जी की छींक से उत्पन्न भया था और किसी कार्य के लिये इन्द्र ने उसको वज्र दिया था। उस वज्र के प्रभाव से राजा ने दधीचिमुनि को भूमि पर गिरा दिया तब तो पड़े पड़े दधीचिमुनि ने शुक्राचार्य को स्मरण किया शुक्राचार्य ने भी बहुत शीघ्र वहां आय अपनी अमृतसञ्जीविनी विद्या से दधीचिमुनि के सब अङ्ग यथार्थ कर दिये और कहा कि हे दधीचि ! श्रीमहादेवजी का आराधन करो कि जिससे अवध्य हो जाओ अर्थात् किसी से न मारे-जाओ हमको भी अमृतसञ्जीविनी विद्या श्रीशिवजी ने ही अनुग्रह कर उपदेश करी है शिवभक्तों को कभी मृत्यु का भय नहीं होता। अब शिवजी का बताया हुआ मृतसञ्जीवन मन्त्र, हम आपसे कहते हैं त्र्यम्बक देव का यजन करे जो तीनलोक सोम, सूर्य, अग्निरूप तीन मण्डल तीन गुण मन बुद्धि अहङ्काररूप तीन तत्त्व, तीन अग्नि, तीन देव और भी जो जगत् में तीन तीन प्रकार के पदार्थ हैं सबके पिता हैं। जिसभांति पुष्पों में गन्ध रहता है उसी प्रकार वह परमेश्वर सब जगत् में सुगन्धरूप है महत्तत्त्व आदि विशेष पर्यन्त जितना माया विकल्प है उस सबकी और ब्रह्मा, विष्णु, इन्द्र, मुनि

आदि सब की पुष्टि वा प्रकृति है उसकी वृद्धि करनेहारा वह परमेश्वर है इससे पुष्टिवर्धन कहाता है इसलिये उस रुद्र का कर्म से और तप, स्वाध्याय, योग, ध्यान आदि से यत्न करै। इस सत्य करके वह परमेश्वर मृत्यु के पाश से हमारा मोक्ष करे अर्थात् छुटावे क्योंकि वह परमेश्वर जिसप्रकार उर्वारुक अर्थात् ककड़ी को सूर्य अपनी किरणों करके पक्व कर उसके मूलरूप बन्धन से छुटाते हैं इसीभांति, अज्ञानरूप ग्रन्थि का भेदनकर अपने भक्तों को बन्धन से मुक्त करता है। मृतसञ्जीवन मन्त्र हमने शिवजी से पाया है इस मन्त्र का जप तथा हवन करे और शिवलिङ्ग के समीप अभिमन्त्रित जल पीवे और ध्यान करे तो उस पुरुष को कभी मृत्यु का भय न हो। यह शुक्राचार्य का वचन सुन बड़े तप से दधीचि मुनि ने शिवजी को प्रसन्न किया और उनके वर से अवध्य हुये और वज्र के तुल्य अस्थि होगये और सब दीनता जातीरही तब फिर आयके क्षुप राजा को अपने पांव से शिरमें ताड़न किया और राजा ने भी दधीचि की छाती में वज्र मारा परन्तु दधीचि के वज्र न लगा क्योंकि परमेश्वर के अनुग्रह से उसका शरीर ही वज्र होगया था। तब राजा क्षुप ने दधीचि को अवध्य जाना और उसका तपोबल भी समझा। और भय निवृत्त होने के अर्थ राजा क्षुप श्रीविष्णुजी का आराधन करनेलगा॥

छत्तीसवां अध्याय॥

नन्दी कहते हैं कि हे सनत्कुमारजी! उस राजा के

तप से प्रसन्न हो श्रीविष्णु भगवान् शङ्ख, चक्र, गदा, पद्म धारे मुकुट मस्तक पर और भूषण सब अङ्गों में पहिने पीताम्बर से शोभायमान देव और दैत्यों करके पूजित भूमि और लक्ष्मी करके युक्त गरुड़ध्वज राजा क्षुप को दर्शन देते भये राजा भी श्रीभगवान्‌जी का दर्शन पाय प्रणाम कर हाथ जोड़ गद्गद वाणी से स्तुति करने लगे॥

स्तुति॥

त्वमादिस्त्वमनादिश्च प्रकृतिस्त्वं जनार्दनः। पुरुषस्त्वं जगन्नाथो विष्णुर्विश्वेश्वरो महान् १ योऽयं ब्रह्मासि पुरुषो विश्वमूर्तिः पितामहः। तत्त्वमाद्यं भवानेव परंज्योतिर्जनार्दनः॥ परमात्मा परंधाम श्रीपते भूपते प्रभो २ त्वत्क्रोधसम्भवो रुद्रस्तमसा च समावृतः। त्वत्प्रसादाज्जगद्धाता रजसा च पितामहः ३ त्वत्प्रसादात्स्वयं विष्णुः सत्त्वेन पुरुषोत्तमः। कालमूर्ते हरे विष्णो नारायण जगन्मय ४ महांस्तथा च भूतादिस्तन्मात्राणीन्द्रियाणि च। त्वयैवाधिष्ठितान्येव विश्वमूर्ते महेश्वर ५ महादेव जगन्नाथ पितामह जगद्गुरो। प्रसीद देवदेवेश प्रसीद परमेश्वर ६ प्रसीद त्वं जगन्नाथ शरण्यं शरणङ्गतः। वैकुण्ठशौरे सर्वज्ञ वासुदेव महाभुज ७ सङ्कर्षण महाभाग प्रद्युम्न पुरुषोत्तम। अनिरुद्ध महाविष्णो सदाविष्णो नमोस्तु ते ८ विष्णो तवासनं दिव्यमव्यक्तमध्यतो विभुः। सहस्रफणसंयुक्तस्तमोमूर्तिर्धराधरः ९ अधश्च धर्मो देवेश ज्ञानं वैराग्यमेव च। ऐश्वर्यमासनस्यास्य पादरूपेण सुव्रत १० सप्तपातालपादस्त्वं धराजघनमेव च। वसांसि सागराः सप्त दिशश्चैव महाभुजाः ११

द्यौर्मूर्धा ते विभो नाभिः खं वायुर्नासिकाङ्गतः । नेत्रे सोमश्च सूर्यश्च केशा वै पुष्करादयः १२ नक्षत्रतारका-द्यौश्च ग्रैवेयकविभूषणम् । कथं स्तोष्यामि देवेशः पूज्यश्च पुरुषोत्तमः १३ श्रद्धया च कृतं सर्वं यच्छ्रुतं यच्च कीर्ति-तम् । यादिष्टं तत्क्षमस्वेश नारायण जनार्दन १४ ॥

नन्दी कहते हैं कि यह क्षुप राजा का किया हुआ विष्णु-स्तोत्र जो पढ़े वा सुने अथवा ब्राह्मणों को सुनावे वह अवश्य विष्णुलोक पावे । इस भांति राजाने विष्णुजी की स्तुति की और विधिसे पूजनकर हाथ जोड़ प्रार्थना करने लगा कि महाराज! दधीचि नामक एक ब्राह्मण है वही मेरा मित्र था और बड़ा धर्मात्मा था उसने ऐसा शिवजी का आराधन किया कि किसी से भी उसका वध न होसके उसने एक दिन सभा के बीच अपने बायें चरण से मेरे मस्तक में ताड़न किया और यह भी कहा कि हम किसी से भी नहीं डरते तू तो कौनहै सो हे भगवन्! उस दधीचि को मैं जीतना चाहताहूं इसमें जो कुछ उचित हो वह आप करें यह उस राजा का वचन सुन शिवजी के प्रभाव और दधीचि के अवध्यपने को स्मरण कर विष्णुजी कहने लगे कि हे राजन्! जो ब्राह्मण महादेवजी की शरण में रहते हैं उनको किसी का भय नहीं होता है। शिवभक्त चाहे नीच भी हो वह निर्भय रहता है फिर दधीचि मुनि का तो क्या कहना है इसलिये तुम्हारा विजय न होगा अब हम दधीचि मुनि को क्रोध कराते हैं कि जिस से देवताओं के सहित हमको शाप देवें । दक्ष के यज्ञ में दधीचि के शाप से देवताओं का व हमारा नाश होगा

और फिर भी उत्थान होगा इसलिये हे राजन्! सब प्रकार से तुम्हारा जय होने के अर्थ हम यत्न करते हैं। नन्दी कहते हैं कि यह विष्णुजी का वचन सुन राजा ने कहा कि जैसी आपकी इच्छा हो वैसा करें। तब विष्णु जी ब्राह्मण का रूप धार दधीचि के आश्रम में गये और दधीचि से कहा कि हे ब्रह्मऋषि, दधीचि! तुम से एक वर हम मांगते हैं आप हमको दें यह सुन दधीचि मुनि ने कहा कि तुम्हारा अभिप्राय मैं जानताहूं मैं आप से भी नहीं डरता। आप विष्णु हैं और ब्राह्मण का रूप धार कर आये हैं। शिवजी के अनुग्रह से भूत, वर्तमान और भविष्य सब मैं जानताहूं। अब आप यह ब्राह्मण का रूप छोड़ दें। राजा क्षुपने आपका आराधन किया है उसके अर्थ आप आये हैं क्योंकि आप भक्तवत्सल हैं। परन्तु यह आपही कहें कि शिवपूजा में तत्पर मुझको आपसे क्या भय होसक्ता है। हे भगवन्! इस जगत् में देव, दैत्य और ब्राह्मण आदि से मुझे भय नहीं है। नन्दी कहते हैं कि यह दधीचि का वचन सुन वह ब्राह्मणरूप तो त्याग दिया और अपना रूप धार हँस कर दधीचि से कहनेलगे कि हे दधीचि! तुम परम शिवभक्त हो इसलिये सर्वज्ञ हो और तुमको किसीका भय भी नहीं है परन्तु हमारे कहने से राजा क्षुप से सभा के बीच इतना कहदो कि हम तुमसे डरते हैं। इस प्रकार विष्णु जी का कथन भी दधीचि मुनिने न माना और कहा कि हम तो शिवजी की कृपा करके किसीसे नहीं डरते हैं। मुनि का ऐसा वचन सुन विष्णु भगवान् को बड़ा क्रोध

भया और दधीचि को दग्ध करने के लिये चक्र उठाया परंतु चक्र कुण्ठित होगया उस समय राजा क्षुप भी वहां ही था। तब दधीचिने हँसकर कहा कि महाराज ! यह चक्र तो आपको शिवजीकेही अनुग्रह से मिला है इसलिये शिवभक्तों पर नहीं चल सक्ता है। अब आप ब्रह्मास्त्र आदि किसी दूसरे अस्त्र करके हमारे मारने का यत्न कीजिये। नन्दी कहते हैं कि हे सनत्कुमारजी ! ऐसा दधीचि का वचन सुन और अपने चक्र को कुण्ठित हुआ देख सब अस्त्र विष्णुजीने दधीचि के ऊपर एकबारही चलाये और सब देवताभी विष्णुजी की सहाय के लिये आये। इस भांति एक ब्राह्मण से सब देवता युद्धकरने में प्रवृत्त भये। दधीचिने भी यह व्यवस्था देख शिवजी का स्मरणकर एक कुशोंकी मुष्टि सब देवताओं पर फेंक दी। वह कुशोंकी मुष्टिही बड़ा भयंकर कालाग्नि के तुल्य त्रिशूल होगया और दधीचिने भी यह मन में विचारा किसब देवताओं को दग्ध करदेवें। इन्द्र, विष्णु आदि देवताओं ने जो जो अस्त्र दधीचि मुनिके ऊपर छोड़े थे सब उस त्रिशूल को प्रणाम करने लगे और देवता भी उस त्रिशूलको देख व्याकुल हो भागचले। तब विष्णुजी ने अपने शरीर से करोड़ों गण अपने तुल्य उत्पन्न किये परन्तु दधीचि ने सबको एकबारही भस्म करदिया तबतो दधीचि को विस्मय करने के अर्थ विष्णु जी ने विश्वरूप धारा। दधीचि ने उनके शरीर में करोड़ों देवता रुद्रगण व ब्रह्माण्ड देखे और विष्णु जी ... अभ्युक्षण कर कहा कि आप इस माया

को छोड़देवें। मैं आपको दिव्यदृष्टि देताहूं। मेरे शरीर में ही आप ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र आदि करोड़ों देवता और ब्रह्माण्ड देखलीजिये इतना कह दधीचिने अपने शरीर में सम्पूर्ण विश्व दिखा दिया और कहा कि इन मायाओं से कुछ फल नहीं आप इस माया को त्याग कर युद्ध कीजिये। ऐसा मुनिका प्रभाव देख विष्णुजी को ब्रह्माजीने आकर युद्धसे हटाया और विष्णुजीभी दधीचि मुनि को प्रणाम कर अपने लोक को गये। राजा क्षुवजी बहुत दुःखी हो दधीचि की पूजाकर बार बार प्रणाम करता हुआ कहनेलगा कि हे दधीचि! जो कुछ मैंने अज्ञान से अपराध किया वह आप क्षमा करें। विष्णुजी अथवा और देवताभी आपका कुछ नहीं करसक्ते। आप परम शिवभक्त हैं परन्तु वह भक्ति मुझ सरीखे अधम क्षत्रियों को क्योंकर मिलसक्ती है। इसलिये आप अनुग्रह करें और मेरा अपराध क्षमा किया जावे। यह राजा का दीनवचन सुन दधीचि मुनिने उसके ऊपर अनुग्रह किया और सब देवताओं को शाप दिया कि दक्षप्रजापति के यज्ञ में विष्णु सहित सब देवता रुद्र के क्रोधरूप अग्नि में दग्ध होंगे। इस भांति सब देवताओं को शापदे राजासे कहा कि हे राजन्! देवता और राजाओं के पूज्य तथा सबसे बलवान् सदा ब्राह्मण हुआ करते हैं इतना कह दधीचि मुनि तो अपनी कुटीमें प्रवेश करते भये और राजाभी उनको प्रणामकर अपनी राजधानी को सिधारा। जहां यह युद्ध भया उस स्थानका नाम स्थानेश्वर भया वहां जो शरीर त्याग करे वह शिवलोक

पावे। यह हमने राजा क्षुप और दधीचि मुनिका [illegible]वाद संक्षेप से कहा है इसको जो पठन करे वह अपमृत्यु को जीतकर ब्रह्मलोक में निवास करे और जो पुरुष इसको पठन कर युद्ध करने के लिये जावे वह अवश्य जय पावे और उसको मृत्यु का भी भय न होवे॥

सैंतीसवां अध्याय॥

सनत्कुमारजी कहते हैं कि हे नन्दिकेश्वरजी! आप शिवजी के गण क्योंकर भये यह हम सुनना चाहते हैं आप कृपा कर कहें। तब नन्दी कहनेलगे कि मेरा पिता शिलादनाम एक अन्ध ब्राह्मण था उसने सन्तति के लिये बहुत काल तप किया तब इन्द्र प्रसन्नहो वहां आये और शिलाद से कहा कि वर मांग। तब शिलादने हाथ जोड़ प्रार्थना की कि महाराज! मेरे अयोनिज पुत्र हो और उसकी मृत्युभी न हो तब इन्द्रने कहा कि यह तो नहीं होसक्ता ऐसा पुत्र तो ब्रह्माजी भी नहीं दे सक्के। जो तुमको योनिज और मृत्युयुक्त पुत्र चाहिये तो हम देते हैं। मृत्युहीन तो ब्रह्माजीभी नहीं हैं वे भी दो परार्ध आयुष् भोग कर मृत्युवश होते हैं और अयोनिज भी नहीं हैं शिव और भवानीके पुत्र हैं अण्ड और कमल से उपजे हैं। इसलिये यह आशा छोड़ अपने तुल्य पुत्र ग्रहण करो। यह सुन मेरे पिता शिलाद मुनि ने कहा कि हे भगवन्! यह मैंने भी नारद मुनि से सुना है कि ब्रह्माजी अण्डसे, [illegible]से और शिवजीसे उत्पन्न भये परन्तु हमको बड़ा [illegible] है कि ब्रह्माजी का पुत्र

तो दक्षप्रजापति और दक्ष की पुत्री सती जो ब्रह्म की पौत्री ठहरी और महादेवजी को विवाही गई अपनी पौत्री में ब्रह्माजी क्योंकर उत्पन्न भये। यह सुन इन्द्र कहने लगे कि यह तुम्हारा सन्देह ठीक है परन्तु हम इसका कारण कहते हैं। शिवजी ने तत्पुरुष नाम कल्प में सब जगत् सिरजने की इच्छा कर ब्रह्माजी को उत्पन्न किया और मेघवाहन कल्प में दिव्य हज़ार वर्ष तक मेघ का रूप धार विष्णुजी शिवजी के वाहन बने रहे इसीसे उस कल्प का नाम मेघवाहन भया। शिवजी ने अपने में विष्णुजी की परम भक्ति देख ब्रह्माजी सहित जगत् निर्माण करने की आज्ञा दी। ब्रह्माजीने भी तपसे शिवजी को प्रसन्नकर कहा कि महाराज! आपके वाम अंग से तो विष्णु और दक्षिण अंगसे हम उत्पन्न भये और हमने तथा विष्णुजीने सब जगत् रचा। विष्णुजीने मेघरूप धारण कर भक्ति से आप को धारण किया परन्तु विष्णुजी से भी अधिक हम आपके भक्त हैं इसलिये आप हमारे ऊपर अनुग्रह करें और सर्वात्मत्व हमको देवें। यह सुन शिवजी ने भी प्रसन्न हो उनको सर्वात्मत्व अर्थात् सर्वव्यापकता दी। वे भी अपना मनोरथ पाय अतिशीघ्र समुद्र में विष्णुजी के समीप गये और देखा कि उस एकार्णवमें शेषशय्या के ऊपर शङ्ख, चक्र, गदा, पद्म और सब भूषण धारे लक्ष्मीजी जिनके चरण कमल से भी कोमल अपने हाथोंसे दाब रही हैं और क्षीरसमुद्र में आनन्द से विष्णुजी सोते हैं। ब्रह्माजी ने उनको देखकर कहा कि जिस भांति पहिले आप

हमको ग्रस लिया था उसी प्रकार शिवजी के अनुग्रह से अब हम आपको ग्रसते हैं । यह सुन विष्णुजी उठबैठे और हँसकर ब्रह्माजी में प्रवेश किया और ब्रह्माजीने भी उनको ग्रस लिया और अपने भ्रूमध्य से फिर उत्पन्न किया । विष्णुजी ब्रह्माजी से उत्पन्न हो उनके समीप स्थित भये । इसी अवसर में विकृतरूप धार शिवजी भी दोनों के ऊपर अनुग्रह करने के लिये वहां आये । ब्रह्माजी और विष्णुजी भी उनको देख बार बार प्रणाम कर भक्ति से स्तुति करने लगे । शिवजी भी दोनों के ऊपर अनुग्रह कर वहांही अन्तर्धान भये ॥

अड़तीसवां अध्याय ॥

नन्दी कहते हैं कि हे सनत्कुमारजी ! इस प्रकार दोनों पर अनुग्रह कर शिवजी तो चले गये और विष्णुजी ब्रह्माजी के प्रति कहने लगे कि हे ब्रह्माजी ! यह परमेश्वर शिव हमारा और सब जगत् का प्रभु है इस महात्मा के वामाङ्ग से हम और दक्षिणाङ्ग से आप उत्पन्न भये हैं । इसीसे हमको ऋषि लोग प्रधान प्रकृति और व्यक्त कहते हैं । तुमको पुरुष, अज और अव्यक्त कहते हैं इस भांति हम दोनों के कारण शिवही हैं । यह विष्णुजी से सुन ब्रह्माजी शिवजी को बार बार प्रणाम कर स्तुति करने लगे । फिर जल से व्याप्त हुई भूमि को वराहरूप धार विष्णुजी पहिली रीतिसे स्थापन करते भये । नदी, नद, समुद्र आदि अपने अपने स्थान में स्थापन किये और भूमि की ऊँचाई निचाई बराबर कर पर्वत बनाये

भू आदि चार लोक रचे और सृष्टि रचने की इच्छा की व मुख्य तिर्यक् देव मनुष्य अनुग्रह और कौमार ये सर्ग पहिली भांति रचे। पहिले सनन्दन, सनक और सनातन को उत्पन्न किया जो ज्ञान करके परब्रह्मस्वरूप को प्राप्त भये। मरीचि, भृगु, अङ्गिरा, अत्रि, पुलस्त्य, पुलह, क्रतु, दक्ष और वशिष्ठ को योगविद्या करके परमेश्वर ने सिरजा फिर धर्म, सङ्कल्प और अधर्म को रचा ये बारह ब्रह्माजी के पुत्र भये। फिर ऋभु और सनत्कुमार उत्पन्न भये जो ऊर्ध्वरेता ब्रह्मवादी और ब्रह्माजी के तुल्य भये। इस प्रकार मुख्य सृष्टि रचकर सब युग के धर्म भगवान् कल्पना करते भये॥

उन्तालीसवां अध्याय॥

नन्दी कहते हैं कि हे सनत्कुमारजी! इसभांति इन्द्रसे सुन मेरे पिता शिलादने फिर पूछा कि महाराज! कौन से युग धर्म कल्पना किये यह आप कृपाकर मुझे सुनावें तब इन्द्र कहने लगे कि हे शिलाद! कृतयुग, त्रेता, द्वापर और कलियुग ये चार युग हैं। सत्ययुग तो सत्त्वगुण है त्रेता रजोगुण, द्वापर रजोगुण और तमोगुण, कलियुग केवल तमोगुण है। सत्ययुग में ध्यान, त्रेता में यज्ञ, द्वापरमें भजन और कलियुग में दानही मुख्य है। चार हज़ार दिव्यवर्ष सत्ययुगका प्रमाण है और चारसौ दिव्यवर्ष उसकी सन्ध्या और चारसौही सन्ध्यांश हैं और मनुष्यों का चार हज़ार वर्ष आयुष् सत्ययुग में होता है। जब सत्ययुग और उसकी सन्ध्या बीत चुकती है तब धर्म

का एक चरण घटकर त्रेतायुग प्रवृत्त होता है यह तीन हज़ार दिव्यवर्ष का है और इसकी सन्ध्या तीनसौ वर्ष की है। सत्ययुग का आधा द्वापर और द्वापर का आधा कलियुग है सत्ययुग में धर्म के चार चरण हैं, त्रेता में तीन, द्वापर में दो और कलियुग में एक चरण धर्म रहता है। सत्ययुग में सब प्रजा सदा तृप्त भोग करके युक्त अतिरूपवान् सुखी और दीर्घायु करके युक्त होते हैं और परस्पर बड़ी प्रीति रखते हैं कभी विरोध नहीं करते पर्वत समुद्र आदि में निवास करते हैं घर नहीं बनाते शोक से रहित बड़े पराक्रमी सदा प्रसन्न और पुण्य पाप से रहित होते हैं और उनके लिये रसोल्लास होता है अर्थात् उनकी इच्छा सेही छहो रस उत्पन्न होजाते हैं। त्रेतायुग में रसोल्लास जाता रहता है और मेघ जल वर्षते हैं जिनके वर्षने से पृथ्वी पर वृक्ष उत्पन्न होते हैं वही उस युगमें प्रजा के घर बन जाते हैं और वृक्षों के फलोंसेही उनका निर्वाह होता है इसी भांति कुछ काल व्यतीत होने पर प्रजा में अकस्मात् राग और लोभ उत्पन्न होने से सब वृक्ष नष्ट होजावेंगे तब वे भ्रान्त होकर सत्य से फिर उस सिद्धि का ध्यान करेंगे तब फिर वे वृक्ष उत्पन्न होंगे जिनमें वस्त्र भूषण और भांति भांति के फल और पत्ते पत्ते में मधु अर्थात् शहद उत्पन्न होगा सबका निर्वाह उसीसे होगा कि जिससे सब प्रजा हृष्ट पुष्ट रहेगी। फिर कुछ काल बीतने पर प्रजा में लोभ उत्पन्न होगा और वृक्षों से बल करके मधु आदि हरण करेंगे तब वे वृक्ष फिर नष्ट होजायँगे और

द्वन्द्व अर्थात् शीत उष्ण वर्षा आतप अर्थात् धूप होनेसे प्रजा बहुत पीड़ित होगी। तब वस्त्र और घर बनावेंगे और वृत्ति का उपाय चिन्तन करेंगे। फिर विवाद से व्याकुल हो जब क्षुधा तृषा से पीड़ित हुये तब वृष्टि होती है और नदी बहने लगती हैं और जो जलबिन्दु भूमि पर गिरे उनसे ओषधी उत्पन्न भईं और विना बोये ग्राम और वनमें चौदह भांति के वृक्ष गुल्म उत्पन्न भये और उनसे ही प्रजा का निर्वाह होने लगा फिर कुछ काल के अनन्तर प्रजा में राग और लोभ उत्पन्न भया नदी तथा क्षेत्र को ग्रहण करने लगे और वृक्ष, गुल्म, ओषधी आदि बलात्कार से लेनेलगे। जब सब ओषधी नष्ट होगईं तब ब्रह्माजीने पृथुराजा का रूप धार पृथ्वी का दोहन किया तबसे पृथ्वी में हलके बाहने से कृषि अर्थात् खेती होनेलगी और सब प्रजा त्रेतायुग के अन्त में कृषि करके अपना निर्वाह करने लगी और जहां इच्छा करते वहांही जल उत्पन्न होता भूमि खोदने की कुछ अपेक्षा नहीं। जब प्रजा आपस में पुत्र, स्त्री, धन आदि को बलसे हरनेलगी तब सबकी रक्षा के लिये ब्रह्माजी ने क्षत्रिय उत्पन्न किये और वर्णाश्रमों का विभाग किया और यज्ञ प्रवृत्त किये परंतु पशुयज्ञ कोई कोई नहीं करते थे और अहिंसक अर्थात् हिंसा न करनेवाले की प्रशंसा भी होती थी और विष्णुजी ने भी यज्ञ किया। द्वापरयुग में प्रजा को मन, वचन, कर्म करके बुद्धि में भेद उत्पन्न भया खेती भी परिश्रम से होने लगी तब कायक्लेश होने से प्रजा में लोभ, भृति अर्थात् नौकरी, वाणिज्य में

विवाद और सब बातोंमें संदेह होने लगा। वेदके विभाग भये और जुदी जुदी शाखा रची गईं। धर्मों का सङ्कर और वर्णाश्रमों का नाश हुआ तब द्वापरयुग में राग लोभ और मद उत्पन्न होता है और एक वेद के चार भाग होते हैं और ऋषि पुत्र ऋक् यजु और सामवेद की संहिता को मन्त्र ब्राह्मण आदि करके और स्वर वर्ण आदिके भेदसे अनेक प्रकार करते हैं कोई कोई ब्राह्मण कल्पसूत्र आदि रचते हैं। कालके भेदसे इतिहास, पुराण आदिकों में भी भेद होता है। ब्रह्मपुराण, पद्म, शिव, विष्णु, भागवत, भविष्य, नारदीय, मार्कण्डेय, आग्नेय, ब्रह्मवैवर्त, लिङ्ग, वाराह, वामन, कूर्म, मत्स्य, गरुड, स्कंद और ब्रह्माण्डपुराण ये अठारह पुराण हैं। इनमें ग्यारहवां लिङ्गपुराण है और मनु, अत्रि, विष्णु, हारीत, याज्ञवल्क्य, उशना, अङ्गिरा, यम, आपस्तम्ब, संवर्त, कात्यायन, बृहस्पति, पराशर, व्यास, शंख-लिखित, दक्ष, गौतम, शातातप और वशिष्ठ आदि मुनि पुराण और वेद का विभाग करनेहारे हैं। अवृष्टि, मरण और रोग प्रजा में उत्पन्न होता है तब मन, वच और कर्म से उपजे दुःखों करके निर्वेद उत्पन्न होता है और दुःख दूर होने के उपाय का विचार होता है। विचार से वैराग्य होता है और वैराग्य से सब वस्तुओं के दोष दीखते हैं तब ज्ञान होता है और ज्ञान से मुक्ति मिलतीहै। यह रज और तम करके युक्त द्वापर की वृत्ति कही है। कृतयुग में धर्म होता है, त्रेता में धर्म की प्रवृत्ति, द्वापर में धर्म आकुल और कलियुग में धर्म नष्ट होजाता है॥

चालीसवां अध्याय ॥

इन्द्र कहते हैं कि हे शिलादमुनि! कलियुग में माया असूया अर्थात् दूसरे के गुणों में भी दोष लगा देना तपस्वियों को मार देना ये सब बातें तमोगुण करके व्याकुल हुये मनुष्य करेंगे और प्रमाद, रोग, क्षुधाका भय, अनावृष्टि, देशों का विपर्यय होगा। वेदका प्रमाण न माना जायगा मनुष्य अधर्म का सेवन करेंगे अनाचार अतिक्रोधी और अल्पचित्त होंगे। सदा असत्य भाषण करेंगे ब्राह्मणों के दुष्टयज्ञ दुष्टपठन दुष्टआचार और दुष्टशास्त्र से प्रजाको भय होगा वेद का अध्ययन और यज्ञ कोई न करेगा शूद्रोंको मन्त्रोपदेश और उनके साथ शयन आसन भोजन आदि का सम्बन्ध ब्राह्मण करेंगे। राजा भी प्रायः शूद्र होजायँगे और ब्राह्मणों को दुःख देंगे प्रजा में गर्भहत्या और वीरहत्या अर्थात् प्रधानपुरुष को मारदेना हुआ करेगा, शूद्रों का आचरण ब्राह्मण और ब्राह्मणों का आचरण शूद्र किया करेंगे। चोर तो राजा और राजा चोर के तुल्य होजायँगे। पतिव्रता कोई न रहेगी सब कुलटा होजायँगी। वर्णाश्रम का सब व्यवहार जाता रहेगा। पृथ्वी में भी कहीं बहुत फल और कहीं फलोंका अभाव होगा। राजा प्रजा को लूटेंगे और उनकी रक्षा न करेंगे। शूद्र ज्ञानी होंगे और ब्राह्मण उनको प्रणाम करेंगे। क्षत्रिय राजा न होंगे। ब्राह्मण शूद्रों से अपनी जीविका करेंगे। शूद्र ब्राह्मण को देख आसन परसे न उठेंगे। शूद्र ब्राह्मण को

ताड़न करेंगे। ब्राह्मण हाथ जोड़ बड़ी नम्रता से शूद्रके आगे प्रार्थना करेंगे। ब्राह्मणों के बीच ऊंचे आसन पर बैठे हुये शूद्रको देखकरभी राजा कुछ दण्ड न देंगे। सुन्दर सुगन्धयुक्त पुष्पमाला आदि करके शूद्रों की पूजा करेंगे। वाहन के ऊपर चढ़ेहुये शूद्रों के पीछे ब्राह्मण सेवा के लिये दौड़ेंगे और शूद्रों की स्तुति करेंगे। ब्राह्मण तप और यज्ञ के फलको बेचेंगे। संन्यासी बहुत होंगे। स्त्री अधिक और पुरुष थोड़े होंगे। ब्राह्मणही वेदविद्या और श्रुति स्मृति में कहेहुये कर्मों की निन्दा करेंगे। ऐसे घोर कालमें भी धर्म की रक्षाके हेतु भिन्न भिन्न लिङ्गरूप से श्रीमहादेवजी प्रकट होंगे। जो ब्राह्मण जिस किसी रीति से भी उनका पूजन करेंगे वे कलियुग के दोषों को जीत परमपद को जावेंगे। गौवों का क्षय होगा और व्याघ्रादि दुष्ट जीव बढ़ जावेंगे। साधु लोग कहीं न देखपड़ेंगे। थोड़ेही दान से बहुत फल चाहेंगे। राजा सब अपनी रक्षा में तत्पर रहेंगे। प्रजा से केवल दण्ड लेंगे। सब देश अट्टशूल अर्थात् अन्न बेचनेवाले, सब ब्राह्मण शिवशूल अर्थात् वेदविक्रेता और सब स्त्रियां केशशूलिनी अर्थात् भग बेचनेवाली कलियुग में होंगी। मेघभी चित्रवर्षी अर्थात् कहीं बरसेंगे और कहीं न बरसेंगे। सब वर्ण वणिग्वृत्ति करेंगे सब पाखण्डी, कुशील और नीच होंगे। ब्राह्मण आसयाचक होजावेंगे। कोईभी मीठाबोलनेवाला, सरलस्वभाव, ईर्षारहित और प्रत्युपकारी न होगा। निन्दक और पतित बहुत होंगे। यही [illegible] का लक्षण है। भूमि राजाओं करके

शून्य हो जावेगी। धन धान्य कहीं न रहेगा। देश शून्य होंगे। जल और फल पृथ्वीमें बहुत न्यून देख पड़ेंगे। सब मनुष्य परस्त्रीगमन, परधनहरण और दुष्ट कर्मों में प्रवृत्त होंगे। युग के अन्त में सोलह वर्षका परम आयुष होगा मनुष्य रोगी, कामी, निर्लज्ज और बुद्धिहीन होंगे। शूद्र काषाय वस्त्र, रुद्राक्ष, मृगचर्म आदि धारे धर्मका आचरण करेंगे। आपस में सस्य अर्थात् खेती की चोरी करेंगे। चोर चोरों काही धन हरेंगे। मूषक, सर्प, वृश्चिक आदि दुष्ट जीव प्रजा को पीड़ा देंगे। सुभिक्ष, क्षेम, आरोग्य, सामर्थ्य ये सब बातें दुर्लभ होजावेंगी। क्षुधा से पीड़ित मनुष्य कौशिकी नदीके तट पर बसेंगे। वेद कहीं न देख पड़ेंगे। यज्ञ सब नष्ट होजायँगे। संन्यासी मूर्ख होंगे। कापालिक बहुत होजायँगे, वेद बेचनेवाले और वर्णाश्रमके शत्रु बहुत उत्पन्न होंगे। शूद्र वेद पढ़ेंगे। शूद्र-राजा अश्वमेध करेंगे। सब प्रजागण स्त्री, बालक और गौका वध करेंगे और आपस में अनेक उपद्रव करेंगे। ब्रह्महत्या करेंगे थोड़ा आयुष् और बहुत दुःख होगा। ऐसे दुस्तर समय में जो ब्राह्मण धर्म का आचरण करेंगे वेही धन्यहोंगे। थोड़ेही काल में सिद्धि होगी अर्थात् त्रेतामें जो सिद्धि एक वर्ष में होतीहै वही द्वापर में एक महीने में और कलियुग में एक दिन रात करके होगी। यह कलियुग की व्यवस्था कही। अब संध्यांश की कहते हैं युग युग में एक एक चरण धर्म न्यून होजाता है। संध्या में भी उस युग का धर्मही रहता है कलियुग के दुष्टजीवों को शासन करनेके लिये स्वायंभुव मन्वन्तर में सोमशर्मा

ब्राह्मण के घर प्रमिति नामक पुत्र मनुपुत्र का अंश उत्पन्न होगा। वह हाथी, घोड़े, रथ आदिसे युक्त बड़ी भारी सेना साथ लेकर और शस्त्रधारण किये ब्राह्मणों को साथ लेकर बीसवर्षपर्यन्त पृथ्वीपर म्लेच्छों का संहार करता हुआ विचरेगा। वही सब शूद्रराजा पाखण्डी अधर्मी और दुष्टों का संहार करेगा। वह तो मनुपुत्र के अंश से और मनुपुत्र विष्णु के अंशसे उत्पन्न होगा उस से यह विष्णुकाही अवतार होगा। इसभांति बीसवर्ष पर्यन्त सब पृथ्वीका उपद्रव शान्त करके बीजमात्र मनुष्य अवशेष रखकर गंगा यमुना के बीच अपनी स्थिति करेगा। उस कलियुगके संध्यांशमें कहीं कहीं थोड़ी थोड़ी प्रजा शेष रहेगी वे लोग भी अतिलोभ से परस्पर हिंसा करेंगे। राजा कोई न रहेगा सब लोग आपस के भयसे पुत्र, स्त्री, धन आदिको छोड़ छोड़ अपने प्राणों की रक्षा करेंगे। श्रौत स्मार्त धर्म नष्ट होजानेपर सब मर्यादा त्याग देंगे। छोटे छोटे शरीर होंगे जिनका परम आयुष् पच्चीस वर्ष का होगा। वृष्टि न होनेसे खेती न होगी इसलिये सब अपने अपने देशों को त्याग नदी, समुद्र, कूप, पर्वत आदि में आश्रम लेंगे। मधु, मांस, कन्द, मूल, फल आदि से किसी प्रकार अपना निर्वाह करेंगे। वस्त्र न मिलने से वृक्षों की छाल और पत्र ओढ़ेंगे। सब वर्णाश्रम से भ्रष्ट अतिकष्ट भोगते हुये थोड़े से शेष रह जावेंगे वे भी रोग करके पीड़ित होंगे। इस भांति अतिदुःख होने से निर्वेद उत्पन्न होगा। निर्वेद से विचार करेंगे, विचार करने से बोध और बोध से धर्म में प्रवृत्ति

होगी। इस रीति से एक दिन रात्रि में ही प्रजा के चित्त को मोह करके युग बदल जावेगा अर्थात् कलियुग नष्ट होकर सत्ययुग प्रवृत्त होगा। सत्ययुग प्रवृत्त होनेपर सत्ययुग की प्रजा उत्पन्न होगी और सप्तऋषियों के साथ सात सिद्ध गुप्त विचरेंगे। ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र जो उत्पन्न होंगे उनको सप्तऋषि अपने अपने धर्म का उपदेश करेंगे। जब वे अपने श्रौत स्मार्त धर्म का आचरण करेंगे तब फिर उनकी प्रजा बढ़ेगी। जिस भांति दावाग्नि से जले हुये वनमें प्रथम वृष्टि होने से तृण आदि के मूल फिर भी अंकुरित होते हैं इसी भांति कलियुग के शेष जीव सत्ययुग प्रवृत्त होने से धर्म आचरण करके फिर वृद्धि को प्राप्त होंगे इस भांति एक युग के जीव दूसरे युग के बीज के लिये अवशेष रहते हैं। सुख, आयु, बल, रूप, धर्म, अर्थ और काम प्रति-युग में एक एक पाद न्यून होता जाता है। यह हमने सन्ध्यांश की व्यवस्था कही इसी भांति चारों युगों में जानो। ये चारों युग हज़ार गुणे होने से ब्रह्माजी का एक दिन होता है और इतनीही बड़ी रात्रि होतीहै। चारों युग इकहत्तर गुणे एक मन्वन्तर होता है। जो व्यवहार एक चतुर्युग में है वही दूसरे में भी होता है। सृष्टि सृष्टि में पच्चीस तत्त्व होते हैं न्यून अधिक नहीं होते। युगों से ही कल्प होते हैं। सब मन्वन्तरों का यही लक्षण है। जिस भांति युग बदलते हैं इसी प्रकार यह संसार जन्म मरण करके अदल बदल होता रहता है यह हमने संक्षेप से अगले पिछले युगों का लक्षण कहा। आठ

प्रकार के देवता मन्वन्तर के स्वामी होते हैं ऋषि मनु आदि सब पहिले मन्वन्तर की भांति ही दूसरे में उत्पन्न होते हैं। यह युगों का स्वभाव युग युग के वर्णाश्रमों का धर्म युगों का प्रमाण और सिद्धि हमने प्रसङ्ग से कही अब हम ब्रह्माजी का देवीजी के पुत्ररूप से उत्पन्न होना संक्षेप से कहते हैं ॥

इकतालीसवां अध्याय ॥

इन्द्र कहते हैं कि हे शिलादमुनि! ब्रह्माजी अपनी रात्रि के अन्तमें फिर जगत् को सिरजते हैं। जब उनका द्विपरार्ध आयुष पूरा होजाता है तब भूमि जलमें लीन होजाती है, जल अग्निमें, अग्नि वायुमें, वायु आकाश में, आकाश इन्द्रियों में, इन्द्रियां तन्मात्राओं में, तन्मात्रा अहङ्कार में, अहङ्कार महत्तत्त्व में, महत्तत्त्व अव्यक्त में और अपने सत्व आदि गुणों करके युक्त अव्यक्त शिव में लीन होता है। फिर सृष्टिके आदि में शिवरूप पुरुष से ब्रह्माजीने उत्पन्न होकर मानसपुत्र उत्पन्न किये परन्तु उन पुत्रों से प्रजाकी वृद्धि न भई तब तो अपने पुत्रों को साथ ले ब्रह्माजी तप करने लगे। तप करते करते शिवजी प्रसन्न भये और ब्रह्माजी का ललाट भेद कर स्त्री पुरुषरूप से उत्पन्न भये। और ब्रह्माजी से कहा कि हम तुम्हारे पुत्र हैं। और अर्धनारीश्वर रूप धरके जगत् के गुरु ब्रह्माजी को दग्ध करते भये। फिर प्रजाकी वृद्धि के लिये अपनी अर्धमात्रा उस परमेश्वरी से योगमार्ग करके शिवजी भोग करते भये तब विष्णुजी ब्रह्माजी

और पाशुपत अस्त्र उत्पन्न भये। इसभांति ब्रह्माजी देवी के गर्भ से उत्पन्न भये और अण्ड से तथा कमल से ब्रह्माजी की उत्पत्ति भई। यह पुराना इतिहास हमने तुमको श्रवण कराया। एक परार्ध पर्यन्त ब्रह्माजी का ऐश्वर्य है और तमोगुण से उत्पन्न ब्रह्माजी का वैराग्य आगे संक्षेप से वर्णन करेंगे। विष्णुभगवान् भी अपने को स्त्री पुरुषरूप करके ब्रह्माजी और सब सृष्टि को रचते हैं। ब्रह्माजी रुद्र को उत्पन्न करते हैं किसी कल्प में रुद्रही ब्रह्मा विष्णु को सिरजते हैं। किसी कल्प में ब्रह्मा नारायण को और नारायण रुद्र को उत्पन्न करते हैं। प्रलय के समय ब्रह्माजी विचार करते भये कि संसार परम दुःख है तब सृष्टि रचना त्याग कर प्राणवायु को रोकपाषाण की भांति निश्चलहो अपने आत्मा में आत्मा का ही ध्यान करते हुये दशहज़ार वर्षतक समाधि करते भये। हृदय में जो अधोमुख कमल है वह पूरक करके विकसित भया और कुम्भक करके उसका मुख ऊपर को भया। उस कमल की कर्णिका में ॐकार के अर्ध-मात्रा स्वरूप उस परमेश्वर को स्थापन किया जो मृणाल तन्तु के शतांश से भी सूक्ष्म है। इस भांति हृदय में परमेश्वर को स्थापनकर यम, नियम, आसन, प्राणा-याम आदि पुष्पों करके ब्रह्माजी पूजन करते भये। उसी परमेश्वर की आज्ञा से रुद्र ब्रह्माजी का ललाट भेदकर प्रकट भये। वे नीलवर्ण थे और अग्नि के संयोग से लोहितवर्ण भये इसीसे उनका नाम नीललोहित भया। ब्रह्माजी भी रुद्र को देख प्रसन्न हो स्तुति करने लगे॥

पितामह उवाच ॥ नमस्ते भगवन् रुद्र भास्करामित-तेजस। नमो भवाय देवाय रसायाम्बुमयाय ते १ शर्वाय क्षितिरूपाय सदासुरभिणो नमः। ईशाय वायवे तुभ्यं संस्पर्शाय नमो नमः २ पशूनाम्पतये चैव पावकायाति-तेजसे। भीमाय व्योमरूपाय शब्दमात्राय ते नमः ३ महादेवाय सोमाय अमृताय नमोऽस्तु ते। उग्राय यजमानाय नमस्ते कर्मयोगिने ४ ॥

यह ब्रह्माजी की करीहुई स्तुति जो पुरुष भक्ति से पाठ करे श्रवण करे अथवा ब्राह्मणों को सुनावे वह शिवलोकको पावे। इसी भांति ब्रह्माजी ने स्तुति करके महादेवजी को देखा तो उन्होंने आठ रूप धरलिये अर्थात् सूर्य, चन्द्र, अग्नि, वायु, भूमि, जल, आकाश और पुरुषरूप से आठ भांति के होगये उसी दिन से श्रीमहादेवजी को अष्टमूर्ति कहते हैं उस अष्टमूर्ति की कृपा से ब्रह्माजीने सब जगत् उत्पन्न किया। फिर दूसरे कल्प में हज़ार युग पर्यन्त सब चराचर जगत् सोगया तब ब्रह्माजी प्रजा उत्पन्न करने के लिये उग्र तप करने लगे बहुत काल तप करने से भी कुछ फल न भया तब तो अतिदुःख से ब्रह्माजी को क्रोध उत्पन्न भया और आंखों से आंसू गिरे उनसे भूत प्रेत आदि उत्पन्न भये तबतो ब्रह्माजी को और भी अधिक दुःख भया और अपनी निन्दा कर शरीर त्याग दिया। तब ब्रह्माजी के प्राणरूप रुद्र उनके मुख से निकले और अर्धनारीश्वर होकर अपने ग्यारह रूप धारे और अपने आधे अंश करके पार्वतीजी को रचा पार्वतीजी ने

लक्ष्मी, दुर्गा, सरस्वती, वामा, रौद्री, महामाया, वैष्णवी कला, विकरिणी, काली, कमलवासिनी, बलविकरिणी, बलप्रमथिनी, सर्वभूतदमिनी और मनोन्मनी को उत्पन्न किया। इसी रीतिसे और भी हज़ारों स्त्री पार्वतीजी ने रचीं। शिवजीने ब्रह्माजी को प्राणहीन देख दया करके फिर उनको प्राण दिये और कहा कि मत डरो हमने तुम को प्राण दिये हैं अब उठो। यह शिवजी का वचन सुन ब्रह्माजी ने नेत्र खोले और प्रसन्न होकर कहा कि आप कौन हैं जो आठ रूप से और ग्यारह रूप से विराजमान होरहे हैं तब शिवजी ने कहा कि हे ब्रह्माजी! हम परमेश्वर हैं और यह हमारी माया है और ये रुद्र तुम्हारी रक्षा के लिये यहां आये हैं। यह सुन ब्रह्माजी अतिमुदित हो हाथ जोड़ गद्गदवाणी से कहने लगे कि हे परमात्मन्! हे प्रभो! मैं अत्यन्त दुःखीहूं आप कृपाकर इस संसार से मुझे मुक्त करें। यह ब्रह्माजी का वचन सुन हँसकर पार्वती और रुद्रों सहित श्रीशिवजी वहां ही अन्तर्धान होगये। इन्द्र कहते हैं कि हे शिलादमुनि! इस कारण से अयोनिज और मृत्युरहित पुत्र दुर्लभ है देखो ब्रह्माजी का भी मृत्यु भया। यदि सब देवताओंके स्वामी श्रीशिवजी प्रसन्न हों तो ऐसा पुत्र मिलना कुछ कठिन नहीं परन्तु ब्रह्मा, विष्णु अथवा हम ऐसा पुत्र देने को समर्थ नहीं। इतना कहकर इन्द्र अपने ऐरावत हाथी पर चढ़ सब देवताओं को साथ ले स्वर्ग को जाते भये॥

बयालीसवां अध्याय ॥

नन्दी कहते हैं कि इतना कह इन्द्र तो चलेगये और शिलादमुनि शिवजी की प्रसन्नता के लिये उग्र तप करने लगा और तप करते करते एक हजार दिव्य वर्ष बीत गये शरीर पर वल्मीक अर्थात् सांप की बांबी लगगई और मांस, रुधिर, चर्म आदि को कीट खा गये अस्थिमात्र अवशेष रहगये तब महादेवजी उसके तपसे प्रसन्न हो वहां आये और अपने हस्तकमल से शिलादमुनि को स्पर्श किया उनके हाथ का स्पर्श होते ही मुनि का देह पहिले से भी उत्तम होगया और शिवजी ने कहा कि हे शिलाद ! तेरे तप से हम बहुत प्रसन्न हैं वर मांग तब शिलाद ने कहा कि हे महाराज ! अयोनिज और मृत्युहीन पुत्र मुझे मिले। यह सुन शिवजी ने कहा कि हे शिलाद ! हमको अवतार लेने के अर्थ ब्रह्माजी ने तप से बहुत आराधन किया है। और देवताओं ने भी प्रार्थना करी है। इसलिये नन्दी नामक अयोनिज पुत्र के रूप से तुम्हारे घर में हम उत्पन्न होंगे। सब जगत् के पिता हम और हमारे पिता तुम होगे। इतना कह शिवजी वहां ही अन्तर्धान भये। शिलादमुनि भी यज्ञ करने के लिये यज्ञस्थान में आये वहां ही हम शिवजी की आज्ञा से प्रकट भये कि प्रलयकाल की अग्नि के तुल्य जिनका तेज जटामुकुट धारे तीन नेत्र चार भुजा त्रिशूल, परशु, गदा और वज्र हाथों में धारण करे वज्र के तुल्य जिनका देह और दन्त वज्र के कुण्डल पहिने

और मेघ के तुल्य शब्द ऐसा हमारा रूप देख इन्द्र ब्रह्मा आदि सब देवता स्तुति करने लगे पुष्करावर्तक आदि मेघों ने वर्षा करी किन्नर, विद्याधर और अप्सरा गाने नाचने लगीं इन्द्र ने फूल वर्षाये ऋषिलोग ऋक्, यजु और सामवेद के मन्त्रों से स्तुति करनेलगे। ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र, इन्द्र, शिव, पार्वती, सूर्य, चन्द्र, बृहस्पति, पवन, अग्नि, निर्ऋति, ईशान, कुबेर, यम, वरुण, विश्वेदेव, वसु, लक्ष्मी, शची, ज्येष्ठादेवी, सरस्वती, अदिति, दिति, श्रद्धा, लज्जा, धृति, नन्दा, भद्रा, सुरभि, सुशीला, सुमना, धर्म, धर्मपुत्र आदि सब देव और देवी वहां आईं और हमको आलिङ्गन कर स्तुति करते भये शिलाद मुनि भी आलिङ्गन कर हमारी स्तुति करने लगा॥

शिलाद उवाच ॥ भगवन्देवदेवेश त्रियम्बक ममाव्यय। पुत्रोऽसि जगतां यस्मात्त्राता दुःखाद्धि किं पुनः १ रक्षको जगतां यस्मात्पिता मे पुत्र सर्वगः। अयोनिज नमस्तुभ्यं जगद्योने पितामह २ पितापुत्रमहेशान जगतां च जगद्गुरो। वत्स वत्स महाभाग पाहि मां परमेश्वर ३ त्वयाहं नन्दितो यस्मान्नन्दीनाम्ना सुरेश्वर। तस्मान्नन्दय मां नन्दिन्नमामि जगदीश्वरम् ४ प्रसीद पितरौ मेऽद्य रुद्रलोकं गतौ विभो। पितामहाश्च भो नन्दिन्नवतीर्णे महेश्वरे ५ ममैव सकलं लोके जन्म वै जगताम्प्रभो। अवतीर्णो सुते नन्दिन् रक्षार्थं मह्यमीश्वर ६ तुभ्यं नमः सुरेशान नन्दीश्वर नमोऽस्तु ते। पुत्रं पाहि महाबाहो देवदेव जगद्गुरो ७ पुत्रेण तव नन्दीशं मत्वा यत्कीर्तितं मया। त्वया तत्क्षम्यतां भक्तवत्सलेन सुरार्चित ८॥

शिलादमुनि इस भांति स्तुति कर कहते भये कि इस स्तुति को जो पढ़े सुने अथवा सुनावे वह शिवलोक में निवास पावे । इतना कह अपने बालक पुत्र को प्रेम से बार बार प्रणाम कर सब मुनियों के प्रति कहा कि हे मुनीश्वरो ! मेरा भाग्य देखो कैसा उत्तम है कि साक्षात् महादेव मेरे पुत्र भये मेरे तुल्य जगत् में देवता, दैत्य, मनुष्य आदि कोई भी नहीं कि नन्दी मेरे पुत्र भये ॥

तेंतालीसवां अध्याय ॥

नन्दी कहते हैं कि हे सनत्कुमारजी ! जिस भांति निर्धन को धन मिले इसी भांति शिलादमुनि मुझको पाय प्रसन्न हो अपनी कुटीमें गया । जब मैंने शिलाद मुनि की कुटी में प्रवेश किया तब मेरा वह दिव्यरूप और दिव्य स्मृति सब जाती रही और मनुष्य होगया । मुझे मनुष्यभाव में प्राप्त हुये देख पिता को बहुत दुःख भया परन्तु अपने भाई बन्धुओं समेत मेरे जातकर्म नामकरण आदि सब संस्कार करे और शालंकायन के पुत्र मेरे पिता शिलादमुनि ने ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद की हज़ार शाखा, आयुर्वेद, धनुर्वेद, सङ्गीतशास्त्र, अश्वलक्षण, हस्तिलक्षण, मनुष्यलक्षण, वेद के अङ्ग और सब शास्त्र सातवर्ष की अवस्था में मुझे पढ़ा दिये इसी अवसर में एक दिन मित्र और वरुण दोनों मुनि श्रीमहादेव की आज्ञा से मुझे देखने के लिये मेरे पिता के आश्रम में आये । और मेरेको बार बार देख मेरे पिता से कहा कि हे शिलाद ! यह बालक थोड़ीसी ही अवस्था

में सब शास्त्रों का पारगामी होगया ऐसा आश्चर्य देखने में नहीं आया परन्तु यह अल्पायुष् है अब एक वर्ष इसका आयुष् और अवशेष है। यह वज्रपात के समान वचन सुन मूर्च्छित हो शिलादमुनि भूमि पर गिरा और मूर्च्छा जगने पर हा हा पुत्र! करके ऊंचे स्वरसे विलाप करने लगा उसका रोदन सुन और भी आस पास के सब मुनि वहां आ जुड़े और सब समाचार सुन बालक की रक्षा के लिये त्र्यम्बक परमेश्वर की स्तुति करने लगे कोई त्र्यम्बक मन्त्र करके मधु और दूर्वा का अयुत अर्थात् दशहज़ार हवन करने लगे। और पिता तो बेचेत पड़े पड़े विलाप ही कर रहेथे। इस अवसर में मैं भी मृत्यु के भय से मरे की भांति गिरे हुये पिता की प्रदक्षिणा कर रुद्र के जप में प्रवृत्त हुआ। और अपने हृदयकमल में देवदेव त्र्यम्बक त्रिनेत्र दशभुज पंचमुख शान्तस्वरूप श्रीसदाशिव का ध्यान करने लगा इस भांति नदी के तटपर तप करते हुये मेरे ऊपर प्रसन्न हो श्रीमहादेवजी दर्शन देते भये और कहने लगे कि हे पुत्र! हम तेरे ऊपर प्रसन्न हैं तुझे मृत्यु का क्या भय है तू तो हमारे तुल्य है। वे दोनों मुनि हमने ही भेजे थे। यह तेरा मनुष्य देह है। दिव्य देह जो तेरे पिता ने और देवता, मुनि आदिकों ने तेरे जन्म के समय देखा था वह अब नहीं है संसार में सुख दुःख बारम्बार हुआ करते हैं। जो जन्म मरण से छूट जाते हैं वेही सुखी होते हैं इतना कह शिवजी ने मुझे दोनों हाथों से स्पर्श किया और सब गणों से तथा पार्वती जी से कहा कि

यह नन्दी अजर अमर हमारा अतिप्रिय गण हमारे तुल्य पराक्रमी होगा और सदा अपने पिता और बन्धुओं के सहित हमारे पास निवास करेगा इतना कह अपने कण्ठसे कमलों की माला उतार मेरे कण्ठमें पहिनायदी। वह माला पहिनतेही मैं दिव्यदेह त्रिनेत्र दशभुज मानो दूसरा शिवजी का रूपही होगया। इसभांति मुझे माला पहिनाय के कहा कि और जो कुछ वर चाहे मांग अभी हम देते हैं। इतना कह श्रीमहादेवजी ने जटा से जल लेकर कहा कि नदी होजा और भूमि पर वह जल फेंका उसी क्षण सुन्दर जल से पूर्ण कमलों से भरीहुई नदी बहने लगी। उस नदीसे महादेवजी ने कहा कि जटा के जल से तेरी उत्पत्ति भई इसलिये तेरा नाम जटोदका होगा और जो पुरुष तेरे जल में स्नान करेंगे उनके सब पाप दूर होंगे। इतना कहकर महादेवजी ने मुझको पार्वतीजी के चरणों पर रखकर कहा कि यह तुम्हारा पुत्र है तब पार्वतीजी ने भी मुझे आलिङ्गन किया और मेरा मस्तक सूंघा और पुत्र के प्रेम करके पार्वतीजी के स्तनों से दूध की धार चलपड़ी उन तीन धाराओं से तीन धारा की नदी प्रवृत्त भई उसका नाम त्रिस्रोता भया। त्रिस्रोता को देख अतिप्रसन्नहो महादेवजी का वृष गर्जा उससे एक और नदी प्रकट भई उसका नाम श्रीमहादेवजी ने वृषध्वनि रक्खा। फिर महादेवजी ने विश्वकर्मा का बनाया हुआ रत्नजटित सुवर्ण का मुकुट मेरे मस्तक पर धरा और अपने हाथसे हीरा पन्ना आदि उत्तम रत्नों के कुण्डल मुझे पहिनाये। इस अवसर में

मेरा इतना सत्कार देख सूर्य भगवान् ने मेरे ऊपर तथा मेरे पिता के ऊपर वृष्टि की उससे दो नदी उत्पन्न भईं एक का नाम सुवर्ण से निकलने के कारण स्वर्णोदका भया व दूसरी का नाम सोने के मुकुट से प्रवृत्त होने के कारण जम्बूनदी या जाम्बूनद भया इसभांति ये पांच नदी प्रकट भईं। इस पञ्चनद तीर्थ में जो मनुष्य स्नान कर जयेश्वर महादेव का पूजन करे वह अवश्य शिव सायुज्य पावे। फिर शिवजी ने कहा कि हे पार्वती! नन्दी को हम अभिषेक करके सब गणों का स्वामी बनाया चाहते हैं इसमें आपकी क्या सम्मति है। तब पार्वतीजी ने कहा कि महाराज! यह मेरा पुत्र है केवल गणों का स्वामी बनादेना क्या बड़ी बात है आप इसको सब लोकों का स्वामी कीजिये। यह सुन महादेवजी अति प्रसन्न भये और सब गण तथा देवता, ऋषि आदिकों को नन्दी का अभिषेक करने के लिये स्मरण किया॥

चवालीसवां अध्याय॥

नन्दी कहते हैं कि हे सनत्कुमारजी! महादेवजी के स्मरण करतेही सब आ पहुँचे। भांति भांति के गण प्रसन्न होते हुये करोड़ों इकठे भये उनमें कोई गाते नाचते दौड़ते मुखसे भांति भांति के बाजे बजाते कोई रथ पर चढ़े कोई हाथी घोड़े सिंह वानर और उत्तम विमानों पर बैठे भेरी, मृदङ्ग, पणव, आनक, गोमुख, पटह, पुष्कर, मुरज, डिण्डिम, मर्दल, वेणु, वीणा, दर्दुर, कच्छप आदि बाजों को बजाते और हाथों से ताल

देते व नाचते कूदते महादेवजी और पार्वतीजी के चारों ओर इकट्ठे भये और प्रणाम कर यह प्रार्थना करने लगे कि महाराज! हमको किस कार्य के लिये स्मरण किया समुद्रों को सुखाय दें कि मृत्यु के सहित य[illegible] ब्रह्मा को पीसडालें कि दैत्य दानवों को बांधकर लेआवें [illegible] किसके ऊपर बड़ी भारी विपत्ति आई है। अथवा कुछ उत्सव है यह आप आज्ञा करें। ऐसा उन अनगिनतगणों का वचन सुन श्रीमहादेवजी ने कहा कि जिसलिये तुमको बुलाया है वह सुनो और करो कि यह नन्दीश्वर मेरा पुत्र है इसको हमारी आज्ञा से तुम अभिषेक कर अपना आधिपति बनाओ। इतनी शिवजी की आज्ञा पाते ही सबके सब उठ धाये और क्षणभर में सब अभिषेक की सामग्री ले आये। मेरु पर्वत की भांति अति ऊंचा सुवर्ण का सिंहासन व अनेक जड़ाऊ सोने के खम्भों का वितान अर्थात् सायबान जिसमें मोतियों के गुच्छे लटकते हैं मण्डप जिसमें पन्ने के खम्भे और किङ्किणी अनेक रत्नों की शोभित हैं और चारों ओर चारही जिसमें द्वार हैं ले आये। पहिले वितान खड़ा कर उसमें अतिमनोहर मण्डप और मण्डप में वह सिंहासन स्थापन किया और सिंहासन के समीप पांव रखने के लिये इन्द्रनीलमणि का पादपीठ धरा और दो कलश सुन्दर जल से भरे और जिनके मुख कमल के पुष्पों से शोभित पादप्रतिष्ठा के लिये उस पादपीठ के समीप रक्खे और हज़ारों सोना चांदी तांबा मृत्तिका आदि के कलश अनेक तीर्थजल से पूर्ण वहां लाकर

धरे उत्तम उत्तम दिव्य वस्त्र भांति भांति के सुगन्ध द्रव्य कपूर कुण्डल मुकुट हार शतशल का अर्थात् सौताड़ी का छत्र चामर सूर्यमुखी पंखे सुवर्णदण्ड यह सब सामग्री ब्रह्माजीने दी अति उत्तम सुवर्ण से मढ़ाहुआ शंख पंखे सोने की डण्डी के अतिश्वेत चमर जिनकी शुभ्रता के आगे चन्द्रकिरणभी मैली देख पड़ें। ऐरावत और सुप्रतीक ये दोनों बड़े भारी हाथी सजाये हुये विश्वकर्मा का बनाया मुकुट जिसमें उत्तम उत्तम मणि जड़ी हुईं। कुण्डल कङ्कण सुवर्ण का यज्ञोपवीत और केयूर आदि सब भूषण और भी भांति भांति की सामग्री सब गण एक क्षण में लेआये और इन्द्र, विष्णु, ब्रह्मा आदि सब देवता दैत्य मरीचि आदि बड़े बड़े मुनि और सब लोक वहां आये। इस भांति सबको आये जान श्रीमहादेवजी ने ब्रह्माजी को अभिषेक का सब विधान करने के लिये आज्ञा दी [illegible] ने भी साङ्गोपाङ्ग सब विधान कर अपने हाथ अभिषेक किया उनके अनन्तर विष्णुजी इन्द्रादि सब लोकपाल और ऋषि मेरा अभिषेक करते भये। पीछे ब्रह्माजी तथा सब ऋषि हाथ जोड़ स्तुति करने लगे। विष्णु भगवान् भी मस्तक पर दोनों हाथों से अञ्जलि बांध जय जय शब्द करते हुये स्तुति करने लगे और सम्पूर्ण गण हाथजोड़ सम्मुख खड़े हो अतिनम्रता से प्रणाम कर स्तुति करते भये। और मरुतों की कन्या सुयशानाम को सब भूषणों से भूषित कर उत्तम वस्त्र पहिनाय लक्ष्मीजी ने मुकुट आदि को करके अपने हाथ से शोभितकर हमारे वाम भाग

में सुवर्ण के सिंहासन पर बैठाया और हज़ारों उत्तम उत्तम दासी छत्र चामर आदि लेकर उसकी सेवा में खड़ी भईं इसभांति सुयशा को मण्डित कर शिवजी की आज्ञानुसार हम को विवाहि दिया। विवाह के समय श्रीपार्वतीजी ने अपने कण्ठ से उतार मोतियों का हार सुयशा को पहिनाया और वृष, श्वेत हस्ती, सिंह, सिंह की ध्वजा, छत्र और सुवर्ण का रथ श्रीमहादेवजी ने मुझे दिया। हे सनत्कुमारजी! श्रीसदाशिव के अनुग्रह से आजतक भी मेरे तुल्य ऐश्वर्यवान् कोई नहीं है। इस भांति मेरा अभिषेक और विवाह कर वृष के ऊपर चढ़ पार्वतीजी को तथा सम्बन्धी बान्धवों सहित मुझ को साथ ले श्रीमहादेवजी कैलास को जाते भये। गमन के समय सब देवता और मुनियों ने आज्ञा मांगी तब शिवजी की आज्ञानुसार मैंने सबको आज्ञा दी। वे भी मेरे मुख से आज्ञा पाय सब अपने अपने स्थान को जाते भये और मेरा ऐश्वर्य देख श्रीमहादेवजी का सब आराधन करने लगे। हे सनत्कुमारजी! जो पुरुष अपना कल्याण चाहे वह शिवजी का आराधन करे नमस्कार विना जो शिवनाम उच्चारण करते हैं उनको दश ब्रह्महत्या का पाप लगता है इसलिये नमस्कार करके शिवनाम का उच्चारण करे जिससे कल्याणरूप को प्राप्त होय॥

पैंतालीसवां अध्याय॥

ऋषि कहते हैं कि हे सूतजी! आपने शिवजी का प्रकटरूप तो वर्णन किया अब शिवजीका सर्वव्यापक

स्वरूप वर्णन करिये। सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो! भूः, भुवः, स्वः, महः, जनः, तपः, सत्य ये लोक और पाताल, करोड़ों नरक, ताराग्रह, चन्द्र, सूर्य और देवता ये सब शिवजी के प्रसाद से स्थित हैं। उसीने सब को रचा है और वही शिव समष्टिरूप से सब में व्याप्त है। उस सर्वव्यापक और सबके प्रभु शिव को उसीकी माया से मोहित अज्ञानी पुरुष नहीं जानते हैं। यह जगत् शिव का शरीर है इसलिये शिव को प्रणाम कर अब हम जगत् का निर्णय कहते हैं। अण्ड की उत्पत्ति तो हम पहिले कहही चुके हैं अब ब्रह्माण्ड के भीतर भुवनों का विभाग वर्णन करते हैं पृथ्वी, अन्तरिक्ष, स्वः, महः, जनः, तपः और सत्य ये सात लोक हैं और नीचे सात पाताल और उनके नीचे नरक हैं पहिले महातल है जिसमें रत्नों से जटित सुवर्ण की भूमि है और अनेक प्रासाद तथा शिवमन्दिरों करके शोभायमान है और अनन्त मुचुकुन्द तथा राजा बलि करके जो पाताल और स्वर्ग में रहता है युक्त है। उसके नीचे रसातल पाषाण का है। उसके नीचे सिकता का तलातल, पीतवर्ण सुतल, विद्रुमवर्ण अर्थात् रक्तवर्ण नितल, श्वेतवर्ण वितल और कृष्णवर्ण तल हैं। उनके नीचे पृथ्वी का जितना विस्तार है उतनीही सब तलों की संख्या है। हज़ार योजन दश हज़ार योजन लक्ष और सात हज़ार योजन महातल आदि चार पातालों के आकाश का प्रमाण है बाक़ी तीन पातालों का आकाश तीस हज़ार योजन है। रसातल में सुवर्णनाग और वासुकिनाग

रहते हैं। विरोचन हिरण्याक्ष और नरकों करके युक्त तलातल है। सुतल में वैनायक आदि और कालनेमि आदि दैत्य निवास करते हैं। तारक अग्नि आदि दानव वितल में बसते हैं। महान्तक आदि नाग, प्रह्लाद आदि दैत्य और कम्बल अश्वतर आदि नागों करके नितल सेवित है। महाकुम्भ, हयग्रीव, शंकुकर्ण और नमुचि आदि बड़े बड़े वीर दैत्य दानव तल में सुख से निवास कर रहे हैं। इन सब तलों में स्कन्द नन्दी पार्वती और सब गणों करके युक्त श्रीमहादेवजी विहार करते हैं। हे मुनीश्वरो! पातालों का वर्णन हमने किया अब भूमि का वर्णन करते हैं॥

छियालीसवां अध्याय॥

सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो! नदी पर्वत वन और सात समुद्रों से यह पृथ्वी चारों ओर से व्याप्त होरही है और इसमें जम्बू, प्लक्ष, शाल्मलि, कुश, क्रौञ्च, शाक और पुष्कर ये सात द्वीप हैं। इन सातों द्वीपों में अनेक रूप धारे पार्वतीजी सहित श्रीसदाशिव विचरते हैं। क्षारोद, इक्षुरसोद, सुरोद, घृतोद, दध्यर्णव, क्षीरोद और स्वादुजल ये सात समुद्र हैं इन सातों समुद्रों में जलरूप श्रीमहादेवजी तरङ्गरूप अपनी भुजाओं से क्रीड़ा करते हैं। क्षीरार्णव में समाधि करके शिवजी का ध्यान करते हुये विष्णु भगवान् शयन करते हैं। जब वह भगवान् सोते हैं तब सब जगत् सोता है और जब जागते हैं तब चराचर जगत् जाग उठता है क्योंकि जगत् तन्मय है अर्थात् उनका रूप है और शिवजी के अनुग्रह से विष्णु

भगवान् नेही इस जगत् को रचा, पालन किया और संहार किया है और करते हैं। वहां सुषेण नामक मुनि उनका यजन करते हैं। शङ्खचक्रगदापद्मधारी उस अनिरुद्ध नारायण को जो पुरुष अर्चन करते हैं वे सब सम्पत्तियों करके युक्त होतेहैं। सनन्दन, सनक, सनातन, बालखिल्य, सिद्ध, मित्र, वरुण आदि सब ऋषि वहां परमेश्वर का यजन करते हैं। सात द्वीपों में ऊंचे ऊंचे शृङ्गों करके शोभित और समुद्रपर्यन्त दीर्घ बड़े बड़े पर्वत हैं। अब शिवजी के अनुग्रह से उन द्वीपों के स्वामी जो व्यतीत मन्वन्तरों में भये और आगे होंगे तथा स्वायम्भुव मन्वन्तर में जो हैं उन सबका हम वर्णन करते हैं। स्वायम्भुवमनु के पौत्र और प्रियव्रत के पुत्र अति पराक्रमी आग्नीध्र, अग्निबाहु, मेधा, मेधातिथि, वपुष्मान्, ज्योतिष्मान्, द्युतिमान्, हव्य और सवन ये नव होते भये। इनमें से राजा प्रियव्रत ने आग्नीध्र को जम्बूद्वीप का, मेधातिथि को प्लक्षद्वीप का, वपुष्मान् को शाल्मलिद्वीप का, ज्योतिष्मान् को कुशद्वीप का, द्युतिमान् को क्रौंचद्वीप का, हव्य को शाकद्वीप का, सवन को पुष्कर द्वीप का अधिपति किया। पुष्करद्वीप के प्रभु सवन के महावीत और धातकी ये दो पुत्र भये। उनमें महावीत को पुष्करद्वीप का एक खण्ड दिया जिसका नाम महावीतवर्ष भया और दूसरा खण्ड धातकी को दिया जो उसीके नाम से धातकीखण्ड कहाया। शाकद्वीप के स्वामी हव्य के जलद, कुमार, सुकुमार, मणीचक, कुसुमोत्तर, मोदाकी और महाद्रुम ये सात पुत्र भये और इन सातों के नाम

से जलदवर्ष, कुमार, सुकुमार, माणीचक, कौसुमोत्तर, मोदक और द्रुम ये सात वर्ष शाकद्वीप के भये। क्रौञ्च-द्वीप के प्र० द्युतिमान् के कुशल, मनुग, उष्ण, पीवर, अन्धकारक, मुनि और दुन्दुभि ये सात पुत्र भये और इन सातों के नाम से क्रौञ्चद्वीप के सात खण्ड भये। कुशद्वीप के राजा ज्योतिष्मान् के उद्भिद, वेणुमान्, द्वैरथ, लवण, धृत, प्रभाकर और कपिल ये सात पुत्र भये और इन सातों के नाम से कुशद्वीप के सात खण्ड कहलाये। शाल्मलिद्वीप के अधिपति वपुष्मान् के श्वेत, हरित, जीमूत, रोहित, वैद्युत, मानस और सुप्रभ ये सात पुत्र भये और शाल्मलिद्वीप के सात भाग इनके नाम से प्रसिद्ध भये। प्लक्षद्वीप के स्वामी मेधातिथि के शान्तभय, शिशिर, सुखोदय, आनन्द, शिव, क्षेमक, और ध्रुव ये सात पुत्र भये और इन सातों के नाम से प्लक्षद्वीप के सात खण्ड गिनेगये। ये सब विभाग स्वाय-म्भुव मन्वन्तर में किये गये मेधातिथि के पुत्रों ने प्लक्ष-द्वीप में वर्णाश्रम युक्त प्रजा बसाया और इसीभांति शाकद्वीपपर्यन्त पांच द्वीपों में वर्णाश्रम का धर्म प्रवृत्त भया। इन पांच द्वीपों के निवासी सब श्रीसदाशिव के अर्चन में तत्पर रहते हैं इसी से सुख, आयुष्, बल, बुद्धि और धर्म उनको मिला है। और पुष्करद्वीप में भी सब शिवभक्त निवास करते हैं॥

सैंतालीसवां अध्याय॥

सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो! प्रियव्रत ने अपने

बड़े पुत्र आग्नीध्र को अभिषेक कर जम्बूद्वीप का महाराज बनाया वह आग्नीध्र युवा, बुद्धिमान्, पराक्रमी, दयालु और अति शिवभक्त था। उसके नाभि, किंपुरुष, हरि, इलावृत, रम्य, हिरण्मान्, कुरु, भद्राश्व और केतुमाल ये नौ पुत्र परम माहेश्वर और प्रतापी भये। इन में से जम्बूद्वीप का हेम नामक दक्षिणवर्ष आग्नीध्र ने नाभि को दिया। हेमकूट वर्ष किंपुरुष को नैषधखण्ड हरिको जिस खण्डके मध्य में मेरुपर्वत है वह इलावृत को दिया नील पर्वतवाला खण्ड रम्य को श्वेतखण्ड हिरण्मान्को दिया शृङ्गवर्ष उत्तर का कुरुको दिया माल्यवान् वर्ष भद्राश्व को और गन्धमादन वर्ष केतुमाल को दिया। इस भांति जम्बूद्वीप के इन बड़े बड़े नव खण्डों में अपने नव पुत्रों को अभिषेक कर आप तप करने लगा और शिवजीका ध्यान करने में प्रवृत्त भया किंपुरुष आदि आठ वर्षों में अर्थात् जम्बूद्वीप के आठ खण्डों में स्वभाव सेही सब सिद्धियां होजाती हैं और उन वर्षों में न्यूनाधिक भाव जरा अर्थात् बुढ़ापा, मृत्यु, अधर्म और युगों के धर्म नहीं हैं। जो स्थावर जङ्गम जीव शिवक्षेत्रोंमें प्राण त्यागते हैं वे उन आठ खण्डों में भोगके लिये जन्म लेते हैं। उन्हीं के हित के लिये ही ये आठ खण्ड शिवजी ने रचे हैं। और उन खण्डोंके निवासी अपने हृदयकमल में श्रीमहादेवजी का ध्यान करते हुये सदा प्रसन्न रहते हैं। हिमालय पर्वत युक्त इस खण्ड के राजा नाभि की व्यवस्था हम वर्णन करते हैं। नाभि ने अपनी मेरुदेवी नामक रानी में ऋषभ नामक पुत्र उत्पन्न किया जो सब

क्षत्रियों में उत्तम भया। ऋषभ के सौ पुत्र भये उनमें सब से बड़े अपने पुत्र भरत को राज्याभिषेक कर ज्ञान और वैराग्य करके अपनी इन्द्रियों को जीत अन्तःकरण में परमेश्वर को स्थापन कर निराहार, नग्न, निराश हो, जटाधार, सब सन्देह और अज्ञान दूरकर शिवके परमपद को प्राप्त होता भया। हिमालय के दक्षिण ओर का देश भरत को दिया इसलिये उसका नाम भारतवर्ष भया और भरत का पुत्र परम धर्मात्मा सुमति भया। भरत भी अपना राज्य पुत्र को दे तप करने को वनमें चला गया॥

अड़तालीसवां अध्याय॥

सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो! इस जम्बूद्वीप के मध्य में मेरुपर्वत है। जिसके शृङ्ग अनेक प्रकार के रत्नों से जड़े हैं और चौरासी योजन ऊंचा है सोलह हज़ार योजन भूमि में गड़ा है सोलह हजार योजन नीचे से चौड़ा है और बत्तीस हज़ार योजन ऊपर से उसका विस्तार है इसलिये धतूरे के पुष्पकी भांति है और छिया-नबे हज़ार योजन उसका घेर है शिवजी के अङ्ग स्पर्श से वह पर्वत सुवर्ण का होगया है। सब देवता इसीमें निवास करते हैं अनेक चमत्कारों का मानो घर है। इस भांति उस पर्वत का आयाम एक लक्ष योजन है जिसमें सोलह हज़ार भूमि के नीचे और चौरासी हज़ार योजन ऊपर है और मूल से दूना विस्तार ऊपर है। वह पर्वत पूर्व की ओर पद्मरागमणि अर्थात् लाल के तुल्य है दक्षिण में सुवर्ण के पश्चिम में नीलमणि और उत्तर

में विद्रुम के अर्थात् मूंगे के तुल्य प्रकाशमान है। उसके पूर्वकी ओर अमरावतीपुरी है। जिसमें बड़े ऊंचे ऊंचे प्रासाद मानो आकाश गिरने की भय से खंभे ही लगा दिये हों खड़े हैं सुवर्ण रत्नों करके शोभायमान जिसके द्वार हैं मणियों के जाली झरोखे जहां सब स्थानों में लग रहे हैं। सुवर्ण तोरण सब ओर बने हैं अनेक देवता जिसमें विहार कररहे हैं। अतिमीठे वचन बोलनेवाली सब आभरणों से भूषित स्तनों के भार से झुकी हुई मद करके घूर्णित जिनके नेत्र ऐसी अतिरूपवती युवती नारी और अप्सरा जहां हजारों क्रीड़ा करती हैं और देखनेवालों के मन को हरती हैं। और जहां बावड़ी, नदी, तड़ाग आदि में सुवर्ण के जड़ाऊ घाट बँधे हैं और सुवर्ण के ही कमल कुमुद आदि उनमें फूल रहे हैं जिनके मधुर सुगन्ध पर लोभित हुये भ्रमर गुंजार कर रहे हैं और भांति भांति के पक्षी वृक्षों पर कलोलें कर रहे हैं और अपने अतिमधुर शब्दों से सबका मन लुभाते हैं। इस प्रकार इन्द्र की अमरावती नगरी है जिससे वह सारा पर्वत शोभित होरहा है। अग्नि कोण में तेजस्विनी नगरी अग्निकी है वह भी अमरावती से कुछ न्यून नहीं वहां भी सब भोग हैं। दक्षिण दिशा में संयमनी नाम यम की पुरी है जो सुवर्ण के भवनों से भरी है। नैर्ऋत्य कोणमें कृष्णावती नाम नगरी है। पश्चिम में शुद्धवती, वायव्यमें गन्धवती, उत्तर में महोदया और ईशान कोण में यशोवती नाम नगरी है इन आठ पुरियों करके वह पर्वत चारों ओर शोभायमान

होरहा है ब्रह्मा, विष्णु, महेश आदि सब देवताओं का निवास स्थान है। उत्तम वृक्ष निर्भर और नदियों से व्याप्त होरहा है। सिद्ध, यक्ष, गन्धर्व, विद्याधर, मुनि और अनेक प्रकार के जीव जिसमें आनन्द से निवास करते हैं उस पर्वत के ऊपर बाईंओर शुद्ध स्फटिक का बना हुआ हज़ार खण्ड का एक विमान है उसके बीच में मणियों के सिंहासन पर पार्वती और स्कन्द करके सहित श्रीमहादेवजी विराजमान हैं। उस विमान से आधे विस्तारवाला विष्णुजी का विमान और उससे भी आधा ब्रह्माजी का विमान दहिनीओर स्थित है। शिवजी के विमान के चारोंओर आठ दिक्पालों के विमान हैं। वे सब अपने अपने विमानों में क्रीड़ा करते हैं। ईशान कोण के विमान में सनत्कुमार सनक सनन्दन और हज़ारों सिद्ध आदि श्रीशिव का यजन करते हैं वह विमान सूर्य के तुल्य प्रकाशमान है कहीं उसमें योगभूमि है और कहीं भोगभूमि है। और नन्दी, स्कन्द, गणेश, पार्वती और सुयशा तथा सुनेत्रा नाम पार्वतीजी की सखी मातृका और कामदेव आदि सब देवताओं के जुदे जुदे विमान हैं। जम्बूनामक नदी उस पर्वत के मूल को चारों ओर से घेर कर स्थित है। उस पर्वत के दहिनीओर अतिऊंचा सदा फल देनेहारा और बड़े विस्तार करके युक्त जम्बूका वृक्ष है। मेरुपर्वत के चारों ओर इलावृत खण्ड है जिसके निवासी कोई तो अमृत पान करते हैं और कोई कोई अमृतसे भी मधुर जम्बूफल खाकर आनन्द से रहते हैं। और सब वर्ण

सुवर्ण का सा है और भोगी हैं। यह सब खण्डों में उत्तम इलावृत खण्ड मेरु पर्वत के आसपास है इस भांति जम्बूद्वीप में नवखण्ड हैं। और इसकी लम्बाई तथा चौड़ाई अब हम वर्णन करते हैं आप सुनो॥

उनचासवां अध्याय॥

सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो! जम्बूद्वीप का विस्तार एक लक्ष योजन है और उसके समीप का प्लक्ष-द्वीप इससे दूना है इसी भांति एकसे दूसरा द्वीप आगे द्विगुण द्विगुण है। और समुद्रों करके युक्त सम्पूर्ण पृथ्वी का प्रमाण पचास करोड़ योजन है। सात द्वीपों करके युक्त पृथ्वी लोकालोक पर्वत से चारों ओर घिरी है। मेरुपर्वत के उत्तर नीलपर्वत नील के उत्तर श्वेत और श्वेत के भी उत्तर शृङ्गी नाम पर्वत है। मेरु के दक्षिण निषध, निषध के दक्षिण हेमकूट और हेमकूट के दक्षिण हिमालय है। मेरुके पश्चिम माल्यवान् और पूर्वमें गन्धमादन ये दो पर्वत हैं और दोनों उत्तर तक विस्तीर्ण हैं। इन आठों पर्वतोंमें सिद्ध, विद्याधर, गन्धर्व, चारण आदि निवास करते हैं। और इन दो दो पर्वतों के बीच की भूमि नव नव हजार योजन है यह हैमवत-खण्ड भारतवर्ष कहलाता है। उससे आगे हेमकूट-खण्ड है जिसको किंपुरुषवर्ष कहते हैं। हेमकूट से आगे नैषध अथवा हरिवर्ष है। उससे आगे मेरुपर्वत करके शोभित इलावृतखण्ड है। आगे नील पर्वत करके युक्त रम्यकवर्ष उसके अनन्तर श्वेतपर्वत करके युक्त

हिरण्मयवर्ष और शृङ्गीपर्वत करके शोभायमान कुरुवर्ष कहलाता है दक्षिण उत्तर के दो वर्ष धनुषाकार हैं मेरुपर्वत के ओर पास के चारों वर्ष दीर्घाकार अर्थात् लम्बे हैं। और चारों के बीच इलावृत खण्ड है। मेरु के पश्चिम और पूर्व के दोनों वर्ष अतिदीर्घ हैं। निषध पर्वत के दक्षिण उत्तर दो वेद्यर्ध हैं। तीन वर्ष दक्षिण वेद्यर्ध में और तीनही उत्तर वेद्यर्ध में हैं। और उनके मध्य में इलावृत है। नील पर्वत के दक्षिण और निषध के उत्तर माल्यवान् नाम पर्वत है वह ऊपर से दो हज़ार योजन चौड़ा है और उसका सब आयाम चौंतीस हज़ार योजन है उसके पश्चिम में गन्धमादन है उसका विस्तार माल्यवान् के तुल्य ही है ये छः पर्वत जम्बूद्वीप के मध्य में हैं और पूर्व पश्चिम समुद्रों तक पहुँचे हैं। इनमें हिमालय पर्वत में हिम अर्थात् बर्फ़ बहुत है। हेमकूट सुवर्ण करके युक्त है। निषध पर्वत सुवर्ण काही है इसीलिये सदा मध्याह्न के सूर्य की भांति प्रकाशमान रहता है। मेरु पर्वत के चार वर्ण हैं और चतुरस्र अर्थात् चौखूंटा है। नीलपर्वत वैडूर्य अर्थात् पन्ने का है। श्वेत पर्वत शुक्लवर्ण है और बहुत सुवर्ण करके युक्त है। और शृङ्गी पर्वत का वर्ण मयूरपिच्छ की भांति विचित्र है और सुवर्ण भी उसमें अधिक है। यह हमने संक्षेप से वर्णन किया है। और भी पर्वतों का वर्णन सुनो मन्दर और देवकूट दोपर्वत पूर्व दिशा में हैं। कैलास, गन्धमादन ये दक्षिण के पर्वत हैं और समुद्र पर्यन्त पहुँचे हैं। निषध और पारियात्र ये पश्चिम के पर्वत और

त्रिशृङ्ग तथा जारुचि ये दोनों उत्तर के पर्वत हैं। ये आठों मर्यादा पर्वत कहाते हैं। सबसे ऊंचा जो मेरुपर्वत वर्णन किया उसके चार पाद हैं जिनके सहारे से वह खड़ा है और जिनकी दबाई हुई पृथ्वी स्थिर होरही है। उन चारों का आयाम दशहज़ार योजन है पूर्व दिशा का पाद मन्दर पर्वत है दक्षिण में गन्धमादन पश्चिम में विपुल और उत्तर में सुपार्श्व पर्वत है। इन चारों पर्वतों पर अतिउन्नत एक एक वृक्ष है। मन्दर पर्वत के शृङ्ग पर बड़ी शाखाओं करके शोभित और बहुत ऊंचा कदम्ब वृक्ष है। गन्धमादन के ऊपर जम्बूवृक्ष है जिसमें अति उत्तम फल लगते हैं विपुल के ऊपर बड़ाभारी पीपल का पेड़ है और सुपार्श्व पर्वत के ऊंचे शृङ्ग पर कई योजन के घेर का वट वृक्ष है। ये चारों वृक्ष चैत्य-पादप कहाते हैं इन चारों पर्वतों के ऊपर चार वन हैं जिनमें छहों ऋतु सदा बने रहते हैं मनुष्यों की इनमें गति नहीं देवता ही विहार करते हैं। पूर्व के वन का नाम चैत्ररथ है दक्षिण में धृतिसंज्ञक पश्चिम में वैभ्राज और उत्तर में नन्दन नामक वन है। इन चारों में चार शिवक्षेत्र हैं पूर्व में मित्रेश्वर दक्षिण में षष्ठेश्वर पश्चिम में वर्येश्वर और उत्तर में आम्रकेश्वर क्षेत्र है और चार सरोवर भी इन पर्वतों पर हैं जिनमें सब देवता बड़े आनन्द से विहार करते हैं। पूर्व में अरुणोदक सर है दक्षिण में मानस पश्चिम में सितोदक और उत्तर में महाभद्र नामक सर है। इनमें स्कन्द के भी चारक्षेत्र हैं पूर्व में कुमारक्षेत्र है दक्षिण में शाखक्षेत्र पश्चिम में

विशाखक्षेत्र और उत्तर में नैगमेयक्षेत्र है। पूर्व दिशा के अरुणोदक सरोवर के पूर्व जो पर्वत हैं उनका वर्णन संक्षेप से करते हैं सितान्त, कुरण्ड, कुर्पर, विकर, मणिशैल, वृक्षवान्, महानील, रुचकसबिन्दु, दर्दुर, वेणुमान्, मेघ, निषध और देवपर्वत हैं इन सबमें सिद्ध विद्याधर निवास करते हैं और इन सब पर्वतों की गुहा, वन और शृङ्गों में अनेक शिवक्षेत्र और विष्णु-क्षेत्र हैं मानससरोवर के दक्षिण शैल विशिरा शिखर, एकशृङ्ग, महाशूल, गजशैल, पिशाचक, पञ्चशैल, कैलास और हिमवान् ये पर्वत हैं ये सब पर्वत देवताओं के निवासस्थान हैं और सबमें रुद्रक्षेत्र हैं इसीभांति पश्चिमके पर्वत भी शिवक्षेत्रों से शोभित हैं महाभद्र सरोवर के उत्तर में शंखकूट, महाशैल, वृषभ, हंस, नाग, कपिल, इन्द्र, नील, कण्टकशृङ्ग, शतशृङ्ग, पुष्प-कोश, प्रशैल, विरज, वराह, मयूर और जारुधि ये पर्वत हैं इन सब पर्वतों में श्रीमहादेवजी के हज़ारों विमान हैं और इनके मध्यकी भूमि अतिरमणीय सरोवर और उपवनों से भूषित है जिसमें मुनि, सिद्ध, गन्धर्व आदि अपनी पत्नियों के सहित शिवजी के अनुग्रह से निवास करते हैं। इन पर्वतों की द्रोणि अर्थात् दून में बिल्ववन के मध्य लक्ष्मी आदि देवी निवास करती हैं। अर्जुन वृक्षोंके वनमें कश्यप आदि मुनि व तालवन में इन्द्र, वामन और सर्प रहते हैं। उदुम्बरवन में कर्दम प्रजा-पति आदि महात्मा निवास करते हैं। आम्रवन में सिद्ध, निम्बवन में नाग और सिद्ध, किंशुकवनमें सूर्य भगवान्

और रुद्र के गण, बीजपूरवन में बृहस्पति, कुमुदवन में विष्णु आदि देवता, स्थलपद्मवनके मध्यगत वट वृक्ष में सब नाग रहते हैं और शेषनाग पाताल में निवास करते हैं जो बलभद्ररूप विष्णुमूर्ति हैं और श्रीमहादेवजी के कङ्कण तथा विष्णुजी की शय्या हैं। पनस वृक्षों के वन में शुक्राचार्यसहित सब दैत्य दानव निवास करते हैं सुपारी, नारियल आदि के वन में किन्नर और सर्प, करोड़ वृक्षों करके युक्त मनोहर वन में सब गणों के सहित नन्दी रहते हैं और कल्पवृक्षों के वन में सरस्वती देवी का निवास है। यह हमने संक्षेप से मुख्य मुख्यों का वर्णन किया विस्तार से कहां तक करें॥

पचासवां अध्याय॥

सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो! सितान्त शिखर के पारिजातवन में इन्द्र निवास करते हैं उसके पूर्व में कुमुद पर्वत का बड़ाभारी शृङ्ग है जिसमें दानवों की आठ पुरी हैं सुवर्णकोटरमें नीलक राक्षसों के अरसठ नगर हैं। महानील पर्वतमें अश्वमुख किन्नरों के पन्द्रह नगर हैं। वेणुसौध पर्वत में विद्याधरों की तीन पुरी हैं। वैकुण्ठ पर्वत में गरुड़, करञ्ज पर्वत में रुद्र, वसुधार पर्वत में वसु, रत्नधार पर्वत में सप्तऋषि, एकशृङ्ग पर्वत में प्रजापति, गजशैल में दुर्गा आदि देवी, सुमेधपर्वत में आदित्य रुद्र अश्विनीकुमार और वसु निवास करते हैं। हेमकक्ष पर्वत में अस्सी नगर देवताओंके हैं।

सुनील पर्वत में पांचकरोड़ राक्षसों का वास है। पञ्चकूट पर्वत में राक्षसों के नगर हैं जिनमें पांचकरोड़ राक्षस निवास करते हैं। शतशृङ्ग पर्वत में यक्षों के सौ नगर हैं। ताम्र पर्वतमें नागोंका निवास है। विशाख पर्वतमें स्कन्द और श्वेतोदरमें गरुड़ रहते हैं। पिशाचक पर्वतमें कुबेर का और हरिकूट में हरिका निवास है। कुमुद पर्वत में किन्नर, अञ्जन पर्वतमें चारण, कृष्ण पर्वतमें गन्धर्व बसते हैं। पाण्डुर पर्वत में सब भोगों करके युक्त विद्याधरोंकी सात पुरी हैं। सहस्रशिखर पर्वत में इन्द्र के शत्रु और बड़े प्रतापी दैत्यों के सात हज़ार नगर बसते हैं। मुकुट पर्वत में सर्पों का निवास है। पुष्पकेतु पर्वतमें यम, सोम, वायु, वासुकि आदि रहते हैं। तक्षक पर्वत में ब्रह्मा, विष्णु, शिव, स्कन्द, कुबेर और सोम आदि देवताओं के क्षेत्र हैं। श्रीकण्ठ पर्वत में पार्वती सहित साक्षात् सदाशिवजी निवास करते हैं। यह ब्रह्माण्ड शिवजी नेही उत्पन्न किया और ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र आदि इस अण्डकी रक्षा करनेहारे हैं इसीसे चक्रवर्ती कहाते हैं। अब मर्यादा पर्वतों में जो शिवजी के क्षेत्र हैं उनका हम वर्णन संक्षेप से करते हैं विस्तार से तो होही नहीं सकता क्योंकि सब जगत् में शिवही व्याप्त हैं इसलिये जगतही शिवक्षेत्र है॥

इक्यावनवां अध्याय॥

सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो! देवकूटगिरि का मध्यमशृङ्ग जो सुवर्ण, वैडूर्य, माणिक्य, नील, गोमेद आदि अनेक रत्नों करके खचित है। जिसमें चम्पक,

अशोक, पुन्नाग, बकुल, असन, पारिजात आदि वृक्षों पर भांति भांति के पक्षी मीठे मीठे शब्द कररहे हैं। जो अनेक गेरू, हरताल, मनशिल आदि धातुओंसे विचित्र वर्ण होरहा है और पुष्पों से पूर्ण है। सुन्दर शीतल स्वच्छ जलके झरने और नदियों से चारों ओर शोभायमान है और हज़ारों सरोवर कमलों से भरेहुये जिस पर्वतको भूषित कररहे हैं। उस शिखर के ऊपर दश योजन के विस्तार में उत्तम उत्तम वृक्षोंसे परिपूर्ण भूतवन नामक वनहै जिसके मध्यमें सुवर्ण के प्राकार अर्थात् कोट मणियों के तोरण अर्थात् बड़े बड़े द्वार और स्फटिक के गोपुर औरं रत्नोंके सिंहासनों करके युक्त शिवजीका मन्दिर है जिसमें स्फटिकके खम्भोंकरके युक्त अतिसुन्दर अनेक मण्डप हैं। ब्रह्मा, विष्णु आदि देवताओं करके पूजित अनेक गण जहां रहते हैं। जिनके मुख वराह, हाथी, ऋक्ष, सिंह, व्याघ्र, उष्ट्र, गृध्र, उलूक, मृग और अज आदि अनेक जीवों के मुखके तुल्य हैं। पर्वत के तुल्य जिनके शरीर और अनेक वर्णकी आकृति दीप्तनेत्र और कराल मुख हैं सब अणिमा आदि सिद्धियों करके युक्त हैं और उस शिवमन्दिरमें पूजनके अर्थ अनेकदेवता नित्य रहते हैं और झर्झर, पटह, शंख, भेरी, गोमुख आदि बाजे बजाकर शिवजी की आरती करते और नाचते गाते हैं। विष्णु, ब्रह्मा आदि देवता, सिद्ध, गन्धर्व, ऋषि और गण सब वहां भक्तिसे श्रीसदाशिवका अर्चन करते हैं और मन माना फल पाते हैं इसी भांति बड़े ऊंचे शिखरों वाला अतिमनोहर करोड़ों यक्षोंके स्वामी कुबेर का

निवास कैलास पर्वत है। वहांभी शिवजी का बहुत उत्तम स्थानहै जहां पार्वतीजी सहित महादेवजी निवास करते हैं और जिसके समीप मन्दाकिनी नदी बहती है। मन्दाकिनी में रत्नोंसे जड़े सुवर्ण के घाट स्नानके लिये बने हैं और सुवर्ण के कमल नीलमणिके उत्पल और स्फटिक के कुमुद जिसमें फूल रहे हैं जिनका सुगन्ध कई योजनों से भ्रमरोंका आकर्षण करता है और देवता, दानव, गन्धर्व, यक्ष, राक्षस, किन्नर जिस नदीका सेवन करते हैं और अप्सरा जिसके जलमें विहार करती हैं उस नदीके उत्तर की ओर शिवजी का मन्दिर है जिसमें सदा साम्बशिव निवास करते हैं। भागीरथी के दाहिने तट पर हज़ारों तपस्वियों करके सेवित बड़ाभारी एक वन है उसमें भी बहुत उत्तम स्थान हैं जहां गणों के सहित पार्वतीजी को संग लिये महादेवजी क्रीड़ा करते हैं। नन्दा के पश्चिम तीर पर कुछ दक्षिण को झुका हुआ रुद्रपुरी नाम ऊंचे ऊंचे हज़ारों मन्दिरों से शोभायमान नगर है जिसमें सैकड़ों रूपसे साम्बशिव अपने गणोंको संग लिये विनोद करते हैं इसीसे उस स्थानको शिवालय भी कहते हैं। इसभांति सब द्वीप, पर्वत, वन, नदी, नद, तड़ाग और समुद्रों की संधि आदि स्थानों में हज़ारों शिवस्थान हैं जिनमें महादेवजी का निवास रहता है॥

बावनवां अध्याय॥

सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो! इस जम्बूद्वीप में सुन्दर जल करके युक्त और सदा बहनेवाली असंख्यात

नदी पर्वत और सरोवरों से निकल कर बहती हैं। उनमें कोई पूर्वमुख, कोई दक्षिणमुख और कोई कोई अति पवित्र उत्तरमुख और बहुतसी पश्चिममुख भी बहती हैं। आकाश का समुद्र यह चन्द्रमा है जिससे निकाल निकाल सदैव देवगण अमृत पान करते हैं उससे सातवें वायुस्कन्ध में आकाशगंगा निकली हैं जिससे करोड़ों तारा और आकाश मग्न होरहाहै चौरासी हज़ार योजन ऊंचा मेरुपर्वत है उसके ऊपर शिवजी पार्वती और गणों करके युक्त स्थित होकर आकाशगंगा में क्रीड़ा करतेहैं इससे उसका जल अतिपवित्र है वह नदी मेरु की प्रदक्षिणा करती हुई बहती है जब वह मेरुमें गिरी तब वायु के वेग करके चार धारहो चारों ओर बही और शिवजी की आज्ञा पाय और पास के पर्वतों को भेदन करती हुई समुद्र में पहुँची। इस आकाशगंगा से हज़ारों नदियां और निकलीं जो सब खण्डों में बहनेलगीं गौ नाम पृथ्वी का है आकाश से गौ अर्थात् पृथ्वी पर गिरी इससे यह गंगा कहाई। केतुमालके वासी सब मनुष्य कृष्णवर्ण होते हैं और सदा पनसके फल भोजन करते हैं और दश हज़ार वर्ष जीते हैं उनकी स्त्रियां भी उत्पलवर्ण होती हैं। भद्राश्व में पुरुष और स्त्री गौरवर्ण हैं और नीरोग निरुपद्रव दश हज़ार वर्ष जीते हैं और आम्र के फलों का आहार करके शिवजी का ध्यान करते हैं। रम्यकवर्ष में स्त्री पुरुष शुक्लवर्ण हैं और वटवृक्ष के फल खाकर दश हज़ार और पन्द्रहसौ वर्षका आयुष् भोगते हैं और सदाशिवका ध्यान करते हुये सुखसे

अपना समय बिताते हैं। हिरण्मयवर्ष के निवासी पीपलके फल भोजन करके ग्यारह हजार और पन्द्रहसौ वर्ष जीते हैं और भक्तिसे सदाशिव का आराधन करते हैं। कुरुवर्ष के रहनेवाले स्वर्ग से गिरे हैं और मैथुन से उत्पन्न होते हैं उनका सुन्दर शुक्लवर्ण है क्षीरआदि उत्तम उत्तम पदार्थ भोजन करतेहैं स्त्री पुरुषोंमें चक्रवाकों से भी अधिक प्रीति होती है और दोनोंकी मृत्यु साथही होती है पुरुष अपनी स्त्री को छोड़ दूसरी स्त्री का सेवन नहीं करते हैं इस भांति कुरुवर्ष के निवासी तेरह हजार पन्द्रहसौ वर्ष आयुष् परम आनन्दसे बिताते हैं उनके आधि व्याधि नहीं होती है सदा तरुण बने रहते हैं और अति रूपवान् होतेहैं और सुन्दर भूषण वस्त्रोंसे अलंकृत रहते हैं जम्बूद्वीप के सब खण्डों में कुरुवर्ष सबसे उत्तम चन्द्रमण्डल के तुल्य प्रकाशमान वहां शिवजी का विमान है। भारतवर्ष के मनुष्य अनेक वर्णके होते हैं और उनके शरीर छोटे होते हैं कर्मके अनुसार आयुष् भोगते हैं और पुण्यात्मा होते हैं परन्तु परम आयुष् सौ वर्षका है अनेक देवताओं का पूजन करते हैं अनेक भांति के ज्ञान और विद्या करके युक्त और स्वल्पभोगी होते हैं कोई इन्द्रद्वीप में कोई कशेरु, ताम्रद्वीप, गभस्तिमान्, नागद्वीप, सौम्य, गन्धर्व, वरुण और कुमारिकाखण्ड आदि देशों में बसते हैं म्लेच्छ, पुलिन्द, किरात, शबर आदि अनेक जाति चारों ओर बसती हैं उनके अनन्तर यवन रहते हैं मध्य में ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र इन चारों वर्णों का निवास है यज्ञ युद्ध

और व्यापारसे उनका परस्पर व्यवहार प्रवृत्त है चारों वर्णोंका अपने अपने कर्मसे धर्म, अर्थ और काम सङ्कल्प और अभिमान रहता है इस भारतवर्ष के निवासी स्वर्ग और मोक्ष के लिये सब कर्म करते हैं और इसी भारतवर्ष में चारयुगों के धर्म हैं और खण्डों में सदा एक जैसा काल रहता है। किम्पुरुषखण्ड में पुरुष सुवर्ण-वर्ण और स्त्री अप्सराओं के तुल्य होती हैं और प्लक्ष के फल खाकर दश हज़ार वर्ष जीते हैं और सदाशिव का आराधन कर सुखी रहते हैं। हरिवर्ष के निवासी भी स्वर्ग से ही गिरे हैं उनकी वृद्धावस्था कभी नहीं होती सुन्दर इक्षुरस पानकरके दश हज़ार वर्ष जीते हैं। मध्यम खण्ड जो हमने इलावृत नाम कहा वहां सूर्य अधिक नहीं तपता वहां के निवासी कभी वृद्ध नहीं होते चन्द्र, सूर्य, नक्षत्र आदि वहां अधिक नहीं प्रकाशित होते हैं वहां के निवासी सब पद्मवर्ण कमलनेत्र कमलमुख होते हैं और उनके देह में सुगन्ध भी कमल कासाही होता है सब सदाशिव के परम भक्त हैं जम्बूफलों का रस पान करके तेरह हज़ार वर्ष आयुष् भोगते हैं देवलोक से वहां जन्म लेते हैं इसलिये वे मनुष्य अजर अमर और नीरोग होते हैं। वह जम्बूफलों का रस पान करने से क्षुधा, तृषा, श्रम, ग्लानि, बुढ़ापा और मृत्यु उनको कभी बाधा नहीं करती वहां अति रक्तवर्ण जाम्बूनद नाम सुवर्ण देवताओं के भूषणों के लिये उत्पन्न होता है। हे मुनीश्वरो! यह हमने नवखण्डों के वर्ण, आयुष् और भोजनका संक्षेप से वर्णन किया है। हेमकूट पर्वत में

गन्धर्व और अप्सरा निवास करती हैं । शेष, वासुकि और तक्षक आदि नाग निषधपर्वतमें रहते हैं । तेंतीस याज्ञिक देवता सिद्ध और निर्मल ब्रह्मऋषि नीलपर्वत में बसते हैं । दैत्य, दानव श्वेतपर्वतमें, पितर शृङ्गवान् में, यक्ष और कुबेर हिमालयमें निवास करते हैं और सब पर्वत वनआदिकों में ब्रह्मा, विष्णु, नन्दी आदिगण और पार्वतीजी सहित शिवजी निवास करते हैं । नील, श्वेत और शृङ्गवान् में देवता, सिद्ध और पितर आदिकों को सदा सदाशिवके दर्शन हुआ करते हैं । नीलपर्वत पन्ने का, श्वेत पर्वत सुवर्ण का और शृङ्गवान् पर्वत मयूर के पंखकी भांति विचित्र वर्ण सुवर्णमय है ये तीनों पर्वतराज जम्बूद्वीप में हैं ॥

तिरपनवां अध्याय ॥

सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो ! प्लक्ष आदि सातों द्वीपों में सात सात वर्ष पर्वत हैं गोमेदक, चान्द्र, नारद, दुन्दुभि, सोमक, सुमना अथवा वैभव और वैभ्राज ये सात पर्वत प्लक्षद्वीप में हैं । कुमुद, उत्तम, बलाहक, द्रोण, कङ्क, महिष और ककुद्मान् ये सात शाल्मलिद्वीप में हैं । विद्रुम, हेम, द्युतिमान्, पुष्पित, कुशेशय, हरि और मन्दर ये सात पर्वत कुशद्वीपमें हैं । मन्दराचलमें सदा-शिवजी निवास करते हैं मन्द नाम जल का है जलके धारने से उस पर्वत का नाम मन्दर भया । मन्दर ने अविमुक्तक्षेत्र अर्थात् काशी में बड़े उग्र तपसे शिवजी को प्रसन्न किया और यह प्रार्थना की कि आप मेरे ऊपर

निवास करें। शिवजी भी उसकी प्रार्थना स्वीकार कर नन्दी आदि गण और पार्वतीजी को संग ले वहांही निवास करने लगे और उसको अबतकभी त्याग नहीं करते हैं। क्रौञ्च, वामन, अन्धकारक, दिवाव्रत, विविन्द, पुण्डरीक और दुन्दुभि ये सात पर्वत क्रौञ्चद्वीपमें हैं। उदय, रैवत, श्यामक, राजत, आम्बिकेय, रम्य और केसरी ये सात शाकद्वीपके पर्वत हैं। इनमें केसरी पर्वत से वायु और रम्य पर्वत में सब ओषधि उत्पन्न होती हैं। पुष्करद्वीप में बड़ी बड़ी शिला और मणियों से भरा एकही पर्वत है जो पचासहज़ार योजन ऊंचा है और चौंतीस हज़ार योजन भूमि में गड़ा है यह पर्वत द्वीपके पहिले भागमें है और दूसरे भागमें मानसोत्तर पर्वत है जो समुद्रके तटपर है और पचास हज़ार योजन ऊंचा और इतनाही चौड़ा यह पर्वतभी है उस पुष्कर-द्वीपमें दो देश हैं मानस पर्वतके बाहर महावीतखण्ड और भीतर धातकीखण्ड है स्वादुजल के समुद्र से पुष्करद्वीप चारों ओर से घिरा है इसीभांति सातोंद्वीप सात समुद्रों से वेष्टित हैं द्वीपसे द्वीप और समुद्रसे समुद्र आगे आगे बड़े होते गये हैं सबके बाहर स्वादूदक समुद्र है उसके पार चारोंओर सबसे द्विगुण सुवर्ण की भूमि है और उस भूमि के चारों ओर लोकालोक पर्वत है यह पर्वत दश हज़ार योजन ऊंचा है और इतनाही उसका विस्तार है लोकालोक पर्वत के इधर सूर्य का प्रकाश रहता है और उधर अन्धकार इसीलिये यह पर्वत लोकालोक कहाता है सूर्यमण्डल पर्यन्त भुवर्लोक

और ध्रुवमण्डल तक स्वर्लोक है और आवह, प्रवह, अनुवह, संवह, विवह, परावह और परिवह ये सात वायु के चक्र हैं और इन सात वायुस्कन्धों में क्रम से मेघ, सूर्य, चन्द्र, नक्षत्र और राशि, ग्रह, सप्तर्षि और ध्रुव रहते हैं। भूमिसे ध्रुवमण्डल पन्द्रह नियुत ऊंचा है। एक नियुत योजन भूमि से सूर्यमण्डल ऊंचा है। सोलह हज़ार योजन सूर्य का रथ है। चौरासी हज़ार योजन ऊंचा मेरु पर्वत है। ध्रुव से करोड़ योजन ऊपर महर्लोक है। महर्लोक से दो करोड़ योजन जनलोक, जनलोक से चार करोड़ योजन तपोलोक और तपोलोक से भी छह करोड़ योजन ऊपर सत्यलोक अथवा ब्रह्मलोक है। ये सातों पुण्यलोक इस अण्ड में कहे हैं और सातों पातालों के नीचे घोरसे आदि लें माया पर्यन्त अट्ठाईस कोटि नरक हैं। उनमें अपने अपने कर्म के अनुसार पापी दुःख भोगते हैं। रौरव से अवीचि पर्यन्त पांच पांच नरक इकट्ठे हैं। यह ब्रह्माण्ड का वर्णन हमने किया व बड़े विस्तार से हिरण्यगर्भ की सृष्टि भी वर्णन की परन्तु ऐसे ऐसे ब्रह्माण्ड करोड़ों हैं और प्रतिअण्ड चौदह भुवन हैं। इन सबके कारण शिव हैं। देहरहित उन शिवका यह सब प्रपञ्चही देह है शिवरूप गृहस्थ की प्रकृति स्त्री है, महत्तत्त्व आदिक पुत्र और देहाभिमानी सब पशु उनके दास हैं ये आदि अन्त से रहित शिव छब्बीस तत्त्वरूप हैं। उनकी आज्ञासे पृथ्वी, मेघ, पर्वत, समुद्र, नक्षत्र, तारा आदि इन्द्र आदि देवता स्थावर, जङ्गम सब अपनी अपनी मर्यादा से स्थिर हैं। एक समय

अपने चिह्नों से हीन यज्ञरूप धारे महादेवजी को देख इन्द्र आदि सब देवता उनके समीप गये और विचार करने लगे कि ये कौन हैं तब तो उनकी शक्ति जाती रही। इस यक्ष के सम्मुख अग्नि एक तृण को भी दग्ध न करसका वायु उस तृण को उड़ा न सका और भी सब देवता अपने॰अपने प्रभाव से हीन होगये तब इन्द्र ने यक्षसे पूछा कि तू कौन है वह तो इतना सुनतेही अन्तर्धान भया और दिव्य भूषण पहिने हिमालय की पुत्री पार्वतीजी वहां प्रकट भई तब सब देवताओं ने पार्वतीजी से पूछा कि हे मातः! यह क्या माया है और यह यक्ष कौन है तब पार्वतीजीने कहा कि हे देवताओ! इस पुरुष की मैं प्रकृति हूं और लोहित, शुक्ल, कृष्ण मेरे वर्ण हैं व मैं इस यक्ष की आज्ञा के आधीन हूं और इसीकी आज्ञा से ब्रह्मा और ब्रह्माजी से यह अण्ड उत्पन्न भया है और अण्डमें नक्षत्र, सूर्य, चन्द्रसहित स्थावर जङ्गमरूप सब जगत् उत्पन्न भया इसलिये यह जगत् शिवस्वरूप है॥

चौवनवां अध्याय॥

सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो! अब हम नक्षत्र ग्रह आदिकों की गति वर्णन करते हैं मेरु के पूर्व मानस पर्वत के ऊपर इन्द्र की पुरी है। दक्षिण में यम की, पश्चिम में वरुण की और उत्तर में सोम की नगरी है। जिनमें दिक्पाल रहते हैं और अमरावती, संयमिनी, सुखा और विभा ये क्रमसे चारों पुरियों के नाम हैं। इन पुरियों के ऊपर सूर्य भ्रमण करते हैं। दक्षिणायन में

सूर्य अतिशीघ्र गति से भ्रमण करते हैं। अमरावती में जब मध्याह्न होता है उससमय संयमिनी में सूर्योदय सुखावती में अर्धरात्रि और विभामें सूर्यास्त होता है इसी भांति और भी नगरों में जानो। अग्निकोण में जब सूर्योदय होता है तब नैर्ऋत्य में मध्याह्न, वायव्य में अर्धरात्रि और ईशान में सायङ्काल होता है इकतीस लाख पचास हज़ार योजन सूर्य एक मुहूर्त अर्थात् दो घड़ी में चलता है इसी गति से सूर्य दक्षिणायन और उत्तरायण होता है उत्तरायण में आकाश के मध्य और दक्षिणायन में मानसोत्तर पर्वत के ऊपर भ्रमण करता है। एक एक अयनमें एकसौ अस्सी दिन सूर्य रहता है। जिस भांति कुम्हार का चाक अतिशीघ्र गति से फिरता हैइसी भांति सूर्यमण्डलभी दक्षिणायनमें भ्रमण करताहै इसलिये दक्षिणायन में साढ़े बारह मुहूर्त का दिन और साढ़े सत्रह मुहूर्त की रात्रि होती है और उत्त-रायणमें सूर्य मन्द गति होता है सूर्यके रथमें मुनि, आदित्य, गन्धर्व, अप्सरा, सर्प आदि भी बैठते हैं अपने चारोंओर सूर्य तपता है केवल ब्राह्मी सभा को नहीं तपाता है सन्ध्याके समय ब्राह्मण जो अर्घ्य देते हैं उसी से राक्षसों का नाशकर सूर्य भगवान् भ्रमते हैं उत्तरायण में साढ़े सत्रह मुहूर्त का दिन और साढ़े बारह मुहूर्त की रात्रि होती है दोनों अयनमें तीस मुहूर्त का रात्रि दिन होता है सब ग्रहों सहित ध्रुव भी भ्रमण करता है जिस भांति कुलालचक्रके मध्यमें रक्खा हुआ मृत्तिका का पिण्ड भ्रमता है सप्तर्षि तथा और भी ग्रह नक्षत्र

ध्रुवकी इच्छासे भ्रमण करते हैं। सूर्य भगवान् अपनी किरणों से सब जलको शुष्क करते हुये भ्रमण करते हैं। विष्णुजी के अनुग्रहसे उत्तानपादके पुत्रको यह ध्रुवका पद मिला है। सूर्यका आकर्षण किया हुआ जल चन्द्रमण्डल में जाता है चन्द्रमण्डल से मेघों में प्राप्त होता है वायु करके ताड़ित मेघ भूमिपर बरसते हैं इस भांति जलका कभी नाश नहीं होता है। सूर्य सबलोक को भासित करताहै इसलिये भास्कर कहाता है। सब लोकों के प्राण जल हैं और जलके अधिपति शिव हैं विष्णुजी का नाम नारायण जल में निवास करने से ही पड़ा है। सब जगत् विष्णुजीमें निवास करता है और विष्णुजी जलमें निवास करते हैं चराचर जगत् जिस कालमें दग्ध होताहै तब धूम उठताहै वही वायु करके प्रेरित आकाशमें जाकर अग्नि के सहित मेघ बनजाते हैं इसकारण धूम अग्नि और वायुके संयोग से मेघ होते हैं। वेही जल बरसते हैं और उनके स्वामी इन्द्र हैं यज्ञके धूम से जो मेघ उत्पन्न होते हैं वे सदा ब्राह्मणों का हितकरतेहैं दावाग्नि के धूमसे उपजे हुये मेघ वनका कल्याण करतेहैं। चिताके धूमसे उत्पन्न हुये मेघ जगत् में अशुभकरते हैं अभिचारकर्म की अग्निके धूमसे उपजे मेघ जीवों का नाश करते हैं इसभांति धूम करके जगत् का हित अहित होता है इसलिये अभिचार के धूमको आच्छादन करलेना चाहिये जिसमें फैले नहीं जो ब्राह्मण उस धूमको विना ढके अभिचार कर्म करता है वह प्रजाका क्षय करनेहारा होता है मेघ जल का

निवासस्थान हैं वे पवन करके प्रेरित छह महीने बरसते हैं गर्जना मेघों में वायुका गुण है बिजली अग्नि से उत्पन्न भई है इसभांति धूम आदि तीन पदार्थोंसे मेघकी उत्पत्ति है भ्रंश न होनेसे अभ्र और पृथ्वीको मेहन अर्थात् सेचन करनेसे मेघ कहाते हैं वाहू वैरिञ्च्य और पाक्ष ये तीन भांतिके मेघ होते हैं घृत और काष्ठके धूमसे उत्पन्न हुये मेघ वाहू कहाते हैं ब्रह्माजी के श्वाससे वैरिञ्च्य मेघ उत्पन्न भये हैं और पाक्ष मेघ इन्द्रके छेदन किये हुये पर्वतों के पक्षोंसे उपजे हैं वाहू मेघ आवह वायुमें रहते हैं वैरिञ्च्य प्रवहमें और पाक्ष जो पुष्कर आदि मेघ हैं वे इनके भी ऊपर रहकर वृष्टि करते हैं वाहू मेघ बहुत काल तक थोड़ी थोड़ी वृष्टि करते हैं गर्जते नहीं हैं और पृथ्वी से एक कोसके भीतर रहते हैं शीतल पवन भी उनके साथ रहता है और प्रायः पर्वतों पर रहते हैं वैरिञ्च्य मेघ एक योजन के भीतर रहकर बहुत वृष्टि करते हैं और गर्जते भी बहुत हैं पुष्कर आदि पाक्ष मेघ इतना बरसते हैं कि सब जगत् जलमें डूबकर समुद्र होजाता है उसी में रात्रि के समय परमेश्वर शयन करते हैं इन सब मेघोंका धूम प्रजाकी वृद्धि करनेहारा है पौण्ड्रवृष्टि अर्थात् पुण्ड्र देश में जो वृष्टि होती है वह शीतकाल के सस्य अर्थात् खेती उत्पन्न करती है। गङ्गाजल की वृष्टि गाङ्ग कहाता है वह परावह वायु करके प्रेरित मेघों से होती है परावह पवन मेघों को एक पर्वत से दूसरे पर्वत पर ले जाता है मेघ हिमालय पर्वत के ऊपर बरस कर जो जल शेष रहता

है उसको भारतवर्ष में बरसते हैं। ये सूर्य भगवान् साक्षात् शिवस्वरूप हैं और जगत् के सृष्टि करनेहारे, तेज, ओज, बल, नेत्र, कर्ण, मन, मृत्यु, आत्मा, क्रोध, विदिशा, दिशा, सत्य, ऋत, वायु, अम्बर, खचर, लोकपाल, ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र सब ये सूर्यही हैं। येसहस्रकिरणसूर्य भगवान् आठ हाथ और तीन नेत्रों करके युक्त अर्धनारीस्वरूप सब देवताओं के स्वामी साक्षात् शिवही हैं। इन्हींके अनुग्रह से वृष्टि होती है जितना जल पृथिवी का सूर्य भगवान् शोषण करते हैं उससे हज़ार गुणा बरसते हैं जलका नाश और वृद्धि सब उनके आधीन है। ध्रुव करके प्रेरित वायु वृष्टि का संहार करता है सूर्य से निकल कर सब नक्षत्रमण्डल में वृष्टि होती है और वृष्टिकाल के अनन्तर ध्रुव करके प्रेरित वृष्टि सूर्यमण्डल में ही प्रवेश करजाती है॥

पचपनवां अध्याय॥

सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो! सूर्य, चन्द्र तथा और ग्रहों के रथों का हम वर्णन करते हैं। जिस भांति सूर्य गमन करते हैं वह भी वर्णन करेंगे। सूर्यका रथ ब्रह्माजी ने संवत्सर के अवयवों से निर्माण किया और तीन नाभि तथा पांच आरों से युक्त चक्र उसमें लगाया वह सुवर्ण का रथ सब देवताओं का वास हुआ उस रथ का आयाम और विस्तार नव हज़ार योजन है। वेद से निर्माण किये हुये सात अश्व उसमें चक्र के ऊपर लगे हैं और उस रथ की धुरी ध्रुवपर रक्खी है इसी

लिये धुरी के भ्रमण से ध्रुव का भी भ्रमण होता है ध्रुव करके प्रेरित एक चक्र के साथ धुरी भ्रमण करती है। वायुरश्मियों करके ध्रुव ही सब नक्षत्र ग्रह आदिकों का प्रेरक है। रथ का युग अर्थात् जुआ और धुरी रथ के दक्षिण की ओर ध्रुव ने ग्रहण कर रक्खे हैं और अरुण अर्थात् सूर्यके रथका सारथि चक्र और घोड़े भ्रमते हुये ध्रुव के पीछे भ्रमण करते हैं वातलहरीरूप इस रथ के युग और धुरी का अग्रभाग कील में बँधी हुई रज्जु की भांति चारों ओर घूमता है। उत्तरायणमें भ्रमण करते हुये सूर्य के वायुरश्मि दीर्घ होते हैं और दक्षिणायन में रश्मि ध्रुव करके आकर्षण किये हुये छोटे होजाते हैं परन्तु दोनों अयनों में प्रत्येक में एकसौ अस्सी दिन सूर्य भ्रमण करते हैं। सब देवता, मुनि और यक्ष आदि सदा सूर्य भगवान्की पूजा और स्तुति करते हैं। उस रथमें देवता, मुनि, आदित्य, गन्धर्व, अप्सरा, ग्रामणी, सर्प और राक्षस ये क्रम से दो दो महीने बैठते हैं और अपने तेज से सूर्य का तेज अधिक करते हैं अपनी रची हुई स्तुति से मुनि सूर्य भगवान् का आराधन करते हैं। गन्धर्व, अप्सरा नृत्य गीतसे उपासना करते हैं। ग्रामणी, यक्ष, भूत आदि घोड़ों की रश्मि अर्थात् लगाम पकड़ते हैं। सर्प सूर्य को धारण करते हैं। राक्षस रथ के पीछे पीछे चलते हैं। बालखिल्य नामक ऋषि उदयाचल से अस्ताचल तक सूर्य भगवान् को पहुँचा देते हैं। ये सब दो दो महीने सूर्य भगवान् के साथ रहते हैं चैत्र आदि बारह महीने वर्ष में होते हैं। वसन्त, ग्रीष्म, वर्षा, शरद्,

हेमन्त, शिशिर ये छह ऋतु वर्ष में दो दो महीने की होती हैं। धाता, अर्यमा, मित्र, वरुण, इन्द्र, विवस्वान्, पूषा, पर्जन्य, अंशुमान्, भग, त्वष्टा, विष्णु ये बारह सूर्य व पुलस्त्य, पुलह, अत्रि, वशिष्ठ, अङ्गिरा, भृगु, भरद्वाज, गौतम, कश्यप, क्रतु, जमदग्नि, कौशिक ये ऋषि व वासुकि, कङ्कणीकर, तक्षक, नाग, एलापत्र, शङ्खपाल, ऐरावत, धनञ्जय, महापद्म, कर्कोटक, कम्बल, अश्वतर ये नाग व तुम्बुरु, नारद, हाहा, हूहू, विश्वावसु, उग्रसेन, सुरुचि, परावसु, चित्रसेन, ऊर्णायु, धृतराष्ट्र, सूर्यवर्चा, ये गन्धर्व व कृतस्थला, पुञ्जिकस्थला, मेनका, सहजन्या, प्रम्लोचा, अनुम्लोचा, घृताची, विश्वाची, उर्वशी, पूर्वचित्ति, तिलोत्तमा, रम्भा ये अप्सरा व रथकृत्, रथौजा, सुबाहु, रथचित्र, रथस्वन, वरुण, सुषेण, सेनजित्, तार्क्ष्य, अरिष्टनेमि, रथजित्, सत्यजित् ये ग्रामणी और हेति, प्रहेति, पौरुषेय, अवध, सर्प, व्याघ्र, दिवाकर, ब्रह्मोपेत, यज्ञोपेत आदि ये राक्षस हैं। ये सब बारह बारह के सात गण सूर्य भगवान् के समीप रहते हैं और स्थानके अभिमानी हैं। धातासे विष्णु पर्यन्त बारह आदित्य सूर्य भगवान् का तेज अपने किरणोंसे अधिक करते हैं। पुलस्त्यसे लेकर कौशिक पर्यन्त बारह मुनि सूर्य की स्तुति करते हैं। वासुकि आदि अश्वतर पर्यन्त बारह नाग सूर्य भगवान् को धारण करते हैं। तुम्बुरु आदि सूर्यवर्चा पर्यन्त बारह गन्धर्व गीतों से उपासना करते हैं। कृतस्थलासे लेकर रम्भा तक बारह अप्सरा भांति भांति के नृत्य से सूर्य भगवान्को प्रसन्न करती हैं। रथ-

कृत् आदि सत्यजित् पर्यन्त बारह ग्रामणी घोड़ों की रश्मि ग्रहण करते हैं। हेतिसे लेकर यज्ञोपेत तक बारह राक्षस आयुध हाथों में लेकर रथ के साथ चलते हैं। धाता, अर्यमा, पुलस्त्य, पुलह, वासुकि, कङ्कणीकर, तुम्बुरु, नारद, कृतस्थला, पुञ्जिकस्थला, रथकृत्, रथौजा, हेति, प्रहेति ये चैत्र और वैशाखमें सूर्यभगवान् के साथ रहते हैं। मित्रावरुण, अत्रि, वशिष्ठ, तक्षक, नाग, मेनका, सहजन्या, हाहा, हूहू, सुबाहु, रथचित्र, पौरुषेय, अवध यह गण ज्येष्ठ और आषाढ़ में सूर्य भगवान् के समीप रहते हैं। इन्द्र, विवस्वान्, अङ्गिरा, भृगु, एलापत्र, शङ्खपाल, विश्वावसु, उग्रसेन, प्रम्लोचा, अनुम्लोचा, रथस्वन, वरुण, सर्व, व्याघ्र यह गण श्रावण और भाद्रपद में सूर्य भगवान् की सेवामें रहते हैं। पूषा, पर्जन्य, भरद्वाज, गौतम, ऐरावत, धनञ्जय, सुरुचि, परावसु, घृताची, विश्वाची, सुषेण, सेनाजित्, आप, वात ये आश्विन और कार्त्तिक में साथ रहते हैं। अंशुमान्, भग, कश्यप क्रतु, महापद्म, कर्कोटक, चित्रसेन, ऊर्णायु, उर्वशी, पूर्वचित्ति, तार्क्ष्य, अरिष्टनेमि, विद्युत्, दिवाकर ये मार्ग और पौषमें सूर्य भगवान् की सेवा में रहते हैं। त्वष्टा, विष्णु, जमदग्नि, कौशिक, कम्बल, अश्वतर, धृतराष्ट्र, सूर्यवर्चा, तिलोत्तमा, रम्भा, रथजित्, सत्यजित्, ब्रह्मोपेत, यज्ञोपेत यह गण माघ व फाल्गुन में सूर्यभगवान् के साथ सेवाके लिये रहते हैं। इन देवताओं का जैसा तेज, योग, मन्त्र, धर्म और बल है उसीके अनुसार सूर्य भगवान् तपते हैं। येही देवता बरसते, तपते,

प्रकाश करते, उत्पन्न करते और जगत् का सब अम-ङ्गल दूर करते हैं और दुष्टों के शुभको हरलेते हैं। वायुके तुल्य गमन करनेवाले विमान पर आरूढ़ हो आकाश में गमन करते हैं और सम्पूर्ण मन्वन्तर में जीवों की रक्षा करते हैं । इस भांति चौदह मन्वन्तरों में चौदह गण सूर्य भगवान् के साथ रहते हैं । इस प्रकार ये देवता दो दो मास सूर्य भगवान् के साथ निवास करते हैं ! हरे वर्णके सात घोड़े अपने एकचक्र रथमें लगा-कर सात द्वीप और समुद्रों से युक्त पृथ्वीका भ्रमण सूर्य भगवान् एक दिन रात्रिमें करते हैं। हे मुनीश्वरो ! जिस भांति हमने सूर्य भगवान् का प्रभाव श्रवण किया था वह आपको भली भांति सुना दिया है ॥

छप्पनवां अध्याय ॥

सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो ! वीथी के नक्षत्र अर्थात् अश्विनी आदि नक्षत्रों में चन्द्रमा भ्रमण करता है। सौ सौ अंशों करके युक्त तीन चक्र और श्वेतवर्ण के दश घोड़े चन्द्रमाके रथके दोनों ओर लगे हैं । इस प्रकार के रथपर आरूढ़ होकर पितरों सहित चन्द्रमा भ्रमण करता है। शुक्लपक्ष में सूर्य से चन्द्र आगे रहता है और पक्ष के अन्त में सूर्य किरणों करके पूर्ण होता है। देवता चन्द्र को पान करते हैं इसीसे वह क्षीण होता है और सूर्य भगवान् अपने सुषुम्णा नामक किरण से शुक्लपक्ष में उनको पूर्ण करते हैं इस भांति कृष्णपक्ष के पन्द्रह दिनों में चन्द्रमा क्षीण होता जाता है और

शुक्लपक्षमें पूर्ण होता जाता है। तेंतीस हज़ार तेंतीस सौ तेंतीस देवता चन्द्र के अमृत को पान करतेहैं। अमावस्या के दिन देवता तो चन्द्रमा को पान करके चले जाते हैं और यत्किंचित् शेष रहे अमृत को पितर आकर दो घड़ी तक पान करते हैं उसीसे महीने भर तृप्त रहते हैं। वृद्धि और क्षय का आरम्भ प्रतिपदासे होता है इस प्रकार यह वृद्धि सूर्य भगवान् की किरणों से होती है॥

सत्तावनवां अध्याय॥

सूतजी कहतेहैं कि हे मुनीश्वरो! बुध के रथ में आठ घोड़े पिशङ्गवर्ण लगे हैं और रथ भी जल और तेजोमय है। अनेक वर्णों के दश घोड़े पृथ्वीमय शुक्र के रथ में लगे हैं। मङ्गल और बृहस्पति के रथ सुवर्ण से बने हैं और बड़े वेगवान् आठ घोड़े लगे हैं। शनैश्चर का रथ लोह का है और कृष्णवर्ण के आठ घोड़े लगे हैं। सूर्य के शत्रु राहु के रथमें भी आठही घोड़े लगे हैं। ये सब ग्रह वायुरश्मियों करके ध्रुव में बँधे हैं इसभांति जितने तारा हैं और उतनीही वातरश्मि हैं और सब तारा उन्हींमें बँधे हैं और आप भ्रमण करते हैं तथा ध्रुव को भ्रमण कराते हैं। वायुकरके प्रेरित सब तारा चक्राकार भ्रमण करते हैं और उस वायु का नाम प्रवह है सब तारा ग्रह आदि ध्रुवकी प्रदक्षिणा करते हैं। नव हज़ार योजन सूर्यका व्यास है और इससे त्रिगुण परिधि है इससे द्विगुण चन्द्रमाका प्रमाण है इन दोनों के तुल्य होकर राहु नीचे से गमन करता है

और मण्डलाकार पृथ्वी की छाया को ग्रहण करता है अन्धकारमय तीसरा स्थान राहुका है। चन्द्र के प्रमाण का सोलहवां भाग शुक्र का प्रमाण है। शुक्र के प्रमाण में उसकी चौथाई घटा देवें तो बृहस्पतिका प्रमाण होता है और बृहस्पति से पादहीन अर्थात् पौनेपर मङ्गल और शनैश्चर हैं और इनसे पादहीन बुधका प्रमाण है और अश्विनी आदि ताराओं का प्रमाण भी बुधके तुल्य है। बाक़ी सैकड़ों छोटे छोटे तारे चार तीन दो योजन प्रमाण के भी हैं और सबके ऊपरहैं। दो योजन से कम किसीका प्रमाण नहीं है परंतु शनैश्चर, बृहस्पति और मङ्गल ताराओं से ऊपर हैं और बाक़ी चार ग्रह नीचे हैं। ऊपर के ग्रह मन्दगति और नीचेके शीघ्रगति हैं। जितने कोटि नक्षत्र हैं उतनेही सूक्ष्म तारा हैं। सूर्य के क्रम से नीचत्व और उच्चत्व होता है। चन्द्रमा जब उत्तरायण में हो पूर्णिमा के दिन उच्च होने से शीघ्र देखपड़ता है तब सूर्य दक्षिणायन में होकर नीच मार्ग में होताहै और भूमिरेखा करके आवृत्त अमावस्या और पूर्णिमा को अपने काल पर उदय होकर शीघ्र अस्त होता है। उत्तर मार्ग में स्थित चन्द्रमा अमावस्या को भी यत्किञ्चित् दीखता है। दक्षिणमार्ग में स्थित अन्धकार करके युक्त होजाता है इसलिये दृष्टिगोचर नहीं होता है। विषुवत् अर्थात् मेष, तुला संक्रान्तिके समय दिन रात्रि तुल्य होजाते हैं। सबके नीचे सूर्य भगवान् भ्रमण करते हैं। उनके ऊपर चन्द्र, चन्द्र के ऊपर नक्षत्रमण्डल, नक्षत्रमण्डल के ऊपर बुध, बुधके ऊपर

शुक्र, शुक्रके ऊपर मङ्गल, मङ्गल के ऊपर बृहस्पति, बृहस्पति के ऊपर शनैश्चर, शनैश्चरके ऊपर सप्तऋषि और सप्तऋषियों के भी ऊपर ध्रुव है । उस ध्रुवरूप विष्णुलोक को जो पुरुष जाने वह पापसे मुक्त हो दिव्य तेज से युक्त सूर्य, चन्द्र और ग्रह नित्यही नक्षत्रों से योग करते हैं और नीच उच्च समागम भेद आदि ग्रहों के परस्पर होते हैं । छह ऋतुओं में ग्रहों का योग कई बेर होता है परन्तु दूरसे मनुष्यों की दृष्टि में योग होता है वास्तव में ग्रह परस्पर योग नहीं करते हैं। हे मुनीश्वरो ! जिस प्रकार ग्रहोंकी गति हमने सुनी और देखी वैसीही संक्षेप से वर्णन की। जिस भांति शिवजी ने स्कन्द का अभिषेक किया वैसाही ब्रह्माजी ने सूर्य भगवान् का अभिषेक कर सब ग्रहों का स्वामी बनाया इसलिये ग्रहपीड़ा में सब ग्रहों की तथा विशेष करके सूर्य भगवान् की पूजा करनी और उनकी प्रीति केलिये हवन करना चाहिये ॥

अट्ठावनवां अध्याय ॥

ऋषि पूछते हैं कि हे सूतजी ! ब्रह्माजीने किस भांति देवताओं का अभिषेक किया और किसका स्वामी कौन बनाया। सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो ! ग्रहों का स्वामी सूर्य, नक्षत्र और ओषधियों का स्वामी चन्द्र, जलों का स्वामी वरुण, धन और यक्षोंका स्वामी कुबेर, आदित्योंका स्वामी विष्णु, वसुओं का स्वामी पावक, प्रजापतियों का स्वामी दक्ष, मरुतोंका स्वामी इन्द्र, दैत्य दानवोंका स्वामी

प्रह्लाद, पितरों का स्वामी यम, राक्षसोंका स्वामी निर्ऋति, पशुओं का स्वामी रुद्र, भूत और गणों का स्वामी नन्दी, वीर और पिशाचों का स्वामी वीरभद्र, मातृकाओं की स्वामिनी चामुण्डा, रुद्रोंका स्वामी नीललोहित, विघ्नों का स्वामी गणेश, स्त्रियों की स्वामिनी पार्वती, वचनों की स्वामिनी सरस्वती, मायावियों का स्वामी विष्णु, सब जगत् का स्वामी ब्रह्मा, पर्वतोंका स्वामी हिमालय, नदियों की स्वामिनी गङ्गा, सब समुद्रों का स्वामी क्षीरसमुद्र, वृक्षोंके स्वामी पीपल और वट, गन्धर्व व विद्याधर और किन्नरों का स्वामी चित्ररथ, नागों का स्वामी वासुकि, सर्पों का स्वामी तक्षक, दिग्गजों का स्वामी ऐरावत, पक्षियों का स्वामी गरुड़, अश्वों का स्वामी उच्चैःश्रवा, मृगों का स्वामी सिंह, गौओं का स्वामी वृषभ, सिंहों का स्वामी शरभ, सेनापतियों का स्वामी स्कन्द, श्रुति व स्मृतियों के स्वामी लकुलीश और कर्दम प्रजापति के पुत्र सुधर्मा, शङ्खपाद, केतुमान् और हेमरोमा ये चारों दिशाओं के स्वामी किये गये। पृथ्वीका स्वामी पृथु, सब के प्रभु महेश्वर विश्व, प्राज्ञ, तैजस और तुरीयरूप चार मूर्तियों के स्वामी वृषध्वज श्रीशंकर भये। इस प्रकार ब्रह्माजी ने सबके स्वामी बनाकर देवताओं का अभिषेक किया हे मुनीश्वरो! वह हमने आपको विस्तार से श्रवण कराया॥

उनसठवां अध्याय॥

ऋषि कहते हैं कि हे सूतजी! आपने यह जो वर्णन

किया इसको सुन परम आनन्द भया। अब आप ज्योतियों का निर्णय कहें। यह सुन सूतजी बोले कि हे मुनीश्वरो! जो हमने व्यासजी आदि शान्तबुद्धियों से सुना है वह आपको सुनाते हैं प्रथम हम दिव्य, भौतिक और पार्थिव इन तीनप्रकार के अग्नियों की उत्पत्ति कहते हैं। ब्रह्माजी की रात्रि समाप्त होने पर ब्रह्माजी सृष्टि करने की इच्छा करते भये। परन्तु चारों ओर अन्धकार छा रहा था केवल ब्रह्माजी ही खद्योत की भांति चमकते थे। तब ब्रह्माजी ने प्रकाश होने के लिये अग्नि को उत्पन्न किया और उसके तीन भाग किये। पवनमें रहने वाला अग्नि पार्थिव, सूर्य में रहनेवाला शुचि और विद्युत् में रहनेहारा अग्नि अब्ज कहलाया। अब हम इनके जुदे जुदे लक्षण कहते हैं। जठराग्नि, सौराग्नि और वैद्युताग्नि ये तीनों जल करके युक्त रहते हैं। सूर्य भगवान् अपने किरणों से पृथ्वी का जल आकर्षण करते हैं तब भी उनके किरण अधिक प्रकाशित होते हैं। वह सूर्याग्नि शान्त नहीं होता है। मनुष्यों के पेट में रहनेवाला अग्नि भी जलके साथ मिला रहता है इसी भांति वैद्युत अग्निभी है। सूर्य अस्त होने के अनन्तर सूर्य की प्रभा अग्नि में प्रवेश करती है इसीसे अग्नि रात्रि के समय दूरसे प्रकाशित देखपड़ता है और प्रभात के समय वह प्रभा फिर सूर्य में प्रवेश करती है और अग्निकी उष्णता भी सूर्य में प्रवेश करती है परन्तु चतुर्थांश उष्णता सूर्य में जाती है बाकी तीन भाग अग्नि में रहती हैं इसीसे बहुत तपता है सूर्यका प्रकाश और

अग्नि का उष्णता गुण है और सूर्य तथा अग्नि परस्पर आप्यायन किया करते हैं उत्तर ओर की आधी भूमि में जब सूर्य रहते हैं तब उनके तेज प्रवेश होने से जलका रक्तवर्ण होजाता है और दक्षिण ओरकी आधी भूमि जहां उस काल में रात्रि होती है वहां का जल शुक्लवर्ण रहता है यह सूर्य भगवान् तपते हैं और किरणों करके जलको पान करते हैं यह पार्थिव अग्नि है इसीको दिव्य और शुचि कहते हैं यह अग्नि सहस्रकिरण और कुम्भ के तुल्य गोलाकार है। अपनी हज़ार नाड़ियों करके नदी, समुद्र, कूप, मेघ आदि के जलको आकर्षण करता है उनमें चारसौ नाड़ी वृष्टि करती हैं व भजन, माल्य, केतन और पतन ये उन अमृतरूप नाड़ियों के नाम हैं। तीनसौ नाड़ियां हिम अर्थात् बर्फ़ गिरानेहारी हैं इनके नाम रेशा, मेधा और वात्स्या ये हैं। ककुभा और शुक्ला आदि तीनसौ नाड़ियां प्रचण्ड धूप करनेहारी हैं। इस प्रकार सूर्यरूप सदाशिव उन नाड़ियों करके सब जगत् को धारण किये हैं और मनुष्यों को औषध करके पितरों को स्वधा करके और सब देवताओंको अमृत करके वह तृप्त करता है। वसन्त और ग्रीष्मऋतु में वह तीन सौ किरणों करके तपता है। वर्षा और शरद् ऋ[illegible] चार सौ किरणों करके बरसता है। हेमन्त और शि[illegible] ऋतु में तीनसौ किरणों करके हिम गेरता है। इन्द्र [illegible]ता, भग, पूषा, मित्र, वरुण, अर्यमा, अंशु, विवस्वान्, [illegible]ष्टा, पर्जन्य और विष्णु ये बारह आदित्य हैं। माघमा[illegible] में वरुण, फाल्गुनमें सूर्य, चैत्रमें अंशु, वैशाख

में धाता, ज्येष्ठ में इन्द्र, आषाढ़ में अर्यमा, श्रावण में विवस्वान्, भाद्रमें भग, आश्विन में पर्जन्य, कार्त्तिकमें त्वष्टा, मार्गशीर्ष में मित्र और पोषमें विष्णुनामक सूर्य तपते हैं। वरुण नामक सूर्य पांचहज़ार किरणोंसे तपता, छह हज़ार से पूषा, सात हज़ार से अंशु, आठ हज़ार से धाता, नव हज़ार से इन्द्र, दश हज़ार से विवस्वान्, ग्यारह हज़ार से भग, सात हज़ारसे मित्र, आठ हज़ार से त्वष्टा, नव हज़ारसे पर्जन्य, दश हज़ारसे अर्यमा और छः हज़ार किरणों से विष्णु नामक आदित्य पृथ्वी पर तपते हैं। वसन्तऋतुमें सूर्यका कपिल वर्ण होता है। ग्रीष्ममें सुवर्ण के तुल्य, वर्षा में श्वेत, शरद् में पाण्डु-वर्ण, हेमन्त में ताम्रवर्ण और शिशिरऋतु में लोहित-वर्ण सूर्य होते हैं। ओषधियों में बल, देवताओं में अमृत और पितरों में स्वधा करके तृप्ति वही सूर्य भगवान् करता है। इस भांति सूर्य भगवान् की हज़ार किरणें लोकका उपकार करती हैं। यह सूर्यमण्डल सब ग्रह, नक्षत्र और चन्द्रके तेजका कारण है। नक्षत्रों का स्वामी चन्द्रमा शिवजी का वाम नेत्र और सूर्य भगवान् दक्षिण नेत्र हैं इसलिये जगत् के भी येही नेत्र हैं॥

साठवां अध्याय॥

सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो! सूर्य तो अग्नि-रूप हैं व चन्द्र जलरूप हैं। अब हम बाक़ी पांच ग्रहों की प्रकृति का वर्णन करते हैं आप श्रवण करें। देवताओं के सेनापति अर्थात् स्कन्द मङ्गल हैं। साक्षात् नारायण

बुध हैं । साक्षात् यमराज शनैश्चर हैं । शुक्र और बृहस्पति दोनों भृगु और अङ्गिरा के पुत्र हैं । सम्पूर्ण त्रैलोक्यका मूल सूर्य भगवान् हैं । देवता, असुर, मनुष्य, रुद्र, इन्द्र, चन्द्र, अग्नि और ब्राह्मण सब सूर्य भगवान् से उत्पन्न भये हैं । तेजस्वियों में सब तेज सूर्य भगवान् काही है सब लोकका आत्मा और स्वामी श्रीमहादेवस्वरूप परम देवता सूर्य नारायण ही हैं । सब जगत् उन सेही उत्पन्न होता है और उन्हींमें लीन होजाता है । वे सूर्य नारायणही काल के कारण हैं क्षण, मुहूर्त, दिन, रात्रि, पक्ष, मास, ऋतु, अयन, वर्ष और युग आदि कालका बोध सूर्य के विना नहीं होसकता है । कालके विना नियम, दीक्षा, आह्निक, ऋतुविभाग, पुष्प, फल, मूल, अन्न, तृण, ओषधी आदि कुछभी नहीं होसकते हैं । स्वर्ग में और भूमि पर सब व्यवहार सूर्य भगवान् के विना नष्ट होजाता है । काल, अग्नि, प्रजापति यही हैं । उत्तम मार्ग में स्थित होकर दिन रात्रि में चराचर जगत् को ऊपर नीचे से सूर्य भगवान् तपाते हैं । जिस भांति घरके अन्धकार को दीपक दूर करता है इसीप्रकार अपने हजार किरणों करके सूर्यनारायण जगत्रूप घर का अन्धकार दूर करते हैं । हमने सूर्य के हजार किरण वर्णन किये उनमें सात मुख्य हैं और उनके नाम ये हैं सुषुम्णा, हरिकेश, विश्वकर्मा, विश्वव्यचा, सन्नद्ध, सर्वावसु और स्वराट् । इनमें सुषुम्णा चन्द्रमाकी वृद्धि करता है, हरिकेश नक्षत्रोंका प्रकाशक है, विश्वव्यचा शुक्रको तेज देता है, विश्वकर्मा बुधकी वृद्धि करता है, सन्नद्ध

मङ्गलका प्रकाशक है, सर्वावसुसे बृहस्पतिका तेज अधिक होता है और स्वराट् नामक किरण शनैश्चर को प्रकाशित करता है । इस प्रकार सूर्य के प्रभाव से ही ग्रह, नक्षत्र, तारा और यह सम्पूर्ण विश्व प्रकाशित है जिन का क्षय नहीं होता वे नक्षत्र कहलाते हैं ॥

इकसठवां अध्याय ॥

सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो ! रात्रिको जो नक्षत्र ग्रह आदि दृष्टिगोचर होते हैं सब सूर्य की किरणों करके प्रकाशित हैं। इस भरतखण्ड में जो पुरुष सुकृत करते हैं उनके ये स्थान होते हैं। तारण करने से और शुक्लता से तारका कहाते हैं। सब भांतिके अन्धकारका आदान अर्थात् ग्रहण और प्रकाश का दान करने से आदित्य नाम सूर्य भगवान् का है। षुधातु सवन अर्थात् उत्पत्ति और स्पन्दन अर्थात् टपकनेका वाचक है तेजके उत्पन्न करने से और जलके बरसने से सूर्य भगवान् सविता कहाये। चदि धातु आह्लाद अर्थ में है जगत् को आह्लाद करने से चन्द्रनाम भया। चन्द्र सूर्य के मण्डल क्रम से जलमय और तेजोमय हैं और घटके तुल्य गोलाकार हैं। सब देवता इन ग्रह नक्षत्ररूप स्थानों में निवास करते हैं। सब मन्वन्तरों में ये निवासस्थान होते हैं। इस लिये ये ग्रह क्या हैं घर हैं। सूर्यमण्डल में सूर्य नारायण का निवास है। सोममण्डल में चन्द्रका व शुक्रमण्डल में शुक्रका निवास है। इसी भांति अपने अपने मण्डलों में मङ्गल, बुध, बृहस्पति, शनैश्चर निवास करते हैं।

राहु अपने स्थान में रहता है। इसी प्रकार अपने अपने मण्डलों में नक्षत्र भी रहते हैं। जितने ग्रह नक्षत्र आदि देख पड़ते हैं सब पुण्यात्मा जीवों के रहने के स्थान हैं और कल्पके आदि में ब्रह्माजी ने रचे हैं प्रलय पर्यन्त इनके निवासी आनन्द से इनमें रहेंगे सब मन्वन्तरों में इनके अभिमानी देवता इनमें निवास करते हैं पीछे जो व्यतीत होगये और आगे जो देवता होंगे उनके लिये ये स्थान पृथक् पृथक् होते हैं इस मन्वन्तर में सब ग्रह वैमानिक अर्थात् विमान पर बैठ आकाश गमन करने-हारे हैं। वैवस्वत मन्वन्तर में अदिति के पुत्र विवस्वान् सूर्य हैं। अत्रि ऋषिके पुत्र चन्द्रमा हैं। भृगुके पुत्र और असुरों के आचार्य शुक्र हैं। अङ्गिरा ऋषिके पुत्र और देवाताओं के आचार्य बृहस्पति हैं। बुध भी ऋषिपुत्र ही हैं। सूर्य भगवान् से संज्ञा में शनैश्चर उत्पन्न भये हैं। रुद्र से विकेशी में अग्नि का अवतार भौम भये हैं। सब नक्षत्र दक्षकी कन्या हैं। राहु असुर सिंहिका का पुत्र है। चन्द्र, सूर्य, ग्रह, नक्षत्र आदि के निवासी ये देवता हैं। सूर्य भगवान् का स्थान अग्निमय है। चन्द्र का स्थान शुक्लवर्ण और जलमय है। श्यामवर्ण और जलमय स्थान बुध का है। शुक्र का भी शुक्लवर्ण और जलमय व सोलह रश्मियों करके युक्त स्थान है। मङ्गल का स्थान रक्तवर्ण और नव रश्मियों करके युक्त है। पीतवर्ण और सोलह रश्मियों करके युक्त बृहस्पति का स्थान है। कृष्णवर्ण और आठ रश्मियों करके युक्त शनैश्चर का स्थान है और सब जीवों को संताप देने-

हारा तामस स्थान राहुका है। शुक्लवर्ण और एक एक रश्मि करके युक्त सब तारा पुण्यात्मा ऋषियों के स्थान हैं और कल्पके आदि में जलमय बनाये गये हैं परंतु सबके प्रकाश करनेहारे सूर्यनारायण ही हैं सूर्य का व्यास नवहज़ार योजन है और इससे त्रिगुणा अर्थात् सत्ताईस हज़ार योजन सूर्यमण्डल की परिधि है। सूर्य के विस्तार से दूना चन्द्रमा का विस्तार है। इसी प्रकार और ग्रहों का प्रमाण भी जिस रीति से हमने पहिले वर्णन किया है वैसाही जानो। अदितिका पुत्र सूर्य विशाखानक्षत्र में उत्पन्न भया है। कृत्तिकानक्षत्र में चन्द्रमा, पुष्यनक्षत्र में शुक्र, पूर्वाफाल्गुनी में बृहस्पति का जन्म है। पूर्वाषाढ़ में मङ्गल की उत्पत्ति है। रेवती में शनैश्चर का जन्म भया है। बुध धनिष्ठा में उत्पन्न भया और आश्लेषा में राहु की उत्पत्ति भई है और अपने अपने नाम के नक्षत्रों में नक्षत्रों का जन्म भया है। जिस नक्षत्र की पीड़ा हो उसके ग्रहकी पूजा आदि करने से वह शान्त होती है। सब ग्रहो में मुख्य सूर्य है। ताराग्रहों में मुख्य शुक्र है। केतुओं में धूमकेतु प्रधान है। आकाश के सब तारागण में ध्रुव मुख्य है। नक्षत्रों में धनिष्ठा, अयनों में उत्तरायण, पांच प्रकारके वर्षों में प्रथम संवत्सर, ऋतुओं में शिशिर, महीनों में माघ, पक्षों में शुक्लपक्ष, तिथियों में प्रतिपदा, दिनरात्रि में दिन, मुहूर्तों में पहिला मुहूर्त जिसका रुद्र देवता है और निमेष आदि काल में क्षण मुख्य है। सम्पूर्ण काल का कारण सूर्य है और चार प्रकार के जीवों की प्रवृत्ति निवृत्ति

करनेहारा भी वही सूर्य भगवान् है और सूर्य भगवान् के प्रवर्तक रुद्र हैं । इस प्रकार लोकव्यवहार के लिये श्रीमहादेवजीने यह ज्योतिर्गण अर्थात् ग्रह नक्षत्र आदि स्थापन किये हैं । इनका यथार्थ प्रमाण और गति कोई मनुष्य वर्णन नहीं करसक्ता है । जिनकी दिव्यदृष्टि है उनकोही इस ज्योतिर्गण का यथार्थ ज्ञान है । मनुष्यों को इनका ज्ञान शास्त्र से, अनुमान से, प्रत्यक्ष से और उपपत्ति से होता है । चक्षु, शास्त्र, जल, लेख्य और गणित ये पांच हेतु ज्योतिर्गण के मान का निर्णय करने के लिये हैं । इन सब ग्रह नक्षत्र तारा आदि के निर्माण करनेहारे और स्वामी वेही सदाशिव हैं ॥

बासठवां अध्याय ॥

ऋषि पूछते हैं कि हे सूतजी ! विष्णुजी के प्रसाद से ध्रुव क्योंकर सब नक्षत्रगण में मुख्य भया यह आप वर्णन करें । ऐसा मुनियों का प्रश्न सुन सूतजी कहने लगे कि हे मुनीश्वरो ! मार्कण्डेय मुनि से यह कथा हमने सुनी है वह आपको सुनाते हैं । बड़ा प्रतापी उत्तानपाद नाम चक्रवर्ती राजा भया । उसकी सुनीति और सुरुचि दो रानी थीं । बड़ी रानी सुनीति के ध्रुवनाम पुत्र उत्पन्न भया । वह बालक बड़ा बुद्धिमान् था । और सुरुचि के भी एक पुत्र भया । एक दिन ध्रुव अपने पिता की गोद में बैठा था कि उसकी विमाता सुरुचि ने ध्रुव का हाथ पकड़कर वहां से उठादिया और उसके स्थानपर अपने पुत्रको लाबैठाया । ध्रुव भी रोता रोता अपनी माता के समीप गया और सब वृत्तान्त कहा । उसकी माता ने

कहा कि हे पुत्र ! रानी सुरुचि पति की अतिप्यारी है इसहेतु उसके पुत्रपर राजा का बहुत स्नेह है। मैं मन्द-भागिनी हूं और मेरे तू पुत्र भी मन्दभागी उत्पन्न भया। अब तू रोदन मतकर तेरी यह दशा देख मुझको बहुत शोक होता है। अपने स्थान को अपनी शक्तिसेही पा सक्ता है। इतना माता का दीनवचन सुनकर तप करने के लिये ध्रुव वनको सिधारा। मार्ग में विश्वामित्र मुनि मिले उनको देख अतिविनय से ध्रुव ने प्रणाम किया। वे भी इसकी अवस्था और नम्रता देख बहुत प्रसन्न भये। तब तो ध्रुव कहने लगा कि महाराज ! पिता की गोद से मुझे उठाकर मेरी विमाता सुरुचि ने अपने पुत्र को वहां बैठाया और पिताने उसको कुछ भी न कहा। तब मैं दुःखसे रोता हुआ अपनी माता के समीप गया। माता ने भी यहही कहा कि पुत्र ! शोक मतकर अपनी शक्ति से ही उत्तम स्थान प्राप्तकर। ऐसा माता का वचन सुन आपके समीप आया अब आप ऐसा अनुग्रह करें कि जिससे बहुत उत्तम और सब से ऊंचा स्थान मुझे मिले। यह सुन विश्वामित्र मुनि हँसकर बोले कि हे राज-पुत्र ! शिवजी के वामअङ्ग से उत्पन्न भये श्रीविष्णुजी का आराधनकर और (ॐनमोभगवते वासुदेवाय) इस मन्त्र का निरन्तर जप कर तो क्लेश और पापों के दूर करनेहारे श्रीविष्णुभगवान् कृपाकर अति उत्तम स्थान तुमको देंगे इतना सुन मुनि को प्रणाम कर एकान्त स्थान में जाय पूर्व की ओर मुखकर नियम से जप करने लगा और शाक, मूल, फल आदि से अपना निर्वाह कर उग्र

तप करने में प्रवृत्त भया। इस भांति तप करते और मन्त्र जपते एक वर्ष व्यतीत भया अनेक वेताल, राक्षस और सिंह आदि दुष्टजीव उसके तपमें विघ्न करने को आये परन्तु उसने किसीको भी कुछ न समझा और एकाग्र-चित्त हो तप किये गया। एक पिशाची इसकी माता सुनीति का रूप धार सम्मुख आय रोदन करनेलगी और कहनेलगी कि अरे मैं मन्दभागिनीहूं और मेरा तू एकही पुत्र था वह भी मुझे छोड़ जंगल में आय बैठा अब मेरी क्या गति होगी इसभांति अनेक प्रकार के विलाप किये परन्तु ध्रुवने उसकी ओर देखा भी नहीं और अपना जप किये गये तबतो सब विघ्न शान्त होगये और गरुड़ पर आरूढ़ सब देवताओं के सहित श्रीविष्णुजी वहां आये। ध्रुव उनको देख विचार करने लगा कि ये महात्मा कौन हैं जिनके दर्शन से ही मेरा आत्मा आनन्द में मग्न होरहा है यह विचारकर मन्त्र जपता हुआ ध्रुव हाथ जोड़कर उठा। विष्णुभगवान् ने भी अपने शङ्ख के अग्रभाग से ध्रुव के मुखको स्पर्श किया। शङ्ख का स्पर्श होतेही दिव्य ज्ञान ध्रुव को होगया और हाथ जोड़ भगवान् की स्तुति करने लगा॥

प्रसीद देवदेवेश शङ्खचक्रगदाधर। लोकात्मन् वेद-गुह्यात्मंस्त्वां प्रपन्नोऽस्मि केशव १ न विदुस्त्वां महात्मानं सनकाद्या महर्षयः। तत्कथं त्वामहं विद्यां नमस्ते भुवनेश्वर २॥

यह सुन विष्णु भगवान् ने कहा कि हे पुत्र! हम तुमसे बहुत प्रसन्न हैं आव और अपनी माता सहित

सब नक्षत्रगण से प्रधान स्थान में निवास कर। जो ध्रुव स्थान शिवजी के आराधन से हमने पाया है वह हम तुझको देते हैं और भी जो पुरुष द्वादशाक्षर मन्त्र का जप करेंगे वे भी इसी स्थान में प्राप्त होंगे। इतना भगवान् का वचन सुनतेही देवता, गन्धर्व, सिद्ध और ऋषि वहां आय माता सहित ध्रुव को उस स्थान में लेजाय निवास कराते भये। इस प्रकार द्वादशाक्षर मन्त्र के जप से ध्रुव परमसिद्धि को प्राप्त भया। जो पुरुष भक्ति से वासुदेव को प्रणाम करते हैं वे इसी लोक में निवास करते हैं॥

तिरसठवां अध्याय॥

ऋषि पूछते हैं कि हे सूतजी! अब आप देव, दानव, गन्धर्व, सर्प, राक्षस आदि की उत्पत्ति क्रम से वर्णन करें। ऐसा मुनियों का प्रश्न सुन सूतजी कहनेलगे कि हे मुनीश्वरो! पहिले तो सङ्कल्प से, दर्शन से और स्पर्श करनेसेही सन्तति उत्पन्न होजाती थी। यह मैथुन से सृष्टि दक्षप्रजापति के अनन्तर प्रवृत्त भई। जब देवता, ऋषि, नाग बहुतेरे उत्पन्न किये परन्तु प्रजा की वृद्धि न भई तब दक्षप्रजापति ने अपनी सूतिनामक स्त्री में मैथुन से हर्यश्वनामक पांच हज़ार पुत्र उत्पन्न किये और वे पांच हज़ार प्रजाकी उत्पत्ति करने में प्रवृत्त भये। इसी अवसर में नारद मुनि ने आकर उनसे कहा कि भाई पहिले भूमि का प्रमाण तो जानलो पीछे प्रजा रचना। ऐसा नारद का वचन सुन

सबके सब चारों दिशाओं को चले गये और समुद्र में पहुँची नदी की भांति आज तक भी लौट कर नहीं आये। तब दक्षप्रजापति ने उसी स्त्री में शबल नामक एक हज़ार पुत्र सृष्टि करने के अर्थ फिर उत्पन्न किये उनको भी नारद ने वही उपदेश दिया और कहा कि तुम्हारे भाई चले गये उनका निश्चय करो कि कहां गये और ऊपर नीचे से पृथ्वी का प्रमाण देखो तब सृष्टि करना उचित है यह नारद का वचन मान वे भी नष्ट भये तब दक्षप्रजापति ने वीरिणी नाम अपनी स्त्री में साठ कन्यायें उत्पन्न कीं। उनमें से दश कन्यायें धर्मराज को व्याहीं, तेरह कश्यप को, सत्ताइस चन्द्रमा को, चार अरिष्टनेमि को, दो भृगुके पुत्र को, दो कृशाश्व को, दो कन्यायें अङ्गिरा ऋषि को व्याह दीं। अब उन सब कन्याओं के नाम और संतान सुनो। मरुत्वती, वसु, यामि, लम्बा, भानु, अरुन्धती, संकल्पा, मुहूर्ता, साध्या और विश्वा ये धर्मकी पत्नी हैं इनमें विश्वा के पुत्र विश्वेदेवा, साध्याके पुत्र साध्य नामक देवता, मरुत्वतीके मरुत्वान्, वसुके पुत्र आठ वसु, भानुके बारह भानु, मुहूर्ता के मुहूर्त, लम्बा के घोष नामक पुत्र। यामि के नागवीथि और संकल्पा के संकल्प पुत्र भया। आप, ध्रुव, सोमधर, अनिल, अनल, प्रत्यूष और प्रभास ये बड़े प्रतापी और सब दिशाओं में व्याप्त सब जगत् के हितमें तत्पर आठ वसु अजैकपाद्, अहिर्बुध्न्य, विरूपाक्ष, भैरव, हर, बहुरूप, त्र्यम्बक, सावित्र, जयन्त, पिनाकी और अपराजित ये ग्यारह रुद्र हैं। अदिति,

दिति, दनु, अरिष्टा, सुरसा, मुनि, सुरभि, विनता, ताम्रा, इला, कद्रू, त्विषा और क्रोधवशा ये तेरह कश्यप की भार्या हैं । चाक्षुषमन्वन्तर में जो देवता तुषित नामक थे वेही वैवस्वत मन्वन्तरमें बारह आदित्य भये । इन्द्र, धाता, भग, त्वष्टा, मित्र, वरुण, अर्यमा, विवस्वान्, सविता, पूषा, अंशुमान् और विष्णु ये हज़ार हज़ार किरणों करके युक्त बारह आदित्य हैं और अदिति के पुत्र हैं । हिरण्यकशिपु और हिरण्याक्ष ये पुत्र कश्यप से दिति में भये । दनु के सौ पुत्र भये उन सबमें विप्रचित्ति मुख्य था । ताम्रा ने छह कन्यायें उत्पन्न कीं शुकी, श्येनी, भासी, सुग्रीवी, गृध्रिका और शुचि ये उन कन्याओं के नाम हैं । शुकीकी सन्तान शुक और उलूक भये । श्येनी के श्येन और भासी के कुरर पक्षी भये । गृध्री के गृध्र, कपोत, पारावत आदि भये और हंस, चक्रवाक, सारस आदि शुचिकी सन्तान भई । घोड़े, गर्दभ, भेड़, बकरे और उष्ट्र सुग्रीवी की प्रजा भई । विनता के अरुण और गरुड़ ये दो पुत्र भये और सब लोकों को भय देनेहारी सौदामिनी नाम कन्या भी विनता के भई । सुरसा ने हज़ार सर्प उत्पन्न किये । कद्रू के पुत्र हज़ार शिर करके युक्त हज़ार नाग भये उनमें भी छब्बीस प्रधान हैं शेष, वासुकि, कर्कोटक, शङ्ख, ऐरावत, कम्बल, धनञ्जय, महानील, पद्म, अश्वतर, तक्षक, एलापत्र, महापद्म, धृतराष्ट्र, बलाहक, शङ्खपाल, महाशङ्ख, पुष्पदंष्ट्र, शुभानन, शङ्खलोमा, नहुष, वामन, फणित, कपिल, दुर्मुख और पतञ्जलि हैं ये

उन छब्बीस प्रधान नागों के नाम हैं। क्रोधवशा में बड़े मायावी राक्षस उत्पन्न भये। रुद्र और गौ, भैंस सुरभि में उत्पन्न भये। मुनिमें अप्सरा और मुनियों का गण उत्पन्न भया। किन्नर और गन्धर्व अरिष्टा के पुत्र भये। तृण, वृक्ष, लता, गुल्म आदि इलासे उपजे और करोड़ों यक्ष राक्षसों को त्विषा ने उत्पन्न किया। यह कश्यप की प्रजा हमने संक्षेप से वर्णन की। इनके पुत्र पौत्रों से तो हज़ारों वंश चले इस भांति इस प्रजाकी वृद्धि कश्यप ने की। इनमें मुख्यों को अभिषेक करके सबके स्वामी बनाया और मनुष्यों का अधिकार वैव-स्वत मनु को दिया स्वायम्भुव मन्वन्तर में ब्रह्माजी ने जिनका अभिषेक कियाथा वेही सातद्वीपों करके युक्त इस पृथ्वी का पालन धर्मसे करते हैं और वेही मनु होते हैं पिछले मन्वन्तरों में कई राजा होचुके और अगले मन्व-न्तरों में कई होंगे इस प्रकार प्रजा उत्पन्नकर फिर भी प्रजाकी वृद्धि के लिये कश्यपमुनि तप करनेलगे कि गोत्रका करनेहारा पुत्र हमारे उत्पन्न होवे इसभांति ध्यान करते करते ब्रह्मवादी दोपुत्र वत्सर और असित कश्यप के उत्पन्न भये। वत्सर के नैध्रुव और रैभ्य ये दो पुत्र भये। रैभ्य के पुत्र रैभ्यही कहाये। च्यवन की कन्या नैध्रुवको ब्याही गई उसमें सुमेधा नाम पुत्र भया। असितकी एकपर्णा स्त्री में ब्रह्मिष्ठ नामक पुत्र भया जो शाण्डिल्यों में मुख्य हुआ और जिसका नाम देवलभी है शाण्डिल्य, नैध्रुव और रैभ्य ये तीन पक्ष कश्यपके भये। अब पुलस्त्यकी सन्तान नव राक्षसों का वर्णन करते हैं।

चार युग बीते और ग्यारहवें मन्वन्तर के त्रेता का जब आधा बीत चुका तब द्वापर के आदि में मनु का पुत्र नरिष्यन्त और उसका पुत्र दम व दमका पुत्र तृणबिन्दु भया वह तीसरे त्रेतायुग के आदि में राजा भया उस राजा के इलविला नामक अतिरूपवती कन्या भई और पुलस्त्य को ब्याहीगई उसमें विश्रवाऋषि उत्पन्न भये। विश्रवाऋषिकी चार भार्या भईं एक तो बृहस्पति की कन्या देववर्णिनी और दो कन्या माल्यवान् की एक पुष्पोत्कटा दूसरी बलाका और चौथी भार्या माली की पुत्री कैकसी। इनमें देववर्णिनी का पुत्र कुबेर भया व कैकसी से रावण, कुम्भकर्ण, विभीषण और शूर्पणखा ये उत्पन्न भये व प्रहस्त, महापार्श्व, खर, कुम्भीनसी कन्या ये पुष्पोत्कटाकी प्रजा भईं व त्रिशिरा, दूषण, विद्युज्जिह्वा और मालिका नाम कन्या बलाका के गर्भ से उत्पन्न भये। ये नव राक्षस पुलस्त्य के वंशमें बड़े क्रूरकर्मा उत्पन्न भये। इनमें विभीषण धर्मात्मा था। मृग, सिंह, व्याघ्र आदि जीव, भूत, पिशाच, सर्प, शूकर, हस्ती, वानर, किन्नर आदि सब पुलस्त्यसे ही उत्पन्न भये और इस वैवस्वत मन्वन्तर में क्रतु के कुछ सन्तान न भई। अत्रि मुनिकी अतिसुन्दरी दश भार्या थीं। भद्राश्व राजासे घृताचीनाम अप्सरा में दश कन्या उत्पन्नभईं भद्रा, अभद्रा, जलदा, नन्दा, बला, अबला, बलाबला, गोपा, तामरसा और वरक्रीड़ा ये दशों अत्रिको ब्याही गईं। राहु ने सूर्य को आच्छादन करके सब जगत्में अन्धकार व्याप्त करदिया तब अत्रिमुनि ने सब जगत् में प्रभा अर्थात् प्रकाश

किया इसीसे उनका नाम प्रभाकर भया और आकाश से राहु करके गिराये हुये सूर्यको अत्रिमुनिनेही आशीर्वाद देकर फिर अपने स्थान में पहुँचाया। अत्रिमुनि से भद्रामें चन्द्रमा उत्पन्न भया व और भी सब स्त्रियों में अत्रिमुनिने पुत्र उत्पन्न किये वे सब वेदके पारगामी भये और आत्रेय कहाये उनमें दो तो बड़े तेजस्वी और ब्रह्मवेत्ता भये एक दत्तात्रेय दूसरे दुर्वासा और इन दोनों से छोटी एक ब्रह्मवादिनी व अतिसुशीला कन्या भी भई उसके दो गोत्रों में श्याव, प्रत्वस, ववल्गु और गह्वर ये चार प्रसिद्ध पुरुष भये और इन चारोंसे आत्रेयों के चार पक्ष भये। कश्यप, नारद, पर्वत और अनुद्रत ये चार मानस पुत्र ब्रह्माजीके हैं। नारदजीने वशिष्ठजी को अरुन्धती ब्याही। तारकासुर के युद्ध में सब लोक अनावृष्टि से पीड़ित भये तब वशिष्ठजी ने अन्न, जल, फल, मूल, ओषधी आदि से प्रजा की रक्षा की। वशिष्ठ जीने अरुन्धती में शक्ति आदि सौ पुत्र उत्पन्न किये और अदृश्यन्ती नाम भार्या में शक्ति से पराशर नामक पुत्र उत्पन्न भये। शक्तिको तो रुधिर नाम राक्षसने भक्षण करलिया। पराशरसे सत्यवतीमें विष्णुजी के अवतार श्रीवेदव्यासजी उत्पन्न भये। वेदव्यासजी से अरणी में शुकदेव और उपमन्यु भये। शुकदेवजी से पीवरी में भूरिश्रवा, प्रभु, शम्भु, कृष्ण, गौर और कीर्तिमती नाम कन्या उत्पन्न भई जो अणुहको ब्याही गई और बड़ा प्रतापी जिसका पुत्र ब्रह्मदत्त भया। श्वेत, कृष्ण, गौर, श्याम, धूम्र, अरुण, नील और वादरिक ये आठ पराशर के

पक्ष भये। अब इन्द्रप्रमितिकी उत्पत्ति सुनो वशिष्ठजी से घृताचीनाम अप्सरा में कपिञ्जल उत्पन्न भया उसी को त्रिमूर्ति और इन्द्रप्रमिति भी कहते हैं। पृथुकी कन्या में भद्र उत्पन्न भया। भद्रके वसु और वसुके पुत्र उपमन्यु भये और उपमन्यु का वंश औपमन्यव कहाया। वशिष्ठ से उत्पन्नहुये कौडिन्य और एकार्षिय सब वाशिष्ठ कहाये। ये दश पक्ष वशिष्ठजी के भये। ये ब्रह्माजी के दश मानस पुत्रों के वंश हमने वर्णन किये। इनकेही पुत्र पौत्रों से सब जगत् व्याप्त होरहा है॥

चौंसठवां अध्याय॥

ऋषि पूछते हैं कि हे सूतजी! वशिष्ठजी के पुत्रों को राक्षस ने क्यों भक्षण किया यह आप वर्णन करें। ऐसा सुन सूतजी कहने लगे कि हे मुनीश्वरो! विश्वामित्र मुनि के शाप से वशिष्ठजी के यजमान कल्माषपाद नामक राजा के शरीर में प्रवेश करके रुधिर नामक राक्षस विश्वामित्रजी की ही प्रेरणा से शक्ति आदि वशिष्ठजी के सौ पुत्रों को भक्षण करगया। वशिष्ठजी भी यह वृत्तान्त सुन अरुन्धतीसहित हा पुत्र! हा पुत्र! इस प्रकार विलाप करते हुये मूर्च्छित हो भूमि पर गिरपड़े और मूर्च्छा खुलने पर अतिदुःखी हो वंश नष्ट भया जान प्राणत्याग करने के लिये पर्वत के शिखरपर चढ़ भूमिपर गिरे। वशिष्ठजी को गिरते देख पृथ्वीने स्त्री का रूप धार उनको अपने करकमलोंमेंही लिया भूमिपर न गिरने दिया। इसी अवसर में शक्ति की स्त्री आकर

वशिष्ठजी से कहनेलगी कि महाराज! आप शरीर न त्यागें। मेरे गर्भ में बालक है वह आपका पौत्र सब कार्य सिद्ध करनेहारा उत्पन्न होगा उसीपर आप सन्तोष करें और इस शरीर को त्याग न करें इतना कह अपने श्वशुरको उठाया और जल लेकर नेत्र धोये व इसी भांति अरुन्धती का भी आश्वासन किया इस भांति स्नुषा का वाक्य सुन चैतन्य हो फिरभी अरुन्धती सहित विलाप करनेलगे तबतो शक्तिकी पत्नी अदृश्यन्ती के गर्भ में जो बालक था उसने एक ऋचा पढ़ी जिस भांति विष्णुजी के नाभिकमल में ब्रह्माजी पढ़ते हैं वह सुन वशिष्ठजी विचार करनेलगे कि यह वेद की ऋचा किसने पढ़ी इस अवसर में विष्णुभगवान् ने आकाश में स्थित होकर वशिष्ठजी से कहा कि हे पुत्र, वशिष्ठ! यह ऋचा तेरे पौत्र ने पढ़ी है हमारे तुल्य शक्तिमान् तुम्हारे पौत्र उत्पन्न होगा इसलिये शोक मत करो रुद्र का भक्त तुम्हारा पौत्र होगा और रुद्रपूजा के प्रभाव से ही तुम्हारे कुल का उद्धार होगा इतना कह भगवान् वहांही अन्तर्धान भये। वशिष्ठजी भी भगवान् को प्रणाम कर अपनी स्नुषा के उदर को स्पर्श करते भये और फिर अपने पुत्रों का स्मरणकर विलाप करनेलगे कि हे पौत्र! तू शीघ्र आव तेरा मुख देख हम अरुन्धती सहित अपने पुत्र शक्तिके पास जावें। ऐसा वशिष्ठजी का वचन सुन उनकी स्नुषा भी दुःख से अपना पेट पीटने लगी और विलाप करती हुई भूमि पर गिरपड़ी तब तो वशिष्ठजी और अरुन्धती ने उसको उठाया और

कहने लगे कि हे मूढे! तू इस भांति गर्भाशय ताड़न कर वशिष्ठ के कुलका संहारही किया चाहती है तेरे पुत्र का मुख देखने की आशासेही हमने यह शरीर धार रक्खा है इसलिये तू सब प्रकारसे इस बालक की रक्षाकर॥

सूतजी कहतेहैं कि हे मुनीश्वरो! इसभांति अपनी स्नुषाको उपालम्भ दिया और कहा कि हम दोनों का तथा इस गर्भ में स्थित बालक का जीवन तेरे आधीन है इसलिये हे पतिव्रते! तू अपने शरीर की रक्षा भली भांति कर इतना सुन अदृश्यन्ती कहने लगी कि महाराज! जो मेरे शरीर की रक्षा से ही आप कल्याण समझते हैं तो मैं इस दुःखभागी अमङ्गल शरीरकी यथाकथंचित् रक्षा करूंगी परन्तु पतिके वियोगसे मेरा हृदय दग्ध होगयाहै बड़ा आश्चर्य है कि साक्षात् ब्रह्माजीके पुत्र आप और आपकी स्नुषाको इतना दुःख प्राप्तहोय अब आपही मेरी रक्षा करें पिता, माता, पुत्र, पौत्र, श्वशुर आदि कोई भी पतिके तुल्य सुख देनेहारा नहीं होता है। परिडत लोग कहते हैं कि पुरुष का आधा देह नारी होती है यहभी मुझे मिथ्याही देखपड़ता है क्योंकि आपके पुत्र शक्ति तो परलोक को गये और मैं मन्दभागिनी यहांही दुःख भोगरहीहूं मेरे प्राण बड़े कठिनहैं जो पति विना क्षणमात्र भी रहें इस भांति स्नुषा के विलाप सुन वशिष्ठजी ने अपने आश्रममें आने का विचार किया और अरुन्धती तथा अदृश्यन्ती को साथ ले किसी प्रकार अपने आश्रममें पहुँचे और अदृश्यन्ती भी अपने वंशके उद्धारके [illegible] गर्भकी भली भांति रक्षा

करनेलगी दशवें महीने में उसके पुत्र उत्पन्न भया जिस प्रकार अरुन्धती के गर्भमें शक्ति अदितिसे विष्णु और स्वाहासे स्कन्द उत्पन्न भये इसी प्रकार यह बालक भी बड़ा तेजस्वी उत्पन्न भया। पुत्र उत्पन्न होतेही शक्ति भी दुःख से छूट पितरों के तुल्य भया और पितृलोकमें अपने भाइयों सहित सुखसे निवास करनेलगा सब पितर और मुनि नृत्य करनेलगे स्वर्गसे देवताओं ने पुष्पवृष्टि की जिस भांति अण्ड से ब्रह्माजी उत्पन्न भये अथवा मेघों से सूर्य भगवान् निकले इसी प्रकार वह बालक भी बड़ा चमत्कारी भया और नाम उसका पराशर रक्खा। उस बालक के देखने से और शक्तिका स्मरण होने से अरुन्धती और अदृश्यन्ती को सुख दुःख साथही भये और दोनों विलाप करनेलगीं कि हे वशिष्ठ के पुत्र! तू कहां गया इस अपने पुत्रका कमल तुल्य मुख देख इस प्रकारके विलाप सुन वशिष्ठजी ने उनको समझाया और अपनी स्नुषा से कहा कि शोक दूर कर इस बालक का पालन करो। ऐसी वशिष्ठजीकी आज्ञा पाकर अदृश्यन्तीभी सब दुःख भूल अपने पुत्र के पालन करने में सावधान भई। एकदिन वह बालक भूषणों के विना अपनी माताको देख कहनेलगा कि हे माता! ये तुम्हारे अङ्ग भूषणों के विना शोभित नहीं होते हैं क्या कारण है कि विधवा की भांति तुमने सब भूषण त्याग रक्खे हैं इसका कारण मुझसे कहो। ऐसा पुत्रका वचन सुन अदृश्यन्ती ने शुभ अशुभ कुछ भी न कहा। तब फिर पराशरने कहा कि हे माता! मेरे पिता

कहां हैं तू मुझे क्यों नहीं बताती। तबतो अदृश्यन्ती ने कहा कि हे पुत्र! तेरे पिता को राक्षसने भक्षण कर लिया इतना कह व्याकुल हो भूमिपर गिरी वशिष्ठ और अरुन्धती और उस आश्रम में रहनेहारे सब मुनि उस बालकका वचन सुन विलाप करने लगे। यह सुन पराशरने अपनी माता से कहा कि हे माता! शोक मत कर देवताओं के प्रभु श्रीशिवजी का आराधन कर मैं अपने पिता का दर्शन तुमको कराऊंगा और त्रैलोक्य को दग्ध करूंगा। यह सुन प्रसन्न हो उसकी माता ने कहा कि हे पुत्र! जो ऐसा होसक्ताहै तो तू अभी सदाशिवके आराधन का आरम्भकर तब वशिष्ठजी ने कहा कि हे पुत्र! राक्षसों का नाश होने के लिये तप कर त्रैलोक्य ने तेरा क्या अपराध किया है। ऐसा अपने पितामह का वचन सुन पराशर अपनी माता और वशिष्ठ तथा अरुन्धती को प्रणाम कर एकान्त में जाय मृत्तिकाका शिवलिङ्ग बनाकर शिवसूक्त, त्र्यम्बक, त्वरित, रुद्र, शिवसङ्कल्प, नीलरुद्र, रुद्र, वामीय, पवमान, होता, लिङ्गसूक्त और अथर्वशिर आदि वैदिक मन्त्रों से यथाविधि श्रीमहादेवजी का पूजनकर अष्टाङ्ग अर्घ्य देकर श्रीमहादेवजी से पराशर मुनि प्रार्थना करनेलगे कि हे नाथ! रुधिर नामक दैत्य ने मेरे पिताको उनके भाइयों सहित भक्षण करलिया अब मैं अपने पिता तथा उनके सौ भाइयोंका दर्शन किया चाहताहूं इतनी प्रार्थना कर हा रुद्र! हा रुद्र! इस प्रकार कहताहुआ भूमिपर व्याकुल हो गिरपड़ा और अश्रुपात करता हुआ रोने

लगा। उस बालक की ऐसी दशा देख श्रीमहादेवजी ने जगज्जननी श्रीपार्वतीजी से कहा कि देखो यह बालक अतिभक्ति से मेरा स्मरण और आराधन कररहा है। पार्वतीजीने भी उस बालक को देखा कि अश्रुपात से नेत्र व्याकुल होरहे हैं और हा रुद्र! हा रुद्र! कहरहाहै तब श्रीमहादेवजीसे कहा कि महाराज! आप इस बालकपर अनुग्रह करें और जो यह मांगता है इसको देवें। श्रीसदाशिवजी ने कहा कि हे पार्वती! यह बालक हमारा दर्शन करने के योग्य है इसलिये इसको दर्शन देना चाहिये। इतना कह महादेव पार्वती उस बालक के समीप जाकर दर्शन देते भये। वह भी महादेवजी का दर्शन पाकर आनन्दमें मग्नहो उनके चरणों पर गिरा। फिर पार्वतीजी और नन्दीके चरणों को प्रणामकर प्रार्थना करनेलगा कि महाराज! मेरे तुल्य देव व दानव कोई भी नहीं आज मैं सबसे अधिकहूं कि मेरी रक्षाके लिये साक्षात् आपने अनुग्रह किया मेरा जन्म सफल है। इसी अवसर में सूर्यमण्डल के तुल्य प्रकाशवान् विमान पर बैठे हुये उनके भाइयों करके सहित अपने पिताको देखा और बारबार प्रणामकर पराशर अतिमुदित भया। महादेव जीने शक्तिमुनि से कहा कि हे वशिष्ठ के पुत्र! अपने माता, पिता, पुत्र और स्त्री को देखो। ऐसी महादेवजी की आज्ञा पाकर शक्तिमुनि वशिष्ठजी को तथा अपनी माता अरुन्धती को प्रणाम करते भये और पराशर से कहने लगे कि हे पुत्र! तू बड़ा महात्मा है तैंने मेरी रक्षा की। आज तेरा मुख देख सब अणिमादि सिद्धि

मानो मुझे मिलीं। तूने सब कुल का उद्धार किया। अब तू हमारी आज्ञा से अपनी माता तथा अरुन्धती और वशिष्ठजी की सेवा में तत्परहो और इनकी सब भांति रक्षा कर। श्रेष्ठ पुरुषों ने कहा है कि पुत्र के जन्म से उत्तमलोक मिलते हैं सो ठीकही है। अब सब जगत् के स्वामी श्रीमहादेवजी से तू अपना अभीष्ट वर मांग और हम भी परमेश्वर को प्रणाम कर अपने भाइयों समेत उत्तम लोकको जाते हैं। इतना अपने पुत्र पराशरसे कह अपनी स्त्री को आश्वासन कर माता पिता और श्रीमहादेवजी को प्रणाम कर शक्तिमुनि कैलास को पधारे और पराशरने भी भक्ति से स्तुतिकर महादेव जीको प्रसन्न किया व महादेवजी भी प्रसन्न हो उनको वर दे वहांही अन्तर्धान भये। महादेवजी के अन्तर्धान होने के अनन्तर मन्त्र के सामर्थ्य से पराशर राक्षसों के कुलको दग्ध करने लगा। तब उससे वशिष्ठजी ने कहा कि हे पुत्र! इस क्रोध को त्याग राक्षसों का कुछ अपराध नहीं है। तेरे पिता का यही भावी था। हे पुत्र! कौन किसको मारसक्ता है सब अपनी अपनी प्रारब्ध के अनुसार सुख दुःख आदि पाते हैं। मूढ़ों को ही अधिक क्रोध होता है बुद्धिमान् कभी क्रोधवश नहीं होते हैं क्योंकि बड़े बड़े कष्टों से संचित किये हुये तप और यश को क्रोध नाश करदेता है इसलिये राक्षसों के संहार करनेहारे इस यज्ञ को समाप्त करो राक्षस निरपराधी हैं और साधु पुरुष क्षमावान् हुआ करते हैं। इतना वशिष्ठजी से सुन पराशर मुनि ने राक्षसों के

संहार करने से अपने चित्तको हटाया और वशिष्ठजी भी उनपर बहुत प्रसन्न भये। इसी अवसर में वहां पुलस्त्य मुनि आये वशिष्ठजी ने उनका बहुत सत्कार किया और उत्तम आसनपर बैठाया। थोड़ीदेर विश्राम कर पुलस्त्य जीने पराशर मुनिसे कहा कि हे पुत्र! इस बड़े भारी वैर में भी तूने वशिष्ठजी के वचन से क्षमा की और हमारे पुत्र राक्षसों का संहार न किया इस कारण से हम बहुत प्रसन्नहैं अब हम तुमको वर देते हैं पुराण संहिता करने की तुमको सामर्थ्य होगी और देवताओं का परमार्थ तुम ठीक ठीक जानोगे और कर्म की प्रवृत्ति तथा निवृत्ति में तुम्हारी बुद्धि निर्मल और निःसंदेह रहेगी। यह सुन वशिष्ठजीने भी पराशरसे कहा कि पुलस्त्यजी जैसा कहते हैं वैसाही होगा पराशर मुनि भी इस भांति वशिष्ठ और पुलस्त्यजी का अनुग्रह पाय विष्णुपुराण रचते भये जो सब पुरुषार्थ देनेहारा वेदार्थ करके युक्त चौथा पुराण गिना गया और जिसके छह अंश और छह हज़ारही श्लोक हैं। हे मुनीश्वरो! यह हमने वशिष्ठों की उत्पत्ति संक्षेप से वर्णन की और शक्तिके पुत्र पराशरका प्रभावभी सुनाया अब आप क्या सुनना चाहते हैं सो कहें॥

पैंसठवां अध्याय॥

शौनकादि ऋषि कहते भये कि हे सूतजी! अब आप सूर्यवंश और चन्द्रवंश का वर्णन कीजिये। ऐसा मुनियों का वचन सुन सूतजी कहने लगे कि

हे मुनीश्वरो ! अदितिके पुत्र आदित्य भये उनको संज्ञा, राज्ञी, प्रभा और छाया ये चार स्त्री ब्याही गईं । इनमें त्वष्टा की कन्या संज्ञामें मनु उत्पन्न भये और राज्ञी में यम और यमुना तथा रैवत व प्रभाके प्रभात भया और छाया के पुत्र सावर्णि, शनि और तपती तथा विष्टि ये दो कन्या भईं । छाया अपने पुत्रसे भी अधिक स्नेह मनु में रखती थी परन्तु यमको क्षमा न होती थी और मनु सब बातों में क्षमा किया करता था । एक दिन छाया को मनु से स्नेह करते देख यमराज को बड़ा क्रोध भया और एक लात छाया के मारी । छायाने भी उसको शाप दिया उससे यमराजका एक चरण गल गया और कृमि पड़गये । तब यमराजने अतिदुःखी हो गोकर्ण-क्षेत्र में जाकर जलका फेन और वायुही पान करके कई हजार वर्षतक तप किया और श्रीशंकरजीका आराधन किया । महादेवजी ने भी प्रसन्न हो विमाता के शाप से यमराज को मुक्तकर पितरोंका स्वामी और लोकपाल बनाया । त्वष्टाकी कन्या सूर्य भगवान् का तेज न सह सकी तब अपनी छाया की एक दूसरी स्त्री रचकर सूर्य भगवान् के समीप रक्खी और आप घोड़ी का रूप धार तप करने चलीगई । कुछ दिनमें सूर्य भगवान् भी यह माया जान अश्व का रूप धार संज्ञाके समीप गये और उससे संग किया तब देवताओं के वैद्य अश्विनी कुमार दो उत्पन्न भये । संज्ञा के पिता त्वष्टाने सूर्य भगवान् को भ्रमियन्त्र अर्थात् खराद पर चढ़ाकर उनका अधिक तेज छीनलिया और उसी तेज से सुदर्शनचक्र

रचा जो शिवजी के अनुग्रह से विष्णु भगवान् को मिला। सूर्य भगवान् के प्रथम पुत्र मनु के नव पुत्र इक्ष्वाकु, सुद्युम्न, धृष्णु, शर्याति, नरिष्यन्त, नाभाग, अरिष्ट, करूष और पृषध्र भये। इला नाम कन्या वशिष्ठजीकी कृपा से पुरुष भई और उसका नाम सुद्युम्न भया वह शरवण में गया और शिवजीकी आज्ञासे चन्द्र-वंशकी वृद्धि के लिये फिर स्त्री होगया। इक्ष्वाकु के अश्व-मेध करके इला किंपुरुष भया अर्थात् एक महीना पुरुष बना रहता और एक महीना स्त्री होजाता था। चन्द्रमा का पुत्र बुध उसको देख अतिमोहित भया और अपने घरमें इलाको रक्खा उसमें परम शिवभक्त पुरूरवा नाम पुत्र उत्पन्न भया जिससे चन्द्रवंश चला। सुद्युम्न के तीन पुत्र उत्कल, गय और विनताश्व भये। उत्कल के नाम से उत्कल देश बसा व विनताश्व ने पश्चिम में अपना राज्य जमाया और पितरों को मुक्ति देनेहारी गयापुरी गयने बसाई। मनुका बड़ा पुत्र इक्ष्वाकु मध्यदेश का राजा भया। सुद्युम्न को कन्या होजाने से राज्य का पूरा भाग न मिला किन्तु वशिष्ठजी की आज्ञा से केवल प्रतिष्ठानपुर में थोड़ासा राज्य मिला उसे उसने अपने पुत्र पुरूरवा को दे दिया। इक्ष्वाकु के सौ पुत्र भये उनमें सबसे बड़ा विकुक्षि था। विकुक्षि के पन्द्रह पुत्रों में ज्येष्ठ पुत्र ककुत्स्थ भया। ककुत्स्थ का सुयोधन, सुयोधन का पृथु, पृथु का विश्वक, विश्वक का आर्द्रक, आर्द्रक का युवनाश्व और युवनाश्व का पुत्र श्रावस्त भया। जिसने गौड़देश में अपने नाम से श्रावस्ती नाम नगरी

बसाई। श्रावस्त का पुत्र वंशक, वंशक का बृहदश्व, बृहदश्व का कुवलयाश्व भया जिसका दूसरा नाम धुन्धुदैत्य के मारने से धुन्धुमार भी भया। धुन्धुमार के बड़े पराक्रमी तीन पुत्र दृढाश्व, चण्डाश्व और कपिलाश्व भये। दृढाश्व का पुत्र प्रमोद, प्रमोद का हर्यश्व, हर्यश्व का निकुम्भ, निकुम्भ का संहताश्व भया। संहताश्व के कृशाश्व और रणाश्व ये दो पुत्र भये। रणाश्व का पुत्र युवनाश्व और युवनाश्व का मान्धाता भया। मान्धाता के पुरुकुत्स, अम्बरीष और मुचुकुन्द ये तीन पुत्र भये। अम्बरीष का पुत्र दूसरा युवनाश्व भया और युवनाश्व का पुत्र हरित भया। पुरुकुत्स का पुत्र नर्मदा में त्रसद्दस्यु नाम उत्पन्न भया, त्रसद्दस्यु का संभूति, संभूति का पुत्र विष्णुवृद्ध भया और दूसरा पुत्र अनरण्य भया जिसको दिग्विजय के समय रावणने मार दिया। अनरण्य का पुत्र बृहदश्व और बृहदश्व [illegible] हर्यश्व और हर्यश्व से दृषद्वती में वसु[illegible] राजा उत्पन्न भया। वसुमना के त्रिधन्[illegible] नामक पुत्र भया जो ब्रह्माजीके पुत्र तण्डिऋषिका शिष्य होकर उनकी आज्ञा से हज़ार अश्वमेधका फल पाकर शिवजी का गण भया त्रिधन्वाको चिन्ता भई कि मुझे अश्वमेध कौन करावे तब उसको ब्रह्माजीके पुत्र तण्डिऋषि मिले जो ब्रह्माजीके कहे हुये सहस्रनाम से शिवजीको प्रसन्नकर उनके गण होगये हैं वही सहस्रनाम उन्होंने राजा सुधन्वा को भी उपदेश किया राजा भी उसके जपसे शिवजी का गण भया॥

शौनक आदि ऋषि पूछते हैं कि हे सूतजी! जो

सहस्रनाम तण्डिने राजा को उपदेश किया वह आप कृपाकर हमकोभी सुनावें। सूतजी बोले कि हे मुनीश्वरो! सम्पूर्ण जीवों के आत्मभूत श्रीसदाशिव का अष्टोत्तर सहस्रनाम हम आपको श्रवण कराते हैं जिसको पढ़ने वाला अवश्यही शिवजी का गण होता है॥

ॐ स्थिरः स्थाणुः प्रभुर्भानुः प्रवरो वरदो वरः। सर्वात्मा सर्वविख्यातः शर्वः सर्वकरो भवः॥ जटी दण्डी शिखण्डी च सर्वगः सर्वभावनः १ हरिश्च हरिणाक्षश्च सर्वभूतहरस्स्मृतः। प्रवृत्तिश्च निवृत्तिश्च शान्तात्मा शाश्वतो ध्रुवः २ श्मशानवासी भगवान् खचरो गोचरोऽर्दनः। अभिवाद्यो महाकर्मा तपस्वी भूतधारणः ३ उन्मत्तवेषप्रच्छन्नः सर्वलोकः प्रजापतिः। महारूपो महाकायः सर्वरूपो महायशाः ४ महात्मा सर्वभूतश्च विरूपो वामनो नरः। लोकपालोऽन्तर्हितात्मा प्रसादो भयदो विभुः ५ पवित्रश्च महांश्चैव नियतो नियताश्रयः। स्वयम्भूः सर्वकर्मा च आदिरादिकरो निधिः ६ सहस्राक्षो विशालाक्षः सोमो नक्षत्रसाधकः। चन्द्रः सूर्यः शनिः केतुर्ग्रहो ग्रहपतिर्मतः ७ राजा राज्यो दयाकर्ता मृगबाणार्पणो घनः। महातपा दीर्घतपा अदृश्यो धनसाधकः ८ संवत्सरः कृतो मन्त्रः प्राणायामः परन्तपः। योगी योगो महाबीजो महारेता महाबलः ९ सुवर्णरेतास्सर्वज्ञः सुबीजो वृषवाहनः। दशबाहुस्त्वनिमिषो नीलकण्ठ उमापतिः १० विश्वरूपः स्वयंश्रेष्ठो बलवीरो बलाग्रणीः। गणकर्ता गणपतिर्दिग्वासाः काम्य एव च ११ मन्त्रवित्परमो मन्त्रः सर्वभावकरो हरः। कमण्डलुधरो

धन्वी बाणहस्तः कपालवान् १२ शरी शतघ्नी खड्गी च पट्टिशी चायुधी महान्। अजश्च मृगरूपश्च तेजस्तेजस्करो निधिः १३ उष्णीषी च सुवक्त्रश्च उदग्रो विनतस्तथा। दीर्घश्च हरिकेशश्च सुतीर्थः कृष्ण एव च १४ शृगालरूपः सर्वार्थो मुण्डः सर्वशुभङ्करः। सिंहशार्दूलरूपश्च गन्धकारी कपर्द्यपि १५ ऊर्ध्वरेताश्चोर्ध्वलिङ्गी ऊर्ध्वशायी नभस्तलः। त्रिजटी चीरवासाश्च रुद्रः सेनापतिर्विभुः १६ अहोरात्रं च नक्तं च तिग्ममन्युः सुवर्चसः। गजहा दैत्यहा कालो लोकधाता गुणाकरः १७ सिंहशार्दूलरूपाणामार्द्रचर्माम्बरन्धरः। कालयोगी महानादः सर्वावासश्चतुष्पथः १८ निशाचरः प्रेतचारी सर्वदर्शी महेश्वरः। बहुभूतो बहुधनः सर्वसारोऽमृतेश्वरः १९ नृत्यप्रियो नित्यनृत्यो नर्तनः सर्वसाधकः। सकार्मुको महाबाहुर्महाघोरो महातपाः २० महाशरो महापाशो नित्यो गिरिचरो मतः। सहस्रहस्तो विजयो व्यवसायो ह्यनिन्दितः २१ अमर्षणो मर्षणात्मा यज्ञहा कामनाशनः। दक्षहा परिचारी च प्रहसो मध्यमस्तथा २२ तेजोऽपहारी बलवान् विदितोऽभ्युदितो बहुः। गम्भीरघोषो योगात्मा यज्ञहा कामनाशनः २३ गम्भीररोषो गम्भीरो गम्भीरबलवाहनः। न्यग्रोधरूपो न्यग्रोधो विश्वकर्मा च विश्वभुक् २४ तीक्ष्णोपायश्च हर्यश्वः सहायः कर्मकालवित्। विष्णुः प्रसादितो यज्ञः समुद्रो वडवामुखः २५ हुताशनसहायश्च प्रशान्तात्मा हुताशनः। उग्रतेजा महातेजा जयो विजयकालवित् २६ ज्योतिषामयनं सिद्धिः सन्धिर्विग्रह एव च। खड्गी शङ्खी जटी

ज्वाली खचरो द्युचरो बली २७ वैणवी पणवी काल कालकण्ठः कटंकटः। नक्षत्रविग्रहो भावो निभाव सर्वतोमुखः २८ विमोचनस्तु शरणं हिरण्यः कवचो-द्भवः। मेखलाकृतिरूपश्च जलाचारस्स्तुतस्तथा २९ वीणी च पणवी ताली नाली कलिकटुस्तथा। सर्वतूर्य-निनादी च सर्वव्याप्यपरिग्रहः ३० व्यालरूपी बिला-वासी गुहावासी तरङ्गवित्। वृक्षः श्रीमालकर्मा च सर्व-सङ्गविमोचनः ३१ बन्धनस्तु सुरेन्द्राणां युधि शत्रुविना-शनः। सखाप्रवासो दुर्वापः सर्वसाधुनिषेवितः ३२ प्रस्क-न्दोऽप्यविभावश्च तुल्यो यज्ञविभागवित्। सर्ववासः सर्वचारी दुर्वासा वासवो मतः ३३ हैमो हेमकरो यज्ञः सर्वधारी धरोत्तमः। आकाशो निर्विरूपश्च विवासा उरगः खगः ३४ भिक्षुश्च भिक्षुरूपी च रौद्ररूपः सुरूप-वान्। वसुरेताः सुवर्चस्वी वसुवेगो महाबलः ३५ मनो-वेगो निशाचारः सर्वलोकशुभप्रदः। सर्वावासी त्रयी-वासी उपदेशकरोधरः ३६ मुनिरात्मा मुनिर्लोकः सभा-ग्यश्च सहस्रभुक्। पक्षी च पक्षरूपश्च अतिदीप्तो निशा-करः ३७ समीरो दमनाकारो ह्यर्थो ह्यर्थकरोवशः। वासु-देवश्च देवश्च वामदेवश्च वामनः ३८ सिद्धियोगाप-हारी च सिद्धः सर्वार्थसाधकः। अक्षुण्णः क्षुण्णरूपश्च वृषणो मृदुरव्ययः ३९ महासेनो विशाखश्च षष्टिभागो गवांपतिः। चक्रहस्तस्तु विष्टम्भी मूलस्तम्भन एव च ४० ऋतुर्ऋतुकरस्तालो मधुर्मधुकरोवरः। वानस्पत्यो वाज-सनो नित्यमाश्रमपूजितः ४१ ब्रह्मचारी लोकचारी सर्व-चारी सुचारवित्। ईशान ईश्वरः कालो निशाचारी

ह्यनेकदृक् ४२ निमित्तस्थो निमित्तं च नन्दिर्नन्दिकरो हरः। नन्दीश्वरः सुनन्दी च नन्दनो विषमर्दनः ४३ भगहारी नियन्ता च कालो लोकपितामहः। चतुर्मुखो महालिङ्गश्चारुलिङ्गस्तथैव च ४४ लिङ्गाध्यक्षः सुराध्यक्षः कालाध्यक्षो युगावहः। बीजाध्यक्षो बीजकर्ता अध्यात्मानुगतोबलः ४५ इतिहासश्च कल्पश्च दमनो जगदीश्वरः। दम्भो दम्भकरो दाता वंशो वंशकरः कलिः ४६ लोककर्ता पशुपतिर्महाकर्ता ह्यधोक्षजः। अक्षरं परमं ब्रह्म बलवाञ्छुक्र एव च ४७ नित्यो ह्यनीशः शुद्धात्मा शुद्धो मानो गतिर्हविः। प्रसादस्तु बलो दर्पो दर्पणो हव्यमिन्द्रजित् ४८ वेदकारः सूत्रकारो विद्वांश्च परमर्दनः। महामेघनिवासी च महाघोरो वशीकरः ४९ अग्निज्वालो महाज्वालः परिधूम्रावृतो रविः। विषयः शंकरो नित्यो वर्चस्वी धूम्रलोचनः ५० नीलस्तस्थाङ्गलुप्तश्च शोभनो नरविग्रहः। स्वस्ति स्वस्तिस्वभावश्च भोगी भोगकरो लघुः ५१ उत्सङ्गश्च महाङ्गश्च महागर्भः प्रतापवान्। कृष्णवर्णः सुवर्णश्च इन्द्रियः सर्ववर्णिकः ५२ महापादो महाहस्तो महाकायो महायशाः। महामूर्धा महामात्रो महामित्रो नगालयः ५३ महास्कन्धो महाकर्णो महोष्ठश्च महाहनुः। महानासो महाकण्ठो महाग्रीवः श्मशानवान् ५४ महाबलो महातेजा ह्यन्तरात्मा मृगालयः। लम्बितोष्ठश्च निष्ठश्च महामायः पयोनिधिः ५५ महादन्तो महादंष्ट्रो महाजिह्वो महामुखः। महानखो महारोमा महाकेशो महाजटः ५६ असपत्नः प्रसादश्च प्रत्ययो गीतसाधकः। प्रस्वेदनो

ऽस्वेदनश्च आदिकश्च महामुनिः ५७ वृषको वृषकेतुश्च अनलो वायुवाहनः । मण्डली मेरुवासश्च देववाहन एव च ५८ अथर्वशीर्षः सामास्यः ऋक्सहस्रोर्जितेक्षणः । यजुःपादोभुजो गुह्यः प्रकाशौजास्तथैव च ५९ अमोघार्थ-प्रसादश्च अन्तर्भाव्यः सुदर्शनः । उपहारप्रियः सर्वः कनकः काञ्चनस्थितः ६० नाभिर्नन्दिकरो हर्म्यः पुष्करः स्थपतिस्थितः । सर्वशास्त्रो धनश्चाद्यो यज्ञो यज्वा समाहितः ६१ नगा नीलः कपिः कालो मकरः कालपूजितः । सगणो गणकारश्च भूतभावनसारथिः ६२ भस्मशायी भस्मगोप्ता भस्मभूततनुर्गणः । आगमश्च विलोपश्च महात्मा सर्वपूजितः ६३ शुक्लः स्त्रीरूपसम्पन्नः शुचिर्भूत-निषेवितः । आश्रमस्थः कपोतस्थो विश्वकर्मा पतिर्विराट् ६४ विशालशाखस्ताम्रोष्ठो ह्यम्बुजाक्षः सुनिश्चितः । कपिलः कलशः स्थूल आयुधश्चैव रोमशः ६५ गन्धर्वो ह्यदितिस्तार्क्ष्यो ह्यविज्ञेयः सुशारदः । परश्वधायुधो देवो ह्यर्थकारी सुबान्धवः ६६ तुम्बिवीणो महाकोप ऊर्ध्वरेता जलेशयः । उग्रो वंशकरो वंशो वंशवादी ह्यनिन्दितः ६७ सर्वाङ्गरूपी मायावी सुहृदो ह्यनिलो बलः । बन्धनो बन्धकर्ता च सुबन्धनविमोचनः ६८ राक्षसघ्नोऽथ कामारिर्महादंष्ट्रो महायुधः । लम्बितो लम्बितोष्ठश्च लम्बहस्तो वरप्रदः ६९ बहुस्त्वनिन्दितः सर्वशंकरोऽथाप्यकोपनः । अमरेशो महाघोरो विश्वदेवः सुरारिहा ७० अहिर्बुध्न्यो निर्ऋतिश्च चेकितानो हली तथा । अजैकपाच्च कापाली शंकुमारो महागिरिः ७१ धन्वन्तरिर्धूमकेतुः सूर्यो वैश्रवणस्तथा । धाता विष्णुश्च शक्रश्च मित्रस्त्वष्टा धरो ध्रुवः ७२

प्रवासः पर्वतो वायुरर्यमा सविता रविः। धृतिश्चैव विधाता च मान्धाता भूतभावनः ७३ नीरस्तीर्थश्च भीमश्च सर्वकर्मा गुणोद्वहः। पद्मगर्भो महागर्भश्चन्द्रवक्त्रो नभोऽनघः ७४ बलवांश्चोपशान्तश्च पुराणः पुण्यकृत्तमः। क्रूरकर्ता क्रूरवासी तनुरात्मा महौषधः ७५ सर्वाशयः सर्वचारी प्राणेशः प्राणिनांपतिः। देवदेवः सुखोत्सिक्तः सदसत्सर्वरत्नवित् ७६ कैलासस्थो गुहावासी हिमवद्गिरिसंश्रयः। कुलहारी कुलकर्ता बहुवित्तो बहुप्रजः ७७ प्राणेशो बन्धकीवृक्षो नकुलश्चाद्रिकस्तथा। ह्रस्वग्रीवो महाजानुरलोलश्च महौषधिः ७८ सिद्धान्तकारी सिद्धार्थश्छन्दो व्याकरणोद्भवः। सिंहनादः सिंहदंष्ट्रः सिंहास्यः सिंहवाहनः ७९ प्रभावात्मा जगत्कालः कालः कम्पी तरुस्तनुः। सारङ्गो भूतचक्राङ्कः केतुमाली सुवेधकः ८० भूतालयो भूतपतिरहोरात्रो मलोऽमलः। वसुभृत्सर्वभूतात्मा निश्चलः सुविदुर्बुधः ८१ असुहृत्सर्वभूतानां निश्चलश्चलविद्बुधः। अमोघः संयमो हृष्टो भोजनः प्राणधारणः ८२ धृतिमान्मतिमांस्त्र्यक्षः सुकृतस्तु युधांपतिः। गोपालो गोपतिर्ग्रामी गोचर्मवसनो हरः ८३ हिरण्यबाहुश्च तथा गुहावासः प्रवेशनः। महामना महाकामो चित्तकामो जितेन्द्रियः ८४ गान्धारश्च सुरापश्च तापकर्मरतोहितः। महाभूतो भूतवृत्तो ह्यप्सरोगणसेवितः ८५ महाकेतुर्धराधातानेकतानरतः स्वरः। अवेदनीय आवेद्यः सर्वगश्च सुखावहः ८६ तारणश्चारणो धाता विधाता परिपूजितः। संयोगी वर्धनो वृद्धो गणकोऽथ गणाधिपः ८७ नित्यो धाता सहायश्च देवासुरपतिः

पतिः। युक्तश्च युक्तबाहुश्च सुदेवोऽपि सुपर्वणः ८८ आषाढश्च सुषाढश्च स्कन्ददो हरितो हरः। वपुरावर्त्तमानोऽन्यो वपुः श्रेष्ठो महावपुः ८९ शिरोविमर्शनः सर्वलक्ष्यलक्षणभूषितः। अक्षयो रथगीतश्च सर्वभोगी महाबलः ९० साम्नायोऽथ महाम्नायस्तीर्थदेवो महायशाः। निर्जीवो जीवनो मन्त्रो सुभगो बहुकर्कशः ९१ रत्नभूतोऽथ रत्नाङ्गो महार्णवनिपातवित्। मूलं विशालो ह्यमृतं व्यक्ताव्यक्तस्तपोनिधिः ९२ आरोहणोऽधिरोहश्च शीलधारी महातपाः। महाकण्ठो महायोगी युगो युगकरो हरिः ९३ युगरूपो महारूपो वहनो गहनो नगः। न्यायो निर्वापणोऽपादः पण्डितो ह्यचलोपमः ९४ बहुमालो महामालः शिपिविष्टः सुलोचनः। विस्तारो लवणः कूपः कुसुमाङ्गः फलोदयः ९५ ऋषभो वृषभो भङ्गो मणिबिल्वजटाधरः। इन्दुर्विसर्गः सुमुखः शूरः सर्वायुधः सहः ९६ निवेदनः सुधाजातः स्वर्गद्वारो महाधनुः। गिरिवासो विसर्गश्च सर्वलक्षणलक्षवित् ९७ गन्धमाली च भगवाननन्तः सर्वलक्षणः। संतानो बहुलो बाहुः सकलः सर्वपावनः ९८ करस्थाली कपाली च ऊर्ध्वसंहननो युवा। यन्त्रतन्त्रसुविख्यातो लोकः सर्वाश्रयो मृदुः ९९ मुण्डो विरूपो विकृतो दण्डी कुण्डी विकुर्वणः। वार्यक्षः ककुभो वज्री दीप्ततेजाः सहस्रपात् १०० सहस्रमूर्धा देवेन्द्रः सर्वदेवमयो गुरुः। सहस्रबाहुः सर्वाङ्गः शरण्यः सर्वलोककृत् १०१ पवित्रं त्रिमधुर्मन्त्रः कनिष्ठः कृष्णपिङ्गलः। ब्रह्मदण्डविनिर्माता शतघ्नः शतपाशधृक् १०२ कलाकाष्ठालवोमात्रामुहूर्तोऽहः क्षपाक्षणः। विश्वक्षेत्रप्रदो बीजं

लिङ्गमाद्यस्तु निर्मुखः १०३ सदसद्व्यक्तमव्यक्तं पितामाता पितामहः। स्वर्गद्वारं मोक्षद्वारं प्रजाद्वारं त्रिविष्टपः १०४ निर्वाणं हृदयश्चैव ब्रह्मलोकः परागतिः। देवासुरविनिर्माता देवासुरपरायणः १०५ देवासुरगुरुर्देवो देवासुरनमस्कृतः। देवासुरमहामात्रो देवासुरगणाश्रयः १०६ देवासुरगणाध्यक्षो देवासुरगणाग्रणीः। देवाधिदेवो देवर्षिर्देवासुरवरप्रदः १०७ देवासुरेश्वरो विष्णुर्देवासुरमहेश्वरः। सर्वदेवमयोऽचिन्त्यो देवतात्मा स्वयंभवः १०८ उद्गतस्त्रिक्रमो वैद्यो वरदो वरजोम्बरः। इज्यो हस्ती तथा व्याघ्रो देवसिंहो महर्षभः १०९ विबुधाग्र्यः सुरश्रेष्ठः स्वर्गदेवस्तथोत्तमः। संयुक्तः शोभनो वक्ता आशानां प्रभवोऽव्ययः ११० गुरुः कान्तो निजः सर्गः पवित्रः सर्ववाहनः। शृङ्गी शृङ्गप्रियो बभ्रू राजराजो निरामयः १११ अभिरामः सुशरणो निरामः सर्वसाधनः। ललाटाक्षो विश्वदेहो हरिणो ब्रह्मवर्चसः ११२ स्थावराणां पतिश्चैव नियतेन्द्रियवर्त्तनः। सिद्धार्थः सर्वभूतार्थोऽचिन्त्यः सत्यशुचिव्रतः ११३ व्रताधिपः परंब्रह्म मुक्तानां परमागतिः। विमुक्तो मुक्तकेशश्च श्रीमाञ्छ्रीवर्धनो जगत् ॥ ११४ ॥ इति नामसहस्रं समाप्तम् ॥

सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो! त्रिधन्वा राजाको इस प्रकार सहस्रनामका उपदेशकर तण्डिमुनि कहते भये कि हे राजन्! उन यज्ञपति सदाशिवकी हमने भक्ति से यह स्तुति की और यह स्तोत्र हमने ब्रह्माजी से पाया इतना कह राजाको मुनिने सहस्रनामका उपदेश किया राजाभी सहस्रनाम के मिलतेही जगत् में विख्यात भया और

दशहज़ार अश्वमेधके फलको प्राप्त हो मुनिके प्रभाव से शिवजी का गण होताभया इस स्तोत्र को जो पढ़े सुने अथवा ब्राह्मणों को सुनावे वह निश्चय सहस्र अश्वमेध का फल पावे ब्रह्महत्या करनेहारा, मद्यप, गुरुस्त्रीगामी, सुवर्णका चोर, शरणमें आयेका घात करनेहारा, माता पिताका घातक और गर्भहत्या करनेवाला इसी प्रकार और भी घोर पापों का करनेवाला पुरुष श्रीमहादेवजी का पूजनकर तीन काल इस सहस्रनाम को एकवर्ष पर्यन्त जपै तो सब पापके जालसे छूट शिवलोकमें बास करे॥

छासठवां अध्याय॥

सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो! इस भांति तण्डि ऋषि के अनुग्रह से हज़ार अश्वमेध का फल प्राप्त कर राजा त्रिधन्वा तो शिवजी का गण होगया और त्र्यया-रुण नाम उसका पुत्र राज्य करने लगा। त्र्यय्यारुण का पुत्र सत्यव्रत भया। वह एक समय विदर्भदेश के राजा को मार उसकी स्त्री को हरलाया। राजकुमार से किये इस पाप को देख राजा त्र्यय्यारुण ने उसका त्याग कर दिया तब तो वह व्याकुल हुआ और हाथ जोड़ अपने पिता से बिनती की कि महाराज! पाप तो मुझसे बन पड़ा और आपने मुझे दण्ड भी यथार्थही दिया कि मेरा त्याग किया। परन्तु अब मैं कहां जाऊं यह आप आज्ञा देवें। राजा ने उसका ऐसा वचन सुन कहा कि रे दुष्ट! नगर के बाहर चाण्डालों में जाकर निवास कर। वह भी पिताकी आज्ञा पाय नगर के बाहर जाय कुटी

बनाय चाण्डालों में रहने लगा। राजा भी विरक्त हो राज्य छोड़ तप करने के लिये वन को गया इसी अवसर में विश्वामित्र मुनि आये और राज्य सूना देखउसी सत्यव्रत को अभिषेक कर राजा बनाया और सब देवता तथा वशिष्ठजी के देखतेही उससे अश्वमेध यज्ञ कराया और अपने प्रभाव से स्वर्ग को पठाया उसी का दूसरा नाम त्रिशङ्कु है। केकयदेश के राजा की कन्या सत्यव्रता नाम त्रिशङ्कु की रानी थी उससे बड़ा प्रतापी हरिश्चन्द्र नाम राजा उत्पन्न भया। हरिश्चन्द्र का पुत्र रोहित, रोहित का हरित, हरित का धुन्धु भया। धुन्धु के विजय और सुतेजा ये दो पुत्र भये। बड़े पुत्रने सब राजाओं को जीता इससे उसका नाम विजय भया। विजय का पुत्र रुचक, रुचक का वृक, वृकका बाहु और बाहुका पुत्र परम धर्मात्मा राजा सगर भया। सगर की प्रभा और भानुमती ये दो रानियां थीं इन्होंने पुत्रकी कामनासे और्व अग्नि का आराधन किया तब अग्निके तुल्य और्वऋषि ने भी प्रसन्न हो उनको वर दिया। उनके वरसे प्रभा के साठ हजार पुत्र भये और भानुमती के वंश का करनेहारा एकही पुत्र भया। वे साठ हजार तो पृथ्वी खोदते हुए विष्णु के अवतार कपिलजी की हुंकार से दग्ध भये। भानुमती का पुत्र असमञ्जस नाम राजा भया। असमञ्जस का पुत्र अंशुमान्, अंशुमान् का पुत्र दिलीप और दिलीप का पुत्र भगीरथ भया। जो बड़ा उग्र तप कर भारतवर्ष में गङ्गा को लाया। भगीरथ का पुत्र श्रुत, श्रुत का [illegible] परम पवित्र शिवभक्त नाभाग नामक हुआ।

नाभाग का अम्बरीष, अम्बरीष का सिन्धुद्वीप पुत्र भया। इनके राज्य में प्रजा बहुत सुखी रही। सिन्धुद्वीप का पुत्र अयुतायु, अयुतायु का ऋतुपर्ण पुत्र भया जो राजा नल का परम मित्र था। पुराणों में दो नल प्रसिद्ध हैं। एक तो निषध देश के राजा वीरसेन का पुत्र, दूसरा इक्ष्वाकुके वंशमें भया ऋतुपर्णका पुत्र प्रजेश्वर सार्वभौम भया। उसका पुत्र इन्द्र के समान सुदास भया। सुदास का पुत्र मित्रसह भया जिसका नाम कल्माषपाद भी है। कल्माषपाद की रानी में अश्मक नाम पुत्र वशिष्ठजी ने उत्पन्न किया। अश्मक से रानी उत्तरा में मूलक नाम पुत्र भया जो परशुरामजी के भय से सदा रानियोंमें ही रहा करताथा। मूलकका पुत्र दशरथ, दशरथका शतरथ, शतरथका इलविल, इलविलका वृद्धशर्मा, वृद्धशर्मा का विश्वसह, विश्वसहका पुत्र दिलीप भया जिसका दूसरा नाम खट्वाङ्ग है और जिसने मुहूर्त भर आयुष् पाय स्वर्गसे आय तीन अग्नि और तीन लोक बुद्धि तथा सत्यकरके जीते। खट्वाङ्गका पुत्र दीर्घबाहु, दीर्घबाहुका रघु, रघु का अज, अजका दशरथ और दशरथ केपुत्र बड़े प्रताप[illegible] धर्मात्मा राम, लक्ष्मण, भरत और शत्रुघ्न ये चा[illegible]ये। इनमें सबसे बड़े रामचन्द्र बड़े तेजस्वी और प[illegible] भये जो युद्धमें रावणको मार दश हजार वर्षतक [illegible]राज्य करते भये और जिन्हों ने अश्वमेधादि अनेक [illegible] किये। रामचन्द्रके पुत्र कुश और लव ये दो भये। कुशक[illegible] अतिथि, अ[illegible]थि का निषध, निषधका नल, नलका [illegible], नभका पुण्डरीक, पुण्ड-

रीकका क्षेमधन्वा, क्षेमधन्वा का देवानीक, देवानीक का अहीनर, अहीनर का सहस्राश्व, सहस्राश्व का चन्द्राव-लोक, चन्द्रावलोक का तारापीड़, तारापीड़ का चन्द्रगिरि, चन्द्रगिरि का भानुचन्द्र, भानुचन्द्र का श्रुतायु, श्रुतायुका बृहद्बल पुत्र भया। जो भारतके घोरसंग्राम में अर्जुन के पुत्र अभिमन्यु के हाथ से मारागया। ये इक्ष्वाकुवंश के प्रधान प्रधान राजा वर्णन किये हैं। ये सब अनेक यज्ञ कर और पाशुपतयोग पाय स्वर्ग को गये। अब इस वंश के और भी कई राजाओं का वर्णन करते हैं। राजा नृग ब्राह्मणके शापसे कृकलास अर्थात् गिरगिट होगया। उसके तीन पुत्र धृष्ट, धृष्टकेतु और रणधृष्ट भये। राजा शर्याति के पुत्र आनर्त और सुकन्या नाम पुत्री भई। आनर्त का पुत्र रोचमान, रोचमान का रेव, रेवके रैवत और ककुद्मी ये दो पुत्र भये। ककुद्मी की कन्या रेवती भई जो बलदेवजीको व्याहीगई। नरिष्यन्त का पुत्र महाबली जितात्मा भया। और नाभागका पुत्र परम विष्णुभक्त अम्ब-रीष भया। अम्बरीष का ऋत, ऋतका कृत, कृत का पृषत भया। करूषकी संतति कारुष कहाई। पृषतने अपने गुरु च्यवनकी धेनु धोखे से मारदी इस लिये ऋषिके शापसे शूद्र होगया। दिष्टका पुत्र नाभाग, नाभाग का भलन्दन, भलन्दन का पुत्र अजवाहन भया। ये हमने संक्षेप से मनुके पुत्र पौत्र वर्णन किये। येही इक्ष्वाकु के भी पुत्र पौत्र हैं। अब चन्द्रवंशी पुरूरवा का वंश वर्णन करते हैं।

इला का पुत्र पुरूरवा जिसका हम प्रथम वर्णन कर चुके हैं वह यमुनाके उत्तरकी ओर प्रयाग के समीप

अपनी राजधानी प्रतिष्ठानपुरमें रहकर निष्कएटक राज्य करता भया। उसके सात पुत्रथे आयु, मायु, अमायु, विश्वायु, सत्यायु, श्रुतायु और शतायु—ये सातों गन्धर्व-लोकमें प्रसिद्ध परमशिवभक्त उर्वशी नाम अप्सरासे उत्पन्न भये थे। आयुष् से स्वर्भानुकी कन्या प्रभामें नहुष आदि पांच पुत्र भये। इनमें सबसे बड़ा नहुष बड़ा धर्मात्मा और जगद्विख्यात भया। नहुषके छह पुत्र याति, ययाति, संयाति, आयाति, विजाति और अन्धक पितरोंकी कन्या विरजासे भये। ये भी बड़े वीर और कीर्ति-मान् थे इनमें से याति तो ज्ञान पाय मुक्तभया और ययाति ने शुक्राचार्य की कन्या देवयानी और वृषपर्वा नाम दैत्यकी कन्या शर्मिष्ठा ब्याही उनमें यदु और तुर्वसु दो पुत्र देवयानी से भये। ये दोनों बड़े धर्मनिष्ठ और सब विद्याओं के पारगामी थे। द्रुह्यु, अणु और पूरु ये शर्मिष्ठा से उत्पन्न भये, ययाति ने तप कर शक्रको प्रसन्न किया शक्रने भी प्रसन्न हो उत्तम अश्वों करके युक्त सुवर्ण का रथ और दो तूणीर जिन में बाण रखते हैं ययाति को दिये। उस रथके प्रभावसे छह महीनेमें सब पृथ्वी को ययातिने जीता। ययाति परम शिवभक्त जितक्रोध धर्म-निष्ठ और सब जीवोंपर दया करनेहारा था। वह शक्र का दिया रथ ययातिके वंश में राजा जनमेजय तक चलाआया और जनमेजयके समय गर्गके शापसे वह रथ जातारहा। गर्गऋषिके बालक पुत्र अक्रूरको जनमे-जयने मारदिया उसकी ब्रह्महत्या लगने से शरीर में रुधिर का गन्ध आनेलगा और हत्या करके पीड़ित सब

पृथ्वी पर भटका परन्तु कहीं चैन न मिली और सब प्रजाने भी उसको त्याग दिया तब व्याकुल हो शौनक ऋषि के शरण में गया जिस ऋषिका दूसरा नाम इन्द्रोति भी है। इन्द्रोति ने हत्या दूर होने के अर्थ राजासे अश्वमेधयज्ञ करवाया तब राजा के शरीर का दुर्गन्ध और ब्रह्महत्या निवृत्त भई। वह रथ भी इन्द्रने प्रसन्न हो चेदिदेश के राजा वसुको दिया, उससे बृहद्रथ ने लिया, बृहद्रथको दबाय जरासन्ध उस रथको हरलाया। जरासन्ध से भीमसेनने वह रथ पाया और भीमसेनने प्रसन्न होकर वह रथ श्रीकृष्णचन्द्र को दिया। ययाति ने अपने पुत्र पूरु का उपकार समझ उसीको राज्य देदिया। राजा ययाति जब पूरुका अभिषेक करने लगा तब ब्राह्मण आदि सब वर्णों ने राजासे कहा कि शुक्रके दौहित्र और धर्मात्मा बड़े पुत्र यदुको छोड़कर छोटे पुत्र पूरुको आप राज्य क्योंकर देते हो आप धर्म पर चलें अन्याय न करें॥

सरसठवां अध्याय॥

सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो! यह अपनी प्रजाका वचन सुन राजा ययाति बोले कि बड़े पुत्रको हम राज्य न देंगे क्योंकि उसने हमारी आज्ञा नहीं मानी जो माता पिताकी आज्ञा माने वही पुत्र उत्तम होता है। यदु आदि चारों पुत्रों ने मेरी आज्ञा भंग की केवल सब से छोटे पूरुने मेरा वचन माना। हमने शुक्राचार्य से युवावस्था प्राप्त होने के लिये प्रार्थना की तब उन्होंने यह कहा कि

अपनी वृद्धता एक पुत्र को देदो और उसकी तरुणता तुम लेलो और जो पुत्र तुम्हारी वृद्धता को ग्रहण करेगा वही राज्य का अधिकारी होगा इसलिये शुक्राचार्य के वर से और मेरी इच्छा से पूरुकोही राजा होना उचित है इसमें तुम सब भी सम्मति देदो। ऐसा राजा का वचन सुन प्रजा ने कहा कि महाराज! जो पिता माता की आज्ञा माने वही पुत्र सब कल्याण पाता है चाहे छोटा हो चाहे बड़ा इसलिये आपकी आज्ञा मानने से और शुक्राचार्य के वरदान से आप पूरुकाही राज्याभिषेक कीजिये हम सब बहुत प्रसन्न हैं। ऐसा प्रजा का वचन सुन राजा ने मुख्य राज्य तो पूरुको दिया व दक्षिणदिशा का राजा यदुको बनाया व अग्निकोण का अधिकार तुर्वसु को दिया और पश्चिम तथा उत्तर दिशा के स्वामी द्रुह्य और अनु बनाये। इस भांति सात द्वीपों करके युक्त सम्पूर्ण पृथ्वी राजा ययाति ने पुत्रोंको बांट दी अर्थात् राज्यके तीन भाग करदिये मध्य का मुख्य राज्य पूरुको दिया, दक्षिण पूर्वका राज्य देवयानी के पुत्रों को और उत्तर पश्चिमका राज्य शर्मिष्ठा के पुत्रों को दिया इसभांति राजाने पुत्रोंको राज्य का भार देकर आप स्वस्थचित्त हो यह गाथा गाई॥

न जातु कामः कामानामुपभोगेन शाम्यति। हविषा कृष्णवर्त्मेव भूय एवाभिवर्धते १॥ अर्थ॥ जो कदाचित् यह समझो कि विषयोंको भलीभांति भोग लेवें तब तृप्ति होजाने से आत्मा विषयों से आपही निवृत्त होजावेगा ऐसा कभी नहीं होसक्ता जिसभांति घृतकी आहुति से

अग्नि अधिक प्रज्ज्वलित होता है इसीभांति विषय भोग करने से उनमें अधिक अधिक इच्छा होती जाती है कभी तृप्ति नहीं होती इसलिये विचार करके पहिले सेही विषयों में आसक्त न होना चाहिये ॥

यत्पृथिव्यां व्रीहियवं हिरण्यं पशवः स्त्रियः। नालमेकस्य तत्सर्वमिति मत्वा शमं व्रजेत् २ ॥ अर्थ ॥ पृथ्वी में जो धन, धान्य, पशु, स्त्री आदि पदार्थ हैं सबके सब जो एकही पुरुषको मिलजायँ तोभी वह तृप्त न होगा यही इच्छा बनी रहेगी कि कुछ और भी मिले इसलिये ईश्वरकी कृपा से जितना मिलजाय उतने परही सन्तोष रखना उचित है ॥

यदा न कुरुते भावं सर्वभूतेषु पापकम् । कर्मणा मनसा वाचा ब्रह्म संपद्यते तदा ३ ॥ अर्थ ॥ जब पुरुष मन, वचन, कर्म करके किसीका अनिष्टचिन्तन नहीं करता तब उसको ब्रह्मकी प्राप्ति होती है ॥

यदा पराञ्च बिभेति परे चास्मान्न बिभ्यति। यदा न निन्देन्न द्वेष्टि ब्रह्म संपद्यते तदा ४ ॥ अर्थ ॥ जब यह पुरुष किसीसे न डरे और न कोई जीव इससे डरे और किसीसे द्वेष और किसीकी निन्दा न करे तब उसको ब्रह्मसंपत्ति होती है ॥

या दुस्त्यजा दुर्मतिभिर्या न जीर्यति जीर्यतः। योऽसौ प्राणान्तको रोगस्तां तृष्णां त्यजतः सुखम् ५ ॥ अर्थ ॥ जिस तृष्णा को दुर्बुद्धि पुरुष कभी नहीं त्याग सकते और जो मनुष्यका शरीर जीर्ण होजानेपर भी जीर्ण नहीं होती प्रत्युत अधिक बढ़ती है और जो प्राणोंके अन्त तक

रहनेवाला रोग है उस तृष्णाकेही त्याग से सुख मिलता है दूसरा सुखप्राप्ति का कोई उपाय नहीं है ॥

जीर्यन्ति जीर्यतः केशा दन्ता जीर्यन्ति जीर्यतः । चक्षुःश्रोत्रे च जीर्येते तृष्णैका निरुपद्रवा ६ ॥ अर्थ ॥ वृद्धावस्था में पुरुष के केश, दन्त, आंख, कान आदि सब जीर्ण होजाते हैं परन्तु तृष्णाके कोई उपद्रव नहीं होता वह तो प्रतिदिन तरुणही होती जाती है ॥

यच्च कामसुखं लोके यच्च दिव्यं महत्सुखम् । तृष्णाक्षयसुखस्यैते नार्हतः षोडशीं कलाम् ७ ॥ अर्थ ॥ संसार में जो काम सुख है और स्वर्ग आदिकों में जो बहुत उत्तम दिव्य सुख है ये दोनों सुख तृष्णाके क्षय होजाने से मनुष्य को जो सुख मिलता है उसकी सोलहवीं कला की भी तुल्यता नहीं कर सक्ते हैं ॥

जीर्यन्ति देहिनः सर्वे स्वभावादेव नान्यथा । जीविताशा धनाशा च जीर्यतोऽपि न जीर्यति ८ ॥ अर्थ ॥ सब जीवों के शरीर कुछ काल के अनन्तर स्वभाव से ही जीर्ण होजाते हैं परन्तु जीवन और धनकी आशा जीर्ण नहीं होती मरणपर्यन्त तरुण बनी रहती है ॥

इतनी कथा कह कर राजा ययाति अपनी रानी समेत वनको गया और वहां भृगुतुङ्ग पर्वत पर बहुत काल तप कर अनशनव्रत से देह त्याग स्वर्ग को जाता भया । राजा ययाति के पुत्रों से पांच वंश चले जिनसे यह सब पृथ्वी व्याप्त भई राजा ययाति के चरित को जो पुरुष सुने वह धन, धान्य, सन्तान और

कीर्ति पावे और सब पापों से छूट कर अन्त में शिव-लोक को जावे ॥

अरसठवां अध्याय ॥

सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो! अब हम संक्षेप से और क्रम करके यदु के वंशका वर्णन करते हैं आप श्रवण करें। यदु के पांच पुत्र सहस्रजित, क्रोष्टु, नील, अजक और लघु भये। सहस्रजित् का पुत्र शतजित् और शतजित् के हैहय, हय और वेणुहय ये तीन पुत्र भये। हैहय का पुत्र धर्म, धर्म का धर्मनेत्र, धर्मनेत्र का कीर्ति, कीर्ति का सञ्जय, सञ्जय का महिष्मान्, महिष्मान् का भद्रश्रेण्य, भद्रश्रेण्य का दुर्दम, दुर्दम का धनक, धनक के कृतवीर्य, कृताग्नि, कृतवर्मा और कृतौजा ये चार पुत्र भये इनमें कृतवीर्य का पुत्र हजार भुजाओं करके युक्त सम्पूर्ण पृथ्वी का स्वामी और बड़ा प्रतापी अर्जुन नामक भया जो विष्णु के अवतार श्रीपरशुरामजी के हाथ से मृत्यु पाय स्वर्ग में अक्षयवास करता भया उसके सौ पुत्र भये उनमें शूर, शूरसेन, धृष्ट, कृष्ण और जय-ध्वज ये पांच मुख्य थे और बड़े प्रतापी धर्मात्मा और वीर थे इनमें जयध्वज अवन्तिदेश का राजा भया। जयध्वज का पुत्र तालजङ्घ और तालजङ्घ के सौ पुत्र भये उनमें सबसे बड़े का नाम वीतिहोत्र था और वीतिहोत्र से छोटा वृष था। उनमें वंश वृष काही चला। वृष का पुत्र मधु भया व मधु के वृष्णि आदि सौ पुत्र भये। ये वंश यदुके नामसे यादव, मधुके नामसे माधव,

वृष्णिके नामसे वार्ष्णि कहाये और ये हैहयभी कहाते हैं। हैहय के पांचगण अर्थात् समूह भये वीतिहोत्र, हर्यात, भोज, आवन्तिक और शूरसेन और तालजङ्घ भी इनमें ही गिनेगये। शूर, शूरसेन, वृष, कृष्ण और जयध्वज ये पांच हैहयों में मुख्य भये। शूरसेन के नाम से शूरसेन देश कहाया। वीतिहोत्र का पुत्र नर्त और कृष्ण का पुत्र दुर्जय भया। अब क्रोष्टुका वंश श्रवण करो जिसमें साक्षात् विष्णु श्रीकृष्णचन्द्र उत्पन्न भये। क्रोष्टुका एक व्रजिनीमान् नामक पुत्र भया। व्रजिनीमान्का स्वाती और स्वाती का पुत्र कुशंकु भया। कुशंकु ने सन्तानके अर्थ बहुत से यज्ञ किये तब उसके बड़ा प्रतापी चित्ररथ नामक पुत्र भया और चित्ररथ का पुत्र बड़ा पराक्रमी चक्रवर्ती और बड़ा धर्मात्मा राजा शशबिन्दु भया। शशबिन्दु के हज़ारों पुत्र भये परन्तु उनमें अनन्तक सबसे बड़ा और मुख्य था। अनन्तक का पुत्र यज्ञ, यज्ञका धृति और धृतिका पुत्र उशना भया जिसने सौ अश्वमेध किये। उशनाका पुत्र सितेषु, सितेषुका मरुत, मरुतका कम्बलबर्हि, कम्बलबर्हिका रुक्मकवच पुत्र भया। जिसने बड़े बड़े योधाओं को मार सदा युद्ध में जय पाया और अश्वमेध यज्ञमें ऋत्विजों को दक्षिणा में सब पृथ्वी देदी। उस रुक्मकवच का पुत्र परावृत् भया और परावृत् के रुक्मेषु, पृथुरुक्म, ज्यामघ, परिघ और हरि ये पांचपुत्र भये। इनमें परिघ और हरि को पिता ने विदेहदेश के राजा बनाये और रुक्मेषु तथा पृथुरुक्मभी मिलके राज्य करनेलगे और

अपने भाई ज्यामघको इन सबने मिलकर राज्य से निकाल दिया इसलिये वह अपनी रानी समेत वन में जाय आश्रम बनाय मुनिलोगों के साथ निवास करने लगा परन्तु उसको सब मुनियोंने प्रेरणा की तब अपना धनुष ले रानी सहित रथमें बैठ वहांसे चला और नर्मदा के तट पर ऋक्षवान् पर्वत में अपनी राजधानी बनाय उसके चारों ओर अपना राज्य जमाया। कुछकाल के अनन्तर वृद्धावस्था में उसकी रानी शैव्या के विदर्भ नाम पुत्र उत्पन्न भया। विदर्भ से भोजकी कन्यामें क्रथ और कौशिक ये दो पुत्र उत्पन्न भये और तीसरा पुत्र रोमपाद नामक हुआ रोमपादका पुत्र बभ्रु, बभ्रुका पुत्र सुधृति, सुधृति का कौशिक भया जिससे चैद्यवंश चला और विदर्भका पुत्र जो क्रथ था उसका पुत्र कुन्ति भया कुन्तिका वृत्त, वृतका रणधृष्ट, रणधृष्ट का निधृति, निधृति का दशार्ह, दशार्हका व्याप्त, व्याप्त का जीमूत, जीमूत का विकृति, विकृति का भीमरथ, भीमरथका नवरथ, नवरथ का दृढ़रथ, दृढ़रथका शकुनि, शकुनिका करम्भ, करम्भ का देवरात, देवरातका देवराति अथवा देवक्षत्र, देवक्षत्र का मधु, मधुका कुरुवंशक, कुरुवंशक का अनु, अनुका पुरुत्वान्, पुरुत्वान् से विदर्भ देश के राजाकी पुत्री भद्रवती में अंशुनामक पुत्र भया। अंशु ने इक्ष्वाकुवंशके राजाकी कन्या ब्याही उससे सत्त्वनाम का पुत्र भया और सत्त्वसे सात्वत भया। यह हमने ज्यामघ के वंश का वर्णन किया इसको जो सुने अथवा पढ़े वह बहुत काल पर्यन्त राज्य सुखभोग कर अन्त में स्वर्ग में वास करे॥

उनहत्तरवां अध्याय ॥

सूतजी कहतेहैं कि हे मुनीश्वरो! सात्वतके चार पुत्र भजन, देवावृध, अन्धक और वृष्णि भये। भजन से शृञ्जयीनाम रानीमें अयुतायु, शतायु और हर्षकृत ये पुत्र उत्पन्न भये और देवावृधने उत्तम पुत्रकी प्राप्ति के लिये उग्र तप किया तब उसके सब गुणों करके युक्त बभ्रु नामक पुत्र भया अनुवंशपुराण जाननेहारे इनकी यों प्रशंसा करते हैं कि जैसा दूरसे सुनते थे वैसाही इनको देखा सब मनुष्यों में बभ्रु श्रेष्ठ है और देवावृध तो देवता ही है बभ्रु और देवावृध के जन्मसे छह हजार पैंसठ और आठ पुरुष उनके मुक्तिको प्राप्त भये। बभ्रु यज्ञ करनेहारा, दानी, वीर, ब्रह्मण्य, दृढ़व्रत, कीर्तिमान् और बड़ा तेजस्वी भया। उसके वंशमें ही देवताओं के तुल्य भोज उत्पन्न भये। वृष्णि की दो रानी थीं एक गान्धार देशके राजाकी कन्या, दूसरी मद्रदेश के राजा की पुत्री इनमें गान्धारी से सुमित्र नामक पुत्र उत्पन्न भया और माद्री से देवमीढुष, अनमित्र और शिनि ये तीन पुत्र भये। अनमित्र का पुत्र निघ्न और निघ्नके पुत्र प्रसेन और सत्राजित ये दो भये। इनमें सत्राजित सूर्य भगवान् का परमभक्त था इसलिये सूर्य भगवान् ने स्यमन्तक नाम मणि सत्राजित को प्रसन्न होकर दिया था जो मणि पृथ्वी के सब मणियों का राजा था। एक दिन अपने भाई प्रसेन के साथ सत्राजित आखेट अर्थात् शिकार खेलने गया परन्तु उसको वहांही सिंह

ने मारदिया वृष्णिका पुत्र शिनि और शिनिके सत्यक नाम पुत्र भया और सत्यकके युयुधान जिसको सात्यकि भी कहते हैं वह बड़ा प्रतापी भया । युयुधान का पुत्र असङ्ग, असङ्गका कुणि, कुणिका पुत्र युगन्धर भया यह शिनिका वंश है । वृष्णिके बड़े पुत्र देवमीढुष, देवमीढुष का पुत्र युधाजित् भया जिसको श्वफल्क भी कहते हैं । उसको काशीके राजाकी गान्दिनी नाम कन्या ब्याही गई । गान्दिनी अपनी माता के गर्भ से तीन वर्ष तक न निकली । तब उसके पिताने कहा तू कौन है शीघ्र गर्भके बाहर आव तब वह कन्या गर्भसे ही बोली कि जो आप तीन वर्ष तक एक गौ नित्य ब्राह्मण को देवें तो मैं गर्भके बाहर निकलूं ऐसा कन्याका वचन राजाने भी स्वीकार किया तब गान्दिनी का जन्म भया उसका पुत्र अक्रूर भया और शैब्यकी रत्नानाम कन्या अक्रूर को ब्याही गई इससे उपमन्यु, मांगु, वृत्त, जनमेजय, गिरिरक्ष, उपेक्ष, शत्रुघ्न, धर्मभृत्, धृष्टधर्मा, गोधन, वर, आवाह, प्रतिवाह इतने पुत्र और सुधारा नाम एक कन्या अक्रूर से उत्पन्न भई और अक्रूरकी दूसरी स्त्री उग्रसेनी में देववान् और उपदेव ये दो पुत्र उत्पन्न भये । सुमित्रका पुत्र चित्रक और चित्रक के विपृथु, पृथु, अश्वग्रीव, सुबाहु, सुधासुक, गवेक्षण, अरिष्टनेमि, अश्व, धर्म, धर्मभृत्, सुभूमि, बहुभूमि ये पुत्र और श्रविष्ठा तथा श्रवणा ये दो कन्या भईं । अन्धक से काश्यकी कन्या में कुकुर, भजमान, शुचि और कम्बलबर्हिष ये चारपुत्र उत्पन्न भये । इनमें कुकुरका पुत्र वृष्णि, वृष्णि का पुत्र

शूर, शूरका कपोतरोमा, कपोतरोमाका विलोमक, विलोमक का पुत्र नल भया जो तुम्बुरु गन्धर्वका परम मित्र था और जिसका नाम चन्द्रनानक दुन्दुभि भी था उसका पुत्र अभिजित्, अभिजित् का पुत्र पुनर्वसु भया। पुनर्वसु ने पुत्रप्राप्ति के लिये अश्वमेध किया उस यज्ञ से एक पुत्र और एक कन्या उत्पन्न भई जिनके नाम आहुक और आहुकी थे। काश्यकी पुत्री में आहुक से देवक और उग्रसेन ये दो पुत्र भये। देवक के देववान्, उपदेव, सुदेव, देवरक्षित ये चार पुत्र और वृषदेवा, उपदेवा, देवरक्षिता, श्रीदेवा, शान्तिदेवा, सहदेवा और देवकी ये सात कन्या भईं। इनमें देवकी सबसे उत्तम थीं ये सातों वसुदेव को ब्याही गईं। उग्रसेन के नव पुत्र भये उनमें कंस सबसे बड़ा और प्रतापी था। इनके पुत्र पौत्र हज़ारों भये। देवककी कन्या देवकी जो वसुदेवको ब्याही गई थी बड़ी पतिव्रता थी और पुरुवंश में उत्पन्न राजा बाह्लिक की कन्या रोहिणी भी वसुदेवको ब्याही थी इनमें रोहिणी के गर्भ से बलदेवजी उत्पन्न भये जो कंस के भय से देवकी का गर्भ छोड़ रोहिणी के गर्भ में आगये थे। बलदेवजी का जन्म होने के अनन्तर देवकी के छह गर्भ तो कंस ने मार दिये और सातवें गर्भ से श्रीकृष्ण का जन्म भया। श्रीकृष्ण साक्षात् परमात्मा हैं और बलदेवजी श्वेतवर्ण अनन्त का अवतार हैं भृगुशापके छल से भगवान् ने मनुष्यदेह धारण किया। भगवान्की इच्छासे ही पार्वतीजीका अंश कौशिकी देवी यशोदाकी कन्या भई वह साक्षात् प्रकृति और श्रीकृष्ण

पुरुष हैं। वसुदेव उस कन्या को तो देवकी के समीप ले आये और शङ्ख, चक्र, गदा, पद्म धारण किये चतुर्भुज श्रीकृष्णचन्द्र को कंसके भयसे यशोदा का दे आये और नन्दगोप से यह भी कहआये कि इस बालककी रक्षा भली भांति करना। उनके दर्शन से ही सबको यह निश्चय भया कि शिवजी की इच्छासे भूमि का भार उतारने को ये दोनों बालक आये हैं और साक्षात् जगत् के गुरु परमेश्वरका अवतार हैं। ये हमारे सब शत्रुओं का संहार करेंगे। वसुदेवजी ने भी कंस से कहा कि देवकी के कन्या उत्पन्न भई है। पहिले आकाशवाणी होचुकी थी कि हे कंस! देवकी के आठवें गर्भ से तेरी मृत्यु होगी। इसलिये बहुत शीघ्र उस कन्या को कंसने मारना चाहा परन्तु वह अष्टभुजी देवी कंसके हाथसे छूटकर आकाशमें जाय गम्भीरशब्द से कहनेलगी कि रे मूर्ख! तेरी मृत्यु आय पहुँची जो कुछ तुझसे रक्षा कीजाय कर। तेरा अन्त करनेहारा उत्पन्न होगया है। इतना कह वह तो अन्तर्धान भई और कंस भी श्रीकृष्ण भगवान् के मारने को बहुतेरे यत्न करने लगा परन्तु सब वृथा भये अन्त में श्रीकृष्ण के हाथ से ही मारा गया। इसभांति देवता और ब्राह्मणों के शत्रु और भी श्रीकृष्णचन्द्र ने बहुत मारे। श्रीकृष्ण भगवान् के प्रद्युम्न आदि बहुत पुत्र भये सबके सब श्रीकृष्णचन्द्र के तुल्य पराक्रमी और युद्ध में कुशल थे। सब पुत्रों में रुक्मिणीके पुत्र उत्तमथे सोलहहजार एकसौ आठरानी श्रीकृष्णचन्द्र के थीं। इन सबमें रुक्मिणी मुख्य थी रुक्मिणी सहित

श्रीकृष्णजी ने पुत्रप्राप्ति के लिये बारह वर्षपर्यन्त वायु भक्षण करके शिवजी का आराधन किया तब शिवजीने प्रसन्न हो चारुदेष्ण, चारु, चारुवेषय, यशोधर, चारुश्रवा, चारुयशा, प्रद्युम्न और साम्ब ये आठ पुत्र दिये। यह देख जाम्बवती नाम श्रीकृष्णजी की रानी ने कहा कि महाराज! जिस भांति रुक्मिणी के पुत्र उत्पन्न भये ऐसे मैं भी पुत्र की इच्छा रखती हूं आप मुझे भी पुत्र दीजिये। यह अपनी प्राणप्यारी जाम्बवतीका वचन सुन श्रीकृष्णचन्द्र उपमन्यु ऋषिके आश्रम में जाय उनसे पाशुपत योगका उपदेश पाय केश मुँड़वाय मूंज की मेखला और मृगछाला पहिन पाद के एक अंगुष्ठपर सब शरीर का भार धर दोनों भुजा ऊपरको खड़ीकर उग्र तप करने लगे और वायु तथा जलसे ही शरीर का निर्वाह करते इसप्रकार तप करतेकरते छह महीने व्यतीत भये तब शिवजी प्रसन्न भये और पुत्र होने का वर दिया तब जाम्बवती के बड़ा पराक्रमी साम्ब नामक पुत्र उत्पन्न भया वह भी पुत्रको पाय बड़ी हर्षित भई और शिवजी के शापित बाणासुर की हजार भुजा श्रीकृष्णचन्द्रने काटडालीं इसभांति और भी कई दैत्य और दुष्ट राजा श्रीकृष्णचन्द्रने तथा बलदेवजीने मारे और यज्ञवराह से उत्पन्न नरकासुर को मारा वायु तथा नारद के वरसे सौ ऊपर सोलह हजार राजकन्या व्याहीं। इस भांति भूमि का भार उतार ब्राह्मणों के शापके बहाने से अपने कुल का भी संहार किया और आप भी सौवर्ष पूरे होने के अनन्तर विश्वामित्र, कण्व, नारद और दुर्वासा का

शाप सत्य करने के लिये जरकनाम व्याध के बाण के छलसे श्रीकृष्णचन्द्र मनुष्यदेह को त्याग उस व्याध को साथ ले वैकुण्ठ को जाते भये और बलदेवजी नाग का रूप धार चलेगये। रुक्मिणी आदि प्रधान रानी तो श्रीकृष्णचन्द्र के साथ सती भईं और बाक़ी सब अष्टावक्र मुनिके शापसे और परमेश्वर की माया से चोरों ने लूटीं रेवती बलदेवजी के साथ सती भईं इसी अवसर में हस्तिनापुर से अर्जुन आय श्रीकृष्णचन्द्र तथा बलदेवजी का और्ध्वदेहिक कृत्य किया कोई द्रव्य न मिलनेसे कन्द मूल फल आदि करके उनके श्राद्ध किये औरभी सब यादवों का क्रियाकर्म कर अपने भाइयों हेत अर्जुन भी स्वर्ग को गये इस प्रकार श्रीकृष्ण की उत्पत्ति और लय हमने संक्षेप से वर्णन किया है यह सोमवंश के राजाओं का चरित जो सुने अथवा सुनावे वह निश्चय ही विष्णुलोक पावे॥

सत्तरवां अध्याय॥

शौनक आदि ऋषि पूछते हैं कि हे सूतजी! आपने पहिले आदिसर्ग का सूचनमात्र किया परन्तु सविस्तर वर्णन न किया इसहेतु अब आप विस्तार से वर्णन करें यह मुनियों का प्रश्न सुन सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो! वह परमात्मा, महेश्वर श्रीसदाशिव प्रकृति और पुरुष सेभी परे स्थित है उसीईश्वर से जगत् का कारण अव्यक्त उत्पन्न हुआ है जिसको सांख्यशास्त्रके जाननेहारे प्रधान और प्रकृति भी कहते हैं गन्ध, वर्ण, रस,

सङ्कल्प और अध्यवसाय ये दो वृत्ति हैं रजोगुण करके उद्रिक्त महत्तत्त्व से अहंकार उत्पन्न भया वह अहंकार और सर्ग बाहरसे महत्तत्त्व करके वेष्टित है तमोगुण करके उद्रिक्त अहंकार से भूत तन्मात्रा अर्थात् शब्द आदि गुण उत्पन्न भये वह तामस अहंकारही आकाश आदिकों का हेतु है अहंकार से शब्दतन्मात्र उत्पन्न भया शब्द-तन्मात्र से सुषिररूप आकाश भया शब्दलक्षण आकाश ने स्पर्शतन्मात्रा को समावरण किया उससे वायु उपजा वायुसे रूपतन्मात्र उत्पन्न भया रूपतन्मात्र से तेज तेज ने रसतन्मात्र को सिरजा जो सर्वरसात्मक जल भया जल से गन्धतन्मात्र और गन्धतन्मात्र से पृथ्वी उत्पन्न भई जिसका गुण गन्ध है शब्द आदि आकाशादिमात्र में रहते हैं इसलिये तन्मात्र कहाते हैं और ये शब्दादिक प्रशान्त घोर और मूढ़त्व से अर्थात् सात्त्विक, राजस और तामस होने से अविशेष कहाते हैं यह भूततन्मात्रा का सर्ग परस्पर जानना चाहिये वैकारिक अर्थात् राजस और सात्त्विक अहंकारसे सृष्टि युगपत् अर्थात् एकबारही प्रवृत्त होती है पांच बुद्धीन्द्रिय और पांच कर्मेन्द्रिय ये साधक हैं और इनके अधिष्ठाता दश देवता ये राक्षस सर्ग हैं और बुद्धीन्द्रिय तथा कर्मेन्द्रियरूप मन ग्यारहवां है श्रोत्र, त्वक्, चक्षु, जिह्वा और नासिका ये शब्द आदि विषयों का ग्रहण करने से बुद्धीन्द्रिय कहाते हैं पाद, पायु, उपस्थ, हस्त और वाणी ये पांच कर्मेन्द्रिय हैं और गति, विसर्ग, आनन्द, शिल्प और वाक्य ये इनके कर्म हैं शब्दमात्र आकाश स्पर्शतन्मात्रामें प्रविष्ट भया इस

लिये शब्द और स्पर्श ये दो वायुके गुण भये वायुरूप तन्मात्रामें प्रविष्ट भया इससे शब्द, स्पर्श और रूप ये तीन गुण तेजमें भये तेजने रसतन्मात्रा में प्रवेश किया इसलिये शब्द, स्पर्श, रूप और रस ये चार गुण जलके हैं जलने गन्धतन्मात्रा में प्रवेश किया इससे शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गन्ध ये पांचगुण पृथ्वीमें हैं इन सब में भूमि उत्तम है एकमें दूसरा प्रवेश कर ये सब परस्पर धारण करते हैं भूमिके भीतर लोकालोक पर्वतसे वेष्टित यह सृष्टि है शब्द स्पर्शादि नियत होने से विशेष भी कहाते हैं पहिले पहिले सर्गका गुण अगले अगले में प्राप्त होता है गन्धको जल में देखकर कोई गन्धको जलकाही गुण कहते हैं परन्तु गन्ध पृथ्वी काही गुण है ये सातों अर्थात् महत्तत्त्व, अहंकार और शब्द आदिक परस्पर आश्रय से और अव्यक्त के अनुग्रह से पुरुष करके अधिष्ठित अण्ड को उत्पन्न करते हैं वह अण्ड जल बुद्बुदकी भांति है और दशगुण जल करके चारों ओर घिरा है जल दशगुण तेज करके बाहर से व्याप्त है तेज दशगुण वायु करके, वायु दशगुण आकाश करके, आकाश अहंकार करके, अहंकार महत्तत्त्व करके और महत्तत्त्व अव्यक्त करके व्याप्तहै अण्डके कपालमें शिवहै, जलमें भव है, अग्निमें रुद्र, वायुमें उग्र, पृथ्वीमें भीम, अहंकारमें महेश्वर, महत्तत्त्वमें ईश और सर्वत्र परमेश्वर व्याप्त है इन सात प्राकृत आवरणों करके यह अण्ड चारों ओरसे घिराहै और आठों प्रकृति भी एक दूसरी का आवरण करके स्थित हैं और परस्पर उत्पन्न भई हैं

और परस्पर धारण करती हैं और प्रसर्ग अर्थात् प्रलय-काल में एक दूसरेको ग्रसलेती हैं महेश्वर अव्यक्तसे परे है और यह ब्रह्माण्ड अव्यक्त से उत्पन्न है अण्ड से वही परमेश्वर सूर्य्यके तुल्य प्रकाशमान प्रकट भया और सृष्टि करने की सामर्थ्य उसमें इच्छासे ही सिद्धहै उसने सबसे पहिले शरीर धारण किया और पुरुष कहाया उस के वामअङ्ग से लक्ष्मीसहित विष्णु और दक्षिण अङ्गसे सरस्वतीयुक्त ब्रह्मा उत्पन्न भये। इसी अण्ड में यह जगत् और चन्द्र, सूर्य, ग्रह, नक्षत्र, वायु आदिक हैं जितना सृष्टिका कालहै वह परमेश्वर का दिनहै और इतनी ही रात्रि है वही प्रलयकाल भी है वास्तव में तो परमेश्वर के न दिन है न रात्रि परन्तु लोकव्यवहार के लिये यह कल्पना है इन्द्रिय इन्द्रियों के अर्थ पञ्चभूत और देवताओं के सहित बुद्धि ये सब परमेश्वर के दिनमें तो वर्तमान रहते हैं और रात्रि में सब लीन होजाते हैं अव्यक्त जब सम्पूर्ण विश्वको अपने में स्थापित करलेता है और सब विकारोंका संहार होजाता है तब प्रकृति और पुरुष दोही रहजाते हैं ये दोनों सत्त्व, रज और तमो गुण करके युक्त और परस्पर ओतप्रोत अर्थात् मिलेहुये रहते हैं गुणोंकी तुल्यता में लय होता है और गुणों के न्यून अधिक होने से सृष्टि होती है जिसभांति तिलों में तेल और दूध में घृत रहता है इसी प्रकार यह जगत् तीनों गुणों में स्थित है जब वह रात्रि व्यतीत भई तब परमेश्वर ने फिर प्रकृति को क्षोभ किया तब उससे तीन देवता उत्पन्न भये ये देवता

शाश्वत शरीरी और परमगुह्य हैं येही तीन देवता तीन गुण तीन लोक और तीन अग्नि हैं ये तीनों परस्पर अर्थात् आपस में आश्रित हैं परस्पर धारण किये हैं परस्पर उपजीवन करते हैं और परस्पर मिथुन हैं अर्थात् एकका स्त्री पुरुषरूप जोड़ा दूसरे से उत्पन्न भया है और ये तीनों सदा इकट्ठे रहते हैं क्षणमात्रभी आपस में वियोग नहीं करते ईश्वर परदेव है और विष्णुभी महत् से पर हैं सृष्टि के आदि में रजोगुण करके ब्रह्मा प्रवृत्त होते हैं वह परपुरुष और प्रकृति महेश्वर करके अधिष्ठित होकर चारोंओर उद्यम से प्रवृत्त होते हैं और महान् भी इनके पीछे अपने विषय में आश्रित होकर प्रवृत्त होता है प्रधान में गुणों की विषमता से सबकी प्रवृत्ति होती है इस करके अधिष्ठित प्रधान से सर्गकार्य करने में समर्थ रुद्र होते हैं जिनके तुल्य तेजस्वी कोई नहीं वेही पहिले शरीरधारी हैं और उनकोही पुरुष कहते हैं उनसे चतुर्मुख ब्रह्मा उत्पन्न होते हैं वह एकही महादेव ब्रह्मा, विष्णु, रुद्ररूप से स्थित हैं उत्तम ज्ञान, ऐश्वर्य और वैराग्य करके ये युक्त हैं इनके मनकी जो जो इच्छा होती है वही अव्यक्त से उत्पन्न होता है उस स्वयम्भूकी तीन अवस्था हैं ब्रह्मा होकर जगत् को सिरजता है कालरूप से संहार करता है और पुरुष होकर उदासीन रहता है ब्रह्माजी का वर्ण कमल के गर्भके तुल्य है रुद्र कालाग्नि सरीखे हैं और परमात्मा का रूप पुरुष पुण्डरीकाक्ष है एक प्रकार दो प्रकार तीन प्रकार और बहुत प्रकारोंसे अनेक भांतिकी

आकृति क्रिया और नामों करके युक्त शरीर वह महेश्वर धारता है तीन शरीर धारने से लोकमें त्रिगुण कहाता है चार विभाग होनेसे चतुर्व्यूह कहते हैं प्राप्त करता है, ग्रहण करता है, विषयों को भोग करता है और जो इसका निरन्तर भाव है इसलिये इसको आत्मा कहते हैं सर्वगत होनेसे ऋषि, शरीर का स्वामी होने से प्रभु, सबमें प्रवेश करने से विष्णु, भगवद्भाव से भगवान्, निर्मल होनेसे शिव, उत्कृष्ट होने से परम अवन अर्थात् रक्षण से ॐ० सर्वज्ञान से सर्वज्ञ और सर्वमय होने से वह परमेश्वर सर्व कहाता है वह अपने तीनभाग करके सृष्टि, स्थिति और संहार करता है सबका आदि है इससे आदिदेव, न उत्पन्न होनेसे अज, प्रजाका पालन करने से प्रजापति, सब देवताओं में बड़ा होने से महादेव, सर्वव्यापक होने से और देवताओं के अवश्यत्व से ईश्वर, बृहत् होनेसे ब्रह्मा, भूतत्व से भूत, क्षेत्र के जानने से क्षेत्रज्ञ, एकाकी होने से, केवल पुरी में शयन करने से पुरुष, आदि होनेसे स्वयम्भू, यजन करने के योग्य होनेसे यज्ञ, व्यतीतके दर्शन से कवि, क्रमण करने के योग्य होनेसे क्रमण, पालन करने से पालक कहाता है । आदित्यसंज्ञक कपिल पहिला अग्नि है हिरण्य अर्थात् सुवर्ण उसके गर्भ में है अथवा हिरण्य के गर्भ से वह हुआ है इसलिये हिरण्यगर्भ कहाता है विश्वात्मा स्वयम्भू भगवान् का जितना काल व्यतीत होगया उस की संख्या सैकड़ों वर्षमें भी नहीं करसक्ते वर्तमान ब्रह्माका एक परार्ध अर्थात् आधा आयुष बीतचुका है

और आधा अवशिष्ट है वहभी व्यतीत होने पर प्रलय होगा करोड़ों कल्प अर्थात् ब्रह्माजी के दिन व्यतीत होगये और करोड़ों व्यतीत होंगे इस वर्तमान कल्पका वाराहकल्प नाम है इसमें स्वायम्भुव आदि चौदह मनु हैं सातद्वीपों करके युक्त सब पृथ्वीका पालन हज़ार युग पर्यन्त वेही करेंगे अब हम उनका विस्तारसे वर्णन करते हैं एक मन्वन्तरके वर्णनसे सब मन्वतरों का और एक कल्पके वर्णन करने से सब कल्पोंका वर्णन होजाता है वर्तमान मन्वन्तर और कल्पका वर्णन सुनकर अगले पिछले सब मन्वन्तर और कल्पोंका ज्ञान होसकता है प्रलयके समय पृथ्वी, सूर्य, चन्द्र, तारा आदि सब नष्ट होगये और चारों ओर जलही व्याप्त होगया उसमें सहस्रनेत्र, सहस्रशिर, सहस्रपाद, सुवर्णवर्ण नारायण नामक ब्रह्मा शयन करते भये कुछ काल के अनन्तर सत्त्वगुणकी वृद्धि होनेसे उनकी निद्रा खुली और सम्पूर्ण लोकको उनने शून्य देखा नार और नरसूनु ये दो नाम जलके हैं जल करके अपने अयन अर्थात् स्थानको पूर्ण कर उसमें शयन करते हैं इसीसे उनका नाम नारायण है हज़ार चतुर्युग के प्रमाणकी रात्रि व्यतीत होने पर सृष्टि करने की इच्छा भई और उस जलमें जिस भांति वर्षाऋतुकी अँधेरी रात में खद्योत उड़ता फिरे उसी भांति इधर उधर विचरने लगे और जाना कि पृथ्वी जल में मग्न होरही है तब उसके उद्धार करने की इच्छा की और पृथ्वी का उद्धार करने के लिये जलक्रीड़ा के योग्य वराहरूप धारण किया और रसातल में गये और

जलमें डूबीहुई भूमिको अपनी दंष्ट्रापर उठाया और लाकर अपने स्थान में स्थापन किया पृथ्वी भी नाव की भांति जलके ऊपर भगवान्की सत्तासे तिरने लगी तब भगवान् ने जगत्के स्थापन करने की इच्छा से पृथ्वी को बराबर किया सब ऊंचा नीचा भाग समान कर पर्वत बनाये पहिले कल्पमें जो भूमिके ऊपर पर्वत थे वे प्रलय की अग्नि करके भस्म होकर प्रलयकी वायुसे ही उड़गये थे इसलिये सब पर्वत अस्तव्यस्त होगये थे इससे नये रचे। न चलने से अचल पर्व करके पर्वत कहाये इसी प्रकार प्रतिकल्प में वह विश्वकर्मा परमेश्वर व्यवस्था करते हैं समुद्रों सहित और सात द्वीपों करके युक्त यह पृथ्वी और भू आदि चार लोक फिर भगवान्ने स्थापन किये इसप्रकार लोक रचकर स्वयम्भू ब्रह्माजी अनेक प्रकारकी प्रजा जैसी पहिले कल्पों में थी वैसी ही रची पहिले ब्रह्माजी सृष्टिरचने की इच्छाकर विचार करने लगे तब उनकी बुद्धि में तम, मोह, महामोह, तामिस्र और अन्ध यह पांच प्रकारकी अविद्या उत्पन्न भई और उसीसे तमोमय सृष्टि भई जिनके बाहर भीतर प्रकाश का लेश नहीं था निस्संज्ञ और जिनके इन्द्रिय तथा बुद्धि तमोगुण करके आवृत थी इसीसे वे नग कहाये ब्रह्माजी इस अपनी पहिलीही सृष्टि को किसी अर्थकी न देख अप्रसन्न भये और फिर विचार करने लगे तब ध्यान करते करते उनके इन्द्रिय तिर्यक् प्रवृत्त भये उससे पशु पक्षी आदि उत्पन्न भये और तिर्यक् कहाये फिर भी ब्रह्माजी के ध्यान से सात्त्विक

और ऊर्ध्वस्रोत अर्थात् जिनकी गति ऊपर को है सुख
और प्रीति करके युक्त बाहर भीतर प्रकाशमान और
प्रसन्नचित्त देवता उत्पन्न भये उनको देख ब्रह्माजी का
चित्त बहुत प्रसन्न भया और फिर ध्यान करने लगे तब
मनुष्य उत्पन्न भये जो अर्वाक्स्रोत कहाये वे सब
प्रकाश करके युक्त भये और तमोगुण करके युक्त
रजोगुण उनमें अधिक रहने से बहुत दुःखों करके
युक्त सब कार्य के साधन करनेहारे और तारक आदि
आठ लक्षणों करके युक्त सिद्धात्मा और गन्धर्वों के
समान धर्मवाले भये यह चौथा अर्वाक्स्रोता तैजस
सर्ग हमने वर्णन किया पांचवां अनुग्रह सर्ग चार
प्रकारसे स्थित है विपर्यय, शक्ति, सिद्धि और तुष्टि करके
स्थावरों में विपर्यय अर्थात् विस्तार आदि पशु पक्षी
आदिकों में शक्ति अर्थात् सामर्थ्य मनुष्यों में सिद्धात्मा
अर्थात् प्रारब्धजनित सिद्धि और ऋषि तथा देवताओं
में तुष्टिरूप से स्थित है यह अनुग्रह सर्ग प्राकृत कहाता
है और सब से उत्तम है भूतादि अर्थात् मनु आदिकों
का सर्ग छठा है और उत्पद्यमान अर्थात् उपजते हुये
भूतों का सर्ग सातवां है वे सब भूतादिक निस्पृह यथोक्त
दान करनेहारे कर्म के फल का आस्वादन करने में
तत्पर और ज्ञान होने से कर्मफल का त्याग भी करने
में समर्थ हैं भूतादिकों की स्थिति अज्ञान और मायासे
है ब्रह्माजी से पहिला सर्ग महत्तत्त्व का, दूसरा तन्मा-
त्राओंका, तीसरा इन्द्रियों का सर्ग हुआ ये तीन प्राकृत
सर्ग अबुद्धिपूर्वक भये चौथा मुख्य सर्ग स्थावरों का,

पांचवां तिर्यक्स्रोत, छठा ऊर्ध्वस्रोत, सातवां अर्वाक्स्रोत, आठवां अनुग्रह सर्ग और नवां कुमार सर्ग भया इनमें पहिले तीन सर्ग प्राकृत फिर पांच वैकृत और नवां कुमारसर्ग प्राकृत वैकृत कहाया प्राकृत तीन सर्ग तो अबुद्धिपूर्वक प्रवृत्त होते हैं और बाक़ी छहसर्ग ब्रह्मा जीके बुद्धिपूर्वक होतेहैं अनुग्रहसर्ग का विस्तारसे वर्णन करते हैं यह अनुग्रहसर्ग सर्वभूतों में चार प्रकार से स्थित है ये नव प्राकृत अथवा वैकृतसर्ग सर्वकारणों करके आपसमें मिश्रित हैं प्रथम ब्रह्माजीके नव मानस पुत्र भये इनमें ऋभु और सनत्कुमार ये दो सबसे पहिले उत्पन्न भये और ऊर्ध्वरेता भये वे आठवें कल्पके व्यतीत होने पर आत्माको आत्मा मेंही स्थापन कर प्रजाधर्म और कामका त्यागकर मोक्षमार्ग में स्थित भये सबकाल एक जैसा स्वरूप रहने से कुमार कहाये इससे उनका नाम सनत्कुमार भया फिर सनन्द, सनक और सनातन ये ब्रह्माजीके पुत्र भये ये तीनों भेदबुद्धि में प्रवृत्त थे परन्तु योग करके मोक्षको प्राप्त भये और प्रजा उत्पन्न न की फिर ब्रह्माजीने स्थान के अभिमानी मानसपुत्र उत्पन्न किये जिनने प्रलय पर्यन्त पृथ्वी को धारण किया जल, अग्नि, भूमि, वायु, आकाश, समुद्र, नदी, पर्वत, वनस्पति, ओषधी, लता, वृक्ष, वीरुध, लव, काष्ठा, कला, मुहूर्त, सन्ध्या, रात्रि, दिन, पक्ष, मास, ऋतु, अयन, वर्ष और युग आदि ब्रह्माजी ने रचे ये सब स्थानाभिमानी हैं और स्थान भी कहाते हैं मरीचि, भृगु, अङ्गिरा, पुलस्त्य, पुलह, क्रतु, दक्ष, अत्रि और वशिष्ठ ये नव

मानस पुत्र ब्रह्माजी के भये पुराणों में ये नवों ब्रह्मा गिने गये इन सब ब्रह्मवादियोंके लिये ब्रह्माजीने स्थान कल्पना किये फिर ब्रह्माजीने संकल्प और धर्मको उत्पन्न किया इनमें व्यवसाय से धर्म को उत्पन्न किया और संकल्प से संकल्प को ब्रह्माजी के मनसे रुचिनाम पुत्र उत्पन्न भया प्राण से दक्ष, नेत्रों से मरीचि, हृदय से भृगु, शिर से अंगिरा, कर्ण से अत्रि, उदान वायु से पुलस्त्य, व्यानवायुसे पुलह, समानसे वशिष्ठ और अपानवायु से क्रतु उत्पन्न भये ये ग्यारह पुत्र ब्रह्माजी के भये और बारहवां रुचि भया ये सब ग्रहमेधी और धर्म के प्रवर्तन करनेहारे भये इनके बारह वंश चले जिनमें बड़े बड़े ऋषि और महात्मा उत्पन्न भये फिर ब्रह्माजी ने जलके उत्पत्ति की इच्छा करके देवता, असुर, पितर और मनुष्यों को अपने आत्मा में युक्त किया तब ध्यान करते हुये ब्रह्माजी के जघन से तमोगुण करके युक्त असुर पहिलेही उत्पन्न भये असुनाम प्राणका है प्राण से उत्पन्न भये इसलिये असुर कहाये ब्रह्माजी ने भी असुरों को उत्पन्न करनेवाले उस देह को त्याग दिया उसीसे रात्रि भई तमोगुण उसमें अधिक था इस कारण रात्रिभी तमोयुक्त भई इसीसे सब जीव रात्रिको सोते हैं फिर ब्रह्माजी ने देवताओं को उत्पन्न करने के लिये और शरीर ग्रहण किया जिसमें सत्त्वगुण अधिक था क्रीड़ा करते हुये ब्रह्माजीके मुखसे देवता उत्पन्न भये दिव धातु क्रीड़ा अर्थ में है क्रीड़ा करने से देव कहाये देवताओं को रचकर जो शरीर ब्रह्माजी ने त्यागा उससे

दिन भया दिन में सत्त्वगुणहै इसलिये सब धर्म क्रिया दिनमेंही होती हैं फिर ब्रह्माजी पिताकी भांति ध्यान करनेलगे तब पितर उत्पन्न भये और वह शरीर ब्रह्माजी ने त्यागदिया उससे सन्ध्या भई दिन देवताओं का रात्रि असुरों की और सन्ध्या पितरों की भई इनमें सन्ध्याही मुख्य है इसीसे देवता, मनुष्य, असुर, ऋषि सब सन्ध्या का उपासन करते हैं फिर ब्रह्माजी ने रजोगुण करके युक्त और शरीर धारण किया और रजोगुण प्रधान मनुष्य उत्पन्न किये और उस शरीर को भी त्याग दिया उसीसे चन्द्रिका अर्थात् चांदनी उत्पन्न भई इसी कारण चन्द्रिका को देख मनुष्य प्रसन्न होतेहैं इस प्रकार ब्रह्मा जीके चार शरीरों से रात्रि, दिन, सन्ध्या और चन्द्रिका उत्पन्न भये इनमें रात्रि तो तमोगुण करके युक्त है और बाक़ी तीन सत्त्वगुण प्रधान हैं देवता ब्रह्माजी ने मुखसे दिन में उत्पन्न किये इससे देवता दिनमें बली हैं और असुरों को जघनसे रात्रि में उत्पन्न किया इससे असुर रात्रि के समय बली होते हैं इसीभांति सब मन्वन्तरों में देवता, असुर, पितर और मनुष्य उत्पन्न होते हैं और चन्द्रिका, दिन, रात्रि और सन्ध्या ये चारों अम्भस् कहाते हैं भा धातु दीप्ति के अर्थ में है ये चारों दीप्त रहते हैं इससे इनको अम्भस् कहते हैं इस प्रकार इन चारों को और देवता आदि को उत्पन्न कर उस शरीर को भी ब्रह्माजी ने त्यागदिया फिर भी रजोगुण और तमोगुण करके युक्त शरीर धारण किया उससे क्षुधा करके पीड़ित अंधकार करके व्याप्त प्रजा

उत्पन्न भई और पहिली प्रजाको भक्षण करने दौड़े तब ब्रह्माजी ने उनको रोका उनमें से जिन्होंने कहा कि हम आपकी प्रजाका रक्षण करेंगे वे राक्षस भये और जिन्होंने कहा कि हम तो प्रजा का यक्षण अर्थात् भक्षण करेंगे वे यक्ष कहाये और गूढ़कर्म गुह्यक भी उनका नाम भया रक्ष धातु पालनके अर्थ में है जिससे राक्षस यह शब्द सिद्ध होता है और यक्ष धातु भक्षण अर्थ में है जिसका रूप यक्ष है इनको देख दुःखसे ब्रह्माजीके केश गिरे वे सब उठकर ब्रह्माजी को चारों ओर से घेरते भये ब्रह्मा जी के शिरके बालों से व्याल अर्थात् सर्प उत्पन्न भये हीन होनेसे अहि कहाये पतनसे पन्नग अपसर्पण अर्थात् गमन से सर्प कहेगये ब्रह्माजी के क्रोधसे जो अग्नि उत्पन्न भया वही विषरूप करके सर्पों में प्रविष्ट भया सर्पोंको देख क्रोधसे ब्रह्माजी ने कापिशवर्ण के भूत उत्पन्न किये वे पिशित अर्थात् मांस भक्षण करने से पिशाच कहाये फिर ब्रह्माजी ने गायन करते करते प्रसन्न हो गन्धर्बों को उत्पन्न किया धेट् धातु पान के अर्थ में है जिससे गन्धर्व यह शब्द सिद्ध होता है ब्रह्माजी की अमृतरूप गायन वाणी को पान करते हुये उत्पन्न भये इससे गन्धर्ब कहाये ये आठ देवयोनि उत्पन्न कर और भी स्वच्छन्दता से पक्षी उत्पन्न किये पक्षी वय से उत्पन्न किये इसलिये वयस् कहाये स्वच्छन्दता से रचे इसलिये स्वच्छन्द भी कहेगये फिर ब्रह्माजीने पशु उत्पन्न किये मुख से अज अर्थात् बकरे छाती से मेढ़े उदर और पार्श्व से गौ और पादों से हाथी, घोड़े, गधे, गवय अर्थात्

नीलगाय, मृग, उष्ट्र, अश्वतर आदि उत्पन्न भये और फल मूलों करके युक्त ओषधी ब्रह्माजी के रोमों से उत्पन्न भईं इनमें पशु और ओषधी ब्रह्माजी ने यज्ञके काममें लगाये गौ, बकरा, मनुष्य, मेष, अश्व, अश्वतर और गर्दभ ये ग्राम के पशुहैं श्वापद अर्थात् सिंह व्याघ्र आदि दो खुरवाले हरिण आदि हाथी वानर और पक्षी जलके जीव और सर्प आदि ये अरण्यके पशु हैं और महिष, गवय, ऋक्ष, प्लवंग, शरभ, वृक और सिंह येभी अरण्यकेही पशु हैं फिर गायत्री छन्द ऋग्वेद त्रिवृत् रथन्तरसाम और अग्निष्टोम यज्ञ ये ब्रह्माजी ने अपने प्रथममुखसे उत्पन्नकिये यजुर्वेद त्रिष्टुप्छन्द पंचदशस्तोम का बृहत्साम और उकथ अर्थात् एक प्रकार का साम दक्षिण मुखसे साम जगतीछन्द सप्तदशस्तोम वैरूप और अतिरात्र पश्चिम मुखसे इक्कीसवां अथर्व और अनुष्टुप् तथा विराट्छन्द ब्रह्माजी ने अपने उत्तरकी ओर के मुखसे उत्पन्न किये और कल्प के आदि में विद्युत् अर्थात् बिजली बादल इन्द्रधनुष और भांति भांति के तेज ब्रह्माजी ने सिरजे नाना प्रकारके जीव ब्रह्माजी के शरीरसे उत्पन्न भये प्रजा सिरजने के समय ब्रह्माजी ने पहिले देव, असुर, मनुष्य, पितर सिरजे फिर यक्ष, राक्षस, पिशाच, गन्धर्व, अप्सरा, किन्नर, पशु, पक्षी, मृग, सर्प आदि उत्पन्न किये इस प्रकार स्थावर जंगमरूप जगत् ब्रह्माजी ने रचा जगत् के सब जीवभी जो जो कर्म पहिले कल्पमें करते थे उस उसमें प्रवृत्त भये बार बार उत्पन्न होकर भी अपने अपने कर्म को

मूलते उत्पन्न होतेही उसमें प्रवृत्त हो जाते हैं हिंस्र, अहिंस्र, मृदु, क्रूर, धर्म, अधर्म, सत्य और असत्य कर्म से भावित जो उत्पन्न होते हैं वे फिर भी उसीमें प्रवृत्त होजाते हैं महाभूत इन्द्रिय इन्द्रियों के अर्थ और शरीरों को उत्पन्न कर सबको ब्रह्मजीनेही अपने अपने काम में लगाया कोई पुरुषकार अर्थात् यत्न को मुख्य कहते हैं कोई कर्म को कोई कोई दैवको और कई पुरुष स्वभावको ही प्रधान कहते हैं और यह कहते हैं कि पौरुष कर्म और दैव स्वभाव से ही फल देते हैं इसलिये ये एकही हैं और नामके भेद से अलग अलग भी हैं सिरजेहुये जीवों के नाम और रूप ब्रह्माजीने वेदशब्दों से ही किये और अपनी रात्रि के अन्त में उत्पन्न हुये ऋषियों के नाम और वृत्ति वही कल्पना की जो पहिले थी इसभांति ब्रह्मा जीकी मानसी सिद्धि से स्थावर जङ्गमरूप सृष्टि उत्पन्न भई जब ब्रह्माजी की प्रजा न बढ़ी जितने उत्पन्न किये थे उतनेहीरहे तब तमोगुण करके इनके अन्तःकरण में शोक उत्पन्न हुआ और बहुत दुःखी भये तब ब्रह्माजीने विचार किया कि दुःख होने का क्या कारण है तो जाना कि शरीर में तमोगुण की वृद्धि होरही है और रजोगुण सत्त्वगुण अलग होगये हैं तब विचार कर तमोगुणका त्याग किया और रजोगुण सत्त्वगुण को ग्रहण किया उस तमोगुण और शोकसे मिथुन अर्थात् स्त्री पुरुषका जोड़ा उत्पन्न भया तमोगुण से अधर्म और शोक से हिंसा उत्पन्न भई ये दोनों बड़े दारुण भये फिर ब्रह्माजीने अपने शरीर के दो भाग किये एक भागसे स्वायम्भुवमनु और

दूसरे भाग से शतरूपा स्त्री उत्पन्न भये शतरूपा ने कई लाख वर्ष तप किया और बड़ा यशस्वी स्वायम्भुवमनु भर्ता पाया यह मनु सबसे पहिला पुरुष है इसके इकहत्तर चतुर्युग व्यतीत होने पर एक मन्वन्तर होता है मनु भी परम सुन्दरी शतरूपा रानी को पाय रमण करने लगे कुछ काल के अनन्तर मनु से शतरूपा में प्रियव्रत और उत्तानपाद नामक दो पुत्र उत्पन्न भये और आकूति तथा देवहूति ये दो कन्या भी भईं जिनसे इस प्रजा की उत्पत्ति है इनमें प्रसूति तो दक्षप्रजापति को ब्याही और आकूति रुचिको ब्याह दी आकूति में रुचिप्रजापति से यज्ञ और दक्षिणा साथही उत्पन्न भये फिर यज्ञसे दक्षिणा में बारह पुत्र उत्पन्न भये जो याम कहाये इनके दो गण ब्रह्माजी ने करे एक गण अजित और दूसरा शुक्र कहाया येही यज्ञके पुत्र याम नामक स्वायम्भुव मन्वन्तर के देवता भये स्वायम्भुवमनुकी पुत्री प्रसूति में दक्षप्रजापति से चौबीस कन्या अतिरूपवती ब्रह्मवादिनी और सम्पूर्ण लोककी माता उत्पन्न भईं इनमें श्रद्धा, लक्ष्मी, धृति, तुष्टि, पुष्टि, मेधा, क्रिया, बुद्धि, लज्जा, वपु, शांति, सिद्धि और कीर्ति ये तेरह धर्म को ब्याही गईं इनसे छोटी सती शिव जी को, ख्याति भृगु को, सम्भूति मरीचि को, स्मृति अंगिराको, प्रीति पुलस्त्य को, क्षमा पुलह को, सन्नति क्रतु को, अनसूया अत्रि को, ऊर्जा वशिष्ठ को, स्वाहा अग्नि को और स्वधा पितरों को स्वायम्भुवमनु ने ब्याह दी इन सबकी सन्तान से ही प्रलयपर्यंत सब जगत् भरा रहेगा श्रद्धा से काम उत्पन्न भया लक्ष्मीसे

दर्प, धृति से नियम, तुष्टि से सन्तोष, पुष्टि से लोभ, मेधा से श्रुत, क्रिया से दण्ड और समय, बुद्धि से बोध और प्रमाद, लज्जा से विनय, वसु से व्यवसाय, शान्ति से क्षेम, सिद्धि से सुख और कीर्ति से यश नामक पुत्र उत्पन्न भये ये धर्म के पुत्र हैं काम से प्रीति में हर्ष उत्पन्न भया अधर्म से हिंसा में निकृति कन्या और अधर्म पुत्र ये दो उत्पन्न भये निकृति से भय और नरक ये दो पुत्र भये इनकी स्त्री माया और वेदना माया का पुत्र मृत्यु भया जो सब लोक का संहार करता है और वेदना का पुत्र रौरव दुःख भया मृत्यु के पुत्र व्याधि, जरा, शोक, क्रोध और असूयानाम कन्या ये उत्पन्न भये सो सब दुःखप्रधान और अधर्म लक्षण हैं ये सब स्त्री पुत्रों से भी हीन हैं यह तामसी सृष्टि हमने वर्णन की ब्रह्माजी ने रुद्रको आज्ञा दी कि प्रजा उत्पन्न करो तब रुद्र भगवान्ने सती नामक अपनी भार्याको ध्यान कर अपने तुल्य हज़ारों लाखों पुत्र उत्पन्न किये वे सब पिंगलवर्ण चर्म ओढ़े जटा धारे कपाल हाथोंमें लिये बड़े क्रूर स्वरूप देखने सेही प्राण हरलेनेहारे धनुष, बाण, ढाल, खड्ग, बर्छी आदि भांति भांति के शस्त्र अस्त्र धारे कवच पहिने रथोंपर चढ़े कोई रूपवान् कोई अति कुरूप सैकड़ों हज़ारों जिन के भुजा बड़े बड़े शिर दो दो जिह्वा तीन नेत्र बड़ी बड़ी दंष्ट्राओं करके युक्त अन्न मांस घृत सोम आदि भक्षण करनेहारे बड़े जिनके कपाल नीलकंठ ऊर्ध्वरेता धर्मका श्रवण किये धर्मात्मा कोई मयूरके बर्ह धारे बैठे दौड़ते और कोई खड़े प्रजा को भक्षण करने के लिये दौड़ते

हुये ध्यान करते हुये कोई ध्यानका त्याग किये कोई जप करते कोई योगके अभ्यास में प्रवृत्त कोई धूमवान् कोई प्रज्वलित गंगा मस्तक पर धारे कोई वृद्ध बुद्धिमान् ब्रह्मिष्ठ शुभदर्शन कोई कोई नीलकंठ और हज़ार नेत्रों करके युक्त क्षमाके समुद्र सब जीवों को अदृश्य बड़े योगी और तेजस्वी कोई कोई बड़े क्रोधी और कूदते दौड़ते उछ-लते बड़े भयंकर शिवजीने उत्पन्न किये इस भांति अति क्रूर शिवजीकी प्रजा देख ब्रह्माजी ने व्याकुल होकर कहा कि बस आप कृपा रखिये ऐसी प्रजा अब न सिरजें जो आप प्रजा उत्पन्न करना चाहें तो मृत्यु करके युक्त और सौम्य प्रजा उत्पन्न करें मृत्युहीन प्रजा कर्म में प्रवृत्त नहीं होते यह ब्रह्माजी का वचन सुन शिवजीने हँसकर कहा कि व्याधि, जरा, मृत्यु आदिसे पीड़ित प्रजा हम उत्पन्न न करेंगे अब आपही प्रजा सिरजें हम कुछ न करेंगे ये जो हमने लाखों करोड़ों अपनी तुल्य उत्पन्न किये येही आकाश पृथ्वी और दिशाओं को व्याप्त करेंगे और यज्ञमें इनका भाग होगा और सबके सब रुद्र कहावेंगे मन्वंतरों में जे देवता होंगे उनके साथ ये सब पूजे जायँगे और कल्पके अन्ततक रहेंगे यह महादेव जी का वचन सुन ब्रह्माजी ने कहा कि जो आपने आज्ञा की सो सब होगी आप कृपा करें यह प्रार्थना सुन महादेवजी ने प्रजा उत्पन्न करना छोड़ दिया और ऊर्द्ध्व-रेता होके स्थित होगये स्थित होने से स्थाणु कहाये फिर महादेवजी सूर्यके तुल्य प्रकाशमान अपनी इच्छासे स्त्री पुरुष रूपधार अर्द्धनारीश्वर भये शिवजी के वामअंगमें

जो स्त्री थी वही जगत् की माता सती भई और दक्षके आराधन से प्रसन्नहो उसकी कन्या भई और महादेवजी को व्याहीगई शिवजीने कहा कि हे सती! अपने वामभाग को कृष्ण और दक्षिणको शुक्ल करके विभाग करो तब वह शिवजी की आज्ञासे शुक्ल और कृष्णवर्ण होगई और उसके नाम ये भये स्वाहा, स्वधा, महाविद्या, मेधा, लक्ष्मी, सरस्वती, सती, दाक्षायणी, विद्या, इच्छाशक्ति, क्रियाशक्ति, अपर्णा, एकपर्णा, एकपाटला, उमा, हैमवती, कल्याणी, एकमातृका, ख्यातिप्रज्ञा, महाभागा, गौरी, गणाम्बिका, महादेवी, नन्दिनी, जातवेदसी, सावित्री, वरदा, पुण्या, पावनी, लोकविश्रुता, आज्ञा, आवेशिनी, कृष्णा, तामसी, सात्त्विकी, शिवा, प्रकृति, विकृता, रौद्री, दुर्गा, भद्रा, प्रमाथिनी, कालरात्रि, महामाया, रेवती, भूतनायिका ये नाम उस एकरूप भगवती के अलग अलग अवतारोंसे भये और द्वापर के अन्त विभाग करके ये सब नाम हैं और गौतमी, कौशिकी, आर्या, चण्डी, कात्यायनी, सती, कुमारी, यादवी, देवी, कृष्णपिङ्गला बर्हिर्ध्वजा, शूलधरा, परमा, ब्रह्मचारिणी, महेन्द्रोपेन्द्रभगिनी, दृषद्वती, एकशूलधृक्, अपराजिता, बहुभुजा, प्रगल्भा, सिंहवाहिनी, शुम्भादिदैत्यहन्त्री, महामहिषमर्दिनी, अमोघा, विन्ध्यनिलयाविक्रान्ता, गणनायिका ये सब नाम भद्रकाली देवी के हमने कहे हैं जो मनुष्य इनको पढ़े उसको पाप का भय नहीं होता और सब उत्तम फल पाते हैं वनमें, पर्वतपर, जलमें, स्थलमें, नगरमें और घरमें इन नामों से रक्षा करे

व्याघ्र, मकर, चोर आदि भय में और भी आपदा के स्थान में देवीके नामों को कीर्तन करे तो सब दुःखोंसे छूटे अर्यक्, ग्रह, भूत, पूतना और मातृका आदि बालग्रहों से पीड़ित बालकों की रक्षा इन नामों से करे महादेवीकी मुख्य दो कला हैं एक सरस्वती और दूसरी लक्ष्मी इनसे हजारों शक्ति उत्पन्न भईं जिनसे यह जगत् व्याप्त होरहाहै उस महादेवी करके युक्त देवदेव श्रीमहादेवजी जगत् के कल्याणके लिये स्थित होरहे हैं त्रिपुर को दग्ध करने के लिये रुद्र तो पशुपति भये और उनके तेज से सब देवता पशु भये सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो! इस आदिसर्ग के क्रमोंको जो पढ़े सुने अथवा ब्राह्मणों को सुनावे वह ब्रह्मसायुज्य पावे॥

इकहत्तरवां अध्याय॥

शौनक आदि ऋषि पूछते हैं कि हे सूतजी! संक्षेप से और विस्तार से सर्ग का वर्णन तो आपने किया परन्तु त्रिपुर के दाह के लिये शिवजी पशुपति क्योंकर भये और देवता पशु क्यों कहाये यह आप हमको श्रवण कराइये हमने केवल इतनाही सुना है कि मयासुरने अपनी माया से सुवर्ण, चांदी और लोह के तीन नगर रचे उनको श्रीमहादेवजी ने दग्ध किया परन्तु यह नहीं जानते कि एक बाण सेही शिवजी ने तीनों पुर क्योंकर दग्ध किये पुरों की उत्पत्ति और वरकी प्राप्ति हमने सुनीहै और यह भी सुनाहै कि विष्णुजीसे उत्पन्न भये भूत उनको दग्ध न करसके सो अब आप विस्तार

से त्रिपुरदाहका वर्णन कीजिये। यह सुन सूतजी भी जैसा श्रीवेदव्यासजीसे सुनाथा वैसा मुनियों के प्रति कथन करनेलगे कि हे मुनीश्वरो ! तारकासुर ने इस त्रैलोक्य को बहुत सताया इसलिये तीन लोक के जीवों के शाप से शिवजी के पुत्र स्कन्दजी के हाथसे वह मारा गया। उसके तीन पुत्र बड़े पराक्रमी विद्युन्माली, तारकाक्ष और कमलाक्ष बाक़ी रहे वे तीनों अपने पिता की मृत्यु देख दुःखी हो तप करनेलगे और ऐसा उग्र तप किया कि शरीर में अस्थि और प्राणही शेष रहगये इस भांति बहुत काल अति उग्र तप करनेसे ब्रह्माजी प्रसन्न हो उनके समीप आये और कहा कि वर मांगो हम तुम्हारे तपसे बहुत प्रसन्नहैं तब दैत्योंने हाथ जोड़ प्रार्थना की कि हे महाराज ! जो आप प्रसन्न भये हो तो हमको अमर कीजिये किसीसे भी हमारी मृत्यु न हो यह सुन ब्रह्माजीने कहा कि भाई अमर तो कोई नहीं होसक्ता जिसने जन्म लिया वह अवश्यही मृत्युवश होताहै इसलिये और कुछ वर मांगलो यह ब्रह्माजी का वचन सुन दैत्योंने आपस में सम्मतिकर प्रार्थना की कि जो महाराज अमर आप न करें तो यह वर मिले कि तीन नगरों में हम रहें और वे तीनों पुर हज़ार वर्षके अनन्तर आकाश में विचरतेहुये एकबार मिलाकरें उस समय मिलेहुये तीनों नगरोंको जो देव एक बाण से भेदनकरे वही हमारा नाशक हो यह सुन ब्रह्माजीने कहा कि ऐसाही होगा इतना कह ब्रह्माजी तो अपने धामको गये और बड़ा उग्र तप कर मयासुरने बहुत उत्तम तीन

नगर सौ सौ योजन विस्तार के सब सम्पत्तिसे भरेहुये अपनी मायासे रचे उनमें सुवर्णका नगर तारकाक्ष ने लिया जो दिव अर्थात् स्वर्ग में रहता था चांदी का पुर कांचनाक्ष को मिला वह सदा अन्तरिक्ष में रहा करता तीसरा पुर लोह का जो भूमि में स्थित था उसका स्वामी विद्युन्माली भया इस भांति ये तीन पुर दैत्यों के बड़े दृढ़ और आकाशगामी थे तीनपुर क्या उनको तो तीन लोक कहना चाहिये उन तीनों में अपने अपने उत्तम प्रासाद बनाय तीनों दैत्य चैन उड़ानेलगे और मयासुर तो सब पुरों में पूजनीयही था वे तीनों पुर कल्पद्रुमोंके बाग भांति भांति के रत्नों से जड़े प्रासाद सूर्यमंडलके तुल्य प्रकाशमान पद्मरागके विमान कैलास पर्वतके शिखरोंकी भांति अति ऊंचे और चन्द्रमंडल के तुल्य प्रकाशित स्फटिक के महल, वापी, कूप, तालाब, सर और मणि कलशों करके भूषित ऊंचे ऊंचे सुवर्ण के शिवालय सभा प्रपा अर्थात् पानीयशाला वेदाध्यापन की शाला और भांति भांति के क्रीड़ास्थानों से परिपूर्ण थे और हाथी, घोड़े, रथ, उत्तम उत्तम स्त्री जिनको देख इन्द्र की अप्सरा भी लजायँ गन्धर्व, सिद्ध, चारण और अग्निहोत्रियों से भरे थे और श्रौत, स्मार्त धर्म में तत्पर बड़े बड़े महात्मा दैत्य और पतिव्रता स्त्री उनमें निवास करते थे और सदा सदाशिव के पूजन करने से निष्पाप रहते थे और सब दैत्य बड़े पराक्रमी बलवान् अग्नि के तुल्य जिनके नेत्र मेघ के तुल्य गम्भीर जिनका शब्द पर्वत से शरीर नील वर्ण और शान्तचित्त थे और मयासुर

की रक्षासे तथा श्रीमहादेवजीकी कृपासे सब देवताओं को तुच्छ समझते और युद्धमें सदा जय पाते थे इस भांति बड़ाभारी दैत्योंका ऐश्वर्य देख इन्द्र आदि देवता पुरत्रयकी अग्निसे दग्ध होनेलगे जिस भांति दावाग्नि से वृक्ष जलजायँ यह दशा दैत्यों के ऐश्वर्यसे देवताओंकी होगई तब सब देवताओं ने व्याकुलहो विष्णु भगवान् के पास जाय अपनी दुर्दशा वर्णनकी विष्णुभगवान् ने भी उनको अतिदुःखी देख मनमें विचार किया और उनका संकट कटने के लिये यज्ञका स्मरण किया यज्ञभी उसी क्षण वहां आन पहुँचा और भगवान् को प्रणाम किया विष्णुजीने यज्ञ को देख देवताओं से कहा कि तीन पुरों के संहारके लिये और तीन लोककी रक्षा के लिये आप इस उपसद् नाम यज्ञ से श्रीमहादेवजी का यजन करें तब आपका सब दुःख दूर होगा सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो ! यह विष्णुभगवान्का वचन सुन सब देवताओं ने प्रसन्नहो सिंहनाद किया और भगवान् की स्तुति करनेलगे भगवान्ने देवताओं से कहा कि अनेक जीवोंको मारकर दग्धकर और अन्याय से भोग करके भी जो पुरुष शिवजी का यजन करे वह निष्पाप होजाय इसमें कुछ संदेह नहीं पापी मारेजाते हैं निष्पाप कभी नहीं मरते असुर यद्यपि बड़े पापी हैं परन्तु महादेवजी के प्रभाव से उनकी मृत्यु होना कठिन है हम ब्रह्माजी का और देवता, मुनि आदि किसीका भी दुःख दूर महादेवजी की कृपा विना नहीं होसक्ता सब जगत् और देवताओं के स्वामी उसी सदाशिव ने

अपनी लीला करके देव और दैत्यों का विभाग किया है उसीके एक अंश की पूजा कर आप देवता भयेहो और ब्रह्माजी ब्रह्मा तथा हम सब जगत् का पालन करनेहारे विष्णु उसी महेश्वर के अनुग्रह से भये हैं विना शिवजी की पूजाकिये इस जगत् में किसीकी सिद्धि नहीं होसक्की ये सब दैत्य श्रौत स्मार्त धर्म में तत्पर और निरन्तर शिवलिङ्ग की पूजा से निष्पाप हैं इस कारण उनका मारना बहुत कष्टसाध्य है तौ भी इस यज्ञ करके श्रीमहादेवजी का यजन करके अवश्यही दैत्यों से जय पावेंगे विना शिवजी के और किसीकी सामर्थ्य नहीं जो मयासुर करके रक्षित और बड़े पराक्रमी दैत्यों करके युक्त उन पुरों का संहार करे सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो! इतना देवताओं से कहकर विष्णुजी उपसद नाम यज्ञ शिवजी की प्रसन्नता के लिये करनेलगे और देखा कि हज़ारों भूतसमूह शूल, शक्ति, गदा, खड्ग, परशु आदि शस्त्र हाथों में लिये अनेक वेषों करके युक्त मानो साक्षात् शिव के ही गण हों हाथ जोड़े सम्मुख खड़े हैं उनको देख विष्णु जी ने कहा कि हे वीरो! तुम शीघ्र जाओ और तीनों पुरों को फूंक जलाय प्रलय में मिलाय दैत्यों को भी यमराज की राजधानी को पठाय दो वे भूत भी इस भांति भगवान् की आज्ञा पाय शिर नवाय प्रणाम कर त्रिपुर का संहार करने को उठ धाये और क्षण भर में ही वहां जाय पहुँचे परन्तु पुरों के भीतर प्रवेश करते ही सब के सब अग्नि में प्रविष्ट हुये पतङ्गों की भांति

भस्म होगये यह उनकी दशा देख और सब वृत्तान्त जान दैत्य अतिमुदित भये और भक्ति से शिवजी के आगे नाचने गाने और स्तुति करने लगे देवताभी सब करे कराये परिश्रमको वृथा भये जान हार मान विष्णु भगवान् के समीप आ सब समाचार कहते भये भगवान् भी सब देवताओं को अतिदीन मुखमलीन तनक्षीण और सुख से हीन देख अपने मन में विचार करने लगे कि किस प्रकार उन दुष्ट दैत्यों को मार इनका दुःख दूर करूं विचार करने से भी कोई उनका पाप नहीं दीख पड़ता निष्पाप होने सेही उपसद यज्ञ से उत्पन्न भूतों ने भी उनका संहार न किया प्रत्युत आपही जलकर भस्म होगये यह श्रुति बहुत ठीक है कि धर्म से पाप दूर होता है और ऐश्वर्य मिलता है त्रिपुरनिवासी सब दैत्य धर्मनिष्ठ हैं इसीसे अवध्य हैं बड़े भारी पापों के पुञ्ज शिवपूजा के प्रभाव से बिलाय जाते हैं और भोग सम्पत्ति मिलती है वे सब दैत्य निरन्तर भक्ति से शिवपूजा में तत्पर हैं इसीसे ऐश्वर्य युक्त और भोगी हैं इसलिये अब हम अपनी माया से उनके धर्म में विघ्न करें जिससे उनका प्रताप न्यून हो और देवताओं की विपत्ति दूर करने के लिये हमारा जय होय सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो! विष्णु भगवान् इस बात को मन में ठान दैत्यों के धर्म की हानि करने के लिये एक मायारूप पुरुष अपने देह से उत्पन्न किया और सबको मोह करनेहारा श्रौत स्मार्त धर्म से विरुद्ध वर्णाश्रम से हीन षोड़श लक्ष श्लोक

प्रमाण एक अपूर्व शास्त्र उस अपने देह से उत्पन्न भये पुरुषको उपदेश करते भये कि जिस शास्त्रमें यह लिखा था कि यहांही स्वर्ग और नरक हैं परलोक की बात सब मिथ्या है और उस शास्त्रके सब विधि दृष्टप्रत्यय थे अर्थात् जिनके करने से उसीक्षण फल मिलता था कभी लिखे हुये फल में व्यभिचार न होने पाता था इस भांति का विलक्षण शास्त्र उस मायामय मुनि को उपदेश कर भगवान् ने कहा कि तुम त्रिपुर में जाय अपना धर्म चलाओ और श्रौत स्मार्त धर्म को धक्का लगावो यह भगवान् की आज्ञा पाय उस मायावीने त्रिपुरमें जाय ऐसा प्रपञ्च फैलाया कि सब दैत्य उसके शिष्य होने लगे और श्रौत स्मार्त धर्म को त्याग श्री शंकर से विमुख होगये इसी अवसर में नारदजी भी भगवान् की आज्ञा पाय त्रिपुरमें जाय दैत्यों का वञ्चन करने के लिये अपने शिष्य प्रशिष्यों सहित उस मायावी के शिष्य भये और स्त्रियों को भी व्यभिचार का उपदेश किया कि सब पतिव्रता स्त्री अपनेअपने पतिकी सेवा छोड़ जारों में आसक्त भईं अब तक भी उसी नारद के उपदेश के प्रभाव से कई अधम नारी अपने भर्ता को त्याग कुलटा होजाती हैं नारी का माता पिता बन्धु सखा सब पतिही है बड़े बड़े पाप करनेहारी भी स्त्री पति की सेवा करने से स्वर्ग में निवास करती है और पति से विमुख होकर नरक भोगती है पूर्वकाल में जो पतिव्रता स्त्री सब धर्मों को त्याग और देवताओं का आराधन छोड़ पतिकी सेवा में तत्पर भई उसने स्वर्ग

में जाय अपने पति के साथ बहुत काल आनन्द किया और पतिसे विरोध करनेहारी नारी नरक की आग से बहुत काल तक दग्ध भईं और होती हैं इत्यादि सब पतिव्रताओं के धर्म जानकरभी अपने पतियों को त्याग भगवान् की माया से मोहित हो व्यभिचार में आसक्त भईं इसभांति जब उन नगरों में अधर्म की प्रवृत्ति भई और धर्मकी जड़ उखड़गई तब अलक्ष्मी का प्रवेश भया और लक्ष्मी ने उनका त्याग किया इस प्रकार उस माया मुनि ने और नारदजी ने दैत्यों को भली भांति व्यामोहित किया और अपना कार्य सिद्ध हुआ देख दोनों बहुत प्रसन्न भये जब त्रिपुरमें श्रौत स्मार्त धर्म नष्ट भया शिवभक्ति और शिवलिङ्गकी पूजासे सब विमुख होगये पतिव्रता पातिव्रत छोड़ अधर्ममें लगीं तब विष्णुभगवान् देवताओं का कार्य सिद्ध भया जान इन्द्र आदि सब देवगणको साथ ले विमानपर बैठ कैलास को जातेभये वहां जाय पार्वतीजी सहित श्रीशिवजी को भक्ति से प्रणामकर बड़ी विनयसे करजोड़ स्तुति करनेलगे ॥

विष्णुरुवाच ॥ महेश्वराय देवाय नमस्ते परमात्मने । नारायणाय शर्वाय ब्रह्मणे ब्रह्मरूपिणे । शाश्वताय ह्यनन्ताय अव्यक्ताय च ते नमः १ ॥

सूतजी कहते हैं कि विष्णुभगवान् ने इतनी स्तुतिकर भक्ति से दण्डप्रणाम किया और एकान्त में जाय जल में स्थितहो शिवजीकी प्रसन्नताके लिये जप करने लगे और इन्द्र, यम, रुद्र, साध्य, मरुत् आदि देवता भी श्रीमहादेवजीकी स्तुति करनेलगे ॥

देवा ऊचुः॥ नमः सर्वात्मने तुभ्यं शंकरायार्तिहारिणे। रुद्राय नीलरुद्राय कद्रुद्राय प्रचेतसे १ गतिर्नः सर्वदास्माभिर्वन्द्यो देवारिमर्दनः॥ त्वमादिस्त्वमनन्तश्च अनन्तात्माऽक्षयः प्रभुः २ प्रकृतिः पुरुषः साक्षात्स्रष्टा हर्ता जगद्गुरो। त्राता नेता जगत्यस्मिन् द्विजानां द्विजवत्सल ३ वरदो वाङ्मयो वाच्यो वाच्यवाचकवर्जितः। इज्यो मुक्त्यर्थमीशानो योगिभिर्योगविभ्रमैः ४ हृत्पुण्डरीकसुषिरे योगिनां संस्थितः सदा। वदन्ति सूरयः सन्तं परब्रह्मस्वरूपिणम् ५ भवन्तं तत्त्वमित्यार्यास्तेजोराशिं परात्परम्। परमात्मानमित्याहुरस्मिञ्जगति तद्विभो ६ दृष्टं श्रुतं स्थितं सर्वं जायमानं जगद्गुरो। अणोरल्पतरं प्राहुर्महतोऽपि महत्तरम् ७ सर्वतः पाणिपादं त्वां सर्वतोऽक्षिशिरोमुखम्। सर्वतः श्रुतिमल्लोके सर्वमावृत्य तिष्ठसि ८ महादेवमनिर्देश्यं सर्वज्ञं त्वामनामयम्। विश्वरूपं विरूपाक्षं सदाशिवमनामयम् ९ कोटिभास्करसंकाशं कोटिशीतांशुसन्निभम्। कोटिकालाग्निसंकाशं षड्विंशकमनीश्वरम् १० प्रवर्तकं जगत्यस्मिन् प्रकृतेः प्रपितामहम्। वदन्ति वरदं देवं सर्वावासं स्वयंभुवम्। श्रुतयः श्रुतिसारं त्वां श्रुतिसारविदो जनाः ११ अदृष्टमस्माभिरनेकमूर्ते विना कृतं यद्भवताथ लोके। त्वमेव दैत्यासुरभूतसङ्घान् देवान्नरान् स्थावरजङ्गमांश्च १२ पाहि नान्या गतिः शम्भो विनिहत्यासुरोत्तमान्। मायया मोहिताः सर्वे भवतः परमेश्वर १३ यथा तरङ्गा लहरीसमूहा युध्यन्ति चान्योन्यमपांनिधौ च। जलाश्रयादेव जडीकृताश्च सुरासुरास्तद्वद् यस्य सर्वम् १४॥

सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो! इस स्तोत्रको जो पुरुष पवित्र होकर प्रातःकाल पठन करे अथवा श्रवण करे वह अपने सब अभीष्ट फल पावे इसप्रकार देवताओं की स्तुति सुनकर प्रसन्नहो गम्भीर शब्द से श्रीमहादेव जी कहनेलगे कि हे देवताओ! आपका कार्य हम को विदित है और विष्णुजी की तथा नारदजी की माया भी हमको विदितहै अब हम अधर्ममें प्रवृत्त उन दैत्यों के तीनों पुरोंका नाश शीघ्रही करेंगे तुम प्रसन्न रहो इतना शिवजीका वचन सुन देवता बहुत प्रसन्न भये और बारबार परमेश्वर के चरणारविन्द में प्रणाम करनेलगे इसी अवसर में श्रीपार्वतीजी प्रसन्न हो लीला कमलसे श्रीमहादेवजी को ताड़नकर कहनेलगीं कि महाराज! सूर्य के तुल्य प्रकाशमान अपने पुत्र स्कन्दको क्रीड़ा करते भये देखिये कटक कुण्डल नूपुर वलय छन्न-वीर उदरबन्धन किङ्किणी अङ्गद सुवर्ण के अश्वत्थपत्र आदि अनेक भूषण मोती और पद्मराग आदि मणियों के हारों करके भूषित और कल्पद्रुमों के पुष्प अपनी अलकों में लगाये कुङ्कुम आदिके तिलक मस्तक में दिये खेलरहा है इसके छहों मनोहर मुख कमलसमूह से देख पड़ते हैं और इसकी माता गङ्गा कृत्तिका स्वाहा और चामुण्डा आदि मातृकाओं ने रक्षाके लिये इसके नेत्रों में लगायाहुआ अञ्जन कैसा मनको रञ्जन करता है इतना पार्वतीजी से सुन महादेवजी स्वामिकार्त्तिकेय को देखनेलगे और उसके मनोहर मुखको नेत्रोंसे पान करते करते तृप्त न भये और समीप बुलाय आलिङ्गन

कर प्रीति से कहा कि हे पुत्र! हमारे आगे नृत्यकर स्कन्दभी महादेवजीकी आज्ञापाय नाचनेलगा महादेव जी उस बालक को अतिमनोहर लीला से नृत्य करते देख अपने गणों सहित आपभी नाचनेलगे महादेवजी को नृत्य करते देख इन्द्र आदि देवता और तीनों लोक नाच उठे सबगण स्कन्दकी स्तुति करनेलगे पार्वती और मातृका बालक का नृत्य देख अतिमुदित भईं गन्धर्व पुष्पवृष्टि करनेलगे और किन्नर गान में प्रवृत्त भये इसभांति पार्वती और सदाशिव कुछ काल तक स्कन्द का नृत्य देख नन्दी आदि गण और स्कन्द को साथ ले एक अति उत्तम प्रासाद में विहार करने के लिये प्रवेश करगये और देवताओं की सुधि भूलगये इन्द्र आदि देवता भी उस महल के द्वार पर खड़े खड़े उद्विग्न हो आपस में कहनेलगे कि हम बड़े मन्दभागी हैं दैत्यों के भाग्य प्रबल हैं कि हमको अब महादेवजी के दर्शन भी दुर्लभ होगये और कार्यसिद्धि की क्या आशा है इसभांति अनेक प्रकार की बातें बनानेलगे उनका कोलाहल सुन क्रोधकर कुम्भोदर नाम गण वहां आया और सुवर्ण के दण्ड से सब देवताओंको ताड़न किया और कहा कि परमेश्वर भीतर विहार कररहे हैं तुम यहां क्यों कोलाहल मचारहेहो चलेजाओ इसभांति उसको क्रुद्ध हुये देख भयभीतहो हाहाकार करते हुये देवता भगे और कश्यप आदि बूढ़े बूढ़े मुनि तो भूमि परही गिरपड़े और परस्पर कहनेलगे कि दैत्यों के भाग्य से हमारा कार्य सिद्ध होकर बिगड़गया कोई कोई

मुनि अपने हृदयकमल में शिवजी का ध्यान करते हुये भय निवृत्त होने के अर्थ "नमःशिवाय" इस मन्त्र का स्मरण करनेलगे इसी अवसर में वृष पर आरूढ़ मस्तक पर जटाजूट धारे कटक कुण्डल आदि भूषणों से मण्डित शूल, गदा आदि शस्त्रधारे महादेवजी के परम प्रिय नन्दी वहां आये उनको देख कुम्भोदरने उन को प्रणाम किया और उनके पीछे पीछे चला नन्दीभी श्वेतवर्ण वृषभके ऊपर अतिशोभायमान होरहेथे जिस भांति मेघके ऊपर आरूढ़ महादेवजी सोहैं और दश योजन के विस्तारका श्वेतछत्र मानो दूसरा आकाशही हो उनके ऊपर गणों ने धारण कररक्खा था उस छत्र में लटकती हुई मोतियों की माला ऐसी शोभायमान होरहीथी जैसे शिवजी के मस्तकपर गङ्गाकी धारा इस भांति सब गणों के स्वामी नन्दीकी सवारी देख इन्द्रकी आज्ञा पाय देवदुन्दुभि बजनेलगे आकाश से उत्तम सुगन्धयुक्त पुष्पों की वर्षा होनेलगी देवताभी शिवजी के दर्शनकी भांति नन्दी का दर्शन पाय अत्यन्त हर्षित भये और इन्द्रकी प्रेरणा से सब मुनियों ने मिलकर ऊंचे स्वर से जय शब्द किया और इन्द्र आदि सब देवता हाथजोड़ नन्दी की स्तुति करनेलगे ॥

देवा ऊचुः ॥ नमस्ते रुद्रभक्ताय रुद्रजाप्यरताय च। रुद्रभक्तार्तिनाशाय रौद्रकर्मरताय च १ कूष्माण्डगणनाथाय योगिनां पतये नमः। सर्वदाय शरण्याय सर्वज्ञायार्तिहारिणे २ वेदानां पतये चैव वेदवेद्याय ते नमः। वज्रिणे वज्रदंष्ट्राय वज्रिवज्रनिवारिणे ३ वज्रालंकृतदेहाय वज्रि-

णाराधिताय ते। रक्ताय रक्तनेत्राय रक्ताम्बरधराय ते ४ रक्तानांभुवपादाब्जे रुद्रलोकप्रदायिने। नमः सेनाधिपतये रुद्राणां पतये नमः ५ भूतानां भुवनेशानां पतये पापहारिणे। रुद्राय रुद्रपतये रौद्रपापहराय ते। नमः शिवाय सौम्याय रुद्रभक्ताय ते नमः ६॥

सूतजी कहतेहैं कि हे मुनीश्वरो! इस प्रकार देवताओं को स्तुति करते देख प्रसन्नहो नन्दीने कहा कि श्रीशिवजी के लिये रथ सारथि और धनुर्बाण तुम यत्नसे बनाओ तो तीनों पुरोंका नाश हुआही जानो देवताभी इतना वचन नन्दी से सुन ब्रह्माजी और विश्वकर्मा सहित बड़े यत्नसे देवदेव श्रीमहादेवजीके लिये रथ रचते भये॥

बहत्तरवां अध्याय॥

सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो! सब देवताओं की सम्मति से विश्वकर्मा ने सर्वलोक सर्वदेव और आकाश आदि पञ्च महाभूतों करके अति उत्तम रथ बनाया उस रथका दहिना चक्र सूर्य और वाम चन्द्रमा बनाये दहिने चक्रमें द्वादश आदित्यरूप बारह अरे थे और बायें में सोलह कलारूप षोड़श अर लगरहेथे और सम्पूर्ण नक्षत्रगण बायें चक्रको भूषित किये थे उन चक्रों के नेमि अर्थात् परिधि छह ऋतु थे आकाश पुष्कर अर्थात् अवकाश मन्दर पर्वत रथनीड़ जिसमें सारथि बैठताहै उदयाचल और अस्ताचल रथके कूबरथे अधिष्ठान अर्थात् रथमें मुख्य बैठने का स्थान मेरु पर्वत भया और मेरुके प्रत्यन्त पर्वत अर्थात् समीप के [illegible] छोटे पर्वत

अधिष्ठानके केसर भये रथका वेग संवत्सर कल्पना किया गया औरी के अग्रभाग दोनों अयन मुहूर्त बन्धुर और कला उस रथकी शम्पा कल्पना कीगई काष्ठा उस रथ की घोणा और क्षण अक्ष दण्ड अर्थात् धुरी बनाये गये निमेष अनुकर्ष अर्थात् रथके नीचे का काष्ठलव ईषा स्वर्ग वरूथ और धर्म तथा वैराग्य ध्वजका दण्ड यज्ञदण्ड का आश्रय यज्ञ की दक्षिणा रथ की सन्धि पचास अग्नि लोहेके कील धर्म और काम युग अर्थात् जुआके अग्रभाग अव्यक्त ईषादण्ड बुद्धि नड्वल अर्थात् धुरी में लगाने के घृत आदि स्नेह द्रव्य रखने को पात्र अहंकार रथके कोण पञ्चभूत रथका बल और दशों इन्द्रिय उस रथके भूषण कल्पना किये गये चारों वेद चार घोड़े श्रद्धा उनकी गति वेद के पद अश्वों के भूषण षडङ्ग उपभूषण पुराण, न्याय, मीमांसा और धर्मशास्त्र अश्वों के ऊपर डालने के चित्र कम्बल, गायत्री आदि मन्त्र वर्ण, पाद अर्थात् छन्दका चतुर्थांश और ब्रह्मचर्य आदि चार आश्रम उन कम्बलोंके प्रान्तों में घण्टा कल्पना किये हजार फणों करके भूषित अनन्त नाग अवच्छेद अर्थात् बांधने की रज्जु दिशा और विदिशा इस रथके पाद पुष्करावर्त आदि मेघ सुवर्ण करके भूषित पताका चारों समुद्र रथ ढकने के लिये कम्बल बनाये गये सब भूषणों से अलंकृत पंखे चमर आदि हाथों में लिये गङ्गा आदि नदी शोभा के लिये इधर उधर रथके स्थित भईं आवह आदि सात वायु स्कन्ध रथमें चढ़ने के लिये सोपान अर्थात् सीढ़ी

कल्पना किये उस रथके सारथि ब्रह्माजी और रश्मि अर्थात् घोड़ों की लगाम पकड़नेवाले सब देवता भये और प्रणव प्रतोद अर्थात् चाबुक सोपान सहित लोकालोक और मानस पर्वत विषम अर्थात् पांव रखने का स्थान और बाक़ी सब पर्वत उस रथके चारों ओर नासा कल्पना किये गये मेरु पर्वत छत्र मन्दर पर्वत डिण्डिम अर्थात् नगारा सुमेरु पर्वत धनुष वासुकि नाग धनुषकी ज्या और कालरात्रि तथा इन्द्रभी धनुष की ज्या कल्पना किये गये धनुष का टंकार सरस्वती देवी बाण विष्णु और बाणका फल चन्द्रमा प्रलयकी अग्नि उस फलकी तीक्ष्णधार कालकूट विष, बाण का वल, वायुबाण के ऊपर लगेहुये पक्ष बनाये गये इस प्रकार सब देवताओं करके युक्त दिव्यरथ बनाय और धनुर्बाण कल्पनाकर सारथि के स्थान में ब्रह्माजी को बैठाय युद्धकी सामग्री साथ ले तीनों लोकों को कम्पित करते हुये उस रथमें शिवजी आरूढ़ भये मुनि स्तुति करने लगे सूत मागध बन्दी आदि आगे कीर्तिप्रबन्ध पढ़ने लगें अप्सरा नृत्य करने में प्रवृत्त भईं परन्तु शिवजी के रथमें चढ़तेही वेदरूप अश्व भूमि पर गिरे और वृषेन्द्र का रूपधार शेषनाग क्षणमात्र उस रथको धारण करते भये परन्तु भार से उनके भी जानु भूमिपर टिक गये तब शिवजीकी आज्ञा पाय लगाम खैंचकर ब्रह्माजी ने घोड़ों को उठाया और रथको स्थापन किया और आकाश में स्थित दैत्यों के पुरोंकी ओर वड़े वेगसे रथ को प्रेरण किया शिवजीने सब देवताओं से कहा कि

तुम सब अपने को पशु कल्पना करो और हमको पशु-
पति बनाओ तब दैत्यों का संहार होसकेगा नहीं तो
बड़ा कठिन काम है यह शिवजी का वचन सुन देव-
ताओंके मनमें बड़ा विषाद भया कि हम पशु क्योंकर
बनें महादेवने देवताओं को उदास देखकर कहा कि
पशु होने से तुम कुछ भय मत करो सुनो जिसप्रकार
पशुभावसे भी मोक्ष होता है जो पुरुष दिव्य पाशुपत-
व्रत करेगा वह पशुभाव से मुक्त होजायगा यह हम
प्रतिज्ञा करचुके हैं इसलिये जे पुरुष नैष्ठिक पाशुपतव्रत
बारह वर्ष, छह वर्ष अथवा तीन वर्षही करेंगे वे अवश्य
पशुभावसे मुक्त होंगे इस कारण हे देवताओ ! तुम भी
इस व्रतके करने से पशुपाश से मुक्त होगे यह शिवजी
का वचन सुन प्रसन्न हो शिवजीको नमस्कार कर पशु-
भावको प्राप्त भये और पशुपाश के हरण करनेहारे
श्रीसदाशिव पशुपति बने पाशुपतव्रत करने से पशुत्व
दूर होता है और सब पाप कटजाते हैं यह शास्त्र का
निश्चय है इसी अवसर में देवताओं ने विनायक की
पूजा न की इसलिये विनायक कहने लगे कि भांति
भांति के भक्ष्य भोज्यों से हमारी पूजा विना किये कौन
देवता अथवा दैत्य अपने कार्य की सिद्धि पासक्ता है
तुमने इतने बड़े कार्य के आरम्भ में हमारा पूजन न
किया इसलिये हम इस तुम्हारे कार्यमें विघ्न करेंगे यह
सुन इन्द्र आदि देवता भयभीत भये और नानाप्रकार
के लड्डू आदि भक्ष्य और भांति भांति के पुष्पों से
गणेशजीका पूजन करने लगे और शिवजीनेभी गणेश

जीको अपने समीप बुलाय छातीसे लगाय बहुत प्यार किया और अनेक प्रकारके भूषण, वस्त्र, सुगन्ध, भक्ष्य, भोज्य आदिकों से उनकी पूजाकर त्रिपुरको दग्ध करने के अर्थ प्रस्थान करते भये और उनके पीछे देवता, सिद्ध, भूत और नन्दी आदि गण अपने अपने वाहनों पर चढ़कर चले इनमें पर्वत की तुल्य अपने विमान पर बैठ नन्दी सबके आगे आगे चले और बाक़ी सब गणभी हाथी, घोड़े, वृष आदि अपने अपने वाहनों पर चढ़कर शिवजी के आगे पीछे चले विष्णुजी गरुड़ पर चढ़ शिवजी के बाईंओर और सब देवता भी शिवजी को चारोंओर से घेर अनेक प्रकार के शस्त्र और युद्धकी सामग्री साथ ले त्रिपुरकी ओर चले सब देवताओं के बीच गरुड़ पर चढ़े हुये विष्णु भगवान् ऐसे शोभित होते थे जैसे मेरु पर्वतपर इन्द्र शोभित होयँ ऐरावत हस्ती के ऊपर आरूढ़ हो शिवजी के दाहिनी ओर इन्द्र चले सब देवता स्वामिकार्त्तिकेय की भांति अपने सेनापति इन्द्रको प्रणाम करतेभये और यम, वरुण, कुबेर, अग्नि, निर्ऋति, वायु और ईशान भी अपने अपने वाहनों पर चढ़ शिवजी के साथ चले रोमजनाम गणों करके युक्त वीरभद्र वृषके ऊपर चढ़ रथके नैर्ऋत्यकोण में रक्षाके लिये चले महाकाल अपने गण साथ ले शिवजी के रथकी वायव्यकोण में भये कुमार स्वामी बड़े ऊंचे हाथीपर चढ़ अपनी सेना सङ्ग ले शिवजी के साथ भये देवताओं को अविघ्न और दैत्यों को विघ्न करनेहारे श्रीगणेशजी महादेवजी के सङ्ग चले और

उनके आगे आगे बड़ा भयङ्कर त्रिशूल और कपाल हाथमें लिये रुधिर और मधुपान करने से जिनके नेत्र घूर्णित भांति भांतिके गण और पिशाच सबके सब मधुपानसे मत्त अपने सङ्ग लिये हाथी का चर्म ओढ़े और हाथीपरही आरूढ़ श्रीकाली भगवतीभी दैत्योंके हृदयों को कम्पित करतीहुई चलीं और भगवतीके चारों ओर सिद्ध, गन्धर्व, पिशाच, यक्ष, विद्याधर, नाग और देवता जय जय शब्द करतेहुये चले और सब मातृका अपने अपने वाहनोंपर आरूढ़ होकर अनेक शस्त्र हाथों में लिये ध्वजा धारे भगवती के साथ चलीं सिंह पर आरूढ़ अपनी भुजाओं में अंकुश, शूल, पाश, परशु, चक्र, खड्ग, शङ्ख धारण किये प्रलयकालके अतिप्रचण्ड हज़ारों सूर्यों सेभी अधिक देदीप्यमान अपने नेत्रों करके मानो त्रैलोक्यको दग्धही करती हैं बड़े पराक्रम करके युक्त श्रीदुर्गाजी भी महादेवजी के संग चलीं और उनके संग हल, फाल, मूसल, भुशुण्डी, पर्वतों के शिखर और त्रिशूल आदि आयुध हाथों में लिये हाथी, घोड़े, रथ, सिंह और वृष आदि भांति भांति के वाहनोंपर आरूढ़ पर्वत के तुल्य शरीर धारे अनेक गण भी चले और ब्रह्मा, विष्णु, इन्द्र आदि देवता बड़े हर्ष से जय जय शब्द करते हुये मुनिभी प्रसन्नता से नाचते हुये और सिद्ध चारण आदि पुष्पों की वर्षा करते हुये श्रीमहादेवजी के साथ चले और बड़ायोगी भृङ्गीनाम गण विमानपर बैठ अनेक देवता और गणोंको साथ लिये शिवजी के साथ त्रिपुरकी ओर चला और केश,

विगतवासा, महाकेश, महाज्वर, सोमवल्ली के तुल्यवर्ण सोमक, सेनक, सोनधृक्, सूर्यवाच, सूर्यपेषणक, सूर्याक्ष, सूरि, सुर, सुन्दर, प्रकुद, ककुदन्त, कम्पन, प्रकम्पन, इन्द्र, इन्द्रजय, महाभीमक, शताक्ष, पञ्चाक्ष, सहस्राक्ष, महोदर, यमजिह्व, शताश्व, कण्ठन, कण्ठपूजन, द्विशिख, त्रिशिख, पञ्चशिख, मुण्ड, अर्धमुण्ड, दीर्घ, पिशाचास्य, पिनाकधृक्, पिप्पलायतन, अङ्गारकाशन, शिथिल, शिथिलास्य, अक्षपाद, अजकुज, अजवक्त्र, हयवक्त्र, गजवक्त्र, ऊर्ध्ववक्त्र इत्यादि लाखोंगण लक्ष लक्ष से वर्जित झुण्डके झुण्ड बांधे और हज़ारों रुद्र त्रिपुरका संहार करने के लिये महादेवजी के सङ्ग भये और तेंतीस करोड़ देवता व सबलोकोंकी, गणों की और भूतों की माता शिवजी के रथ के पांछे पीछे चलीं उन सबके बीच शिवजी ऐसे शोभायमान थे जैसे तारागण में पूर्णचन्द्र होवे और उनके वामभाग में जगन्माता श्रीपार्वतीजी अतिही शोभायमान होकर विराजमान थीं और शुभावती नाम भगवती की सखी चामर लिये भगवती के पीछे खड़ी थी। श्वेतवर्ण की विभूति से भूषित श्रीपार्वतीजीयुक्त महादेवजी ऐसे शोभित होते थे जैसे बिजली करके युक्त शुक्लवर्ण का मेघ होवे और सुमेरुपर्वतरूप धनुष पूर्णचन्द्रमण्डल के समान प्रकाशमान छत्र और शुक्लवर्ण अतिलम्बी पताका मानो गङ्गाकी धाराही हो और श्वेतचामरों करके श्रीशिवजी अतिही शोभित थे इसभांति ब्रह्मा, विष्णु, इन्द्र, अग्नि आदि देवताओं करके नमस्कृत पार्वतीजी सहित

श्रीमहादेवजी त्रिपुर की ओर गमन करते भये यह शिव का आडम्बर देख ब्रह्मा विष्णु आदि सब देवता परस्पर विचार करने लगे कि शिवजी महाराज अपनी इच्छामात्र से त्रैलोक्य को दग्ध करसकते हैं दैत्यों के तीन पुर तो कितनी बड़ी बात है कि जिसको दग्ध करने के लिये सब गणों को साथ ले आप चढ़ आये रथ, सारथी, धनुर्बाण आदि सामग्री और देवता तथा गणों से इनको क्या प्रयोजन था कि जिससे इतना बखेड़ा इकट्ठा किया हमतो यही जानें कि लीला के लिये सब इनका काम है और कुछ इस आडम्बर से प्रयोजन नहीं देखपड़ता इस भांति अनेक विकल्प मनमें करते हुये देवता और गण भगवती गणेश आदि सहित सदाशिव त्रिपुर के समीप जाय पहुँचे और सारे संसार की सामग्री से परिपूर्ण और बड़े पराक्रमी दैत्यों से भरेहुये उन पुरों को देख शिवजीने अपने धनुषपर ज्या चढ़ाय पाशुपत अस्त्र करके युक्त बाण सन्धान कर त्रिपुर की ओर देखा इसी अवसर में आकाश के बीच तीनों पुर इकट्ठे भये तब देवताओं को अतिही हर्ष भया और जय जय शब्द तथा शिवजीकी स्तुति करनेलगे शिवजी को बाण छोड़ने में विलम्ब करते देख हाथ जोड़ ब्रह्माजी ने प्रार्थना की कि महाराज यह विलम्ब करना आपको उचितही है क्योंकि देवता और दैत्य आपको तुल्य हैं परन्तु देवता धर्मनिष्ठ और दैत्य पापी हैं इसलिये देवताओं की रक्षा करना आपको योग्य है रथध्वज और बाणरूप विष्णु तथा मुझसे भी पुरत्रय दग्ध करनेमें

आपको कुछ उपयोग नहीं इतनी सामग्री इकट्ठा करना केवल आपकी लीला है अब आप विलम्ब न करें और जब तक ये पुर अलग अलग न होयँ आप बाण छोड़देवें और जय को देनेहारा पुष्य नक्षत्र भी इस काल में वर्तमान है इसलिये इन तीनों पुरों को आप शीघ्र ही दग्ध करें यह ब्रह्माजी का वचन सुन शिवजी ने पुरत्रय दग्ध करने की इच्छा की तब विष्णु, वायु, सोम और कालाग्नि जो बाण में स्थित थे उन्हों ने कहा कि महाराज पुरत्रय तो आपकी दृष्टि से ही दग्ध होगये अब आप केवल हमारे हितके अर्थ बाण छोड़ दीजिये यह सुन श्रीमहादेवजी ने धनुष की ज्या को कान तक खींचा और हँसते हँसते बाण छोड़ दिया वह क्षणमात्र मेंही त्रिपुर को दग्धकर शिव के समीप आय प्रणाम करता भया करोड़ों दैत्यों करके युक्त वे तीनों पुर भस्म हुये ऐसे देखपड़े जैसे कल्पान्तमें रुद्रसे दग्ध किये तीनलोक होवें त्रिपुर में जो दैत्य शिवभक्त थे वे सब शिवजी के गण होगये उससमय अतिभयानक श्रीमहादेवजी का रूप देख सब देवता भयभीत होकर चुप होगये तब भक्तवत्सल श्रीमहादेवजी ने उनको त्रस्त देखकर कहा कि भय मत करो तुम्हारे शत्रुओं का संहार होगया इतना शिवजी का वचन सुन सब देवता श्रीमहादेवजी, पार्वतीजी, गणेशजी और नन्दीको बार बार प्रणाम करनेलगे और सब देवता तथा विष्णु भगवान् सहित ब्रह्माजी एकाग्रचित्त हो परम भक्ति से त्रिपुरारि श्रीमहादेवजीकी स्तुति करनेलगे ॥

पितामह उवाच ॥ प्रसीद देवदेवेश प्रसीद परमेश्वर। प्रसीद जगतांनाथ प्रसीदानन्ददाऽव्यय १ पञ्चास्यरुद्र-रुद्राय पञ्चाशत्कोटिमूर्तये ॥ आत्मत्रयोपविष्टाय विद्यात-त्त्वाय ते नमः २ शिवाय शिवतत्त्वाय अघोराय नमोनमः। अघोराष्टकतत्त्वाय द्वादशात्मस्वरूपिणे ३ विद्युत्कोटि-प्रतीकाशमष्टकांशसुशोभनम्। रूपमास्थाय लोकेऽस्मि-न्संस्थिताय शिवात्मने ४ अग्निवर्णाय रौद्राय अम्बि-कार्धशरीरिणे। धवलश्यामरक्तानां मुक्तिदायामरात्मने ५ ज्येष्ठाय रुद्ररूपाय सोमाय वरदाय च। त्रिलोकाय त्रिदे-वाय वषट्काराय वै नमः ६ मध्ये गगनरूपाय गगन-स्थाय ते नमः। अष्टक्षेत्राष्टरूपाय अष्टतत्त्वाय ते नमः ७ चतुर्धा च चतुर्धा च चतुर्धा संस्थिताय च। पञ्चधा पञ्चधा चैव पञ्चमन्त्रशरीरिणे ८ चतुष्षष्टिप्रकाराय अकाराय नमोनमः। द्वात्रिंशत्तत्त्वरूपाय उकाराय नमोनमः ९ षोडशात्मस्वरूपाय मकाराय नमो नमः। अष्टधात्मस्वरू-पाय अर्धमात्रात्मने नमः १० ॐकाराय नमस्तुभ्यं चतु-र्धासंस्थिताय च। गगनेशाय देवाय स्वर्गेशाय नमो नमः ११ सप्तलोकाय पातालनरकेशाय वै नमः। अष्टने-त्राय रूपाय परात्परतराय च १२ सहस्रशिरसे तुभ्यं सहस्राय च ते नमः। सहस्रपादयुक्ताय शर्वाय परमे-ष्ठिने १३ नवात्मतत्त्वरूपाय नवाष्टात्मात्मशक्तये। पुनर-ष्टप्रकाशाय तथाष्टाष्टकमूर्तये १४ चतुष्षष्ट्यात्मतत्त्वाय पुनरष्टविधाय ते। गुणाष्टकवृतायैव गुणिने निर्गुणाय ते १५ मूलस्थाय नमस्तुभ्यं शाश्वतस्थानवासिने। नाभिमण्डलसंस्थाय हृदि निस्वनकारिणे १६ कन्धरे च

स्थितायैव तालुरन्ध्रस्थिताय च । भ्रूमध्ये संस्थितायैव नादमध्ये स्थिताय च १७ चन्द्रबिम्बास्थितायैव शिवाय शिवरूपिणे । वह्निसोमार्करूपाय षट्त्रिंशच्छक्तिरूपिणे १८ त्रिधा संवृत्य लोकान्वै प्रसुप्तभुजगात्मने। त्रिप्रकारं स्थितायैव त्रेताग्निमयरूपिणे १९ सदाशिवाय शान्ताय महेशाय पिनाकिने। सर्वज्ञाय शरण्याय सद्योजाताय वै नमः २० अघोराय नमस्तुभ्यं वामदेवाय ते नमः। तत्पुरुषाय नमस्तुभ्यमीशानाय नमो नमः २१ नमस्त्रिंशत्प्रकाशाय शान्तातीताय वै नमः। अनन्तेशाय सूक्ष्माय उत्तमाय नमोऽस्तु ते २२ एकाक्षाय नमस्तुभ्यमेकरुद्राय ते नमः । नमस्त्रिमूर्तये तुभ्यं श्रीकण्ठाय शिखण्डिने २३ अनन्तासनसंस्थाय अनन्तायान्तकारिणे। विमलाय विशालाय विमलाङ्गाय ते नमः २४ विमलासनसंस्थाय विमलार्थार्थरूपिणे। योगपीठान्तरस्थाय योगिने योगदायिने २५ योगिनां हृदिसंस्थाय सदानीवारशूकवत्। प्रत्याहाराय ते नित्यं प्रत्याहाररताय ते २६ प्रत्याहाररतानां च प्रतिस्थानस्थिताय च। धारणायै नमस्तुभ्यं धारणाभिरताय ते २७ धारणाभ्यासयुक्तानां पुरस्तात्संस्थिताय च । ध्यानाय ध्यानरूपाय ध्यानगम्याय ते नमः २८ ध्येयाय ध्येयगम्याय ध्येयध्यानाय ते नमः। ध्येयानामपि ध्येयाय नमो ध्येयतमाय ते २९ समाधानाभिगम्याय समाधानाय ते नमः। समाधानरतानां तु निर्विकल्पार्थरूपिणे ३० दग्ध्वोद्धृतं सर्वमिदं त्वयाद्य जगत्त्रयं रुद्रपुरत्रयं हि। कः स्तोतुमिच्छेत्कथमीदृशं त्वां स्तोष्यामि तुष्टाय शिवाय तुभ्यम् ३१

भक्त्या च तुष्ट्याद्भुतदर्शनाच्च मर्त्या अमर्त्या अपि देवदेव। एते गणाः सिद्धगणैः प्रमाणं कुर्वन्ति देवेश गणेश तुभ्यम् ३२ निरीक्षणादेव विभोऽसि दग्धुं पुरत्रयं चैव जगत्त्रयञ्च। लीलालसेनाम्बिकयाक्षणेन दग्धं किलेषुश्च तदा विमुक्तः ३३ कृतो रथश्चेषुवरश्च शुभ्रं शरासनं ते त्रिपुरक्षयाय। अनेकयत्नैश्च मयाथ तुभ्यं फलं न दृष्टं सुरसिद्धसङ्घैः ३४ रथो रथी देववरो हरिश्च रुद्रः स्वयं शक्रपितामहौ च। त्वमेव सर्वे भगवन्कथं तु स्तोष्ये ह्यनीड्यं प्रणिपत्य मूर्ध्ना ३५ अनन्तपादस्त्वमनन्तबाहुरनन्तमूर्धान्तकरः शिवश्च। अनन्तमूर्तिः कथमीदृशं त्वां स्तोष्ये ह्यनीड्यं कथमीदृशं त्वाम् ३६ नमोनमः सर्वविदे शिवाय रुद्राय शर्वाय भवाय तुभ्यम्। स्थूलाय सूक्ष्माय सुसूक्ष्मसूक्ष्मं सूक्ष्माय सूक्ष्मार्थविदे विधात्रे ३७ स्रष्ट्रे नमः सर्वसुरासुराणां भर्त्रे च हर्त्रे जगतां विधात्रे। नेत्रे सुराणामसुरेश्वराणां दात्रे प्रशास्त्रे मम सर्वशास्त्रे ३८ वेदान्तवेद्याय सुनिर्मलाय वेदार्थविद्भिः सततं स्तुताय। वेदात्मरूपाय भवाय तुभ्यमन्ताय मध्याय सुमध्यमाय ३९ आद्यन्तशून्याय च संस्थिताय तथा त्वशून्याय च लिङ्गिने च। अलिङ्गिने लिङ्गमयाय तुभ्यं लिङ्गाय वेदादिमयाय साक्षात् ४० रुद्राय मूर्ध्नां च निकृन्तनाय ममादिदेवस्य च यज्ञमूर्ते। विध्वान्तभङ्गं मम कर्तुमीश दृष्ट्वैव भूमौ करजाग्रकोट्या ४१ अहो विचित्रं तव देवदेव विचेष्टितं सर्वसुरासुरेश। देहीव देवैः सह देवकार्यं करिष्यसे निर्गुणरूपतत्त्व ४२ एकं स्थूलं सूक्ष्ममेकं सुसूक्ष्मं मूर्तामूर्तं मूर्तमेकं ह्यमूर्तम्। एकं दृष्टं वाङ्मयं

चैकमीशं ध्येयं चैकं तत्त्वमत्राद्भुतं ते ४३ स्वप्ने दृष्टं यत्पदार्थं ह्यलक्ष्यं दृष्टं नूनं भाति चान्येन वापि। मूर्तिर्वो वै देव ईशानदेवैर्लक्ष्यायत्तैरप्यलक्ष्यं कथं तु ४४ दिव्यः क्व देवेश भवत्प्रभावो वयं क्व भक्तिः क्व च ते स्तुतिश्च। तथापि भक्त्या विलपन्तमीश पितामहं मां भगवन् क्षमस्व ४५॥

सूतजी कहते हैं कि मुनीश्वरो! इस स्तोत्र को जो पुरुष ब्राह्मण के मुखसे श्रवण करे अथवा शिवजी को प्रणाम कर आपही पढ़े वह त्रिपुरारि श्रीशंकर के अनुग्रह से पापबन्धन को काट कैलासमें वास पावे इसभांति ब्रह्माजी के मुखसे स्तुति सुनकर प्रसन्न हो पार्वतीजी की ओर देख हँसकर श्रीमहादेवजी ब्रह्माजी से कहने लगे कि तुम्हारे इस स्तोत्रसे हम बहुत प्रसन्न भये जो वर तुमको अथवा देवताओं को अभीष्ट हो मांगो सूतजी कहते हैं कि यह शिवजी का वचन सुन हाथजोड़ ब्रह्माजी कहनेलगे कि महाराज जो आप प्रसन्न भये हैं तो अपने चरणों में दृढ़भक्ति मुझे दीजिये और मेरे सारथिपने पर आप प्रसन्न होकर देवताओं पर सदा कृपा रक्खें इसी अवसर में विष्णुभगवान् भी हाथ जोड़ भक्तिसे नम्रहो यह प्रार्थना करते भये कि हे नाथ! आपका वाहन होना सदा चाहताहूं और आपके चरणारविन्द में दृढ़ भक्तिभी मांगता हूं आपके अनुग्रह से मुझमें आपके धारण करने की सामर्थ्य होवे और मैं सर्वज्ञ तथा सर्वगामी होजाऊं॥

सूतजी कहतेहैं कि हे मुनीश्वरो! महादेवजी उनकी

यह प्रार्थना सुन अभीष्ट वर देकर पार्वतीजी सहित कैलास को गये और त्रिपुर का संहार होजानेसे प्रसन्न होतेभये देवता और ऋषि श्रीमहादेवजी के गुण गाते अपने अपने स्थानों को जाते भये इस त्रिपुरके संहार की कथाको श्राद्धके समय अथवा देवकृत्य में पढ़े वा भक्तिसे ब्राह्मणों को सुनावे वह ब्रह्मलोक में निवास करे मानस, वाचिक, कायिक, स्थूल, सूक्ष्म सब प्रकार के पातक और उपपातक इस कथा के श्रवण से नष्ट होते हैं और शत्रु तथा रोगभी नाशको प्राप्त होते हैं धन, आयुष्, सन्तानकी वृद्धि होती है और आपदा कभी समीप नहीं आती है॥

तिहत्तरवां अध्याय॥

सूतजी कहतेहैं कि हे मुनीश्वरो! इस भांति त्रिपुरको दग्ध कर शिवजी तो कैलासको गये और सब देवताओं से ब्रह्माजी कहनेलगे कि देखो शिवजीका प्रताप कैसा है तारकके पुत्र तारकाक्ष, कमलाक्ष, विद्युन्माली आदि दैत्य अपने पुरों सहित शिवजी के प्रभावसे नष्ट भये यह दूसरेकी सामर्थ्य नहीं कि एक बाण करके तीनों पुरोंको भस्म करदेवे इस लिये सदाशिव के लिङ्गका पूजन करना उचित है शिवपूजासेही तुम्हारा कल्याण है इसलिये सदा श्रद्धा से शिवलिङ्ग के अर्चन में तत्पर रहो यह लोक शिवलिङ्गमय है और सम्पूर्ण लोक लिङ्ग में स्थितहैं इस कारण जो पुरुष अपनी सिद्धि चाहे वह सदा शिवलिङ्ग का पूजन करे देव, दैत्य, दानव, यक्ष,

राक्षस, सिद्ध, विद्याधर, गन्धर्व, किन्नर, पिशाच और मुनि सब लिङ्गार्चन करने से ही सिद्धिको प्राप्त भये हैं हम सब उस परमेश्वर के पशुहैं पाशुपतव्रत से पशुत्व को त्याग श्रीमहादेवजी की पूजामें तत्पर होना उचित है हे देवताओ! अब हम पाशुपतव्रत का विधान कहते हैं प्रणव करके पांच प्राणायामों से पञ्चभूतों को शुद्धकरे और प्रणव करके चार तीन और दो प्राणायाम क्रमसे करे फिर ओंकारका उच्चारणकर प्राण और अपान वायु को रोककर तीन गुण, मन, बुद्धि, अहंकार, चित्त, पञ्च-महाभूत और उनकी तन्मात्रा, ज्ञानेन्द्रिय, कर्मेन्द्रिय, विश्व, तैजस, प्राज्ञ शरीर को शुद्धकर चैतन्यरूप आत्मा को भावन कर पवित्र भस्म लेकर अग्निरित भस्म और त्रियायुषं इत्यादि मन्त्रोंकरके अभिमन्त्रितकर तीन काल शरीर को उस भस्मसे उद्धूलन करे वह योगी सब तत्त्व जाने यह पाशुपतव्रत पाशमोक्ष के लिये शिवजीने कहा है इस व्रतको करके हमने और विष्णुजीने सृष्टिमें जो लिङ्ग देखाथा उस लिङ्गाकार शिवका पूजन करे तो वर्ष भर में ही पशुपाशसे मुक्त होय हम सब शिवपूजनसेही बाह्य आभ्यन्तर कार्यों में समर्थ भये हैं हमारी विष्णु जी की और मुनियों की यही प्रतिज्ञाहै कि नित्य शिव पूजन करना। वह बड़ी हानिहै बड़ा छिद्र है महामोह है और मूकता है कि शिवस्मरण विना एक क्षण भी व्यतीत करना जे पुरुष शिवके भक्तहैं और निरन्तर शिवका स्मरण करतेहैं वे दुःखभागी नहीं होते उत्तम उत्तम प्रासाद, दिव्यभूषण, तृप्तिपूर्वक धन और मनको मोहन

करनेहारी नारी ये शिवकी पूजा किये विना नहीं मिलते जे पुरुष उत्तम भोग अथवा स्वर्ग के तुल्य राज्य चाहते हैं उनको सदा शिवाराधन करना योग्य है सब जीवों को मार और सम्पूर्ण जगत्का संहार करकेभी शिवलिङ्गपूजा करने से मनुष्य निष्पाप होजाते हैं इतना देवताओं के प्रति उपदेश देकर ब्रह्माजी आप शिवलिङ्गपूजन करने लगे और उत्तम उत्तम स्तोत्रों से शिवजी को सन्तुष्ट किया उस दिनसे इन्द्रादि देवताभी भस्म करके शरीर को उद्धूलनकर शिवपूजा करने में तत्पर भये॥

चौहत्तरवां अध्याय॥

सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो! ब्रह्माजीकी आज्ञा पाय विश्वकर्मा ने उत्तम उत्तम शिवलिङ्ग बनाय सब देवताओं को दिये इन्द्रनील मणि का लिङ्ग विष्णु भगवान् पूजने लगे पद्मराग का इन्द्र, सुवर्ण का कुबेर, चांदीका विश्वेदेवा, रांगेका वसु, पीतलका वायु, मृत्तिका का अश्विनीकुमार, स्फटिकका वरुण, ताम्रका आदित्य, मोती का चन्द्रमा, प्रवाल अर्थात् मूंगेका अनन्त आदि नाग, दैत्य और राक्षस लोहा का, गुह्यक त्रिलोह का, गण सर्वधातु का, चामुण्डा और मातृका सिकता अर्थात् बालूरेत का, निर्ऋति काष्ठका, यम मरकत अर्थात् पन्नेका, नील आदि रुद्र भस्मका, लक्ष्मी बिल्ववृक्षका, स्कन्द गोमयका, मुनि कुशाग्रों का, उग्रा पिष्ट अर्थात् आटेका, सब मन्त्र घृत का, वेद दधिका, वामा आदि शक्ति पुष्पों का, मनोन्मनी सुगन्धद्रव्यका, सरस्वती

रत्नका, दुर्गा हिम अर्थात् बर्फ़ का और सब पिशाच सीसे का शिवलिङ्ग बनाय पूजते हैं और सब सिद्धि पाते हैं बहुत कहने से क्या है निश्चय जानो यह चराचर जगत् लिङ्गकी पूजा करने सेही स्थिर द्रव्यों के भेद से छह प्रकार का लिङ्ग होता है और उन छह प्रकारोंके भी चवालीस भेद हैं प्रथम लिङ्ग शिला अर्थात् पाषाण काहै उसके चार भेदहैं दूसरा रत्नका उसके सात भेद हैं तीसरा धातुका जो आठ भेदों करके युक्त है चौथा काष्ठ लिङ्ग सोलह प्रकारका है पांचवां मृत्तिकाका लिङ्ग जिसके दो भेद हैं छठा क्षणिका अर्थात् रङ्ग आदि का बनाया जिसके सात भेद हैं रत्नका लिङ्ग लक्ष्मी देता है शिला का सब सिद्धि देनेहारा है धातु का धन देताहै काष्ठका भोग सिद्धिदायक है मृत्तिका का सर्वसिद्धिप्रद है पाषाण लिङ्ग उत्तम और धातुलिङ्ग मध्यम होताहै लिङ्गमें बहुत भेद हैं परन्तु नव तो मुख्य हैं मूल में ब्रह्मा मध्य में विष्णु अग्रभाग में रुद्र साक्षात् प्रणवरूप सदाशिव स्थितहैं और लिङ्ग की वेदी अर्थात् जलहरी त्रिगुणा ब्रह्मा, विष्णु, रुद्ररूप श्रीभगवती है वेदी युक्त शिवलिङ्ग का पूजन करने से शिव पार्वती दोनों की पूजा होतीहै शिलाका, रत्नका, धातुका, काष्ठका, मृत्तिकाका अथवा क्षणिकलिङ्ग स्थापन करनेहारा पुरुष अपने तेजसे सब लोकों को प्रकाशित करता हुआ ब्रह्माण्डको भेदन कर ऊर्ध्वगतिको प्राप्त होताहै और इन्द्र, ब्रह्मा, अग्नि, यम, वरुण, कुबेर आदि देवता उसकी स्तुति करते हैं और दुन्दुभि बजाते हैं जो पुरुष चन्द्र आदि सब चिह्नों करके

युक्त गोक्षीर अथवा कुन्दके पुष्पकी भांति शुक्लवर्ण और स्कन्द तथा पार्वती सहित शिवलिङ्ग स्थापन करे वह मनुष्यरूप धारे साक्षात् सदाशिवही है उस पुरुषके दर्शन और स्पर्श से भी मनुष्यों के पाप कटते हैं और उसके पुण्य का वर्णन तो हे मुनीश्वरो! सौ युगों में भी नहीं होसक्ता इसलिये लिङ्ग स्थापन अवश्य करना चाहिये क्योंकि शिवजी के सगुण रूप का सब ध्यान करसक्ते हैं और निर्गुण केवल योगीजनों के ध्यान करने योग्य है॥

पचहत्तरवां अध्याय॥

ऋषि पूछते हैं कि हे सूतजी! वह निष्कल, निर्मल नित्य परमेश्वर सकल अर्थात् सगुण क्योंकर भया यह आप वर्णन करें सूतजी इसप्रकार मुनियोंका प्रश्न सुन बोले कि हे मुनीश्वरो! परमेश्वर को कोई प्रणवरूप कहते हैं कोई उपनिषद् में प्रतिपादित ज्ञान स्वरूप मानते हैं शब्द आदि विषयों के ज्ञानको ज्ञान कहते हैं भ्रान्तिरहित वह ज्ञानही परमेश्वर है कोई ऐसा कहते हैं और कोई इसकाभी निषेध करते हैं परन्तु व्यास आदि मुनि निर्मल निर्विकल्प, निराश्रय, शुद्ध और गुरूपदिष्ट को ज्ञान कहते हैं ज्ञान से मुक्ति होती है और प्रसाद ज्ञानप्राप्ति का उपाय है दोनों से योगी मुक्त होता है और आनन्दमय होजाता है माया कल्पित रूप का अपनी इच्छासे हृदय में संहारकर निष्काम कर्मके साथ भी कोई कोई योगी ज्ञानकी संगति कहते हैं उस विराट्रूप सदाशिवका स्वर्ग मस्तक, भूलोक नाभि,

सोम व सूर्य और अग्नि तीनों नेत्र, दिशा कर्ण, पाताल चरण, समुद्र वस्त्र, देवता भुजा, नक्षत्र भूषण, प्रकृति पत्नी और पुरुष लिङ्ग है परमात्मा के मुख से ब्रह्माजी और ब्राह्मण उत्पन्न भये हैं इन्द्र उपेन्द्र अर्थात् विष्णु और क्षत्रिय परमेश्वर के भुजों से, वैश्य ऊरुसे, शूद्र चरणों से, पुष्करावर्त आदि मेघ केशोंसे, वायु नासिका से और श्रौत स्मार्त कर्म गति से उत्पन्न भये हैं सृष्टिके आरम्भमें इसीसे कर्मका प्रवर्तन करनेहारा पुरुष प्रकृति का प्रेरण करता है वह पुरुष मनुष्यों को ध्यान करके जानने योग्य है इन्द्रियोंसे उसका प्रत्यक्ष नहीं होता हज़ार कर्मयज्ञों से तपोयज्ञ अधिक है हज़ार तपोयज्ञों से जपयज्ञ, हज़ार जपयज्ञोंसे ध्यानयज्ञ अधिकहै ध्यान-यज्ञसे अधिक कोई यज्ञ नहीं ध्यानही ज्ञानका साधन है सम रसमें स्थित होकर योगी पुरुष ध्यानसे परमेश्वर को देखते हैं ध्यानयज्ञ में तत्पर योगीके सदा शिव समीप ही रहते हैं ज्ञानी पुरुषको शौच प्रायश्चित्त आदि की कुछ आवश्यकता नहीं ज्ञानी पुरुष ब्रह्मविद्या सेही शुद्ध होजाते हैं ध्यान करनेहारे पुरुषों को क्रिया, सुख, दुःख, धर्म, अधर्म, जप, होम आदिसे कुछ प्रयोजन नहीं उनके परमेश्वर सदा सन्निहित रहता है परम आनन्द स्वरूप निष्कल शिव अक्षर और सर्वव्यापी परमेश्वर योगियोंके हृदयकमलमें निवास करताहै लिङ्ग दोप्रकार का है एक बाह्य दूसरा आभ्यन्तर बाह्यलिङ्ग स्थूल है और आभ्यन्तर सूक्ष्म अज्ञानी पुरुषोंकी भावनाके लिये स्थूललिङ्ग की कल्पना है कर्मयज्ञ में आसक्त पुरुष

स्थूललिङ्गका अर्चन करते हैं आध्यात्मिक लिङ्ग जिन को प्रत्यक्ष नहीं होता वे मूढ़ बाहर स्थूललिङ्ग की कल्पना करते हैं सूक्ष्मलिङ्ग ज्ञानियों को प्रत्यक्ष होता है जिस भांति मृत्तिका काष्ठ आदि से कल्पित स्थूल-लिङ्गको अज्ञानी भावना करते हैं इसी भांति सूक्ष्मको ज्ञानी परन्तु वास्तवमें कुछ भेद नहीं स्थूल सूक्ष्म दोनों शिवकेही रूप हैं जैसे सर्वव्यापक आकाश घट आदिकों में परिच्छिन्न देख पड़ता है अथवा आकाशमें स्थित एक सूर्यबिम्ब जल आदि में अनेक रूप से दृष्टि आता है इसी प्रकार परमेश्वर एक है और अनेक रूपभी हैं स्वर्ग भू आदि लोकों में सब जीव पाञ्चभौतिक हैं परंतु जाति और व्यक्ति के भेदसे भिन्न भिन्न देख पड़ते हैं ऐसेही परमेश्वरमें भी भेद प्रतीत होताहै स्वप्नमें उत्तम भोगको प्राप्त होकर मनुष्य सुखी होताहै और दुःखके अनुभव से दुःखी होजाता है परन्तु विचार करने से न सुख है न दुःख इस भांति विचारसे परमेश्वर एक है संसारी जीवों के हृदयमें सगुण परमेश्वर है योगियों के निर्गुण और ज्ञानियों के जगन्मय अर्थात् सर्वव्यापक परमेश्वर है सकल, निष्कल और सर्वव्यापक ये तीन परमेश्वर के रूप हैं ज्ञानी पुरुष सदा सब स्थानमें सकल, निष्कल परमेश्वरकी पूजा करते हैं योगी सर्वज्ञ परमेश्वर को हृदय में पूजते हैं और अज्ञानी पुरुष सगुण परमेश्वर को अग्नि और शिवलिङ्ग में पूजते हैं गृहस्थ पुरुष अपने स्त्री पुत्रों सहित सगुण परमेश्वर का यजन करते हैं जैसे शिव वैसीही देवी हैं इसलिये अभेदबुद्धि से दोनों

का आराधन करना उचित है उत्तम पुरुष देहमें अथवा देहके बाहर परमेश्वर का यजन करते हैं चतुष्कोण, षडस्र, दशार, द्वादशार, षोडशार और त्र्यस्र इन मण्डलों में भगवती के सहित साक्षात् सदाशिव निवास करते हैं निर्गुण और निग्रह अनुग्रह में समर्थ वह परमेश्वर अपनी इच्छारूप देवी करके युक्त लोकों के उद्धार के लिये रूप धारकर स्थित होरहाहै उस परमेश्वरको एक अर्थात् अद्वितीय कहते हैं प्रकृति पुरुषरूप से द्विगुण है और ब्रह्मा विष्णु रुद्ररूप से वह त्रिगुण है और वेदको जाननेहारे पुरुष परमेश्वरको संसारका जनक अर्थात् उत्पन्न करनेहारा कहते हैं धर्म करके युक्त उत्तम ब्राह्मण भक्ति से और शुभयोग से षडस्रके बीच उस सर्वव्यापी शिव का पूजन करते हैं जो पुरुष त्रिकोण में त्रिगुण त्रिनेत्र भगवती सहित पुराणपुरुष सदाशिवका ध्यान करते हैं वे उस स्थान में प्राप्त होते हैं जो योगियोंको भी दुर्लभ है॥

छिहत्तरवां अध्याय॥

सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो! अब हम शिवजी की अनेकमूर्तियोंकी प्रतिष्ठाका फल कहतेहैं पार्वती और स्कन्दके सहित उत्तम सिंहासन पर बैठेहुये श्रीमहादेवजी की स्थापना करने से सब अभीष्ट फल मिलते हैं स्कन्द और पार्वतीजी सहित सदाशिवके पूजन करनेहारा पुरुष सूर्यके तुल्य प्रकाशमान विमान पर चढ़ अनेक गीत, वाद्य में कुशल दिव्य कन्याओं करके सहित शिवजी के लोकमें क्रीड़ा करताहै वहां सब भोग भोगकर पार्वतीजी

के लोकमें, स्कन्दलोकमें, ईशानलोक में, विष्णुलोक में, ब्रह्मलोक में, प्राजापत्यलोक में, जनलोक में और महर्लोकमें क्रमसे उत्तम उत्तम भोग करता हुआ इन्द्रलोक में आय अयुतवर्ष पर्यन्त इन्द्र होताहै फिर भुवर्लोक में दिव्यभोग भोगकर भूलोक में मेरुपर्वत के समीप इलावृतखण्डमें देवता होकर आनन्द करता है एकपाद, चतुर्भुज, त्रिनेत्र, त्रिशूल हाथमें लिये विष्णुजीको उत्पन्न कर वामभाग में स्थापन करे और ब्रह्माजी को दाहिनी ओर बैठाये, अट्ठाईस करोड़ रुद्र चारों ओर जिनके विराजमान अपने हृदयसे पुरुषको वामभाग से प्रकृति को, बुद्धि के स्थान से बुद्धि को, अहङ्कार से अहङ्कार को, तन्मात्राओं से तन्मात्रा, इन्द्रियों से इन्द्रिय, पादमूल से पृथिवी को, गुह्यस्थान से जल को, नाभि से अग्नि को, हृदय से सूर्य को, कण्ठ से चन्द्र को, भ्रूमध्य से आत्मा को और मस्तक से स्वर्ग को उत्पन्न करते हुये सर्वव्यापी सदाशिव को विधिपूर्वक स्थापन करनेहारा पुरुष शिवसायुज्य पाता है। तीन पाद, सात हाथ, चार शृङ्ग और दो शिर करके युक्त यज्ञ के स्वामी ईशान को स्थापन करनेहारा पुरुष विष्णुलोक पाता है वहां कई कल्प दिव्यभोग भोगकर भूमिपर आय सब यज्ञकर मुक्त होता है वृषके ऊपर आरूढ़ और चन्द्रकला करके भूषित शिवमूर्ति को स्थापन करनेवाला पुरुष दश हजार अश्वमेध के फल को प्राप्त हो विमान में बैठ शिवलोक में प्राप्त होता है और वहां बहुतकाल दिव्यभोग भोगकर मुक्ति पाता है नन्दी आदि सब गण

और पार्वतीजी सहित महादेवजी को स्थापनकर सूर्य-मण्डलके तुल्य देदीप्यमान विमान में विराजमान होकर अप्सराओं का नृत्य देखता हुआ शिवलोक में जाय गणों का अधिपति बनता है हज़ार भुजा अथवा चार भुजाओं करके युक्त पार्वतीजी सहित नृत्य करते हुये भृगु आदि मुनि तथा भूतों के समूह करके युक्त, वृषभ-ध्वज, ब्रह्मा, विष्णु, इन्द्र, चन्द्रआदि देवताओं करके वन्दित मुनि और मातृकाओं करके चारों ओर वेष्टित श्रीमहादेवजी का स्थापन करनेहारा पुरुष सम्पूर्ण यज्ञ, तप, दान, तीर्थ, देवपूजन आदि के फलसे कोटिगुण अधिक फल पाय शिवलोक में जाय दिव्यभोग भोग दूसरी सृष्टि में मनु होता है। नग्न, चतुर्भुज, त्रिनेत्र, श्वेतवर्ण, सर्प की मेखला पहिने, कपाल हाथ में लिये, कृष्ण और कुञ्चित केशों करके शोभायमान श्रीमहादेव जीको स्थापनकर शिवसायुज्य पाता है गजासुर को मारनेहारे पार्वतीजी सहित धूम्रवर्ण, रक्तत्रिनेत्र, चन्द्र-भूषण, मस्तकपर काकपक्ष धारे नाग, परशु, गदा और कपाल हाथों में लिये, सिंहचर्म का दुकूल अर्थात् दुपट्टा और मृगचर्म का वस्त्र धारण किये, तीक्ष्ण जिनकी दंष्ट्रा हुं फट्कार आदि महाशब्दों से सब दिशाओं को शब्दित करते हुये, व्याघ्रचर्म पहिने. हाथों में कमण्डलु लिये, हँसते, शब्द करते, अपने तेज करके अन्धकार-समुद्र को मानो पान करते, गणों के साथ नाचते और भूषणों से अतिभूषित शिवजी को अपनी सामर्थ्य के अनुसार विधिपूर्वक स्थापन करे तो बहुत काल शिव-

लोक में दिव्यभोगों को भोग अन्त में रुद्र से ज्ञान पाय मुक्त होजावे। अर्धनारीश्वर चतुर्भुज वर अभय त्रिशूल और पद्म अपने हाथों में धारण किये स्त्री और पुरुष के सब भूषणों से भूषित श्रीशंकर की मूर्ति को भक्तिसे स्थापनकर शिवलोक में प्राप्त होता है वहां अणिमा आदि सिद्धि पाय प्रलयपर्यन्त दिव्यसुख भोग अन्त में मुक्तिभागी होता है शिष्य प्रशिष्यों करके युक्त व्याख्या करते हुये और सर्वज्ञ लकुलीश नामक शिव-मूर्ति को स्थापनकर शिवलोक में जाय सौ युगपर्यन्त दिव्यभोगों को भोग मुक्त होता है ध्यानमुद्रा करके युक्त चिताभस्म लगाये त्रिपुण्ड्र धारे मुण्डमाला पहिने ब्रह्मा के केशों का यज्ञोपवीत और बायें हाथ में ब्रह्मा का कपाल धारण किये विष्णुजी के अवतार नृसिंहजी का चर्म ओढ़े श्रीसाम्बशिव को स्थापन कर संसार-सागर से मुक्त होता है अथवा ॐ नमो नीलकण्ठाय इस अतिपवित्र अष्टाक्षरमन्त्र को एक बार भी उच्चा-रण करने से सब पातक उपपातक दूर होते हैं और इसी मन्त्र से भक्ति करके शिवपूजन करनेहारा पुरुष शिवलोक में आनन्द से निवास करता है सुदर्शन चक्रसे जलन्धर दैत्यके दो खण्ड करते हुये शिवजी को स्थापनकर निःसन्देह शिवसायुज्य पाता है विष्णुजीने अपने नेत्रकमल करके पूजित और प्रसन्न हो विष्णुजी को सुदर्शनचक्र देते हुये श्रीशिवजी को स्थापनकर शिवलोकमें निवास करता है निकुम्भ नाम गणके पीठ पर दाहिना चरण रक्खे सिंहासनपर विराजमान वाम-

भागमें पार्वतीजी को बैठाये सर्पोंके भूषण पहिने अन्धकासुर जिनके आगे हाथ जोड़े खड़ा ऐसे श्रीमहादेवजी को भक्ति से स्थापनकर शिवसायुज्य पाता है पार्वती सहित चन्द्र मस्तक पर धारे रथ में आरूढ़ ब्रह्माजी जिनके सारथी त्रिपुरके संहारके लिये धनुषपर बाण चढ़ाये श्रीसदाशिव को स्थापन करनेहारा पुरुष शिवलोक में जाय मानो दूसरा शिवही हो क्रीड़ा करता है और जब तक उसकी इच्छा हो तब तक दिव्यभोग भोगकर अन्त में ज्ञान पाय मुक्त होता है सुखसे सिंहासन पर बैठे मस्तकपर गङ्गा और चन्द्रकला को धारण किये वामभाग में पार्वतीजी को बैठाये श्रीशंकर को स्थापन करे और उनके आसपास विनायक, स्कन्द, दुर्गा, भास्कर, सोम, ब्राह्मी, माहेश्वरी, कौमारी, वैष्णवी, वाराही, इन्द्राणी, चामुण्डा, वीरभद्र और विघ्नेश्वरकी मूर्ति स्थापन करे वह शिवसायुज्य पावे महाज्वालाकी मालाओं करके चारों ओर से वेष्टित लिङ्ग उसके मध्य में चन्द्रशेखर शिवलिङ्ग के ऊपर हंसरूप ब्रह्मा और लिङ्ग के अधोभाग में वराहरूप विष्णु ब्रह्मा दाहिने ओर हाथ जोड़े खड़े और प्रलयसमुद्र के मध्य में विराजमान ऐसे शिवलिङ्ग को स्थापन कर शिवसायुज्य पाता है क्षेत्रपाल और पशुपतिदेव को भी स्थापन कर शिवलोक में निवास करता है॥

सतहत्तरवां अध्याय॥

शौनक आदि ऋषि पूछते हैं कि हे सूतजी! आपने

लिङ्गप्रतिष्ठा का पुण्य लिङ्गों के भेद और लिङ्ग स्थापन का जो वर्णन किया वह आपके मुखसे हमने श्रवण किया अब आप मृत्तिकासे लेकर रत्नोंपर्यन्त शिवालय बनाने से जो फल होताहै उसको वर्णन कीजिये सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो! ज्ञानयुक्त शिवभक्त तो पुत्र, स्त्री आदि के बन्धन से भी नहीं बँधते उनको शिवालय आदि से क्या प्रयोजन है तथापि शिवभक्त ईंट पत्थर आदि से शिवालय निर्माणकर दिव्य विमान में बैठ ब्रह्मा विष्णु आदि देवोंके पूज्य श्रीसदाशिवके लोक को जाते हैं बाल्यावस्थासे लेकर कंकर पत्थर मृत्तिका आदि किसी पदार्थ का शिवलिङ्ग बनाय जो पुरुष भक्ति से नित्य पूजते हैं और इसीभांति शिवालयभी बनाते हैं वे साक्षात् रुद्र होजाते हैं इसलिये धर्म, काम, अर्थ की सिद्धि के लिये यत्न से भक्ति करके शिवालय निर्माण करना चाहिये केसर, नागर और द्राविड़ आदि जो शिवालयों के भेद शिल्पशास्त्र में प्रसिद्ध हैं उनमें से एक प्रकार का भी शिवालय बनानेवाला पुरुष शिवलोक में निवास करता है कैलास नामक प्रासाद जो परमेश्वरका निर्माण करावे वह कैलास के तुल्य विमान पर विराजमान हो कैलास को जाता है जो पुरुष भक्ति से उत्तम, मध्यम, अधम यथाशक्ति मन्दर नाम प्रासाद शिवजी के लिये बनवावे वह मन्दर पर्वत के तुल्य प्रकाशमान अप्सराओं से परिपूर्ण देवताओं को भी दुर्लभ विमान में आरूढ़ हो शिवलोक में जाय अभीष्टभोगों का भोग कर ज्ञानपाय गणपति होता है। मेरुनामक शिवप्रासाद

जो निर्माण करे वह सब यज्ञ, तप, दान, वेदाध्ययनके फलसे भी बहुत अधिक फलपाय शिवजीकी भांति शिवलोकमें विहार करता है। निषधनाम शिवमन्दिर जो भक्ति से बनवावे वहभी अवश्यही शिवलोक पावे हिमशैल नाम शिवमन्दिर जो पुरुष निर्माण करावे वह हिमालय के तुल्य ऊंचे विमानों पर चढ़ शिवलोक जाय दिव्य-ज्ञान को पाय गणों का स्वामी होता है। नीलाद्रिशिखर नाम प्रासाद बनानेहारा भी रुद्रलोक में प्राप्त हो रुद्रों के साथ क्रीड़ा करता है। महेन्द्रशैल नाम प्रासाद जो पुरुष भक्ति से निर्माण करे वहभी महेन्द्र पर्वत के तुल्य उत्तम विमानपर आरूढ़ हो शिवलोक में जाय दिव्य भोग भोगकर विषयोंको विषकी भांति त्याग ज्ञान पाय शिवसायुज्य पाता है। सुवर्ण करके अथवा रत्नों करके द्राविड़, नागर, केसर, कूट, मण्डप, सम दीर्घ आदि भेदों में से कोई एक शिवप्रासाद बनानेहारे का पुण्य हम सौ युग में भी नहीं वर्णन करसके जीर्ण गिराहुआ खण्डित फूटा टूटा महादेवजी का मन्दिर जो पुरुष पूर्ववत् बनवा दे पहले बनवानेवालेसे भी अधिक पुण्यका भागी होताहै अपनी जीविका के लिये भी जो पुरुष शिवालय में सेवा करे वहभी अपने बान्धवों सहित स्वर्गको जाय जो अपने भोग के लिये एक बार भी शिवालय में सेवा करे वहभी दिव्यभोग पावे। काष्ठ, ईंट, पाषाण आदि करके एक शिवालय भी भक्ति से बनाय पुरुष अवश्यही शिवलोक में वास पाते हैं। धर्म, अर्थ, काम, मोक्षकी प्राप्ति के लिये और शिवजी के प्रसाद के अर्थ एक शिवालय तो यथा-

कथञ्चित् निर्माण करानाही चाहिये जो शिवालय बनवाने को असमर्थ हो तो शिवालय में जाकर मार्जन आदि करे वह भी सब कामना पावे कोमल और सूक्ष्म मार्जनी अर्थात् झाड़ू से जो शिवालय में मार्जन करे वह पुरुष एक मास में हज़ार चान्द्रायण का फल पावे गोबर से जो शिवालय में लेपन करे वह वर्ष भर के चान्द्रायण का फल पावे शिवलिङ्ग के चारों ओर आध आध कोस पर्यन्त शिवक्षेत्र होता है उसमें जो पुरुष प्राण त्याग करे वह शिवसायुज्य पावे यह स्वायम्भुव ज्योतिर्लिङ्गका प्रमाण है और केवल स्वयम्भूलिङ्ग का क्षेत्र प्रमाण इससे आधाहै अर्थात् लिङ्गके चारों ओर पाव पाव कोस शिवक्षेत्र होता है मुनिस्थापित लिङ्गके क्षेत्रका प्रमाण इससे आधा है और मनुष्यस्थापित लिङ्ग तथा यति अर्थात् संन्यासियों के आवास का प्रमाण इससे भी आधा है और शिव के श्वेत आदि अवतारक्षेत्र में नरावतारक्षेत्र में तथा इनके शिष्य प्रशिष्यों के स्थापित शिवलिङ्गक्षेत्र में भी वही आध कोस का क्षेत्र प्रमाण है इन क्षेत्रों में जो प्राण त्यागे वह शिवलोक पावे। श्रीपर्वत में और उसके प्रान्त में जो प्राण त्याग करे वह शिवसायुज्य पावे। अविमुक्तक्षेत्र अर्थात् काशी, केदार, प्रयाग, कुरुक्षेत्र, प्रभास, पुष्कर, अवन्ती अर्थात् उज्जयिनी, अमरनाथ आदि सब शिवक्षेत्र हैं इनमें प्राण त्याग करने से शिवलोक मिलताहै काशीमें प्राण त्याग करनेहारा जीव कभी गर्भ में नहीं पड़ता। त्रिविष्टप, अविमुक्त, केदार, सङ्गमेश्वर, शालङ्क, जम्बुकेश्वर,

शुक्रेश्वर, गोकर्ण, भास्करेश्वर, गुहेश्वर, हिरण्यगर्भ, नन्दीश्वर आदि शिवक्षेत्रों में प्राण त्याग करने से मुक्ति मिलती है मानुष, आर्ष अथवा दैव शिवक्षेत्रोंमें जो पुरुष नियमों करके शरीर शुष्क करे अथवा स्वयम्भूक्षेत्र में तप आदि से देह सुखाय प्राण त्यागे वह अवश्यही परम गतिको प्राप्त हो शिवक्षेत्र में अग्नि प्रज्वलित कर भक्तिसे शिवजीकी पूजा करके उस प्रज्वलित अग्नि में अपनी देहका हवन करदे वहभी परम गति पावे भोजन को त्याग अर्थात् अनशन व्रत करके शिवक्षेत्र में प्राण छोड़े वह मुक्ति पावे और अपने दोनों पांव काटकर शिवक्षेत्र में जाय पड़े तो वह भी मुक्त हो। शिवक्षेत्र के दर्शन से बड़ा पुण्य होता है और क्षेत्र में प्रवेश करने से दर्शनसे शतगुणा पुण्य होता है स्पर्श और प्रदक्षिणा करने से इससे भी शतगुणा पुण्य है शिवलिङ्ग को जलसे स्नान करावे तो इससे भी शतगुणा अधिक पुण्य होता है दुग्ध के स्नान कराने से शतगुणा, दधि के स्नानसे सहस्रगुणा, मधु अर्थात् शहद के स्नान से शतगुणा, शर्करा के स्नानसे भी शतगुणा और घृत के स्नान से अनन्त पुण्य होता है। शिवक्षेत्र के समीप बहनेवाली नदी के तट पर बैठ अनशन व्रत से जो देह त्याग करे वह शिवलोक को जाय क्योंकि शिवक्षेत्र के समीप के वापी, कूप, तड़ाग, नदी आदि सब शिवतीर्थ होते हैं शिवतीर्थों में स्नान करने से मनुष्य के सब पाप कटजाते हैं प्रातःकाल के समय शिवतीर्थ में स्नान करने से पुरुष अश्वमेध

के फल को प्राप्त हो रुद्रलोक को जाता है मध्याह्न के स्नान से गङ्गास्नान के तुल्य फल होता है सायङ्काल को स्नान करनेहारा पुरुष पापकञ्चुक को त्याग शिवपद को प्राप्त होता है एक दिन भी शिवतीर्थ में तीन काल स्नान करनेहारा जीव अवश्य शिवलोकमें निवास करता है। पूर्वकाल में श्वानके भयसे एक शूकर शिवतीर्थ में गिरकर मरगया वह शङ्कर का गण भया जो पुरुष भक्ति से शिवतीर्थों में स्नान करते हैं उनके पुण्य की तो क्या गणना है प्रातःकाल के समय शिवलिङ्गको दर्शन करनेहारा पुरुष सब से उत्तम गति को प्राप्त होताहै मध्याह्न में दर्शन करनेहारा यज्ञ का फल पाता है और सायङ्काल के समय शिवलिङ्ग का दर्शन करने से कायिक, वाचिक, मानसिक पाप और पातक उपपातक आदिसे छूट अनेक यज्ञों के फलको प्राप्त हो मुक्ति पाता है संक्रान्ति के दिन शिवलिङ्ग का दर्शन करने से मानसिक पाप निवृत्त होते हैं दक्षिण उत्तर अयन अर्थात् कर्क, मकर की संक्रान्ति और विषुव अर्थात् मेष, तुलाकी संक्रान्ति के दिन शिवलिङ्ग की पूजा करने से परमगति को प्राप्त होता है सोमसूत्र की रीति से जो पुरुष शिवालय की धीरे धीरे तीन प्रदक्षिणा करे वह एक एक पदमें अश्वमेध के फलको प्राप्त होता है जो पुरुष ऊंचे शब्द करके शिवनाम उच्चारण करता है वह भी शिवस्थान को प्राप्त होता है सुन्दर हरे गोबर से भूमिको लीप उसमें मोती, इन्द्रनील, पद्मराग, स्फटिक, मरकत, सुवर्ण, चांदी आदिके चूर्ण और नील, पीत

आदि रङ्गों करके दश हाथ के विस्तार में कर्णिकायुक्त अतिमनोहर कमल लिख उससे वामा आदि नवशक्ति के सहित महादेवजी का आवाहन कर पूजा करे और बाहर पांच, छह, आठ, आठ, दश और दश आवरण देवताओं की क्रम से पूजा करे और नैवेद्य चढ़ाय परमेश्वरको बार बार प्रणाम करे तो भूमिदानके फलको प्राप्त हो निर्धन पुरुष पहिली रीति से शालिपिष्ट अर्थात् चावल आदि के चूर्ण से कमल लिखकर पूजा करे तो वहभी भूमिदान के फलको पावे रत्न चूर्णों करके बारह दलका कमल बनाय उसके मध्य में भास्करकी और दलों में बारह आदित्यों की पूजा करे और भास्कर के ओर पास ग्रहों को पूजे तो सूर्यलोकको जाय इसीप्रकार छह दलका कमल बनाय मध्यमें ब्रह्मरूपिणी प्रकृति उसके दहिनी ओर सत्त्वगुण बाईं ओर रजोगुण आगे तमोगुणको स्थापनकर पूजा करे और पांच महाभूत तथा पांच तन्मात्रा भगवती के दक्षिण भागमें पांच कर्मेन्द्रिय तथा पांच ज्ञानेन्द्रिय उत्तर भाग में और छह दलों में आत्मा अन्तरात्मा युगल बुद्धि अहंकार और महत्तत्त्वकी पूजा करे तो सब यज्ञों के फलको प्राप्तहो यह प्रकृतिमण्डलका विधान हमने कहाहै अब हे मुनीश्वरो! सर्वकाम सिद्ध करनेहारा और भी मण्डलपूजन कहते हैं गोचर्ममात्र भूमिको सुन्दर गोबरसे लीप चतुरस्र मण्डल बनाय उत्तम सुगन्ध जलसे अभ्युक्षण कर उसके चारों ओर सुवर्ण आदि के चार स्तम्भ खड़े कर उनके ऊपर वितान और छत्र लगाय वितानको

मोतियों की माला सुवर्ण के अर्धचन्द्र अश्वत्थपत्र फूले हुये श्वेत रक्त कमल और नीलोत्पल आदि से भूषितकर श्वेत वर्ण के ध्वज, श्वेत वर्ण के पात्र, सुलक्षणपूर्ण कुम्भ, फल, पत्र, पुष्प आदिकी माला, श्वेतवस्त्र, पचास घृत के दीप, पांच प्रकार के धूप आदि से मण्डल को अलंकृत करे उसके मध्य में एक हाथ के विस्तार में भांति भांति के रत्न चूर्ण अथवा रङ्गों से पचास दल करके युक्त अति मनोहर पद्म रचे उसकी कर्णिका में पार्वती सहित श्री महादेवजी और पूर्वादि दलसे लेकर रुद्रों के नाम करके अकार आदि पचास वर्ण दलों में स्थापन करे उन वर्णों के आदि में प्रणव और अन्त में नमः शब्द लगादेवे इस प्रकार पद्म रच सब उपचारों से उसके मध्य में साम्ब सदाशिवकी भक्ति करके पूजन करे और अन्त में अति शिवभक्त पचास ब्राह्मणों को भांति भांति के पदार्थों से विधिपूर्वक भोजन कराय जपमाला, यज्ञोपवीत, दण्ड, कमण्डलु, कुण्डल, छत्र, उपानह, आसन, पगड़ी, वस्त्र आदि उनको देवे और शिवजी को महाचरु निवेदन करके कृष्णवर्ण का गोमिथुन अर्थात् एक काली गौ और एक वृष चढ़ावे और भी जो मण्डल की सामग्री हो वह सब महादेवजीके अर्पण करे और ॐकार आदि प्रति-वर्ण उच्चारण करके मण्डल का विसर्जन करे इस प्रकार भक्ति से जो मण्डलपूजन करे वह विधिपूर्वक साङ्गवेद पढ़ने से जो फल होय ज्योतिष्टोम से लेकर विश्वजित् पर्यन्त यज्ञ करने से जो पुण्य होय आश्रम क्रमसे पुत्र उत्पन्नकर पत्नी और अग्नि समेत वानप्रस्थ आश्रम में

जाय चान्द्रायण आदि व्रतकर अन्त में सब कर्मोंका संन्यास कर ब्रह्मविद्याको पढ़ ज्ञान संपादन करने से जो फल योगी जनों को प्राप्त होय वह सब इस वर्ण मण्डल के दर्शन सेही मिलता है चाहे जिस प्रकारसे शिवालय के किसी ओर गोमय से भूमि को लीप रङ्ग से चतुष्कोण मण्डल बनावे और उसमें शिव पार्वतीका आवाहन कर गन्ध, पुष्प, अक्षत आदि उपचारों करके भक्तिसे पूजन करे तो सब पापों से मुक्त होजाय जो पुरुष शिवजी के गर्भगृह अर्थात् निज मन्दिर को चन्दन, कर्पूर आदि सुगन्ध द्रव्यों से लेपन करे और उसको पुष्प आदि से शोभित कर चार भांति के धूप से धूपित करे और पीछे भक्तिसे शिवजीकी स्तुतिकरे वह पुरुष शिवलोक में जाय सौ कोटि कल्पतक उत्तम उत्तम भोगोंको भोग गन्धर्व-लोक में आवे वहां भी बहुत काल आनन्दपूर्वक निवास कर भूमिपर आय चक्रवर्ती राजा होय हे मुनीश्वरो! आदिदेव श्रीमहादेवजी प्रलय, स्थिति और उत्पत्ति करनेहारे हैं और सर्वव्यापी तथा सब भुवनों के प्रभु हैं शिवरूप ब्रह्मसे मोक्षरूप अमृत सम्पादन करना उचित है और व्यक्त, अव्यक्त, नित्य और अचिन्त्य शिव का नित्य अर्चन करना योग्य है॥

अठहत्तरवां अध्याय॥

सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो! वस्त्रसे जलको छानकर शिवालयमें लेपन आदि सब काम करने चाहिये नहीं तो फल नहीं होता वस्त्रसे छानाहुआ, फेनरहित

विशेष करके नदीका जल शुद्ध होताहै सब देवकार्य और पितृकार्य शुद्ध जलसे करना चाहिये अतिसूक्ष्म जीव जलमें रहते हैं इसलिये बिन छाने जल करके क्रिया करने से वे सब मरजातेहैं और कर्ताको वह सम्पूर्ण पाप होताहै मार्जनी, चुल्ली, चक्की, ऊखल और जल का स्थान इनमें सदा गृहस्थों को हिंसा होतीहै परन्तु जहां तक हिंसा न हो वैसा उपाय करना चाहिये प्राणियों की हिंसा न करना यही परमधर्म है अभयदान सब दानों में उत्तमहै इसलिये सदा हिंसासे बचना योग्य है सब जीव मन, वचन, कर्म करके अहिंसक पुरुष की सदा रक्षा करतेहैं और हिंसक के सब शत्रु होजाते हैं वेदवेत्ता ब्राह्मण को संकल्पकर त्रैलोक्य देदेनेसे जो पुण्य होता है वहही फल कोटिगुणा अहिंसक पुरुष को मिलता है मन, वचन, कर्म करके लोक के हित में प्रवृत्त और दयालु पुरुष रुद्रलोक को जाते हैं अनेक कुटुम्बों को अपने पुत्र पौत्रों की भांति जो पुरुष स्वामी के तुल्य रक्षण करते हैं वे भी रुद्रलोक में निवास करते हैं इसलिये अहिंसा परमधर्म है इसीकारण वस्त्रपूत जलसे अभ्युक्षण स्नान आदि करने उचित हैं तीन लोक के जीवों को मारने से जितना पाप होता है उससे भी अधिक पाप शिवालय में एक जीव मारने से होजाता है शिवजी के अर्थ पुष्पहिंसा करना उचित है यज्ञमें पशुहिंसा और क्षत्रियों को दुष्टहिंसा विहित है परन्तु योगी और ब्रह्मवादी पुरुषों को हिंसा विहित नहीं है ब्रह्मवादी पुरुष को सर्व कर्मका त्याग करने से किसी

जीवकी हिंसा करना भी अनुचित है नारी चाहे पाप कर्म में भी प्रवृत्तहो पर उसकी सदा रक्षा करनी ही योग्य है घात न करना चाहिये अत्रि के कुलमें उत्पन्न भई स्त्री सदा पवित्र है इसीसे अत्रिगोत्र की स्त्री के वध करने से ब्रह्महत्या के तुल्य पाप होताहै कोई भी स्त्री वध्य नहीं है और इसीसे नरमेध आदि यज्ञ में भी स्त्री का ग्रहण करना योग्य नहीं चारों वर्णों में मलिना, सुरूपा, कुरूपा, दुष्टा चाहे जैसी स्त्रीहो परन्तु वह अवध्य ही है और उसको अग्नि के तुल्य जानना चाहिये वेद-विरुद्ध व्रत और आचार आदिमें प्रवृत्त श्रौत स्मार्त धर्म से विमुख पाखण्डी पुरुषों को कभी ब्राह्मण आदि उत्तम वर्ण स्पर्श न करें और न उनसे संभाषण करें अधिक क्या कहें ऐसे पुरुषोंका दर्शन करके भी सूर्य भगवान् का दर्शन करने से मनुष्य शुद्ध होता है परन्तु ऐसे दुष्ट पुरुषों को भी मारना अनुचित है अर्थात् उनकी रक्षाही करना योग्य है वे भी वध्य नहीं हैं प्रसङ्ग से सत्पुरुषों का समागम पाय जो पुरुष भक्ति से एक बारभी शिव पूजन करे वह शिवलोक में निवास करे जो पुरुष दयासे हीन और शिवजी से विमुख होते हैं वे सदा दुःख भोगते हैं और जो शिवभक्त हैं जीवों पर करुणा करते हैं वे भाग्यवान् इसी लोकमें सब उत्तम उत्तम भोग भोगकर अन्त में मुक्त होते हैं पुत्र, स्त्री आदि में जैसा मनुष्यों का चित्त आसक्त होता है वैसा सत्सङ्ग पाय कदाचित परमेश्वर में आसक्त हो तो स्वर्ग समीपही समझो ॥

उन्नासीवां अध्याय ॥

शौनक आदि ऋषि पूछते हैं कि हे सूतजी ! कलियुग के अल्पायुष्, अल्पबल, अल्पसत्त्व, मन्दबुद्धि और मन्दभाग्य मनुष्य क्योंकर शिवजी का आराधन करसकते हैं क्योंकि हज़ारों वर्ष देवता लोग तप करते हैं तौभी शिवका दर्शन नहीं पाते इन मनुष्यकीटों की तो क्या गणना है यह मुनियों का वचन सुन सूतजी बोले कि हे मुनीश्वरो ! यह तो आप ठीकही कहते हैं तौ भी श्रद्धासे शिवजी महाराज का दर्शन और उनसे सम्भाषण होसकता है जो भक्ति से हीनभी पुरुष प्रसङ्गसे शिवपूजा करते हैं उनको भी परमेश्वर भावनाके अनुकूल फल देताहै जो पुरुष उच्छिष्ट होकर शिवपूजन करताहै वह पिशाचलोकमें प्राप्त होताहै क्रुद्ध होकर पूजाकरनेहारा राक्षसलोक को, अभक्ष्य पदार्थका भक्षणकर पूजाकरनेवाला यक्षलोकको, गानमें आसक्त होकर शिवपूजन करनेवाला गन्धर्वलोकको, स्त्रीमें आसक्त और मद्यपानसे मत्त होकर पूजा करनेहारा पुरुष सोमलोकको जाताहै गायत्री मन्त्र करके शिवजी का पूजनकरने से प्राजापत्यलोक मिलता है प्रणवकरके पूजनसे ब्रह्मलोक और आदरपूर्वक पूजन करने से विष्णुलोक की प्राप्ति होती है जो पुरुष एक बार भी श्रद्धाकरके शिवपूजनकरे वह शिवलोक में जाय रुद्रों के साथ विहार करे शिवलिङ्ग को पवित्र जलसे शुद्ध करके धर्म, ज्ञान, [illegible]ग्य और ऐश्वर्य रूप पीठके ऊपर ॐकार पद्म और [illegible] ऊपर सोम सूर्य और अग्निके

मण्डल कल्पना कर उनके ऊपर लिङ्ग स्थापनकरे फिर पाद्य, अर्घ्य, आचमन समर्पण कर सुन्दर गङ्गाजल आदि अतिनिर्मल जलसे स्नान कराय दुग्ध, दधि, घृत, शहद और शर्करा से स्नान करावे पीछे शुद्ध जल से लिङ्ग को स्नान कराय श्वेत वस्त्र से पोंछ अपने सम्मुख पीठपर विराजमान कर चन्दन, कस्तूरी, गोरोचन आदि द्रव्यों से लिङ्ग को लेपन करे भांति भांति के उत्तम सुगन्ध युक्त पुष्प, अखण्डित बिल्वपत्र, रक्तकमल, नीलोत्पल, पुण्डरीक अर्थात् श्वेतकमल, नन्द्यावर्त अर्थात् तगर पुष्प, मल्लिका, चम्पा, चमेली, बकुल, करवीर, शमी-पुष्प, धतूरेके पुष्प, अगस्त्यपुष्प, अपामार्ग, कदम्ब-पुष्प और नाना प्रकार के भूषण परमेश्वर को चढ़ाय पांच प्रकारकी धूपसे धूपितकर पायस अर्थात् खीर, दही, भात और घृतसे परिप्लुत मूंग, चावल अथवा भांति भांति के रस जो मिलसकें और अनेक प्रकार के फल शिवजीको निवेदन करे अथवा अतिशुक्ल चार सेर पक्के चावलों का भात, घृत, शर्करा युक्त महादेवजी को नैवेद्य लगावे नैवेद्य के अनन्तर आचमन देकर ताम्बूल चढ़ावे और प्रदक्षिणा कर बार बार प्रणाम करे और स्तुति करके ईशान, तत्पुरुष, अघोर, वामदेव और सद्योजात मन्त्रोंसे शिवजीका पूजन करे इस प्रकार पूजन करनेसे श्रीमहादेवजी प्रसन्न होते हैं जिनके पुष्प, पत्र आदि शिवजीको चढ़ावे वे वृक्ष और जिनका दुग्ध, दधि आदि शिवजी के निमित्त लगे वे गौवें परमगतिको प्राप्त होती हैं जो एकबार भी शिवजीका पूजनकरे वह

शिवलोक में प्राप्तहो और उसकी पुनरावृत्ति न हो पूजित शिवलिङ्गके एकबार भी दर्शन करने से सब पापों से मुक्त होजाताहै पूजन करते को जो देखे और पूजनका अनुमोदन करे वहभी शिवलोक में जाय जो पुरुष शिवलिङ्ग के आगे घृतका दीपक एकबार भी चढ़ावे वह मुनियों को भी दुर्लभ जो गतिहै उसको पावे पाषाणका, धातुका अथवा काष्ठका दीप वृक्ष शिवजीके आगे निवेदन करे तो अपने सौ कुलोंका उद्धार करे लोह, ताम्र, चांदी अथवा सुवर्णका दीप जो भक्ति से महादेवजीको अर्पण करे वह अयुत सूर्यों के समान प्रकाशमान विमान में विराजमान होकर शिवलोक को जाय कार्त्तिक के महीने में जो शिवजी को घृत दीप निवेदन करे और पूजित शिवलिङ्ग का श्रद्धा से दर्शन करे वह ब्रह्मलोक में निवास करे आवाहन, सान्निध्य, स्थापन और पूजन रुद्रगायत्री से करे। आसन प्रणव करके और स्नान पञ्चब्रह्ममन्त्र तथा रुद्र करके शिवलिङ्ग का पूजन करे। उनके दक्षिण भाग में प्रणव करके ब्रह्माजी का और वाम भाग में गायत्री करके विष्णुजी का पूजन करे। पीछे पञ्चब्रह्ममन्त्र और प्रणव करके संस्कृतअग्नि में हवन करे इस भांति नित्य शिवपूजन करनेहारा पुरुष ब्रह्म सायुज्य को प्राप्त होताहै। शिवजी के मुखसे श्रवण करके जो लिङ्गार्चन विधि वेदव्यासजी ने वर्णन की वह हमने संक्षेप से आपसे कही है॥

अस्सीवां अध्याय॥

शौनक आदि ऋषि पूछते भये कि हे सूतजी! पशुपति के दर्शन से पशुपाश विमोक्षण कैसे होताहै और देवताओं ने पशुत्व क्योंकर त्याग किया यह सब आप हमको श्रवण करावें। मुनियों का प्रश्न सुन सूतजी कहने लगे कि हे मुनीश्वरो! एक समय कैलास शिखरके ऊपर भोग्य नाम अपने नगरमें पार्वतीजी सहित शिव जी विराजमान थे। इस अवसर में सब देवता एकत्र हो उनके दर्शन को आये और हंसपर चढ़कर ब्रह्माजी तथा गरुड़ पर आरूढ़ विष्णुजी उनके साथ आये। कैलास में पहुँच इन्द्र, यम, सिद्ध, साध्य आदि देवगण शिवजी को प्रणाम करते हुये और पीछे विष्णुजी भी गरुड़से उतर अति मनोहर कैलास पर्वत पर चढ़ने लगे और देखते भये कि धव, खदिर, पलाश, आम्र, चन्दन आदि उत्तम उत्तम वृक्षोंसे पर्वत परिपूर्ण है। चारों ओर झरने गिररहे हैं वृक्षों पर कोकिल आदि पक्षी अपनी अपनी मधुरवाणी से मनको लुभाते हैं। सरोवरों में हंस क्रीड़ा कर रहे हैं कुररपक्षी अतिमुदित हो जलमें कल्लोलें करते हैं किसी ओर से किन्नरियों के गान का मधुर शब्द सुन पड़ता है। कहीं फूले हुये बकुल, अशोक, तिलक, कुरवक, कदम्ब, तमाल आदि वृक्षोंपर भ्रमर गुञ्जार कररहे हैं। फूले कमलों के सुगन्ध और शीतल जलकणों को लिये बहता हुआ मन्द मन्द पवन परिश्रम को हरता है। इसभांति चारोंओर

पर्वत की शोभा देखते हुये सब देवताओं सहित श्रीविष्णुजी शिखर के ऊपर पहुँचे और वहां शिवजी के विहार के लिये विश्वकर्मा का बनाया अति उत्तम नगर देखा और दूरसे प्रणाम किया। स्त्री, पुरुष, हाथी, घोड़े, रथ और गणों से परिपूर्ण मणियों से जड़े सुवर्ण के अति ऊंचे प्रासादों से शोभित उस नगरमें सब देवताओं सहित ब्रह्माजी और विष्णुजी प्रसन्न हो शिवजी को प्रणामकर प्रवेश करते भये। भीतर जाय दूसरा पुर देखा जिसमें बड़े बड़े ऊंचे मणियों के महल और भांति भांति के उपवन शोभित हैं। उसमें प्रवेशकर तीसरा नगर देखते भये जहां हीरा, पन्ना, मोती आदिकी जाली झरोखों व प्रासादों में लगी हैं घण्टाओं करके युक्त दोला अर्थात् हिंदोले लटकते हैं उनपर अति सुन्दरी गणोंकी स्त्रियां झूल रही हैं। किसी ओर मृदङ्ग, वीणा, मुरज आदि वाद्य बजते हैं और अप्सराओं का नृत्य होरहा है प्रासाद ऐसे मनोहर हैं कि जिनके आगे इन्द्रभवन भी लजाय उन प्रासादों के ऊपर अति रूपवती युवती जिनके नेत्र मदसे घूर्णित होरहे हैं हाथों में पुष्प, फल, अक्षत लिये खड़ी हैं। वे सब भगवान् को देख उनके ऊपर पुष्पवृष्टि करनेलगीं और अति प्रसन्न हो नाचने और गाने लगीं। कोई भगवान्‌को देख जिनके वस्त्र और काञ्ची शिथिल होगये हँसकर हावभाव करने लगीं। इस प्रकार चारोंओर उन चतुर नारियों का चमत्कार निहारते हुये विष्णु भगवान् क्रमसे चौथे, पांचवें, छठे, सातवें, आठवें, नवें और दशवें पुरको अतिक्रमण कर अति

शोभित ग्यारहवां शिवजी का मुख्य नगर देखते भये। जो सूर्यमण्डल के तुल्य विमान स्फटिक, सुवर्ण, रत्न आदि के मण्डप और ऊंचे ऊंचे नगर द्वारोंसे चारों ओर शोभित था और जिसमें गुह्यक, विद्याधर, गन्धर्वों के घर ऐसे उत्तम बने थे कि उनमें रहने के लिये देवताओं का भी मन चलता था। वह नगर बड़े दृढ़ अट्ठाईस प्राकारों करके वेष्टित था और जिसके भीतर पद्मराग आदि उत्तम मणियों से बने अनेक प्रासाद गणेश और स्कन्द के थे। चन्दन आदि उत्तम उत्तम वृक्षों के उपवन और क्रीड़ा के लिये जिनके मध्य में वापी और तड़ाग बनरहे जिनमें सुवर्णकी सीढ़ी लगीं और हंस, कारण्डव, चक्रवाक आदि पक्षी जलमें और मयूर, कोकिल आदि तट पर लताओं के कुञ्जोंमें विहार करते थे और उन वापियों के जल में अति मधुर बोलनेहारी सब भूषणोंसे भूषित स्तन भारसे झुकी हुई मदकरके आघूर्णित हज़ारों गणों की कन्या और अप्सरा जलक्रीड़ा करती थीं और श्रुति, ग्राम आदि गीत लक्षणों से युक्त गान करती थीं यह शिवजी की विभूति देख देवता अति विस्मित भये और दूसरी ओर देखा तो हज़ारों गण उपवनों में विहार कर रहे हैं और सुवर्ण के सोपानों करके युक्त हीरा, पन्ना, स्फटिक आदिके विमान अर्थात् सात खण्डके महल मन को हरते हैं। जिनके ऊपर कमलके तुल्य नेत्र, पद्मगर्भ के समान वर्ण और चन्द्र के समान जिनके वदन हार, नूपुर आदि अनेक उत्तम भूषणों से भूषित उत्तम उत्तम अनेक वर्ण के अति सूक्ष्म और मृदु वस्त्र ओढ़े रति में

अति कुशल विद्याधरी, किन्नरी, यक्षिणी, गन्धर्व और नागों की स्त्रियां खड़ी हैं। इसप्रकार देवाङ्गना और गणों के ऐश्वर्य को देखते हुये सब देवता नगर के मध्यमें हज़ारों सूर्य के समान प्रकाशित शिवजी के प्रासादके द्वारपर पहुँचे। वहां सुवर्णदण्ड हाथमें लिये नन्दीश्वर को देख सबने प्रणाम किया और ऊंचे स्वर से जय शब्द भी किया उनको देख अति प्रसन्न हो नन्दी कहते भये हे देवताओ! आप सब लोकोंके स्वामी हैं जिस कार्य के निमित्त आपका आगमन हुआ हो हमसे कहें हम अभी श्रीमहादेवजी के समीप आपका वृत्तान्त निवेदन करेंगे यह सुन देवता कहते भये कि पुरत्रयदग्ध करनेके समय शिवजीने हम सबको पशु होने की आज्ञादी तब हम बहुत शङ्कित भये हमको शङ्कित देख महादेवजीने पाशुपत व्रतका उपदेश किया और कहा कि इसव्रत को बारह वर्ष बारह मास अथवा बारह दिनही करने से पशुत्व निवृत्त होता है सो हम सब अब पशुपाश की निवृत्ति के लिये आये हैं आप शीघ्र श्रीमहादेवजी का दर्शन करावें यह देवताओं की बिनती सुन नन्दी विष्णु आदि देवगण को श्रीमहादेवजी का दर्शन कराते भये देवता भी श्री शङ्कर का दर्शन पाय प्रीति से बारम्बार प्रणामकर हाथ जोड़ पशुपाश मोक्ष के लिये प्रार्थना करते भये महादेव जी उनकी प्रार्थना सुन पशुत्व निवृत्त करने के अर्थ सब मुनि और देवताओं को पाशुपत व्रत का उपदेश भली भांति फिर भी करते भये उस दिन से देवता पाशुपत और उनके उपास्य देव श्रीशङ्कर पशुपति कहाये देवता

भी शिवजीसे उपदेश पाय बारह वर्ष पर्यन्त पाशुपत व्रत और तप करके मुक्तपाश भये और शिवजी को प्रणाम कर सब अपने अपने लोक को गये॥

सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो! यह सब कथा ब्रह्माजी ने सनत्कुमारजी से कही और सनत्कुमार जी ने श्रीवेदव्यास जी को सुनाई वेदव्यासजी से मैंने पाई और आपको श्रवण कराई इस कथा को जो सुने अथवा ब्राह्मणों को सुनावे वह पशुपाश से मुक्त होय॥

इक्यासीवां अध्याय॥

ऋषि कहते हैं कि हे सूतजी! यह पाशुपत व्रत तो आपने वर्णन किया परन्तु पूर्वकाल में देवताओं ने जो लिङ्गव्रत किया उसका वर्णन हम श्रवण किया चाहते हैं यह मुनियों का प्रश्न सुन सूतजी कहने लगे कि हे मुनीश्वरो! यही बात सनत्कुमार जी नन्दी के प्रति पूछते भये और नन्दीश्वर ने जो उनको कथन किया वह हम आपको सुनाते हैं॥

नन्दी कहते हैं देवता, दैत्य, सिद्ध, गन्धर्व, चारण और मुनि सबने अतिउत्तम और पशुपाश को निवृत्त करनेहारा द्वादशलिङ्ग नाम व्रत पूर्वकाल में किया है जो व्रत योग, भोग, मोक्ष और मनोभीष्ट देनेहारा है भक्तों का भय निवृत्त करता है अङ्गों सहित वेदों का मथन करके शिवजी ने उत्पन्न किया है सब दानों से और दश हज़ार अश्वमेध से भी अधिक पुण्य देनेहारा है सब मङ्गल देता है ज्वर, शत्रु और व्याधियों का हरने

हारा है संसारसमुद्र में मग्न जीवोंका उद्धार जिस व्रत के किये से होता है और ब्रह्मा, विष्णु आदि देवताओं ने जिस व्रतसे अपने अभीष्ट फल पाये हैं उस व्रतका विधान हम आपसे कथन करते हैं हे सनत्कुमारजी ! आप श्रवण करें चैत्र मास से व्रतका आरम्भ करे कर्णिका और केशरों करके युक्त सुन्दर सुवर्ण का कमल बनाय उसकी कर्णिका में स्फटिक का स्थूल शिवलिङ्ग जलहरी समेत स्थापन करे और चन्दन आदि के सुगन्ध जलसे लिङ्गको स्नान कराय गन्ध, पुष्प, अक्षत आदि चढ़ाय रुद्रगायत्री से बिल्वपत्र, पुण्डरीक, नीलोत्पल, रक्तकमल, अर्कपुष्प, कर्णिकार, करवीर, बकपुष्प आदि जो पुष्प मिलें सब चढ़ावे फिर नैवेद्य लगाय आरती कर अघोरमन्त्र करके दक्षिण और अगुरु, सद्योजात से पश्चिमकी ओर मनःशिला, वामदेव मन्त्र करके उत्तर की ओर चन्दन और तत्पुरुष मन्त्र करके पूर्व की ओर हरिताल चढ़ावे। श्वेत, कृष्ण, अगुरु और गुग्गुलका अति सुगन्ध युक्त धूप धूपित करे और सितार नामक धूप भी भक्तिसे देवे पीछे महाचरु अथवा चार सेर अन्नका नैवेद्य महादेवजी का लगाय स्तोत्र पाठ कर विसर्जन करे यह तो सब महीनोंमें सामान्य शिवलिङ्ग व्रत का विधान है और विशेष यह है कि वैशाख में हीरे का लिङ्ग ज्येष्ठमें मरकत अर्थात् पन्ने का आषाढ़ में मौक्तिक का श्रावण में नीलमणि का भाद्र में पद्मराग का आश्विन में गोमेद का कार्त्तिक में प्रवाल का मार्गशीर्ष में वैडूर्य का पौषमें पुष्पराग का माघ में सूर्यकान्त का

और फाल्गुन में स्फटिक का लिङ्ग पूजना चाहिये। सब महीनों में सुवर्ण के कमल अथवा चांदी के और जो चांदी का भी न मिले तो कमलपुष्प से ही पूजा करे लिङ्ग भी रत्न का उत्तम होता है जो रत्न न मिले तो सोना, चांदी, तांबा, लोहा, पाषाण, काष्ठ, मृत्तिका आदि किसी पदार्थ का लिङ्ग बनाय पूजन करे और सबके अभाव में सर्व गन्धमय क्षणिक लिङ्ग ही कल्पना करके पूजे हेमन्त ऋतु में बिल्वपत्र से शिव पूजन करे सुवर्ण का अथवा चांदी का कमल चढ़ावे और हज़ार पुष्प कमलके भी चढ़ावे जो हज़ार फूल न मिलें तो पांच सौ अढ़ाई सौ अथवा अष्टोत्तरशत ही कमलपुष्प समर्पण करे। बिल्वपत्रमें लक्ष्मी, नीलोत्पल में अम्बिका, उत्पलमें स्कन्द और कमलमें साक्षात् शिवजीका निवास है परन्तु बिल्वपत्र का शिवपूजा में कभी त्याग न करना चाहिये। नीलोत्पल, उत्पल और कमल भी यथालाभ परमेश्वर को समर्पण करने योग्य हैं कमल से सर्व वश्य होता है मनःशिलासे सब कामनायें सिद्ध होती हैं अगुरु, गुग्गुल आदि के धूपसे पाप दूर होते हैं और दीप निवेदन से रोग दूर होते हैं चन्दन से सब सिद्धियां मिलती हैं सौगन्धिक धूप श्वेत कृष्ण अगुरु का धूप और सितार धूप साक्षात् निर्वाण सिद्धि देनेहारा है श्वेतार्क के पुष्प में ब्रह्मा, कर्णिकार में सरस्वती, करवीर में गणेश, बकपुष्प में साक्षात् नारायण और सम्पूर्ण सुगन्धित पुष्पों में श्रीभगवती का निवास है। इस कारण इन पुष्पों से और धूप दीप आदिकोंसे यथालाभ परमेश्वर का पूजन

करे। फिर भक्तिसे घृत और व्यञ्जन सहित पायस तथा महाचरु निवेदन करे चार सेर अथवा दो सेर भात अथवा मूंग भात का नैवेद्य लगावे नैवेद्य के अनन्तर आचमन देकर छत्र, चामर, व्यजन आदि उपचार श्रीशिवजी के अर्पण करे अनेक प्रकार के उपहार जलसे प्रोक्षित और पवित्र श्रीशङ्कर को निवेदन करे क्षीरसे सब देवताओं के लिये विष्णुजी ने अमृत निकाला है अन्नसे सब जगत् का निर्वाह है और जीवों को अन्न देने से परमेश्वर सन्तुष्ट होते हैं इसलिये क्षीर और अन्नसे परमेश्वरका पूजन करना उचित है उपहार में तुष्टि होती है गन्धयुत जलमें वरुण का निवास है पीठ अर्थात् जलहरी में महत्तत्त्व आदि युक्त प्रकृतिका निवास है प्रतिमास पूर्णिमा और अमावास्या को परमेश्वर की प्रीतिके लिये यह व्रत करना योग्य है। सत्य, शौच, दया, शान्ति, सन्तोष और दान से व्रत सफल होता है इस प्रकार एक वर्ष पर्यन्त व्रत पूरा करके व्रतका उद्यापन करे गोदान और वृषोत्सर्ग करके वेदवेत्ता ब्राह्मणों को भोजन करावे और सब सामग्री सहित पूजित लिङ्ग शिवक्षेत्र में स्थापन करे अथवा ब्राह्मण को देदेवे इस व्रत को भक्ति से जो पुरुष सब महीनों में करे वह ही तपस्वियों में श्रेष्ठ है और कोटि सूर्य के तुल्य देदीप्यमान विमान पर बैठ शिवलोक में जाता है और सदा वहांही निवास करता है एक महीने भी जो इस व्रतको करे वह भी शिवसायुज्य पावे इसमें कुछ सन्देह नहीं यह सब फल निष्काम व्रत करने से होता है और जो

पुरुष कामना से व्रत करे वह भी निश्चयही एक वर्ष में अपनी इच्छाफल करे देवता, पितर, इन्द्रगण आदिका उत्तमपद इस व्रतके प्रभाव से मिले विद्यार्थी विद्या पावे, भोग की इच्छावाला भोग और आयुष् की इच्छावाला पूर्ण आयुष् पावे, धनकी कामना से यह व्रत करे तो निधि पावे और भी जो जो कामना करे सब मासव्रत के करनेसे ही उस पुरुष को मिलें देवता, असुर, सिद्ध, विद्याधर आदिकों के हितके लिये अति पवित्र यह व्रत-रहस्य शिवजीनेही रचा है इस व्रत को कर प्रीतिसे शिवपूजन करे और पूजा के अन्तमें पुत्र पौत्रों सहित प्रदक्षिणा कर भक्तिसे बारम्बार प्रणाम करे और हाथ जोड़ व्यपोहन नामस्तोत्र शिवजीके आगे पढ़े वह व्यपोहन स्तोत्र जगत्‌हित के लिये सब देवताओं सहित ब्रह्माजीने किया है यह अति दुर्लभ है ॥

बयासीवां अध्याय ॥

सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो ! नन्दीश्वरके मुख से सनत्कुमार ने, सनत्कुमार से श्रीवेदव्यासजीने और वेदव्यासजीसे हमने सब सिद्धियों का देनेहारा और परम पवित्र जो व्यपोहनस्तव सुना है वह आपको श्रवण कराते हैं भक्ति से सुनो ॥

स्तोत्रम् ॥ नमः शिवाय शुद्धाय निर्मलाय यशस्विने। दुष्टान्तकाय शर्वाय भवाय परमात्मने १ पञ्चवक्त्रो दशभुजो यक्षपञ्चदशैर्युतः। शुद्धस्फटिकसंकाशः सर्वाभरणभूषितः २ सर्वज्ञः सर्वगः शान्तः सर्वोपरिसु-

संस्थितः । पद्मासनस्थः सोमेशः पापमाशु व्यपोहतु ३ ईशानः पुरुषश्चैव अघोरः सद्य एव च । वामदेवश्च भगवान् पापमाशु व्यपोहतु ४ अनन्तः सर्वविद्येशः सर्वज्ञः सर्वदः प्रभुः।शिवध्यानैकसम्पन्नः स मे पापं व्यपोहतु ५ सूक्ष्मः सुरासुरेशानो विश्वेशो गणपूजितः । शिवध्यानैकसम्पन्नः स मे पापं व्यपोहतु ६ शिवोत्तमो महापूज्यः शिवध्यानपरायणः । सर्वगः सर्वदः शान्तः स मे पापं व्यपोहतु ७ एकाक्षो भगवानीशः शिवार्चनपरायणः । शिवध्यानैकसम्पन्नः स मे पापं व्यपोहतु ८ त्रिमूर्तिर्भगवानीशः शिवभक्तिप्रबोधकः।शिवध्यानैकसम्पन्नस्स मे पापं व्यपोहतु ९ श्रीकण्ठः श्रीपतिः श्रीमाँश्शिवध्यानरतः सदा । शिवार्चनरतः साक्षात् स मे पापं व्यपोहतु १० शिखण्डी भगवाञ्छान्तः शवभस्मानुलेपनः । शिवार्चनरतः श्रीमान् स मे पापं व्यपोहतु ११ त्रैलोक्यनमिता देवी सोल्काकारा पुरातनी । दाक्षायणी महादेवी गौरी हैमवती शुभा १२ एकपर्णाग्रजा सौम्या तथा चैवैकपाटला । अपर्णा वरदा देवी वरदानैकतत्परा १३ उमा सुरहरा साक्षात् कौशिकी वा कपर्दिनी । खट्वाङ्गधारिणी दिव्या कराग्रतरुपल्लवा १४ नैगमेयादिभिर्दिव्यैश्चतुर्भिः पुत्रकैर्वृता । मेनाया नन्दिनी देवी वारिजा वारिजेक्षणा १५ अम्बाया वीतशोकस्य नन्दिनश्च महात्मनः । शुभावत्याः सखी शान्ता पञ्चचूडा वरप्रदा १६ सृष्ट्यर्थं सर्वभूतानां प्रकृतित्वं गताव्यया । त्रयोविंशतिभिस्तत्त्वैर्महदाद्यैर्विजृम्भिता १७ लक्ष्म्यादिशक्तिभिर्नित्यं नमितानन्दनन्दिनी । मनोन्मनी महादेवी

मायावी मण्डनप्रिया १८ मायया या जगत्सर्वं ब्रह्माद्यं सचराचरम् । क्षोभिणी मोहिनी नित्यं योगिनां हृदि संस्थिता १९ एकानेकस्थिता लोके इन्दीवरनिभेक्षणा । भक्त्या परमया नित्यं सर्वदेवैरभिष्टुता २० गणेन्द्राम्भोजगर्भेन्द्रयमवित्तेशपूर्वकैः । संस्तुता जननी तेषां सर्वोपद्रवनाशिनी २१ भक्तानामार्तिहा भव्या भवभावविनाशिनी । भुक्तिमुक्तिप्रदा दिव्या भक्तानामप्रयत्नतः २२ सा मे साक्षान्महादेवी पापमाशु व्यपोहतु । चण्डः सर्वगणेशानो मुखाच्छम्भोर्विनिर्गतः । शिवार्चनरतः श्रीमान्स मे पापं व्यपोहतु २३ शालङ्कायनपुत्रस्तु हलमार्गोत्थितः प्रभुः । जामाता महतां देवः सर्वभूतमहेश्वरः २४ सर्वगः सर्वदृक् शर्वः सर्वेशसदृशः प्रभुः । सनारायणकैर्देवैस्सेन्द्रचन्द्रादिवाकरैः २५ सिद्धैश्च यक्षगन्धर्वैर्भूतैर्भूतविधायकैः । उरगैर्ऋषिभिश्चैव ब्रह्मणा च महात्मना २६ स्तुतस्त्रैलोक्यनाथस्तु मुनिरन्तःपुरस्थितः । सर्वदा पूजितः सर्वैर्नन्दी पापं व्यपोहतु २७ मेरुमन्दरकैलासतटकूटप्रभेदनः । ऐरावतादिभिर्दिव्यैर्दिग्गजैश्च सुपूजितः २८ सप्तपातालपादश्च सप्तद्वीपोरुजङ्घकः । सप्तार्णवांकुशश्चैव सर्वतीर्थोदरः शिवः २९ आकाशदेहो दिग्वासाः सोमसूर्याग्निलोचनः । हतासुरमहावृक्षो ब्रह्मविद्यामहोत्कटः ३० ब्रह्माद्याधोरणैर्दिव्यैर्योगपाशसमन्वितैः । बद्धो हृत्पुण्डरीकाख्ये स्तम्भे वृत्तिं निरुध्य च ३१ नागेन्द्रवक्त्रो यः साक्षाद्गणकोटिशतैर्वृतः । शिवध्यानैकसम्पन्नः स मे पापं व्यपोहतु ३२ भृङ्गीशः पिङ्गलाक्षोऽसौ भसिताशस्तु देहयुक् । शिवार्चनरतः

श्रीमान् स मे पापं व्यपोहतु ३३ चतुर्भिस्तनुभिर्नित्यं सर्वा-
सुरनिबर्हणः । स्कन्दः शक्तिधरः शान्तः सेनानीः शिखि-
वाहनः ३४ देवसेनापतिः श्रीमान् स मे पापं व्यपोहतु ।
भवः सर्वस्तथेशानो रुद्रः पशु पतिस्तथा ३५ उग्रो भीमो
महादेवश्शिवार्चनरतः सदा । एताः पापं व्यपोहन्तु
मूर्तयः परमेष्ठिनः ३६ महादेवः शिवो रुद्रः शङ्करो नील-
लोहितः । ईशानो विजयो भीमो देवदेवो भवोद्भवः ३७
कपालीशश्च विज्ञेयो रुद्रा रुद्रांशसम्भवाः । शिव-
प्रणामसम्पन्ना व्यपोहन्तु मलं मम ३८ विकर्तनो
विवस्वाँश्च मार्तण्डो भास्करो रविः । लोकप्रकाशकश्चैव
लोकसाक्षी त्रिविक्रमः ३९ आदित्यश्च तथा सूर्यश्चां-
शुमाँश्च दिवाकरः । एते वै द्वादशादित्या व्यपोहन्तु
मलं मम ४० गगनं स्पर्शनस्तेजो रसश्च पृथिवी
तथा । चन्द्रः सूर्यस्तथात्मा च तनवः शिवभाषिताः ४१
पापं व्यपोहन्तु मम भयं निर्णाशयन्तु मे । वासवः पाव-
कश्चैव यमो निर्ऋतिरेव च ४२ वरुणो वायुसोमौ च
ईशानो भगवान् हरिः । पितामहश्च भगवाञ्छिव-
ध्यानपरायणः ४३ एते पापं व्यपोहन्तु मनसा कर्मणा
कृतम् । नभस्वान् स्पर्शनो वायुरनिलो मारुत-
स्तथा ४४ प्राणः प्राणेशजीवेशौ मारुताश्शिव-
भाषिताः । शिवार्चनरतास्सर्वे व्यपोहन्तु मलं मम ४५
खेचरी वसुचारी च ब्रह्मेशो ब्रह्म ब्रह्मधीः । सुषेणः
शाश्वतः पुष्टः सुपुष्टश्च महाबलः ४६ एते वै चारणाः
शम्भोः पूजयातीवभाविताः । व्यपोहन्तु मलं सर्वं पापं
चैव मया कृतम् ४७ मन्त्रज्ञो मन्त्रवित्प्राज्ञो मन्त्रराट्

सिद्धपूजितः। सिद्धवत्परमः सिद्धः सर्वसिद्धिप्रदायिनः४८
व्यपोहन्तु मलं सर्वं सिद्धाशिवपदार्चकाः । यक्षोयक्षेश-
वनदो जृम्भको मणिभद्रकः ४९ पूर्णभद्रेश्वरो माली
शितिकुण्डल एव च। नरेन्द्रश्चैव यक्षेशा व्यपोहन्तु मलं
मम ५० अनन्तः कुलिकश्चैव वासुकिस्तक्षकस्तथा ।
कर्कोटको महापद्मः शङ्खपालोमहाबलः ५१ शिवप्रणाम-
सम्पन्नाशिवदेहविभूषणाः । मलं पापं व्यपोहन्तु विषं
स्थावरजङ्गमम् ५२ वीणाज्ञः किन्नरश्चैव सुरसेनः प्रम-
र्दनः । अतीशयः सप्रयोगी गीतज्ञश्चैव किन्नराः ५३
शिवप्रणामसम्पन्ना व्यपोहन्तु मलं मम । विद्याधरश्च
विबुधो विद्याराशिर्विदांवरः ५४ विबुद्धो विबुधः श्रीमान्
कृतज्ञश्च महायशाः । एते विद्याधरास्सर्वे शिवध्यानपरा-
यणाः ५५ व्यपोहन्तु मलं घोरं महादेवप्रसादतः। वाम-
देवो महाजम्भः कालनेमिर्महाबलः ५६ सुग्रीवो मर्द-
कश्चैव पिङ्गलो देवमर्दनः। प्रह्लादश्चाप्यनुह्लादः संह्लादः
कलिवाष्कलौ ५७ जम्भः कुम्भश्च मायावी कार्तवीर्यः
कृतंजयः । एतेऽसुरा महात्मानो महादेवपरायणाः ५८
व्यपोहन्तु भयं घोरमासुरं भावमेव च। गरुत्मान्खगति-
श्चैव पक्षिराण्नागमर्दनः५९ नागशत्रुर्हिरण्यांगो वैनतेयः
प्रभंजनः । नागाशीर्विषनाशश्च विष्णुवाहन एव च६०
एते हिरण्यवर्णाभा गरुडा विष्णुवाहनाः । नानाभरण-
सम्पन्ना व्यपोहन्तु मलं मम ६१ अगस्त्यश्च वशिष्ठश्च
अङ्गिरा भृगुरेव च। कश्यपो नारदश्चैव दधीचिश्च्यवन-
स्तथा ६२ उपमन्युस्तथान्ये च ऋषयः शिवभाविताः।
शिवार्चनरतास्सर्वे व्यपोहन्तु मलं मम ६३ पितरः

पितामहाश्चैव तथैव प्रपितामहाः। अग्निष्वात्ता बर्हिषद-स्तथा मातामहादयः ६४ व्यपोहन्तु भयं पापं शिवध्यान-परायणाः। लक्ष्मीश्च धरणी चैव गायत्री च सरस्वती६५ दुर्गा उमा शची ज्येष्ठा मातरः सुरपूजिताः। देवानां मातर-श्चैव गणानां मातरस्तथा ६६ भूतानां मातरस्सर्वा यत्र या गणमातरः । प्रसादाद्देवदेवस्य व्यपोहन्तु मलं मम ६७ उर्वशी मेनका चैव रम्भारतितिलोत्तमाः । सुमुखी दुर्मुखी चैव कामुकी कामवर्धिनी ६८ तथान्या सर्वलोकेषु दिव्याश्चाप्सरसस्तथा । शिवाय ताण्डवं नित्यं कुर्वन्त्योऽतीवभाविताः ६९ देव्यः शिवार्चनरता व्यपोहन्तु मलं मम । अर्कः सोमोऽङ्गारकश्च बुधश्चैव बृहस्पतिः ७० शुक्रः शनैश्चरश्चैव राहुः केतुस्तथैवच। व्यपोहन्तु भयं घोरं ग्रहपीडां शिवार्चकाः ७१ मेषो वृषोऽथ मिथुनस्तथा कर्कटकः शुभः । सिंहश्च कन्या विपुला तुला वै वृश्चिकस्तथा ७२ धनुश्च मकरश्चैव कुम्भो मीनस्तथैव च। राशयो द्वादश ह्येते शिवपूजा-परायणाः ७३ व्यपोहन्तु भयं पापं प्रसादात्परमेष्ठिनः। अश्विनी भरणी चैव कृत्तिका रोहिणी तथा ७४ श्री-मन्मृगशिराश्चार्द्रा पुनर्वसुपुष्यसार्पकाः। मघा वै पूर्व-फाल्गुन्य उत्तराफाल्गुनी तथा ७५ हस्तश्चित्रा तथा स्वाती विशाखा चानुराधिका। ज्येष्ठा मूलं महाभागा पूर्वा-षाढा तथैव च ७६ उत्तराषाढिका चैव श्रवणं च श्रवि-ष्ठिका। शतभिषक् पूर्वभद्रा च तथा प्रोष्ठपदा तथा ७७ पौष्णं च देव्यः सततं व्यपोहन्तु मलं मम। ज्वरः कुम्भोदरश्चैव शंकुकर्णो महाबलः ७८ महाकर्णः

प्रभातश्च महाभूतप्रमर्दनः। श्येनजिच्छिवदूतश्च प्रमथाः प्रीतिवर्धनाः ७९ कोटिकोटिशतैश्चैव भूतानां मातरस्सदा। व्यपोहन्तु भयं पापं महादेवप्रसादतः ८० शिवध्यानैकसम्पन्नो हिमराडम्बुसन्निभः। कुन्देन्दुसदृशाकारः कुम्भकुन्देन्दुभूषणः ८१ वडवानलशत्रुर्यो वडवामुखभेदनः। चतुष्पादसमायुक्तः क्षीरोद इव पाण्डुरः ८२ रुद्रलोके स्थितो नित्यं रुद्रैस्सार्धं गणेश्वरैः। वृषेन्द्रो विश्वधृग्देवो विश्वस्य जगतः पिता ८३ वृतो नन्दादिभिर्नित्यं मातृभिर्मखमर्दनः। शिवार्चनरतो नित्यं स मे पापं व्यपोहतु ८४ गङ्गा माता जगन्माता रुद्रलोके व्यवस्थिता। शिवभक्ता तु या नन्दा सा मे पापं व्यपोहतु ८५ भद्रा भद्रपदा देवी शिवलोके व्यवस्थिता। माता गवां महाभागा सा मे पापं व्यपोहतु ८६ सुरभिस्सर्वतोभद्रा सर्वपापप्रणाशिनी। रुद्रपूजारता नित्यं सा मे पापं व्यपोहतु ८७ सुशीला शीलसम्पन्ना श्रीप्रदा शिवभाविता। शिवलोके स्थिता नित्यं सा मे पापं व्यपोहतु ८८ वेदशास्त्रार्थतत्त्वज्ञः सर्वकार्याभिचिन्तकः। समस्तगुणसम्पन्नः सर्वदेवेश्वरात्मजः ८९ ज्येष्ठः सर्वेश्वरः सौम्यो महाविष्णुतनुः स्वयम्। आर्यः सेनापतिः साक्षाद् गहनो मखमर्दनः ९० ऐरावतगजारूढः कृष्णाकुञ्चितमूर्धजः। कृष्णाङ्गो रक्तनयनः शशिपन्नगभूषणः ९१ भूतैः प्रेतैः पिशाचैश्च कूष्माण्डैश्च समावृतः। शिवार्चनरतः साक्षात् स मे पापं व्यपोहतु ९२ ब्रह्माणी चैव माहेशी कौमारी वैष्णवी तथा। वाराही चैव माहेन्द्री चामुण्डाग्नेयिका तथा ९३ एता वै

मातरः सर्वाः सर्वलोकप्रपूजिताः । योगिनीभिर्महापापं व्यपोहन्तु समाहिताः ९४ वीरभद्रो महातेजा हिमकुन्देन्दुसन्निभः । रुद्रस्य तनयो रौद्रः शूलासक्तमहाकरः ९५ सहस्रबाहुः सर्वज्ञः सर्वायुधधरः स्वयम् । त्रेताग्निनयनो देवस्त्रैलोक्याभयदः प्रभुः ९६ मातॄणां रक्षको नित्यं महावृषभवाहनः । त्रैलोक्यनमितःश्रीमाञ्छिवपादार्चने रतः ९७ यज्ञस्य च शिरश्छेत्ता पूष्णोदन्तविनाशनः । वह्नेर्हस्तहरः साक्षाद्भगनेत्रनिपातनः ९८ पादांगुष्ठेन सोमाङ्गपेषकः प्रभुसंज्ञकः । उपेन्द्रेन्द्रार्यमादीनां देवानामङ्गरक्षकः ९९ सरस्वत्या महादेव्या नासिकोष्ठावकर्तनः । गणेश्वरो यः सेनानी स मे पापं व्यपोहतु १०० ज्येष्ठा वरिष्ठा वरदा वराभरणभूषिताः। महालक्ष्मीर्जगन्माता सा मे पापं व्यपोहतु १०१ महामोहा महाभागा महाभूतगणैर्वृता । शिवार्चनरता नित्यं सा मे पापं व्यपोहतु १०२ लक्ष्मीः सर्वगुणोपेता सर्वलक्षणसंयुता । सर्वगा सर्वदा देवी सा मे पापं व्यपोहतु १०३ सिंहारूढा महादेवी पार्वत्यास्तनयाऽव्यया । विष्णोर्निद्रा महामाया वैष्णवी सुरपूजिता १०४ त्रिनेत्रा वरदा देवी महिषासुरमर्दिनी । शिवार्चनरता दुर्गा सा मे पापं व्यपोहतु १०५ ब्रह्माण्डधारका रुद्राः सर्वलोकप्रपूजिताः । सत्याश्च मानसाः सर्वे व्यपोहन्तु भयं मम १०६ भूताः प्रेताः पिशाचाश्च कूष्माण्डगणनायकाः। कूष्माण्डकाश्च ते पापं व्यपोहन्तु समाहिताः १०७ इति॥

सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो! प्रतिमास शिवपूजा करके अन्त में इस स्तोत्रको पढ़े और दण्डवत् प्रणाम

करके पूजा समाप्त करे इस स्तोत्रको जो पढ़े अथवा सुने वह सब पापों से छूट रुद्रलोक में निवास करे इस स्तोत्र के पाठ से धन, भोग, विद्या, विजय, पुत्र, स्त्री आदि सब अभीष्ट पदार्थ मिलते हैं और भी जो जो कामनायें हों सब बहुत शीघ्र सिद्ध होती हैं और देवताओं की प्रीति होती है जिस रोगी के निमित्त इस स्तोत्रको पढ़े उसका रोग निवृत्त हो अकालमृत्यु न हो सर्पादि दंश न करें तीर्थ, दान, यज्ञ, व्रत आदि के पुण्यसे कोटिगुण पुण्य इस स्तोत्रके पाठसे मिलता है गोहत्या, ब्रह्महत्या, वीर-हत्या, मातृहत्या, पितृहत्या, शरणागतघात, विश्वास-घात और कृतघ्नता आदि भी बड़े बड़े पाप इस स्तोत्र के पाठमात्रसे निवृत्त होते हैं और अन्त में शिवलोक मिलता है ॥

तिरासीवां अध्याय ॥

शौनकादिक ऋषि कहते हैं कि हे सूतजी! लिङ्गदान के प्रसंग में आपके मुख से सब पाप हरनेहारा व्यपो-हनस्तव सुना अब आप व्रतों का वर्णन कीजिये यह मुनि वचन सुन सूतजी कहने लगे कि हे मुनीश्वरो! अति मङ्गलदायक व्रत जो नन्दी ने सनत्कुमार से कथन किया वही हमने व्यासजी से श्रवण किया और अब हम आपको सुनाते हैं। दोनों पक्षकी अष्टमी और चतु-र्दशी को दिनमें उपवास करे और सायंकाल शिवपूजन कर रात्रिको भोजन करे एक वर्ष इस प्रकार व्रत करनेसे सब यज्ञफलोंको प्राप्त हो शिवलोक को जाता है पर्वदिनों

में उपवास कर शिवपूजन करे और रात्रिको पृथ्वी पर अन्न आदि रखकर भोजन करे पात्रमें भोजन न करे तो एक दिनके व्रत से तीन व्रतका फल पावे महीने की दोनों पञ्चमी और दोनों प्रतिपदा को उपवास करे और शिवपूजन कर रात्रिको केवल दुग्धपान करे तो अश्वमेध का फल पावे कृष्णाष्टमी से कृष्ण चतुर्दशी पर्यन्त नित्य रात्रिको भोजन करे तो सब भोगों को भोग ब्रह्मलोक को जाय। जो पुरुष एक वर्ष पर्यन्त प्रतिपर्व में अर्थात् अमावास्या और पूर्णिमाको नक्तव्रत करे और ब्रह्मचारी जितक्रोध और शिवजीके ध्यानमें तत्पर रहे वर्षके अन्त में ब्राह्मणभोजन कराय व्रत समाप्त करे वह अवश्य शिवलोक को जाय उपवास से अधिक पुण्य भिक्षा में और भिक्षा से अधिक अयाचित अर्थात् विना मांगे जो मिल जाय उससे निर्वाह करने में और अयाचित से भी अधिक पुण्य नक्तव्रत अर्थात् व्रत करके रात्रिको भोजन करे तो होता है इस कारण नक्तव्रत सब से उत्तम है पूर्वाह्न में देवता भोजन करते हैं, मध्याह्न में ऋषि, मध्याह्न के अनन्तर पितर और सायंकाल के समय गुह्यक आदि भोजन करते हैं इसलिये सबके भोजन समयको बिताय नक्त भोजन करना उत्तम है हविष्यलघु अर्थात् हलका भोजन रात्रिको करे और सत्य, शौच, दया, ब्रह्मचर्य, भूमिशयन और अग्निहोत्र करे तब व्रतका पूर्ण फल प्राप्त होता है हे मुनीश्वरो! अब हम प्रतिमास का व्रत कहते हैं जिसके करने से धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष की प्राप्ति हो तथा सब पापभी निवृत्त हों जो पुरुष

पौषमास में सत्यवादी, जितक्रोध होकर नित्य चावल, गोधूम आदि हविष्य अन्न रात्रिके समय भोजन करे और दोनों अष्टमियों को उपवास करे और भूमि पर सोवे पूर्णिमा के दिन घृत आदिसे शिवजी को स्नान कराय क्षीर, घृत, चावल आदि नैवेद्य लगावे और शिष्ट ब्राह्मणों को उत्तम उत्तम पदार्थ भोजन करावे शान्तिपाठ पढ़े कपिल वर्णका गोमिथुन शिवजी को चढ़ावे वह अग्निलोक में जाय दिव्य भोग भोगकर मुक्ति पावे जो पुरुष माघमास में जितेन्द्रिय होकर रहे और रात्रिके समय घी खिचड़ी खाय दोनों चतुर्दशीको उपवास करे और पूर्णिमाके दिन शिवजी को घृत कम्बल चढ़ावे और कृष्ण गोमिथुन महादेवजी के अर्पण कर ब्राह्मणभोजन करावे वह यमलोक में जाय आनन्द से निवास करे फाल्गुन में श्यामाक घृत क्षीर आदि पदार्थ रात्रि के समय भोजन करे चतुर्दशी और अष्टमी को उपवास कर पूर्णिमा को भक्ति से शिवपूजन कर लाल रंग का गोमिथुन चढ़ावे और ब्राह्मणभोजन करावे वह चन्द्रलोक पावे चैत्रमास में रात्रि के समय घृत, दुग्ध और भात खावे गोशाला में भूमि पर सोवे पौर्णमासी को शिवपूजन कर श्वेतवर्णका गोमिथुन चढ़ावे और ब्राह्मणभोजन करावे वह निर्ऋतिलोक में जावे इसी भांति वैशाख मास में नक्तव्रत करे और पूर्णिमा को पंचगव्य, पंचामृत आदि से शिवजी को स्नान करावे और भक्ति से सब पूजाकर श्वेतवर्ण का गोमिथुन अर्पण करे और ब्राह्मणों को प्रीति से भोजन करावे

वह अश्वमेध का फल पावे ज्येष्ठ मास में घृत, सहत और लाल चावल रात्रिके समय भोजन कर आधी-रात्रि पर्यन्त गौ की सेवा करे और पूर्णमासी को शिव-पूजाकर चरु निवेदन करे और धूम्रवर्ण का गोमिथुन चढ़ाय ब्राह्मणभोजन करावे वह वायुलोक में निवास करे इसी भांति आषाढ़ मास में भी नक्तव्रत करे और रात्रिको घृत, शर्करा युक्त सत्तू और दही दूध भोजन करे पूर्णिमाके दिन घृत आदि से शिवलिंग को स्नान कराय विधिपूर्वक पूजा करे और गौरवर्ण का गोमिथुन चढ़ाय वेदवेत्ता ब्राह्मणों को श्रद्धासे भोजन करावे तो वरुणलोक पावे श्रावणमें नक्तव्रत करके दूध और साठी के चावलों का भात रात्रिके समय भोजन करे और पूर्णमासी को घृत आदिसे शिवलिंगको स्नान कराय पूजा करे और चित्रवर्ण तथा श्वेत पादों करके युक्त गोमिथुन निवेदन कर ब्राह्मणभोजन करावे वह वायु-लोक में जाय और वायुकी भांति सर्वगामी हो जाय भाद्रपद में नक्तव्रत कर हवन शेष रात्रि के समय भोजन करे और दिनमें वृक्ष के नीचे रहे पूर्णिमाको शिवपूजन कर नीलस्कन्ध वृष और गो चढ़ाय ब्राह्मणों को भोजन कराय यक्षलोक पावे और यक्षों का राजा होय आश्विन में नक्तव्रत कर घृत सहित भोजन करे और पूर्णिमा को शिवपूजन कर नीलवर्णकी छातीवाला ऊंचा वृषभ और गौ महादेवजी को चढ़ाय ब्राह्मणों को भोजन करावे तो ईशानलोक पावे कार्त्तिक में नक्तव्रत कर रात्रिको दूध भात और घृत भोजन करे पूर्णिमा को शिवपूजन कर

चरु निवेदनकर कपिल वर्ण गोमिथुन चढ़ावे और भक्ति से ब्राह्मणों को भोजन करावे तो सूर्यलोक में निवास करे मार्गशीर्ष में नक्तव्रतकर रात्रिके समय घृत दुग्ध सहित यवान्न अर्थात् जौ खाय और पूर्णिमा को शिव-पूजन कर पाण्डुरवर्ण का गोमिथुन चढ़ाय वेदवेत्ता और दरिद्र ब्राह्मणों को भोजन करावे तो निस्सन्देह सोमलोक में निवास करे अहिंसा, सत्य, स्तेय अर्थात् चोरी न करना, ब्रह्मचर्य, दया, क्षमा, तीन काल स्नान, अग्नि-होत्र, भूशय्या, नक्तभोजन, दोनों पक्षों की चतुर्दशी और अष्टमी को उपवास यह प्रतिमास साधारण शिवव्रतकी विधि है चाहे तो इस विधि से एक वर्ष व्रत करे अथवा प्रतिमासकी जो भिन्न भिन्न विधि कही है उस रीतिसे व्रत करे वह ज्ञानयुक्त योग को प्राप्त हो शिवसायुज्य पावे॥

चौरासीवां अध्याय॥

सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो! स्त्री पुरुषों के कल्याण के लिये शिवजी का कहा उमामहेश्वर व्रत हम वर्णन करते हैं आप श्रवण कीजिये एक वर्ष पर्यन्त पूर्णिमा, अमावास्या, चतुर्दशी और अष्टमीको नक्त-व्रत कर रात्रि को हविष्य भोजन करे और शिवपूजा करे इस प्रकार एक वर्ष व्रतकर सुवर्ण की अथवा चांदी की उमामहेश्वरकी प्रतिमा बनवाय विधिपूर्वक प्रतिष्ठा करे और यथाशक्ति ब्राह्मणों को भोजन कराय दक्षिणा देवे और मूर्ति को रथ में बैठाय छत्र, चामर आदि लगाय शिवालय में लेजावे और वहां मूर्ति स्थापन

कर वर्ष भर का व्रत निवेदन करे वह पुरुष शिवसायुज्य पावे और स्त्री भगवती के समीप जावे कन्या अथवा विधवा स्त्री ब्रह्मचर्य से अष्टमी और चतुर्दशी को एक वर्ष उपवास करे और वर्षके अन्तमें पूर्व रीति से प्रतिमा बनाय शिवालय में स्थापन कर ब्राह्मणों को भोजन करावे और व्रत निवेदन करे वह स्त्री पार्वतीजी के समीप निवास करे जो स्त्री केवल चतुर्दशी को वर्षभर व्रत करे और पूर्व रीति से चाहे जिस पदार्थ की मूर्ति बनाय पूजा करे और ब्राह्मण भोजन कराय व्रत निवेदन करे वह भी देवीलोक में जाय जो नारी अमावास्या के दिन वर्षपर्यन्त निराहार व्रत करे और वर्ष के अन्त में शिव-लिङ्ग को स्नान कराय भक्ति से श्वेतवर्ण के हज़ार कमल चढ़ावे और एक चांदी का कमल जिसकी कर्णिका सुवर्ण की हो महादेवजी को निवेदन करे और एक त्रिशूल भी चढ़ावे वह सब ज्ञात अज्ञात भ्रूणहत्या आदि पापों को उसी शूल से भेदन करे और पार्वतीजी के सायुज्य को प्राप्त होय और पुरुष इस व्रत को करे तो रुद्रलोक पावे एक वर्षपर्यन्त अमावास्या और पूर्णिमा को जो स्त्री अथवा पुरुष उपवास करे और वर्ष के अन्त में सब गन्धों करके युक्त प्रतिमा निवेदन करे वह निश्चय भवानी का सायुज्य पावे परन्तु स्त्री व्रत, उप-वास, जप, तप, दान आदि सब कर्म पति की आज्ञा से करे क्योंकि स्त्री को कभी स्वातन्त्र्य नहीं है कार्त्तिक की पूर्णिमाको क्षमा, अहिंसा, ब्रह्मचर्य आदि गुणों से युक्त होकर एकभक्त व्रत करे अर्थात् एक बार भोजन करे

और एक भार काले तिल दान कर ब्राह्मणको देवे घृत, गुड़ सहित भात शिवजी को नैवेद्य लगावे और भी यथा-शक्ति ब्राह्मण को दान देवे वह नारी पार्वतीजी के समीप निवास करे क्षमा, सत्य, दया, दान, शौच, इन्द्रियनिग्रह और शिवपूजन ये सब व्रतों में आवश्यक हैं अब नन्दी का कथन कियाहुआ मार्गशीर्ष से कार्त्तिकपर्यन्त प्रति-मास का विधान कहते हैं मार्गशीर्ष की पौर्णमासी को एक बहुत उत्तम ऊंचा श्वेतवर्ण का बैल अलंकृत कर शिवजी को जो स्त्री चढ़ावे वह पार्वतीजी के समीप जावे पौषमास में पूर्वोक्त सब विधि करके त्रिशूल अर्पण करे, माघ में सब लक्षणों करके युक्त रथ परमेश्वर की पूजा करके अर्पण करे और ब्राह्मणभोजन करावे फाल्गुन में सुवर्ण चांदी अथवा ताम्र की मूर्ति बनाय विधिपूर्वक शिवालय में स्थापन करे और ब्राह्मणभोजन करावे चैत्र में शिव पार्वती और स्कन्दकी मूर्ति बनवाय विधि से स्थापन करे वैशाख में चांदी का कैलासपर्वत बनाय उसमें रत्नजटित शिवालय निर्माणकर शिव, पार्वती, गणेश, स्कन्द और गणों को विधि से स्थापन कर ब्राह्मणभोजन करावे और उस कैलास को शिवालय में रक्खे ज्येष्ठ में लिङ्गमूर्ति शिव ताम्र आदि के बनावे और दोनों ओर हाथ जोड़े खड़े ब्रह्मा विष्णु बनावे अथवा लिङ्ग के ऊपर नीचे हंस और वराह का रूप बनाय विधि से प्रतिष्ठा करे और ब्राह्मणभोजन करावे और उस मूर्ति को शिवालय में स्थापन करे आषाढ़ मास में सुन्दर एक पक्का गृह बनाय उसमें सब भांति

के अन्न, सर्वरस, ऊखल, मूसल आदि सब गृहस्थ के उपकरण दासी, दास, वस्त्र, भूषण, शय्या, पात्र आदि रखकर उस घर को चारों ओर से उत्तम वस्त्र करके वेष्टित करे और शिवलिङ्ग को घृत आदि से स्नान कराय सब उपचारों से पूजाकर एक सहस्र ब्राह्मणों को भोजन करावे और वेदवेत्ता और विद्या विनय करके सम्पन्न कुलीन एक ब्रह्मचारी ब्राह्मण को बुलाय भक्ति से उसकी पूजाकर एक कुलीना सुशीला और रूपवती कन्या से उसका विवाह कराय वह घर उसको देवे और क्षेत्र बाग तथा गोमिथुन भी उस घरके साथ ब्राह्मण को अर्पण करे वह गोलोक में जाय भवानी के समीप निवास करे और भवानी के समान उस नारी का प्रभाव होय इस भांति वहां एक कल्पपर्यन्त आनन्द कर भवानी में ही लीन होजाय श्रावण मास में सब धातुओं करके युक्त वितान, चित्रवर्ण की ध्वजाओं से भूषित तिलपर्वत शिवजी के अर्पण करे और यथाशक्ति ब्राह्मण भोजन करावे वह भी पूर्वोक्त सब फल पावे इसी भांति भाद्रपद में शालिपर्वत परमेश्वर को चढ़ावे और ब्राह्मण भोजन करावे, आश्विन में धान्यपर्वत बनाय सुवर्ण और वस्त्रसहित शिवजी को निवेदन करे और ब्राह्मणभोजन करावे तो कैलास में जाय वह स्त्री पार्वतीजी के सन्निहित रहे कार्त्तिक की पौर्णमासी को सम्पूर्ण धान्य, सब बीज, सब रस, धातु, रत्न आदि से युक्त, चार शृङ्गों करके शोभित, वितान, छत्र, ध्वजा आदि से भूषित, अनेक प्रकार के शङ्ख, वीणा

आदि वाद्य, नृत्य, गीत, वेदघोष और भांति भांति के मङ्गलध्वनि करके मण्डित अति उत्तम मेरुपर्वत बनावे उसके ऊपर मध्य में धातु के शिव स्थापन करे, दक्षिण में चतुर्मुख ब्रह्मा, उत्तरमें नारायण और आठों दिशाओं में इन्द्रादि लोकपाल स्थापन कर उनकी विधिसे पूजन करे. शिवजी की पूजाकर उनके दक्षिण हस्त में त्रिशूल और वाम हस्त में पाश, पार्वतीजी के हस्तमें सुवर्णका कमल, विष्णुजी के चारों करों में शङ्ख, चक्र, गदा और पद्म, ब्रह्माजी के हाथों में माला और कमण्डलु, इन्द्रको वज्र, अग्निको बर्छी, यमको दण्ड, निर्ऋति को खड्ग, वरुण को नागपाश, वायुको यष्टि अर्थात् लाठी, कुबेर को गदा और ईशानदेव के हाथ में परशु देवे इसभांति शिवजीकी तथा और देवताओं की विस्तार से पूजाकर ब्राह्मण भोजन करावे और शिवजीको महाचरु निवेदन कर वह पर्वत शिवजी के अर्पण करे इस महामेरुव्रत को जो स्त्री भक्ति से विधिपूर्वक करे वह मेरुपर्वत में जाय भगवती का सायुज्य पावे और कार्त्तिकी पौर्णमासीको ही सब भूषणों से भूषित सुवर्ण आदिकी पार्वती देवी बनावे और सब लक्षणों करके युक्त शिवजी की मूर्ति बनावे और उनके आगे स्रुवा हाथ में लिये हवन करते हुये ब्रह्माजी, सब भूषणों से भूषित कन्यादान करनेहारे नारायण, लोकपाल और सिद्ध, विद्याधर आदि विधिसे बनाय स्थापन कर शिवालय में अपना व्रत उनके अर्पण करे वह स्त्री भगवती की देह में लीन होकर शिवजी के साथ आनन्द से विहार करे हे मुनीश्वरो! मार्गशीर्ष से

लेकर कार्त्तिकपर्यन्त शिवजीका कहा यह व्रत स्त्री पुरुषों के कल्याण के अर्थ हमने कहा है इस व्रत को प्रतिमास करे अथवा एकभक्त व्रतही करे वह नारी देवीलोक में और पुरुष शिवलोक में निवास करे यह शिवजी की आज्ञा है इसमें कुछ सन्देह नहीं ॥

पचासीवां अध्याय ॥

सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो! सब व्रतों में शिव-पूजन कर विधिसे पञ्चाक्षरी विद्याका जप करे तबहीं व्रत सफल होता है यह सूतजी का वचन सुन ऋषि पूछते हैं कि हे सूतजी! पञ्चाक्षरी विद्या कौन है उसमें क्या प्रभाव है और जप का क्या विधान है यह हमारी श्रवण करने की इच्छा है आप वर्णन करें सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो! पार्वतीजी के प्रति शिवजीने जैसा कथन किया है वह हम आपको सुनाते हैं एक समय कैलास पर्वत में श्रीपार्वतीजी महादेवजी के प्रति कहती भईं कि हे देवदेव! हे महेश्वर! मैं पञ्चाक्षर मन्त्र का माहात्म्य सुना चाहती हूं आप कृपाकर मुझे सुनावें यह पार्वतीजी की विनती सुन श्रीमहादेवजी कहने लगे कि हे पार्वति! पञ्चाक्षर का पूरा माहात्म्य तो कई सौ करोड़ वर्षों में भी नहीं कथन करसक्ते हैं परन्तु संक्षेप से हम सुनाते हैं प्रलयकाल में स्थावर, जङ्गम, देवता, असुर, नाग, राक्षस आदि सब नष्ट होजाते हैं और प्रकृतिरूप तुमभी लीन होजाती हो तब हम एकाकी रहते हैं कोई दूसरा अवशिष्ट नहीं रहता उस समय वेद और शास्त्र

हमारी शक्ति करके पालन करे हुये पञ्चाक्षर मन्त्र में निवास करते हैं फिर जब हम दो रूप करते हैं तब हमारी प्रकृतिही मायामय शरीर धार नारायणरूप से समुद्र में शयन करती है उनके नाभिकमल से पञ्चमुख ब्रह्मा उत्पन्न भये और अपने को सृष्टि करने में असमर्थ देख बड़े तेजस्वी मानस दश पुत्र उत्पन्न किये और हमसे ब्रह्माजीने प्रार्थना की कि महाराज! इन मेरे पुत्रों को आप सृष्टि करने की सामर्थ्य देवें यह ब्रह्माजी से सुन उनके हितके लिये हमने अपने पांच मुखों से पांच अक्षर उच्चारण किये उन वर्णों को ब्रह्माजी ने भी अपने पांच मुखों से ग्रहण किया और वाच्य वाचक भाव करके परमेश्वर को जाना अर्थात् इन पांच अक्षरों करके त्रैलोक्य पूजित शिववाच्य है और यह पञ्चाक्षरमन्त्र शिवका वाचक है इस प्रकार उस मन्त्रको तथा उसकी विधि को जान बहुत काल जप कर सिद्धि पाय जगत् के हितके अर्थ अपने पुत्रों कोभी ब्रह्माजी उस पञ्चाक्षर मन्त्रका उपदेश करते भये वे सबभी ब्रह्माजी से उस उत्तम मन्त्र को पाय हमारे आराधन में प्रवृत्त भये तप करते करते बहुत काल में हम प्रसन्न भये और दिव्य ज्ञान तथा अणिमा आदि आठ सिद्धि और भांति भांति के वर उनको दिये हे पार्वति! ब्रह्माजी के मानसपुत्र मेरुपर्वत के मुञ्जवान् नाम शिखर में जो हमको अति प्रियहै तप करते भये दिव्य हज़ार वर्षपर्यन्त सृष्टि रचने की इच्छा से केवल वायु भक्षण करके बहुत उग्र तप उनने किया तब उनकी दृढ़ भक्ति देख हम प्रत्यक्ष भये

और लोकहितके लिये पञ्चाक्षर मन्त्रका ऋषि, छन्द, देवता, शक्ति, बीज, षडङ्गन्यास, दिग्बन्ध और विनियोग उनको उपदेश किया वे ऋषिभी मन्त्र का माहात्म्य सुन अनुष्ठान करते भये और उसीके प्रभाव से देवता, मनुष्य, असुर, चार वर्ण, वर्णों के धर्म आदि जो कुछ पूर्वकल्प में था उन सबको उत्पन्न करते भये पञ्चाक्षर के प्रभाव से ही लोक, वेद, ऋषि, शाश्वत धर्म, देव और यह जगत् स्थिर है अब हम पञ्चाक्षर का प्रभाव कहते हैं सावधान होकर श्रवण करो पञ्चाक्षर मन्त्र अल्पाक्षर है बहुत अर्थ करके युक्त है और वेदका सार मुक्ति देनेहारा आज्ञासिद्ध असंदिग्ध अनेक सिद्धि देनेहारा दिव्यलोक चित्त को अनुरञ्जन करनेहारा सुनिश्चितार्थ गम्भीर सुख से उच्चारण करने के योग्य सब कामना साधनेहारा सब विद्याओं का बीज सब मन्त्रों में आदिमन्त्र अतिसूक्ष्म और वटबीजकी भांति बहुत विस्तारयुक्त और परमेश्वर का वाक्य है पञ्चाक्षरही आदि में प्रणव लगा देनेसे षडक्षर होजाता है षडक्षर मन्त्र में भी वाच्यवाचक भाव करके शिवस्थित है शिव वाच्य है और मन्त्र वाचक है यह वाच्य वाचक भाव अनादिसिद्ध है जहां कहीं वेद में अथवा शैवागम में षडक्षर मन्त्र है वह पञ्चाक्षर सेही बना है इसलिये पञ्चाक्षर मुख्य है जिस पुरुष के हृदय में पञ्चाक्षर मन्त्र है उसको और किसी मन्त्र अथवा बड़े बड़े शास्त्रों से कुछ प्रयोजन नहीं जो विद्वान् विधान से पञ्चाक्षर मन्त्र को जपे उसने सब मन्त्र जपे सब शास्त्र और वेद पढ़े इतनाही शिवज्ञान है इतनाही

परमपद है और इतनी ही ब्रह्मविद्या है इसलिये नित्य पञ्चाक्षर मन्त्र को जपे प्रणवयुक्त पञ्चाक्षर हमारा हृदय है गुह्य से भी गुह्य है और मोक्ष ज्ञानका सब से उत्तम साधन है अब हम इस मन्त्र के ऋषि, छन्द, देवता, बीज, शक्ति, स्वर, वर्ण और प्रत्येक अक्षर का स्थान कहते हैं वामदेव ऋषि हैं पंक्ति छन्द है और साक्षात् हम इस मन्त्र के देवता हैं पञ्चभूतात्मक नकार आदि पांच वर्ण बीज हैं सर्वव्यापी और अव्यय प्रणव भी बीज है और तुम इस मन्त्रकी शक्ति हो आपके प्रणव और हमारे प्रणव में कुछ भेद है तुम्हारा प्रणव सब मन्त्रों का शक्तिभूत है अकार उकार और मकार हमारे प्रणव में स्थित हैं उकार मकार और अकार क्रम करके हैं तुम्हारा प्रणव त्रिमात्र प्लुत और उत्तम है ॐकार का उदात्तस्वर, ब्रह्मऋषि, श्वेतशरीर, देवी गायत्रीछन्द, परमात्मा देवता है पहिला, दूसरा, चौथा वर्ण उदात्त, पांचवां स्वरित और तीसरा निषध है नकार का पीतवर्ण पूर्वमुख स्थान इन्द्र देवता गायत्री छन्द गौतम ऋषि है मकार का कृष्णवर्ण दक्षिण मुख स्थान अनुष्टुप्छन्द अत्रिऋषि और रुद्रदेवता हैं शिकारका धूम्रवर्ण पश्चिम मुख स्थान विश्वामित्रऋषि त्रिष्टुप्छन्द विष्णुदेवता हैं वाकार का सुवर्ण वर्ण उत्तर मुख स्थान बृहतीछन्द अङ्गिराऋषि ब्रह्मा देवता हैं यकार का रक्तवर्ण ऊर्ध्वमुख स्थान विराट्छन्द भरद्वाजऋषि और स्कन्द देवता हैं अब सब पाप हरनेहारा और सिद्धिदायक इस मन्त्रका न्यास कहते हैं न्यास तीन प्रकारका है उत्पत्ति, स्थिति

और संहार उत्पत्तिन्यास ब्रह्मचारियों को करना योग्य है स्थिति गृहस्थों को और संहार न्यास के अधिकारी संन्यासी हैं और अङ्गन्यास करन्यास तथा देहन्यास के भेदसे भी न्यास तीन प्रकार का है प्रथम करन्यास पीछे देहन्यास और उसके अनन्तर अङ्गन्यास करे शिर से पादपर्यन्त उत्पत्तिन्यास पादसे शिरपर्यन्त संहारन्यास और हृदय मुख और कण्ठमें न्यास स्थितिन्यास कहाता है ये तीनों न्यास क्रम से ब्रह्मचारी, यती और गृहस्थों को कर्तव्य हैं शिरसहित देह को मूलमन्त्र पढ़कर स्पर्श करे यह देहन्यास है देहन्यास सब के लिये तुल्यही है दहिने अंगुष्ठ से वाम अंगुष्ठपर्यन्त सृष्टिन्यास है इससे विपरीत संहारन्यास है अंगुष्ठ से कनिष्ठापर्यन्त न्यास दोनों हाथों में करना स्थितिन्यास है गृहस्थों को यह भोग मोक्ष देनेहारा है करन्यास करके देहन्यास करे और पीछे अङ्गन्यास करे यह साधारण विधि है मन्त्रको ॐकार से पुटित करके सब अङ्गों में और दोनों हाथों की दश अंगुलियों में न्यास करे हाथ पांव धोय आच-मन कर पूर्वमुख अथवा उत्तरमुख बैठ एकाग्र चित्त हो न्यास करे पीछे ऋषि, छन्द, देवता, बीज, शक्ति, परमात्मा और गुरुका स्मरण करे मन्त्र करके दोनों हाथ संमार्जन कर हाथों के तल में प्रणव का न्यास करे अंगुलियों के आदि, अन्त और मध्यम पर्वों में सबिन्दु बीजों का न्यास करे उत्पत्ति आदि तीन क्रम से आश्रम के अनुसार न्यास करे फिर प्रणवसम्पुटित मन्त्र पढ़कर दोनों हाथों से पादतल से लेकर शिरपर्यन्त देहको स्पर्श

करे मस्तक, मुख, कण्ठ, हृदय, गुह्य और पादों में मन्त्र वर्णों का न्यास करे यह सृष्टिन्यास है पाद, गुह्य, हृदय, कण्ठ, मुख और मस्तक में न्यास करे यह संहारन्यास है हृदय, गुह्य, पाद, मस्तक, मुख और कण्ठ में न्यास करे यह स्थितिन्यास है इस भांति न्यास करके नका-रादि पांच वर्णों करके अपने पांच मुख कल्पना करे चारोंदिशा में चार और एक मुख ऊपर कल्पना करे फिर षडङ्गन्यास करे हृदय, शिर, शिखा, कवच, नेत्र और अस्त्र इन स्थानों में मन्त्र के छह वर्णों का न्यास करे और वर्णों के अन्त में क्रम से नमः, स्वाहा, वषट्, हुंवौषट् और फट् ये शब्द लगाय लेवे इसप्रकार न्यास कर दिग्बन्धन करे गणेश, मातृका, दुर्गा और क्षेत्रपाल चारों दिशा और कोणों के स्वामी हैं अंगुष्ठ और तर्जनी से चुटकी बजाय रक्षध्वम् यह कह कर उनको प्रणाम करे कण्ठ, मध्य अंगुष्ठ और तर्जनी आदि अंगुलियों में अंगुष्ठ करके न्यास करे यह न्यास सब पाप हरने-हारा सिद्धिदायक और सर्व रक्षाकर हमने कहा है इस न्यासके करने से शिवजी के तुल्य वह मनुष्य होजाता है और जन्म जन्मान्तर के सब पाप कट जाते हैं इस प्रकार न्यास करने से शुद्धदेह होकर गुरु से प्राप्त पञ्चाक्षर मन्त्र को जपे अब मन्त्र का सफल निष्फल होना कहते हैं गुरूपदेश से विना क्रियाहीन श्रद्धाहीन मन लगे विना दूसरे की आज्ञा से दक्षिणाहीन और सदा जप किया हुआ निष्फल होताहै गुरूपदिष्ट क्रियायुक्त श्रद्धा-युक्त मन लगाय के दक्षिणायुक्त और नियतकाल में

किया जप सफल है मन्त्रके तत्त्वार्थ को जाननेहारे ज्ञानी गुणी ध्यान योग में तत्पर और ब्राह्मण गुरुके समीप जाय शुद्धभावना से मन, वचन, कर्म करके और धन से शिष्य गुरु को प्रसन्न करे और जो सामर्थ्य हो तो हाथी, घोड़े, रथ, रत्न, क्षेत्र, घर, भूषण, वस्त्र, अन्न और भांति भांति की सामग्री गुरुके अर्पण करे जो सिद्धि चाहे तो वित्तशाठ्य अर्थात् कृपणता न करे और पीछे आत्मा को भी गुरुके अर्पण करदे इस प्रकार निष्कपट हो गुरु को प्रसन्न कर उससे मन्त्र ग्रहण करे गुरु भी अहङ्काररहित शुश्रूषा करनेहारा आचारनिष्ठ उपवास करने में तत्पर और कुलीन शिष्य को पाय वर्षभर उसकी परीक्षा कर उसको स्नान कराय ब्राह्मणों की पूजा कर उत्तम मुहूर्त में समुद्र, नदी आदिके तटपर, गोष्ठ, देवालय, घर अथवा और किसी पवित्र स्थान में शिष्य के ऊपर अनुग्रह कर मन्त्रका उच्चारण करे और शिष्य से भी उच्चारण करावे इस भांति मन्त्रोपदेश कर शिवमस्तु, शुभमस्तु, शोभनोस्तु, प्रियोस्तु इनका उच्चारण करे शिष्य भी इस प्रकार मन्त्र और शिवज्ञान पाय संकल्पपूर्वक पुरश्चरण करे और पुरश्चरण के अनन्तर जबतक जीवे नित्य अष्टोत्तर सहस्र जप करके भोजन करे वह अवश्य सद्गति पावे पुरश्चरण के समय मन्त्रके वर्णों से चौगुना लक्ष जप करे रात्रि के समय भोजन करे और सब प्रकारके नियम से रहे जो पुरुष सिद्धि चाहे वह पुरश्चरण करे अथवा नित्य जपका नियम कर लेवे परन्तु जो पुरुष पुरश्चरण कर नित्य

जपका नियम करे वह सब से उत्तम है और सब प्रकार की सिद्धि पाता है अच्छा आसन बांध पूर्वमुख अथवा उत्तर मुख बैठ एकाग्र चित्त हो मौन से जप करे जपके आदि अन्तमें प्राणायाम करे और अन्तमें अष्टोत्तरशत बीज का जप करे श्वास रोककर चालीस बार पञ्चाक्षर मन्त्रका उच्चारण करे यह प्राणायाम कहाताहै प्राणायामसे सब पाप क्षय होते हैं इन्द्रियोंका निग्रह होता है इसलिये प्राणायाम अवश्य कर्तव्यहै घरमें जपका फल उतनाहीं होता है जितना जप करे गोष्ठ में सौगुणा फल, नदी के तटपर लाखगुणा, समुद्र के तीरपर, देवहृद अर्थात् सरोवर जो मनुष्यों का खोदा न हो उसके तीरपर, पर्वत के ऊपर और देवालय में जपका फल कोटिगुणा होता है और शिवजी के समीप बैठ जप करने से अनन्त फल है शिव, सूर्य, गुरु, गौ, जल अथवा दीप के समीप बैठ कर जप करना बहुत उत्तम है अंगुली करके जपसंख्या करने से एकगुणा रेखा से आठगुणा जीयापोता की माला से दशगुणा शङ्खमाला से शतगुणा मूंगे की माला से सहस्रगुणा स्फटिक माला करके दशसहस्रगुणा मोती की माला करके लक्षगुणा कमलबीज की माला से दश लक्षगुणा सुवर्ण की माला से कोटिगुणा और कुशग्रन्थि तथा रुद्राक्षकी माला से जप का फल अनन्त होता है मोक्ष के लिये पचीस दाने की माला पुष्टिके लिये सत्ताईस की धन के लिये तीसकी अभिचार के अर्थ पचास की और सब कार्यों के लिये अष्टोत्तरशत दानों की माला उत्तम होती है वशीकरण के लिये पूर्वाभिमुख अभि

चार के लिये दक्षिणमुख धनके अर्थ पश्चिममुख और शान्ति के लिये उत्तराभिमुख बैठकर जप करना चाहिये अंगुष्ठ मोक्ष देनेहारा है तर्जनी शत्रु नाश करती है मध्यमा धन देती है अनामिका शान्तिदायक है और कनिष्ठा अंगुली जपकर्म में रक्षणीय है अंगुष्ठको सबके साथ लगावे क्योंकि अंगुष्ठ लगाये विना जप निष्फल होता है सब यज्ञों में जपयज्ञ उत्तम है क्योंकि और सब यज्ञों में हिंसा होती है और जपयज्ञ हिंसारहित है इसीसे और सब यज्ञ, दान, तप आदि जपयज्ञ के षोड़शांश की भी तुल्यना नहीं करसकते यह सब माहात्म्य वाचिकजप का कहा है उपांशुजप का फल इससे सौगुणा और मानसजप का फल सहस्रगुणा है जो स्पष्ट पद और अक्षरों करके उदात्त, अनुदात्त और स्वरित अर्थात् उच्च, नीच और मध्यम स्वर करके मन्त्र को उच्चारण करता हुआ जप करे वह वाचिकजप कहाता है धीरे धीरे मन्त्र को उच्चारण करे जिसमें थोड़े थोड़े ओष्ठ हिलें और दूसरे के कर्णगोचर भी यत्किंचित् होवे वह उपांशु जप होता है मनमें ही मन्त्रके वर्णों का उच्चारण करे और बुद्धि करके मन्त्रार्थ का चिन्तन करता जाय वह मानसजप है वाचिकजप से उपांशु और उपांशुसे मानस जप उत्तम है जप करके स्तुति करने से देवता प्रसन्न होते हैं और भोग मोक्ष देते हैं यक्ष, राक्षस, पिशाच, ग्रह आदि भयभीत होकर जप करनेहारे से दूर रहते हैं समीप नहीं आते अनेक जन्मों में किये हुये पाप जप करके दूर होते हैं जपसे भोग मोक्ष मिलते हैं जप

से पुरुष मृत्यु को जीतते हैं इसप्रकार जपका प्रभाव जान सदाचार में तत्पर हो निरन्तर जप करे तो अवश्य कल्याण पावे अब हम सदाचार कहते हैं क्योंकि आचार-हीन पुरुष के सब साधन निष्फल होते हैं परमधर्म परम-तप पराविद्या और परमगति आचारही है आचारयुक्त पुरुषों को कहीं भय नहीं होता और आचारहीन को सर्वत्र भय है सदाचार के सेवन से पुरुष ऋषि और देवता बनजाते हैं और आचार का त्याग करनेहारे कुयोनि में पड़ते हैं आचारहीन पुरुषकी लोकमें निन्दा होती है इसकारण अपना कल्याण चाहनेवाले पुरुष को अवश्य आचारनिष्ठ होना चाहिये दुराचारी बहुत अपवित्र अतिपापी और ज्ञानदूषक पुरुष भी कदाचित् वर्णाश्रमों के धर्म में प्रवृत्त होवें और आचार में रहे हे पार्वती! वह भी हमको प्रिय है फिर उत्तम पुरुष आचार-निष्ठ होवे वह तो हमारा अतिप्रेमपात्र होगा जो पुरुष अपने विहितकर्म को करे वह हमको प्रिय है सन्ध्या न करने से ब्राह्मण का ब्राह्मणपना जाता रहता है असत्य कभी न बोले और सत्य का त्याग न करे सत्य ब्रह्म है और असत्य ब्रह्मदूषण है असत्य, कठोरवाक्य, शठता और पैशून्य अर्थात् चुगली इनसे सदा बचे और पर-स्त्री, पराया धन तथा हिंसा इनको मन, वचन, कर्म से त्याग देवे शूद्रका अन्न, बासीअन्न, देवता के नैवेद्य का अन्न, श्राद्धका अन्न, गणान्न अर्थात् जिस अन्न के स्वामी बहुत हों, समुदायान्न अर्थात् जो अन्न बहुतों के लिये बनाया होवे और राजाका अन्न कभी न खाय

अन्नशुद्धि सेही अन्तःकरण की शुद्धि होती है जल और मृत्तिका से अन्तःकरण शुद्ध नहीं होता अन्तःकरण शुद्धि से सिद्धि होती है इसलिये अन्नशुद्धि अवश्य चाहिये जिसभांति भुनेहुये बीज अंकुर उत्पन्न करने में समर्थ नहीं होते इसीप्रकार प्रतिग्रह से दग्ध ब्रह्मवादी ब्राह्मण भी सब कर्मों में असमर्थ होजाते हैं राजप्रतिग्रह विषके तुल्य है इसलिये बुद्धिमान् मनुष्य राजप्रतिग्रह से बचता रहे और श्वानमांस के तुल्य राजप्रतिग्रह को अमेध्य समझे स्नान विना किये जप और अग्निपूजा विना किये भोजन न करे पत्तेके ऊपर धर कर और रात्रि के समय दीप विना भोजन न करे फूटे पात्र में रथ्या अर्थात् गली में पतितमनुष्यों के समीप शूद्रशेष और बालकों के साथ भोजन न करे शुद्ध स्निग्ध अर्थात् घृत से परिप्लुत संस्कृत और मन्त्रसे अभिमन्त्रित भोजन एकाग्रचित्त होकर मौनसे करे और यह ध्यान करे कि शिवजीही भोजन करते हैं केवल मुखसे पशुकी भांति जल न पीवे खड़ा होकर न पीवे अञ्जलिसे बायें हाथसे और दूसरे मनुष्यके हाथसे भी जल न पीवे और शय्या के ऊपर बैठकर भी न पीवे बहेड़ा, आक, करंज, थूहर, स्तम्भ, दीपक, मनुष्य और और भी जीवों की छाया में न जाय अकेला मार्ग में न चले भुजाओं से नदी में न तैरे कूप में न उतरे और कूपको कूदेभी नहीं ऊंचे वृक्ष पर न चढ़े सूर्य, अग्नि, जल, देवता, गुरुके सम्मुख सम्पूर्ण शुभकर्म और जप करे उनके परोक्ष में न करे अग्निमें पैर न तपावे अग्निसे ऊंचेपर न बैठे

और अग्निमें कुछ मल न गेरे हाथसे पैरको स्पर्श न करे पैरों से जलको ताड़न न करे जलमें शरीरका मल न त्याग करे जल के किनारे बैठ शरीर का सब मल उतार स्नान करे नख, केश, स्नान का और वस्त्र प्रक्षालन का जल कभी स्पर्श न करे और और भी अशुद्ध पदार्थ का स्पर्श न करे अज अर्थात् बकरा, श्वान, गधा, ऊंट, मार्जार अर्थात् बिल्ली, मार्जनी और मार्जनी की धूलिका स्पर्श करने से विष्णु भी लक्ष्मीहीन होजायँ और की तो क्या कथा है इसलिये इनका स्पर्श न करे मार्जार को जो घर में रक्खे वह चाण्डालके तुल्य होता है मार्जार के समीप जो ब्राह्मण भोजन करावे वह भी अपवित्र होता है शूर्प अर्थात् छाज का पवन मुख का पवन, और स्फिग्वात अर्थात् कटि का पवन स्पर्श होने से सुकृत का नाश होता है पगड़ी बांधे कञ्चुक अर्थात् अंगा पहिने केश खोले नग्न होकर मल करके आवृत अपवित्रशरीर और प्रलाप अर्थात् बातचीत करता हुआ जप न करे क्रोध, मद, क्षुधा, आलस्य, जृम्भा अर्थात् उबासी लेना निष्ठीवन, श्वान और नीच का दर्शन निद्रा और प्रलाप ये सब जप के शत्रु हैं जो जपके समय इनमें से कोई बात होजाय तो सूर्यका दर्शन करले और प्राणायाम तथा आचमन करके जप करे सूर्य, चन्द्र, ग्रह, नक्षत्र और तारा ये ज्योति हैं इनके दर्शन से पाप निवृत्त होते हैं पांव पसार कर, कुक्कुटासन से बैठकर, आसन विना, सोये हुये, रथ्या में, शूद्र के समीप और खाटपर बैठ कर जप न करे कुशका आसन, व्याघ्रचर्म, काष्ठका पट्टा,

तालकापत्र, वस्त्र अथवा रुई से भरा अतिकोमल आसन बिछाय उसके ऊपर बैठ मन्त्रार्थको चिन्तन करता हुआ जप करे और तीनकाल गुरुकी पूजा करे जो गुरु वह शिव, जो शिव वही गुरु है जैसे शिव वैसी विद्या जो विद्या वही गुरु है इसलिये शिव विद्या और गुरु का तुल्यही फल है सर्वदेवमय, सर्वशक्तिमय, सगुण, निर्गुण सब गुरुही है इस कारण कल्याण की इच्छावाला पुरुष गुरुकी आज्ञा को शिरपर धारण करे मन, वचन, कर्म से कभी आज्ञा का उल्लङ्घन न करे गुरुकी आज्ञा का पालन करनेहारा ज्ञान, सम्पत्ति पाता है चलते, बैठते, सोते, खाते, पीते जो कर्म करे सब गुरुकी आज्ञासे करे और उत्तम कर्म गुरु के सम्मुख करे देवता और गुरुके आगे यथेष्ट आसन से न बैठे अर्थात् नम्रता से आसन विना बैठजाय गुरु साक्षात् देव और गुरुका घर देवमन्दिर है पापियों के संसर्ग से जिसभांति मनुष्यों को पाप लगता है इसी प्रकार आचार्य के संसर्ग से धर्म की प्राप्ति होती है जैसे अग्निके संसर्ग से सुवर्ण का मल दूर होता है ऐसेही गुरुके सङ्गसे शिष्य का पाप निवृत्त होता है जिसभांति अग्निके समीप घृत गल जाता है इसीभांति गुरु के समीप पाप नष्ट होजाता है अग्नि जैसे काष्ठ को दग्ध करदेता है ऐसेही प्रसन्न होकर गुरु भी पातक को दग्ध करदेता है गुरु के प्रसन्न होने से ब्रह्मा, विष्णु, शिव, देवता, मुनि सब अनुग्रह करते हैं मन, वचन, कर्म करके कभी गुरु को क्रुद्ध न करे गुरु के क्रोधसे आयुष्, लक्ष्मी, ज्ञान और सब सत्कर्म दग्ध

होजाते हैं और जप, तप, यज्ञ, दान आदि सब निष्फल होते हैं गुरु से विरुद्ध वचन कभी न बोले जो प्रमाद से बोल उठे तो रौरव नरक को जाय चित्त वित्त अर्थात् धन, तन, मन और वचन करके कभी गुरुके वचन को अन्यथा न करे गुरुका एक दोष कथन करे तो वह हज़ार दोषोंका पात्र होता है और गुरु के गुणकीर्तन से शिष्य भी गुणोंकी खानि होजाताहै कहे विना कहे आगे पीछे सदा मन, वचन, कर्म करके गुरुका हित करे और अहित करनेहारा अधोगति को प्राप्त होताहै इस कारण सर्वदा गुरु उपास्य और वन्दनीय है इस प्रकार गुरुके हितमें तत्पर आचारवान् शिष्य मन्त्रके विनियोग का अधिकारी है विनियोग न जानने से मन्त्र दुर्बल होजाता है अभीष्ट कार्य में मन्त्रको लगा देना विनियोग कहाता है विनियोग से इसलोक और परलोक के फल प्राप्त होतेहैं आयुष्, आरोग्य, राज्य, ऐश्वर्य, विज्ञान, स्वर्ग और मोक्ष सब विनियोग से मिलते हैं प्रोक्षण, अभिषेक, अघमर्षण आदि स्नान और सन्ध्या के समय ग्यारह बार मन्त्र पढ़कर करे पर्वतके शिखरपर एक लक्ष और बड़ी नदी के तटपर बैठ पवित्र हो दो लक्ष जप करे दूर्वाके अंकुर, तिल और गुडूची अर्थात् गिलोय का दश हज़ार हवन करने से दीर्घ आयुष् पावे अश्वत्थ वृक्ष को स्पर्श कर दो लक्ष जपे शनिवार के दिन हाथ से अश्वत्थवृक्ष को स्पर्श कर अष्टोत्तरशत मन्त्र का जप करे तो अपमृत्यु निवारण हो सूर्य की ओर मुख करके एकाग्रचित्त हो लक्ष जप करे और नित्य आककी

समिधों से अष्टोत्तरशत हवन करे तो रोग से छूटे सब व्याधि निवृत्त करने के अर्थ पलाशसमिधा का दश हज़ार हवन करे नित्य सूर्य के सम्मुख पवित्र जलको अष्टोत्तरशत बार अभिमन्त्रण कर पान करे तो एक मास में सब उदररोग दूर होयँ अन्न अथवा और भी खाने के पदार्थ ग्यारह बार अभिमन्त्रण कर भोजन करे पञ्चाक्षर मन्त्रसे ग्यारह बार अभिमन्त्रण करने से विष भी अमृत होजाय पूर्वाह्ण में एक लक्ष जप करे और नित्य अष्टोत्तरशत हवन तथा सूर्य के सम्मुख उपस्थान करे तो आरोग्य होवे नदी के जल से घटभर उसको स्पर्श कर दश हज़ार जप करे और पीछे उस जलसे स्नान करे तो सब रोग दूर होयँ पलाश की अट्ठाईस समिधा का नित्य हवन करे और अट्ठाईस बार अन्नको अभिमन्त्रण कर भोजन करे तो भी सदा आरोग्य रहे चन्द्र सूर्य के ग्रहण में समुद्रगामिनी नदी के तट पर बैठ कर ग्रहण के स्पर्श से मोक्षपर्यन्त जप करे इस प्रकार पुरश्चरण कर ब्राह्मी के रसको अष्टोत्तरसहस्र बार अभिमन्त्रण कर पीवे तो सब शास्त्रको धारण करनेहारी बुद्धि पावे और सरस्वती उसके जिह्वाग्र पर निवास करे ग्रह और नक्षत्रों की पीड़ा में दश हज़ार जप करे और अष्टोत्तरसहस्र हवन करे तो ग्रहनक्षत्रपीड़ा दूर होय और दुःस्वप्न देख कर दश हज़ार जप करे और घृतसे अष्टोत्तरशत हवन करे तो शान्ति होय ग्रहण के समय लिंग की पूजा कर दश हज़ार जप एकाग्रचित्त हो पवित्रता से करे और जो अपनी कामना होय वह मांगे तो अवश्य

उसका मनोरथ सिद्ध होय हाथी, घोड़े, गौ आदिके व्याधि होजाने पर एक महीनेपर्यन्त दश हजार समिधा की आहुति देवे तो उनके रोगकी शान्ति होय और पशुओं की वृद्धि भी होय उत्पात और शत्रुपीड़ा, पलाश समिधा के दश हजार हवन करनेसे शान्त होते हैं अभि-चार की बाधा में भी यही करे तो वह अभिचार करने-हारे को पीड़ा करे विभीतक की समिधा का अष्टोत्तर शत हवन करे तो विद्वेषण होय रुधिर अथवा विषयुक्त रुधिर करके मन्त्र के वर्णों को विपरीत उच्चारण कर हवन करे तो अवश्य विद्वेषण होजाय अब सब पाप दूर होने के लिये प्रायश्चित्त कहते हैं पापशुद्धि हुये विना सब क्रिया निष्फल होती है और ज्ञानकी प्राप्ति भी नहीं होती इस कारण पापशोधन अवश्य करना चाहिये विद्या और लक्ष्मी की शुद्धता के लिये हाथ जोड़ हमारा ध्यान करे और ग्यारह बार अभिमन्त्रित जलसे चारों ओर मार्जन करे अष्टोत्तरशत अभिमन्त्रित जलसे पापनिवृत्ति के लिये स्नान करे तो सब पाप दूर होयँ और तीर्थस्नान का फल पावे संध्यावन्दन के विच्छेद होने पर अष्टोत्तरशत मन्त्र जपे ग्रामशूकर, चाण्डाल, दुर्जन, कुक्कुट, श्वान आदिका स्पर्श किया हुआ अन्न भक्षण करके अष्टोत्तरशत जप करे तो शुद्ध होय ब्रह्महत्या निवृत्त होने के लिये अयुत लक्ष जप करे पातकनिवृत्ति के लिये इससे आधा और उप-पातक दूर होने के अर्थ उससे भी आधा जप करे और सब स्वल्प पाप दूर होने के लिये पांच हजार जप करे

परम गुप्त शिव बोध के प्रकाश करनेहारे आत्मबोध की प्राप्ति के लिये पांच लक्ष जप करे तो पांचों प्राण अपान आदि पवनों को जीते फिर पांच लक्ष जप करे तो पांच इन्द्रियों से जय पावे तीसरी बार एकाग्र चित्त हो पांच लक्ष जप करे तो पांच विषयों को जीते चौथी बार पांच लक्ष जपने से पंचमहाभूतों में विजयी होय चार लक्ष जपने से कर्ण अर्थात् मन, बुद्धि, अहङ्कार और चित्तको जीते पचीस लक्ष जप करे तो पचीस तत्त्वों से जय पावे आधीरात्रिके समय निर्वातस्थान में दश हज़ार जप करें तो ब्रह्मसिद्धि पावे और इसीभांति वायु और ध्वनि से रहित स्थान में बैठ आधीरात्रि के समय लक्ष जप करे तो साक्षात् शिव पार्वती का दर्शन पावे और वह अपने देह के प्रकाश से दीपकी भांति अन्धकार निवृत्त करे और उसके भीतर बाहर प्रकाश होजाय अर्थात् अज्ञान निवृत्त होय सब सम्पत्तिकी प्राप्ति के लिये नित्य दश सहस्र जप करे बीजसम्पुटित मन्त्र का एक कोटि जप करनेसे हमारा सायुज्य मिलता है जिससे बढ़कर कोई भी फल नहीं है पार्वति ! यह सब पञ्चाक्षरमन्त्र का विधान हमने कहा इसको जो पढ़े सुने सुनावे अथवा देव और पितृकर्म में पढ़े वह अपने पितरों समेत शिवलोक में वास करे ॥

छियासीवां अध्याय ॥

इस प्रकार पञ्चाक्षर मन्त्र का प्रभाव सुन अति मुदित हो शौनक आदि ऋषि पूछते भये कि हे सूतजी ! विरक्त

पुरुषों के लिये जपसे भी ध्यानयज्ञ श्रेष्ठ है ऐसा दग्ध किल्बिष अर्थात् निष्पाप ब्राह्मण कहते हैं इस कारण अब आप ध्यानयज्ञ कहें यह सुन सूतजी बोले कि हे मुनीश्वरो! एक समय कालकूट विष को पानकर श्रीपार्वतीजी सहित श्रीशिवजी मेरुपर्वतकी गुफा में स्थित थे उस समय सनन्दन आदि सब मुनि महादेव जीके दर्शन को गये और दर्शन कर स्तुति करने लगे कि महाराज यह बड़ा भयङ्कर कालकूट विष आपने पान कर इस संसार की रक्षा की और आप नीलकण्ठ भये जो आप इस विषको न पान करते तो यह संसार इसकी अग्निसे भस्म होजाता यह मुनियों का वचन सुन हँसकर श्रीमहादेवजी कहने लगे कि हे मुनीश्वरो! यह विष तो बहुत क्रूर नहीं है परन्तु संसाररूप विष बड़ा दारुण है उसका जो संहार करे वह प्रशंसा के योग्य है कालकूट तो नाममात्र का विष है बड़ा भारी विष तो संसार है इसलिये उसके संहार का उपाय करना चाहिये अपने अधिकार के अनुसार संसार तामस और राजस भेद करके दो प्रकार का है संमूढ़चित्त पुरुषों के लिये भांति भांति की इच्छा और राग द्वेष करके युक्त यह अति दारुण संसार है और उन पुरुषों के धर्म अधर्म भी राग द्वेषके आधीन हैं इसलिये अज्ञान करके युक्त और असंक्षीण अर्थात् कभी क्षय नहीं होनेहारा तामस संसार मूढ़ पुरुषों के लिये है बुद्धिमान् पुरुषभी शास्त्र से अप्रत्यक्ष स्वर्गादि को जान उनकी प्राप्ति के लिये धर्मके अनुष्ठान में प्रवृत्त होते हैं यही राजसंसार

है परन्तु तामस और राजस दोनोंही दुष्ट हैं जो सब यत्नों से इनका त्याग करे वह विरक्त कहाता है वेद का शिरोभाग और ऋषियों को निष्काम कर्म का फल देनेहारा अध्यात्मशास्त्रही शास्त्र है अज्ञानी पुरुष कहते हैं कि कर्म की प्रवृत्ति भी श्रुति से होती है परन्तु वह श्रुति निष्कामकर्म को प्रतिपादन करती है अर्थात् श्रुति का कहा कर्म करे और फल की इच्छा न करे सब जीवों के लिये संसार अज्ञान से है निष्कामकर्म करने से जीव की कला अर्थात् अविद्या शुष्क होती है और अविद्या करके युक्त ज्ञानहीन जीव तीन प्रकार के हैं पाप करके नरक में वास करनेहारे पुण्य करके स्वर्ग में रहनेवाले और तीसरे पुण्य और पाप भी करनेहारे संसारी जीव हैं संसारी जीव उद्भिज, स्वेदज, अण्डज और जरायुज इन भेदों से चार प्रकार के हैं न सन्तान से न कर्म से और न धन से मुक्ति होय केवल त्याग से मुक्ति होती है और त्याग विना यह जीव अनेक योनियों में भटकता फिरता है अज्ञान के दोष से और कर्मों के फल के अनुसार षट् कौशिक अर्थात् स्नायु, अस्थि, मज्जा, त्वचा, रुधिर और मांस से बने हुये देह में प्राप्त होता है गर्भ में योनि के मार्ग से जन्म लेकर भूमिपर बाल्यावस्था में यौवन में बुढ़ापे में और मरण के समय अनेक प्रकारके दुःख यह जीव भोगता है विचार करने से स्त्री संसर्ग आदि सुख महादुःख का मूल है दुःखी पुरुष का एक दुःख दूसरा दुःख उत्पन्न होने से शान्त होजाता है विषयवासना विषयों का

भोग करने से शान्त नहीं होती घृत की आहुति देने से अग्नि की भांति अधिक दीप्त होतीहै इसलिये विचार करके देखो तो धन के अर्जन से उपार्जित धनकी रक्षा से और उसका व्यय करने से दुःख होता है सुख नहीं होता और पिशाचलोक, राक्षसलोक, यक्षलोक, गन्धर्व-लोक, चन्द्रलोक, प्राजापत्यलोक और ब्रह्मलोक आदि में कहीं भी सुख नहीं क्योंकि एक तो इनका क्षय होता है दूसरा इन लोकों में न्यूनाधिक्य भाव होने से ईर्षा बहुत उत्पन्न होती है और सब दुःखों का मूल ईर्षा है इसलिये धन आदि की तथा इन लोकों की इच्छा का त्यागही करना उचित है अष्ट गुण पृथ्वी का ऐश्वर्य, षोडश गुण जल का, चौबीस गुण तेजका, बत्तीस गुण वायुका, चालीस गुण आकाशका, अड़-तालीस गुण मानस, छप्पन गुण अभिमानिक और चौंसठ गुण प्रकृति अर्थात् बुद्धि का ऐश्वर्य भी ब्रह्म-वेत्ता योगियों को दुःखदायकही है विचार करने से गण और गणों के स्वामी भी दुःखी हैं आदि, मध्य, अन्त में और भूत, भविष्यत, वर्तमान में सब लोकों को दुःखही है दुष्ट देशों में भांति भांति के दुःख हैं परन्तु अज्ञानी पुरुष व्यतीतहुये दुःखको स्मरण नहीं करते भूलजाते हैं क्षुधारूप व्याधि के दूर करने से अन्न भी सुखका कारण नहीं जिस प्रकार अन्य रोगों के औषध हैं इसभांति अन्न भी क्षुधा रोगका औषध है कुछ सुख का साधन नहीं शीत, उष्ण, वायु, वर्षा आदिकों से जीवोंको सदा दुःख ही होताहै परन्तु मूर्ख इस बातको

नहीं समझते पुण्य क्षय होजाने से स्वर्ग भी दुःख-दायक है राग द्वेष आदि रोगों करके पीड़ित पुरुष पुण्य का क्षय होने से छिन्नमूल वृक्षकी भांति स्वर्ग से भूमिपर गिरते हैं और देवताहोकर स्वर्ग से फिर भूमिपर गिरना बड़ाही कष्ट है नरक में सदा दुःख है वेदविहित कर्म के न करने से ब्रह्मचारियोंको भी दुःख है जिसप्रकार मृत्यु से भयभीत मृगको कहीं चैन नहीं पड़ता इसीभांति ध्यान-निष्ठ महात्मा यती संसार से भीत निद्रा को नहीं प्राप्त होताहै कीट, पक्षी, पशु, मृग, हाथी, घोड़े आदि सब जीव दुःखी हैं एक त्यागी सुखी हैं विमानों में चढ़नेवाले देवता स्थान के अभिमानी मनु आदिक भी दुःखी हैं राजा राक्षस आदि कोई सुखी नहीं देवता और दैत्य परस्पर जीतने की इच्छा से सदा व्याकुल रहते हैं वर्ण और आश्रम भी केवल परिश्रम देनेहारेही हैं आश्रम, वेद, यज्ञ, व्रत, सांख्य, बड़े उग्र तप और भांति भांति के दानों करके भी आत्मा का बोध नहीं होता केवल ज्ञान से आत्मबोध होता है इसलिये सब रत्नों से पाशु-पतव्रत में तत्पर होकर भस्म में शयन करे और पञ्चार्थ ज्ञान में सम्पन्न शिवतत्त्व में समाहित रहे तो दैव और कर्म के बन्धन को छेदन करनेहारे और कैवल्य मुक्ति-दायक ज्ञान को पुरुष प्राप्त हो सब दुःख के अन्त को पहुँचता है पराविद्या अर्थात् अध्यात्मविद्या करके वेद्य को जानसक्ता है अपरा विद्या करके नहीं जानसक्ता दो विद्या हैं एक परा दूसरी अपरा ऋग्वेद, यजुर्वेद, साम-वेद, अथर्ववेद, शिक्षा, कल्प, व्याकरण, निरुक्त, छन्द

और ज्योतिष यह सब अपरा विद्या हैं और अक्षर, अदृश्य, अग्राह्य, अगोत्र, अवर्ण, अचक्षु, अश्रोत्र, अपाणिपाद, अजात, अभूत, अशब्द, अस्पर्श, अरूप, अरस, अगन्ध, अव्यय, अप्रतिष्ठ, अज, अप्राण, अमनस्क, अस्निग्ध, अलोहित, अप्रमेय, अस्थूल, अदीर्घ, अह्रस्व, अपार, अनुल्वण, अच्युत, अनपावृत्त, अद्वैत, अनन्त, अगोचर, असंवृत, नित्य सर्वव्यापी विभु महान् और आनन्दमय आत्मा पराविद्या है इसके विना और किसी प्रकार से पराविद्याका वर्णन नहीं करसके परमार्थ में परा अपरा भी नहीं हैं सब अविद्या की कल्पना है सब जगत् में मैं हूं और सब जगत् मुझमें है मेरे से उत्पन्न होता है मेरे में स्थित है और मेरे विषे ही यह जगत् लीन होजाता है मेरे विना जगत् में कोई दूसरा पदार्थ नहीं है सत् असत् को एकाग्रचित्त होकर आत्मा में देखे तो बाहर कोई पदार्थ देखनेके योग्य नहीं रहता अधोमुख करके नाभि से एक वितस्ति ऊपर हृदयकमल है वही इस विश्व का बड़ा भारी स्थान है उस हृदयकमल का कन्द अर्थात् मूल धर्म है ज्ञान अति सुन्दर नाल है अणिमादि आठ ऐश्वर्य दल, वैराग्य कर्णिका और दिशा उसके छिद्र हैं जिनमें प्राण आदि वायु स्थित हैं प्राण आदि वायु करके संयुक्त जीव बहुत प्रकार से देखता है प्रत्येक शरीर में प्राण को धारण करनेहारी दश नाड़ियां हैं और सम्पूर्ण शरीर में छोटी बड़ी सब नाड़ियां बहत्तर हज़ार हैं जब जीव इन्द्रियों में स्थित होय तब जाग्रत् अवस्थामें है कंठ में जीव होय

तो स्वप्नावस्था हृदय में सुषुप्ति और मस्तक में जीव के रहने से तुरीया अवस्था होती है इन चारों अवस्थाओं के स्वामी क्रमसे ब्रह्मा, विष्णु, ईश्वर और महेश्वर हैं कोई ऐसा भी कहते हैं कि सब इन्द्रियों करके वर्तमान पुरुष जाग्रत् कहाता है मन, बुद्धि, अहङ्कार और चित्त इन चारों में जीवके स्थित होनेसे स्वप्न, सब इन्द्रियोंके आत्मामें लीन होजाने से सुषुप्ति और सब कारण अर्थात् इन्द्रियों से भिन्न होजाने से तुरीया अवस्था कहाती है और परमकारण शिव तुरीयातीतहैं जाग्रत्, स्वप्न, सुषुप्ति, तुरीया, आधिभौतिक, आध्यात्मिक और आधिदैविक सब मैंहीं हूं यही जानने की इच्छावाले पुरुष को जानना चाहिये पांचज्ञानेन्द्रिय, पांच कर्मेन्द्रिय, मन, बुद्धि, अहङ्कार और चित्त यह चौदह प्रकारका अध्यात्महै श्रोतव्य, स्पर्शितव्य, द्रष्टव्य, रसितव्य, घ्रातव्य, वक्तव्य, आदातव्य, गन्तव्य, विसर्गायित, आनन्दितव्य, मन्तव्य, बोद्धव्य, अहङ्कर्तव्य, चेतयितव्य ये सब अध्यात्म के विषय आधिभूति कहाते हैं आदित्य, पृथ्वी, वरुण, वायु, चन्द्र, ब्रह्मा, रुद्र, क्षेत्रज्ञ, अग्नि, इन्द्र, विष्णु, मित्र, प्रजापति और दिशा ये चौदह आधिदैविक हैं राज्ञी, सुदर्शना, विजिता, सौम्या, मोघा, रुद्रा, अमृता, सत्या, मध्यमा, राशि, शुक्रा, असुरा, कृत्तिका और भास्वती ये चौदह नाड़ियां हैं उनके मध्य में स्थित और इनके वाहक अर्थात् धारण करनेहारे प्राण, अपान, व्यान, उदान, समान, वैरम्भ, मुख्य, अन्तर्याम, प्रभञ्जन, कूर्मक, श्वेत, श्येन, कृष्ण और नाग ये चौदह वायु हैं

नेत्रोंमें, द्रष्टव्यमें, आदित्यमें, नाड़ीमें, प्राणमें, विज्ञान में, आनन्दमें, हृदयमें, आकाश में जो आत्मा एकाकी इन सब में निवास करता है वह मैंहीं हूं इस कारण अजर, अमर, अनन्त, अशोक, अमृत, ध्रुव और प्रभु उस आत्मा की अर्थात् मेरी उपासना करनी योग्य है चौदह भेदों में वही निवास करताहै और वे सब उसीमें लीन होते हैं कोई पदार्थ उससे भिन्न नहीं है जो एक परमात्मा सर्वज्ञ, सर्वव्यापी, सबका प्रभु, अन्तर्यामी, सनातन, सबकरके उपास्यमान और वेद तथा भांतिभांति के शास्त्रों करके प्रतिपादित है वह मैंहीं हूं यह सब जगत् उसका अन्न अर्थात् भक्ष्य है और वह किसीका अन्न नहीं आपही इस जगत् की रक्षाकर भक्षण करताहै सब प्राणियों में प्राणा-पान ग्रंथिरूप वहीहै सर्वनियन्ता, ज्ञानसाधन और अन्न-मयादि पञ्चकोशरूप वह परमात्मा अर्थात् मैंहूं भूतात्मा अन्नमय है, इन्द्रियात्मा प्राणमय, सङ्कल्पात्मा मनोमय, कालात्मा विज्ञानमय और परमेश्वर आनन्दमय मैंहीं हूं सम्पूर्ण जगत् मेरे में स्थित है विचार से सब जगत् परतन्त्र और मैं स्वतन्त्र हूं विचार करने से एकत्व भी स्थिर नहीं रहता द्वैतकी तो क्या कथा है अन्तःप्रज्ञ अर्थात् स्वप्नावस्थाका साथी बहिःप्रज्ञ जाग्रत्का साक्षी उभयगत अर्थात् दोनों का साक्षी प्राज्ञ सुषुप्तिसाक्षी और विज्ञानघन अर्थात् तुरीया का साक्षी ज्ञानपूर्वक विचार से कोई नहीं है परमार्थ से विदित, वेद्य और निर्वाण भी नहीं है निर्वाण कैवल्य निःश्रेयस अनामय अमृत अक्षर ब्रह्म परमात्मा परापर निर्विकल्प निराभास

और ज्ञान ये शब्द परस्पर पर्याय हैं अर्थात् सबका एकही अर्थ है अन्तःकरण जब प्रसन्न होकर एकरस में वर्तमान होजाय वही ज्ञान है और सब अज्ञान है इसमें कुछ सन्देह नहीं गुरु की कृपा से निर्मल ज्ञान होता है जिसमें राग, द्वेष, काम, क्रोध, तृष्णा, असत्य आदिका लेश नहीं वही ज्ञान मुक्तिका कारण है अज्ञानरूप मल के योगसे पुरुष मलिन है उस अज्ञान के क्षय सेही मुक्ति होतीहै और किसीप्रकार से कोटिजन्म में भी मुक्ति होना कठिन है ज्ञान के विना पुण्य और पापका क्षय नहीं होता इसलिये मुक्तिके अर्थ ज्ञान काही अभ्यास करना उचित है ज्ञान के अभ्यास से बुद्धि निर्मल होजाती है ज्ञान से तृप्त और त्यक्तसङ्ग अर्थात् सबसे अलग रहनेहारे योगी को इस लोकमें तथा परलोकमें कुछ कर्तव्य नहींहै क्योंकि वह ब्रह्मवेत्ता कर्मके अभ्यास को छोड़ ज्ञानको प्राप्त होने से जीवन्मुक्त होजाता है और जो वर्णाश्रमका अभिमानी ज्ञान को छोड़ और कार्यों में आसक्त होय वह अज्ञानी है संसार का कारण अज्ञान है और शरीर धारण करना संसार है मोक्षकारण ज्ञान है और मुक्त पुरुष आत्मा में स्थित होता है अज्ञानी पुरुष को क्रोध, हर्ष, लोभ, मोह, दम्भ, धर्म, अधर्मआदि सदा घेरे रहते हैं इसीसे देह धारण करना पड़ता है और देह धारने से भांति भांति के दुःख भोगने होते हैं इस कारण सब दुःखों का मूल अज्ञान है योगी पुरुष ज्ञान से अज्ञान को दूर करे तो क्रोधआदि न होवें और क्रोध, धर्म, अधर्मआदि के न होने से सब दुःखोंका घर शरीर भी धारण न करना पड़े

आध्यात्मिक, आधिभौतिक और आधिदैविक इन तीनों दुःखोंसे छूट मुक्त होजाय इसभांति के ज्ञान विना ध्यान भी नहीं होसक्ता वचनमात्रसे ज्ञान नहीं होता केवल गुरुकी कृपा से ज्ञान होता है गुरुकी कृपा पाय चतुर्व्यूह अर्थात् विश्व, तैजस, प्राज्ञ और तुरीयरूप को जान ध्यान का अभ्यास करे सहज अर्थात् स्वाभाविक आगन्तुक अर्थात् बाहर से लगे हुये मन, वचन और शरीर से किये हुये सब भांति के पापों को ज्ञानरूप अग्नि दग्ध कर देता है जैसे सूखे इन्धन को आग। ज्ञानसे बढ़कर पाप निवृत्त करने का कोई उपाय नहीं है इसलिये सब संग छोड़ सदा ज्ञान का अभ्यास करे ज्ञानीको सबपाप पचजाते हैं अर्थात् अनेकभांति के पाप करके भी ज्ञानी निष्पापही रहता है जैसा ज्ञान वैसाही ध्यान इस कारण ध्यान का अभ्यास भी भलीभांति करे निर्विषय और सविषय दो प्रकार का ध्यान है छह प्रकार, चार प्रकार, दश प्रकार, बारह प्रकार और सोलह प्रकार से ध्यान का अभ्यास करे सविषय अर्थात् सालम्बध्यान में शुद्ध सुवर्णके तुल्य वर्ण निर्धूम अङ्गारके समान कोटि विद्युत् के तुल्य प्रकाशमान पीत, रक्त, श्वेतवर्ण, सदाशिवस्वरूप का ध्यान करे और निर्विषय ध्यान में ब्रह्मरन्ध्र के बीच चित्तको स्थिर करे और श्वेत पीत आदि कुछभी न ध्यावे अहिंसक, सत्यवादी, ब्रह्मचारी, दृढ़व्रत, सन्तुष्ट, शौचयुक्त और हमारा भक्त पुरुष गुरु की कृपा से ध्यान को पाय अभ्यास करे जब योगी पुरुष ध्यान के समय न देखे, न सुने, न सूंघे और न स्पर्श ...

आत्मा मेंही लीन होजाय उस ध्यान का नाम समरस है पृथ्वीतत्त्व में ब्रह्मा, जलतत्त्व में विष्णु, अग्नितत्त्व में काल, रुद्र, वायुतत्त्व में महेश्वर और आकाशतत्त्व में साक्षात् सदाशिव का ध्यान करे पृथ्वी में शर्व, जलमें भव, अग्नि में रुद्र, वायुमें उग्र, आकाश में भीम, सूर्य-मण्डलमें ईशान, चन्द्रबिम्बमें महादेव और सब पुरुषों में पशुपति इन आठ रूपों से हम सर्वत्र व्याप्त हैं शरीर में कठिनता पृथ्वी का अंश द्रव, जलका अंश तेज, अग्नि का संचार अर्थात् हिलना चलना वायु का और छिद्र अर्थात् अवकाश आकाश का अंश है शब्द का ज्ञान आकाश से उत्पन्न भया है स्पर्श का वायु से, रूप का अग्नि से, रसका जलसे और गन्ध का ज्ञान पृथ्वी से उत्पन्न भया है दहिने नेत्र में सूर्य, वाम में चन्द्र और हृदय में विभु अर्थात् परमात्मा का चिन्तन करे जानु-पर्यन्त पृथ्वीतत्त्व है, नाभिपर्यन्त जलतत्त्व, कण्ठ तक अग्नितत्त्व, ललाट पर्यन्त वायुतत्त्व और ललाटसे शिखा के अग्रतक आकाशतत्त्व है और उसके ऊपर हंसनामक ब्रह्म है आकाशरूप और आकाशमें स्थित शिव है इस भांति साधक पुरुष ध्यान करे वास्तव विचार करने से जीव, प्रकृति, सत्त्व, रज, तम, महत्तत्त्व, अहंकार, तन्मात्रा, इन्द्रिय पञ्चमहाभूत एक भी नहीं हैं सब माया का प्रपञ्च है मैंहीं सब जगत् में व्याप्त होकर स्थित हूं इसीसे स्थाणु कहाता हूं मेरे भय से सूर्य उदय होता है, पवन चलता है, चन्द्रमा प्रकाशित होता है, अग्नि जलता है, जल बहता है, भूमि सबको धारण करेहै,

आकाश अवकाश देता है और मेरी आज्ञा से सब जगत् अपनी मर्यादा में स्थित है हे मुनीश्वरो! यही चिन्तन करना चाहिये कि वह सर्वरूप सदाशिवही सब जगत् में व्याप्त है संसाररूप विषसे संतप्त पुरुषों के कल्याण के अर्थ ज्ञानयुक्त ध्यानही अमृत है अर्थात् ज्ञान और ध्यान सेही संसार की बाधा निवृत्त होती है दूसरा कोई उपाय नहीं धर्म से ज्ञान, ज्ञान से वैराग्य और वैराग्य से परम अर्थ को प्रकाश करनेहारा ध्यानयुक्त परम ज्ञान उत्पन्न होता है सत्त्वगुणयुक्त पुरुष को ज्ञान और वैराग्य से योगसिद्धि होती है और योगसिद्धि से मुक्ति मिलती है वह शिवस्वरूप अव्ययपद अज्ञानरूप अन्धकारने ढक रक्खा है इस कारण सत्त्वकी शक्ति में स्थित हो अज्ञान दूरकर शिवस्वरूप को देखे और अर्चन करे जो सत्त्वनिष्ठ मेरा भक्त मेरे पूजन में तत्पर अपने धर्म में दृढ़ सदा उत्साहयुक्त एकाग्रचित्त सब शीत, उष्ण आदि दुःख संहारनेहारा और धीर, सब भूतों के हित में रत, सरल स्वभाव, देव ऋषि और पितरों के ऋण से मुक्त, स्वस्थ चित्त, अभिमानरहित, कोमल और शान्तस्वभाव, बुद्धिमान्, धर्मज्ञ और स्पर्धा से रहित हो वह मुमुक्षु अर्थात् मोक्ष का अधिकारी है वह अपने पूर्वजन्म के पुण्य से ब्राह्मण के घरमें जन्म पाय वृद्धावस्था तक धर्मका सेवन कर उत्तम गुरु की कृपा से ज्ञान को प्राप्त होता है जो पुरुष इन लक्षणों करके युक्त न हो वह भी निष्कपट हो गुरुकी शुश्रूषा करे तो स्वर्ग में जाय उत्तम उत्तम भोगों को भोग भारत वर्ष में जन्म ले योगीके संसर्ग

से ज्ञान को प्राप्त होता है ये दोनों क्रम अज्ञानी पुरुषों की मुक्ति के लिये कहे हैं जो पुरुष सब सङ्ग छोड़ दृढ़व्रत हो इस मार्गपर चले वह संसाररूप कालकूट विष से मुक्त होय हे मुनीश्वरो ! यह ज्ञान और ध्यान का माहात्म्य हमने संक्षेप से वर्णन किया है, यह पाशुपतयोग हमारा कहाहुआ गोप्य रखना चाहिये जिस किसी को नहीं देना भस्मनिष्ठ योगी को इसका उपदेश करना चाहिये इस संसार के परम औषध पाशुपतयोग को जो पढ़े अथवा सुने वह ब्रह्मसायुज्य पावे इसमें कुछ सन्देह नहीं ॥

सत्तासीवां अध्याय ॥

सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो ! सनन्दनआदि मुनि यह शिवजी से सुन प्रणामकर फिर पूछते भये कि महाराज आपने कहा कि जगत् में एक मैं ही हूं और सब जगत् मुझमें है मैं स्वतन्त्र हूं फिर आप हिमालय की पुत्री पार्वती देवीके साथ भांति भांति के भोगों करके क्योंकर क्रीड़ा कररहे हैं यह भेद अनुग्रह कर हम को कहे यह मुनियों का वचनसुन हँसकर पार्वतीजीकी ओर देख श्रीशिवजी मुनियों के प्रति कहने लगे कि हम को कभी बन्ध और मोक्ष नहीं है हम अपनी इच्छासे शरीर धारते हैं जीव ही अकर्ता, यज्ञ, पशु, अणु और माया करके युक्त है इसीसे भांति भांति के शुभ अशुभ कर्मों में प्रवृत्त होताहै आत्माविषे ज्ञान, ध्यान, बन्ध, मोक्ष आदि नहीं हैं जो विद्वान् मुझे बन्ध मोक्ष आदि से रहित समझे वह आप भी बन्ध मोक्ष से रहित होजाय हे मुनीश्वरो ! मैं

वेद्य अर्थात् जानने के योग्य हूं और यह पार्वती विद्या है यह ही प्रज्ञा, श्रुति, स्मृति, धृति, निष्ठा, ज्ञानशक्ति, क्रियाशक्ति, इच्छाशक्ति, आज्ञा, पराविद्या और अपराविद्या है यह पार्वती जीव की प्रकृति और विकृति नहीं है सत् असत् के भेदसे रहित अर्थात् अनिर्वचनीय साक्षात् माया है पूर्वकाल में मेरे मुख से आज्ञा निकली उसमें प्रवेशकर मैंने जगत् का हित चिन्तन किया वह आज्ञारूप यह पार्वती है सत्ताईस तत्त्वों के भेद करके इस पार्वती सहित मैं सब जगत् में व्याप्त होरहाहूं उसी दिनसे लेकर मोक्ष की भी प्रवृत्ति भई सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो! इतना कह शिवजी ने पार्वतीजी की ओर देखा पार्वती जीने भी परमेश्वरका अभिप्राय जान मुनियों के अन्तःकरण से माया को हरलिया मुनि भी माया के मलसे निर्मुक्त हो पार्वतीजी को अतिप्रसन्नता से प्रणाम कर मुक्तिको प्राप्त भये हे मुनीश्वरो ! शिव और पार्वती में कुछ भेद नहीं वह एक परमेश्वर ही दो मूर्ति धारकर स्थित है परमेश्वर की आज्ञा से जब विद्वान् पुरुष असङ्ग अर्थात् मायारहित होवे तब ही मुक्त होता है नहीं तो कोटिजन्मों में भी मुक्ति दुर्लभ है वृद्ध मुनियों ने मुक्ति का क्रम कहा है परन्तु जो परमेश्वर की कृपा होवे तो क्षणमात्रमें मुक्ति होजाय वह क्रम एक ओर ही धरा रहे इस में कुछ सन्देह नहीं महेश्वर की कृपा से गर्भ में स्थित उत्पन्न हुआ हुआ बालक, तरुण, वृद्ध, अण्डज, उद्भिज्ज, स्वेदज, जरायुज आदि सब प्रकार के जीव मुक्त होसके हैं बन्ध और मोक्ष करनेहारा वह सदाशिव ही है मु,

भुवः,स्वर्ग,मह,जन,तप,सत्य ये सातों लोक और करोड़ों ब्रह्माण्ड तथा ब्रह्माण्ड के आठ आवरण महेश्वर का विग्रह अर्थात् शरीर है सात द्वीपों में, समुद्रों में, पर्वतों में, वनों में, वायुस्कन्धों में और अनेक लोकों में जो स्थावर जङ्गम जीव निवास करते हैं वे सब शिव के अंश हैं और उन सब की गति वह शिव ही है सब रुद्र ही है उस महात्मा को नमस्कार हो सब विश्व रुद्र से ही उत्पन्न भया है यह अम्बिका रुद्र की आज्ञारूप है इसीके अनुग्रह से मुक्ति मिलती है इस प्रकार खेचर सिद्ध प्रसन्न होकर परस्पर कहते हैं जब सदाशिव अपनी आज्ञारूप शक्ति से कृपा कर देखते हैं तब वे खेचर सिद्ध परमेश्वर के सायुज्य को प्राप्त होते हैं ॥

अठासीवां अध्याय ॥

शौनक आदि ऋषि पूछते हैं कि हे सूतजी ! साधु पुरुषों को कौन से योग करके मुक्ति मिलती है और योगियों को अणिमा आदि सिद्धि किस प्रकार होती है यह आप विस्तार से वर्णन करें ॥

यह प्रश्न सुन सूतजी बोले कि हे मुनीश्वरो ! अब हम अतिदुर्लभ योग कहते हैं आप सावधान होकर श्रवण करें पहिले अपने चित्त में सदाशिव को स्थापन कर सद्योजात आदि पांचरूपों से ध्यान करे फिर सोम, सूर्य, अग्नि करके युक्त छब्बीस तत्त्वरूप शक्तियों से शोभित पहिले आठ दलों करके युक्त उसके ऊपर षोडश दल और उसके भी ऊपर द्वादश दलों करके शोभाय-

मान पद्मासनका ध्यानकर उसके मध्य में अणिमा आदि
आठ सिद्धियों करके भूषित वामा आदि आठ शक्ति
वामदेव आदि आठ रुद्र तथा चौंसठ रुद्रों करके युक्त
और पार्वतीजीसहित अष्टमूर्ति सदाशिव का ध्यान
करे उत्तम ज्ञान पाय इस भांति परमेश्वर के स्वरूप को
ध्यावे यह पाशुपतयोग मोक्ष, सिद्धि और अणिमा आदि
आठ सिद्धि देनेहारा है इसके विना चाहे कोटि उपाय
करो परन्तु सिद्धि नहीं होती अणिमा आदि सिद्धियों में
योगियों के लिये आठगुण ऐश्वर्य है उसको हम क्रम से
वर्णन करते हैं आप सुनिये अणिमा, लघिमा, महिमा,
प्राप्ति, प्राकाम्य, ईशित्व, वशित्व और कामावसायित्व
यह अणिमा आदि ऐश्वर्य तीन प्रकार का है सावद्य,
निरवद्य और सूक्ष्म पञ्चभूतात्मक होना सावद्य है
इन्द्रिय मन और अहङ्काररूप होजाना निरवद्य है
और भूत तन्मात्रारूप होजाना सूक्ष्म है ये तीनों भेद
सूक्ष्म अणिमा आदि ऐश्वर्यों में प्रवृत्त होते हैं अब
सूक्ष्मरूप से स्थित अणिमा आदि ऐश्वर्यों का रूप
कहते हैं जैसा परमेश्वर ने कहा है जो ऐश्वर्य त्रैलोक्य
में स्थित है अव्यक्त अर्थात् मायिक है और सब भूतों
में जिसका नियम है तीन लोक में जो बल सब भूतों को
दुर्लभ है वह योगी को मिलता है यह अणिमा नाम
ऐश्वर्य है आकाश का लङ्घन समुद्र आदि का तरण
अपनी इच्छा का रूप धारण और सब भूतों से अधिक
शीघ्रता ये सब लघिमा नाम ऐश्वर्य में होते हैं त्रैलोक्य
के सब जीव योगी की स्तुति और पूजा करें यह महिमा

नाम ऐश्वर्य है त्रैलोक्य के सब भूतों में अपनी इच्छा से गमन करना प्राप्तिनामक ऐश्वर्य है अपने अभीष्ट विषयों का अप्रतिहत अर्थात् प्रतिबन्ध विना भोग करना प्राकाम्यनाम ऐश्वर्य है तीन लोक के सब जीवों को सुख और दुःख की प्रवृत्ति करने में समर्थ होजाय और सब भांति के देह धार सके यह ईशित्वनामक ऐश्वर्य है त्रैलोक्य के सब भूत वश होजायँ यह वशित्वनाम ऐश्वर्य है और त्रैलोक्य में योगी की इच्छा से चर अचर रूप उत्पन्न होयँ और उसकी इच्छा न होने से न होयँ यह कामावसायित्वनाम ऐश्वर्य है ये आठ ऐश्वर्य हैं शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गन्ध और मन योगी की इच्छा से प्रवृत्त होते हैं और इच्छा न होने से नहीं होते योगी न उत्पन्न होय न मृत्युवश होय न छिन्न होय न भिन्न होय न दग्ध होय न मोह को प्राप्त होय न लीन होय न लिप्त होय न क्षीण होय न खिन्न होय न विकार को प्राप्त होय गन्ध, रस, रूप, शब्द, स्पर्श, वर्ण और स्वर से रहित होकर विषयों का भोग करे तथा विषयों में लिप्त न होय अणुभाव से जीव अति सूक्ष्म है सूक्ष्म होने से आपवर्गिक अर्थात् त्यागी होता है और सबका त्याग करने से व्यापक होता है और व्यापकता से वह जीव पुरुष है पुरनाम देह का है सब देहों में रहने से पुरुष कहाता है सूक्ष्मभाव से ही जीव परम ऐश्वर्य को प्राप्त होता है इस कारण सूक्ष्म ऐश्वर्य अर्थात् अणिमानाम ऐश्वर्य सब से उत्तम है पाशुपतयोग के सेवन से योगी सब ऐश्वर्यों को पाय मुक्ति को प्राप्त होता है हे मुनीश्वरो !

इस भांति पाशुपतयोग मुक्ति, मुक्ति और शिवसायुज्य देनेहारा है जो योगी आत्मचिन्तन को छोड़ विषयों की इच्छा से कर्म में प्रवृत्त होय वह भी राजस, तामस भोगों को भोग कर अन्त में मुक्त होता है सत्कर्म करने से स्वर्ग में उत्तम फल का भोग करता है वहांसे भूमि पर आय मनुष्य जन्म पाता है इसकारण शाश्वत् पद और परम सौख्य ब्रह्म ही है ब्रह्मकी निरन्तर सेवा करे यज्ञ करने में एक तो अति परिश्रम होय और फलभी स्थिर नहीं अर्थात् स्वर्ग भोग कर भूमि पर आय फिर जन्म मरण का कष्ट भोगना पड़ताहै इसलिये मोक्ष ही परम सुख है ब्रह्मतत्त्व में परायण ध्यान करके युक्त योगी सैकड़ों मन्वन्तरों में भी नीचे नहीं गिरता शाश्वत पद में ही स्थिर रहता है दिव्य विश्वनामक, विश्वतोमुख, विश्वपाद, शिरोग्रीव अर्थात् जिसके चारोंओर मुख पांव शिर और ग्रीवा हैं विश्वरूपी विश्व का स्वामी, विश्वगन्ध, विश्वमाल, विश्वाम्बर धारनेहारा वह पुरुष सूर्य की किरणों करके पृथ्वी को तपाता है वही उत्पन्न करता है और संहार करता है और कविपुराण अनुशासिता अर्थात् अनुशासन करनेहारा सूक्ष्म से सूक्ष्म और स्थूल से स्थूल है उस सुवर्णवर्ण तेजकरके देदीप्यमान निर्गुण नित्य सर्वव्यापी सत्रसार परमात्मा को योगयुक्ति से देख सकते हैं इन्द्रियों से उस पुरुष का ज्ञान किसी भांति नहीं होसकता वह परमात्मा हाथ, पांव, उदर, पार्श्व, जिह्वा आदि अवयवों से रहित है विना नेत्रों के सब जगत् को देखता है विना कानों सुनता है विना बुद्धि सब जानता

है सब विश्व को वह जानता है परन्तु उसको सब विश्व नहीं जानता इसलिये वह पुरुष सब से श्रेष्ठ और बड़ा है अचेतना अर्थात् जड़ सर्वगत सूक्ष्म और सब भूतोंके उत्पन्न करनेहारी प्रकृति को भी योगी देखते हैं उस ब्रह्म के चारों ओर हाथ, पांव, नेत्र, शिर, कान और मुख हैं तथा सब जगत् में व्याप्त होकर स्थित है सनातन सब भूतोंके परमपुरुष उस शिव को जो विद्वान् योग में युक्त होकर जाने वह कभी मोह को नहीं प्राप्त होय भूतात्मा, महात्मा, परमात्मा, सर्वात्मा और अव्यय उस ब्रह्म का ध्यान करनेहारा कभी मोहके वश नहीं होता जिसभांति सब मूर्तियों में विचरते हुए पवन का ग्रहण नहीं होसकता इसीभांति सब शरीरोंमें वह पुरुषभी दुर्ग्राह्य है पुर अर्थात् शरीरों में शयन करने से पुरुष कहाताहै स्वर्ग में निवास करनेहारा जीव भी पुण्य का क्षय होने पर थोड़े से कर्म शेष रहने से ब्राह्मण की योनि में जन्म लेताहै पहिले स्त्री पुरुषके सङ्ग के समय शुक्र शोणित करके युक्त गर्भ में वह जीव प्रवेश करताहै गर्भके समय शुक्र शोणित का कलल होता है पीछे बुद्बुद बनता है जैसे चाक पर रखकर घुमाया हुआ मृत्तिका का पिण्ड घट आदि आकारको प्राप्त होताहै इसी प्रकार वह जीव करके युक्त शुक्र शोणित का बुद्बुद अर्थात् बुलबुला पञ्चभूतों करके युक्त और वायु करके प्रेरित मनुष्य आदि आकार को प्राप्तहोताहै गर्भसे बाहर निकलेहुये उस जीव को जबतक वायु न लगे तबतक सब काल यही चिन्तन करता रहता है कि जो इस गर्भ-वास के दुःख से किसी भांति मुक्त हूंगा तो सदाशिवके

आश्रय में रहूंगा और निरन्तर श्रीमहादेवजी के अर्चन में तत्पर रहूंगा इस प्रकार के अनेक विचार करता है परन्तु जन्म लेने के अनन्तर सब भूलजाता है आकाश से वायु उत्पन्न होताहै वायु से जल जल से प्राण और प्राण से वीर्य उत्पन्न होता है रक्त के भाग तेंतीस और वीर्यके भाग चौदह मिलकर दो भागों से गर्भ का निषेक होता है वह गर्भ पांच प्रकार के वायु करके आवृत पिता के शरीर के अनुसार रूप को प्राप्त होता है माता जो भोजन करती है वही आहार नाभि की द्वारा गर्भ में प्राप्त होकर उसका पोषण करताहै इस प्रकार नौ महीने अति क्लेश से गर्भ में व्यतीत करता है उसके सब अङ्ग जरायु अर्थात् जेर से लिपटे रहते हैं जब वह वृद्धि को प्राप्त होता है तब गर्भाशय में नहीं समाता और नीचे की ओर मुख किये योनिछिद्र से बाहर निकलता है यह दशा तो जीवों की उत्पत्ति के समय है और मरण के अनन्तर अपने दुष्कर्मों के अनुसार असिपत्रवन शाल्मलिच्छेदन पूयभक्षण आदि बड़े बड़े दारुण नरकों में पड़े यम-यातना भोगते हैं इसप्रकार जीव अपने किये पापों करके अति सन्ताप को प्राप्त होते हैं और अपने कर्मों के अनु-सार सुख दुःख भोगते हैं सबको छोड़ जीव अकेला ही परलोक को जाता है और कर्म का फल भी अकेले को ही भोगना पड़ता है कोई भाई, बन्धु, पुत्र, स्त्री आदि काम नहीं आते इसलिये सुकृत करना चाहिये जिससे सुख मिले परलोक जाने के समय जीव के साथ कर्म जाता है और सब यहां के ही साथी हैं पापी मनुष्य अनेक प्रकार

की यमयातनाओं करके पीड़ित नरक में पड़े पड़े पुकारते हैं परन्तु कोई उनकी रक्षा नहीं करता मन, वचन, कर्म करके जिसका निरन्तर सेवन करे उसके अनुसार फल पाता है इसलिये भला काम करनाही उचित है बुरे काम का परिणाम अति दारुण होता है कर्मों के साथ जीवों का अनादि सम्बन्ध है उसीके अनुसार छः प्रकार के तामस संसार को सब जीव प्राप्त होते हैं मनुष्य से पशु, पशु से मृग, मृग से पक्षी, पक्षी से सरीसृप अर्थात् सर्प आदि सरीसृप से स्थावर अर्थात् वृक्ष पाषाण आदि जन्म को प्राप्त होता है फिर स्थावर से मनुष्यजन्म तक पहुँचता है इस प्रकार कुलालचक्र की भांति मनुष्य से स्थावर पर्यन्त तामस संसार में भ्रमता रहता है सात्त्विक संसार ब्रह्मा से लेकर पिशाच पर्यन्त स्वर्गनिवासी जीवों के लिये है ब्राह्म संसार में केवल सत्त्वगुण और स्थावर में केवल तमोगुण है और बीच के चौदह भुवनों में रजोगुण प्रधान है मर्मस्थानों के छेदन से अति पीड़ित जीव परमेश्वर का स्मरण करता है उस पूर्वधर्म की भावना से मनुष्यभाव को प्राप्त होता है मनुष्य होकर भी निरन्तर परमेश्वर का ध्यान करना योग्य है जिससे फिर भी वह दारुण दुःख न देखना पड़े चौदह भुवनरूप संसारमण्डल के सुखदुःखों को विचार संसार से भय मान धर्म का सेवन करे जिससे अति भयङ्कर भवसागर का पार पावे संसारचक्र से मुक्त होने के लिये योग का आरम्भ करे जिससे आत्मा को देखे यह परज्योति शिवस्वरूप आत्मा इस संसारसागर का सेतु है

इस कारण सब भूतोंके हृदयमें स्थित सर्वतोमुख अग्निस्वरूप संसारसागरके सेतु महेश्वरका उपासन करे यह महेश्वर अपनी शक्ति करके सहित पृथ्वी आदि अष्ट मूर्ति और उनके अभिमानी भव आदि आठस्वरूप वामा आदि आठ शक्ति और वामदेव आदि अपने आठ रूपों करके युक्त है उसका अपने हृदय में ध्यान करे और सृष्टि के निर्वाह के लिये अपने को संकुचितकर हृदय में स्थित जो अग्नि उसमें पांच आहुति देवे प्रथम शुद्ध जल से आचमनकर मौनी हो उत्तम पीठपर बैठ हृदय में अग्नि का ध्यानकर प्राणाय स्वाहा, अपानाय स्वाहा, व्यानाय स्वाहा, उदानाय स्वाहा, समानाय स्वाहा इन पांच मन्त्रों से पांच आहुति देवे अर्थात् भोजन के आरम्भ में घृतप्लुत पांचग्रास पहिले इन मन्त्रोंसे भक्षणकर पीछे अपनी इच्छानुसार भोजन करे भोजन कर फिर आचमन करे और हृदयको स्पर्शकर इसभांति रुद्रकी प्रार्थना करे कि हे रुद्र! सब जीवोंके प्राण अपान ग्रन्थिरूप तुम आत्मा हो और अहङ्कार के अधिष्ठातृ देवता तथा दुःख के अन्त करनेहारे हो इस कारण मेरे हृदय में प्रवेश करो इस प्रकार रुद्रकी प्रार्थना से अपने आत्मा को आप्यायित अर्थात् तृप्त करे क्योंकि प्राण को भी जीवन देनेहारा रुद्र है रुद्र प्राणमें स्थित है इसलिये आपभी प्राणमय है प्राणाय स्वाहा, रुद्राय स्वाहा, ईशाय स्वाहा, शिवाय स्वाहा, ब्रह्मात्मने स्वाहा इन पांच मन्त्रों से श्राद्ध में आहुति देवे और यह प्रार्थना करे कि हे शिव! मेरे हृदय में आप प्रवेश करो सब के हृदयाकाश में अंगुष्ठ

प्रमाण जगत् के कारण आप विराजमान हो आप सब जगत् के प्रभु शाश्वत सब देवताओं में ज्येष्ठ और सर्वव्यापी हो इस कारण मेरे ऊपर भी प्रसन्न हो और हमारे अर्थ आप मृदु अर्थात् कोमल होवें और यह अन्न आप के विषे हवन हो इसभांति परमेश्वरकी प्रार्थना करे सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो ! यह ब्रह्माजी का कहा हुआ योगाचार अणिमा आदि गुणों के वर्णन सहित हमने आपको श्रवण कराया है भस्मसे स्नान करे और भस्म से लिप्त रहे और इस पाशुपत ज्ञानको भलीभांति जाने इस उत्तम ज्ञानको देव और पितृकर्म में जो पुरुष भक्ति से श्रवण करे अथवा ब्राह्मणों को सुनावे वह अवश्य उत्तम गति पावे ॥

नवासीवां अध्याय ॥

सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो ! अब हम शौच और आचार का लक्षण वर्णन करते हैं जिसके अनुष्ठान से मनुष्य शुद्धात्मा हो परलोक में सद्गति पावे सब वेदों का सार और ब्रह्मवादियों का सर्वस्व सब लोकों के हित के लिये संक्षेप से ब्रह्माजीने शौचका लक्षण कहा है जिसके अनुष्ठान करने से मुनिलोग भी दुःखको नहीं प्राप्त होते हैं मुमुक्षु पुरुष के लिये मान और अवमान ये दोनों विष और अमृत हैं अर्थात् मान तो विष और अवमान अमृत है गुरुके हितमें तत्पर होकर एक वर्ष गुरु के समीप निवास करे और यम नियमों में कभी प्रमाद न करे इस प्रकार एक वर्ष गुरुके समीप निवास

कर उत्तम ज्ञान पाय गुरुकी आज्ञा ले धर्म के अविरोध से इस भारतवर्ष में विचरे अर्थात् जिससे धर्ममें कुछ हानि न हो ऐसा भ्रमण करे चक्षुःपूत मार्ग में चले अर्थात् सर्प, वृश्चिक, कांटा आदि देख पांव धरे वस्त्र-पूत अर्थात् छना हुआ जल पीवे सत्यपूत वचन कहे और मनःपूत अर्थात् जिस काम के लिये अपना मन साक्षी हो वह काम करे मत्स्य पकड़ कर वेचनेहारे पुरुष को छह महीने में जितना पाप होता है उतना पाप विन छाना जल पीनेहारे को एक दिन में होता है इस कारण जलको वस्त्रसे छानकर पीवे विन छाना जल पीकर पांच सौ जप अघोरमन्त्र का करे अथवा शिवजी को घृत से स्नान कराय पूजन कर तीन प्रद-क्षिणा करे तब शुद्ध होवे योगी पुरुष आतिथ्य अर्थात् प्रीतिके निमन्त्रण में, श्राद्ध में और यज्ञ में कभी भोजन करने न जाय इस प्रकारके आचरणसे योगी अहिंसक होता है गृहस्थों के घरमें जब अग्नि का धूम शान्त हो जाय और उस घरके सब मनुष्य भोजन करचुकें तब योगी भिक्षाके लिये जाय और नित्य उन्हीं घरोंमें न जाय नहीं तो अनादर होता है ऐसी भिक्षा ग्रहण करे जिससे धर्ममें कोई दूषण न लगे वानप्रस्थ और याया-वरोंके अर्थात् वैखानसों के घरमें भिक्षा ग्रहण करे तो बहुत उत्तम है नहीं तो जितेन्द्रिय, वेदपाठी, श्रद्धायुक्त, शीतलस्वभाव, महात्मा गृहस्थ ब्राह्मणों के घर में भिक्षा ग्रहण करे अथवा और भी जो अपने धर्म में स्थित सत्पुरुष हों उनके घरमें भिक्षा लेवे सब वर्णों में भिक्षा

ग्रहण करना अधमवृत्ति है यवागू अर्थात् पतला भात, छाछ, दूध, जौकी रोटी आदि पका हुआ फल, मूल, सूक्ष्म अन्न, कण, तिलोंकी खल और सत्तू ये उत्तम भिक्षा हैं इनके आहार करने से योगी को शीघ्र सिद्धि होती है जो पुरुष सदा उपवास करे और महीना पूरा होने पर कुशाके अग्रभाग से उठाय एक जलबिन्दु मुख में छोड़ले और कुछ आहार न करे उसको जितना पुण्य होताहै उससेभी अधिक न्यायसे ग्रहण की हुई भिक्षाके भोजन करनेहारे पुरुषको पुण्य होता है जरामरण, गर्भ-वास और नरक से भयभीत योगीके लिये सबसे उत्तम भिक्षा है अर्थात् भिक्षाका अन्न भोजन करने से किसी प्रकारका भी पाप नहीं होता दही, दुग्ध आदि भोजन करके तप करनेहारे और शरीर को क्षीण करनेहारे बड़े बड़े तपस्वी भिक्षा भोजन करनेवाले पुरुष के एक कला अर्थात् सोलहवें भागकीभी तुल्यता नहीं कर सकते जो परमपद को चाहे तो भस्मस्नायी और जितेन्द्रिय हो भिक्षा भोजन कर पाशुपत व्रत करे योगियों के लिये चान्द्रायण व्रत श्रेष्ठ है एक, दो, तीन चान्द्रायण अपनी शक्तिके अनुसार करे अस्तेय अर्थात् चोरी न करना ब्रह्मचर्य, अलोभ, त्याग और अहिंसा ये पांच भिक्षुओं के व्रत हैं इनमें मुख्य अहिंसा है अक्रोध, गुरु की सेवा, शौच, लघु[illegible]जन और नित्य स्वाध्याय अर्थात् वेदका पठन ये नि[illegible] हैं माता, पिता, अपना स्वभाव, धन आदि पदा[illegible] और संचित तथा क्रियमाण कर्म ये सब देवताओं [illegible] वे योगियों के लिये बन्धन हैं जिस भांति

वनमें हाथी पकड़नेके लिये मनुष्य बन्धन रचते हैं इसी प्रकार ये बन्धन योगियों के लिये हैं सब यज्ञ स्वर्ग देनेहारे हैं यज्ञों से जप उत्तम है, जपसे ज्ञान और ज्ञानसे भी उत्तम राग, द्वेष और संग से रहित ध्यान है जिसके करनेसे मनुष्यों को शाश्वत पदकी प्राप्ति होती है दम, शम, सत्य, निष्पापता, मौन, सब भूतों के साथ सरलता और आत्मज्ञान इन सबको निर्मल बुद्धिवाले महात्मा शिव कहते हैं शान्तचित्त ब्रह्मके चिन्तनमें तत्पर आलस्यसे रहित शुचि, जितेन्द्रिय, महात्मा और एकान्त में रहनेवाला पुरुष इस पाशुपत योग को प्राप्त होता है यह बड़े बड़े ऋषि कहते हैं जिस प्रकार अंकुश से रोकाहुआ हस्ती अपने अभीष्ट देशमें पहुँचाता है इसी भांति निष्पाप और कर्म से रहित योगी इस शुद्धमार्ग करके मोक्षको प्राप्त होता है शान्तस्वभाव सदाचार में रत और अपने धर्म का परिपालन करनेहारे मनुष्य सब लोकों को उल्लङ्घन कर ब्रह्मलोक में प्राप्त होते हैं हे मुनीश्वरो! सबलोकोंके उपकारके लिये ब्रह्माजीने जो साक्षात् सनातन धर्मका उपदेश किया है वह आप सुनें हम वर्णन करते हैं गुरुके उपदेश करके युक्त और मर्यादा पर चलने वाले वृद्धपुरुषों को देख उठकर प्रणाम करना चाहिये गुरु और पिताको तीन बार अष्टाङ्ग दण्डवत् प्रणाम कर तीन प्रदक्षिणा करे और भी जो अपने से बड़े हों उनको प्रणाम करे उनकी आज्ञा भङ्ग न करे धातुवाद, नास्तिकवाद, बिलप्रवेश, निधिक्षत्रका ढूंढ़ना, भूत प्रेत आदि साधन के क्षुद्र मन्त्रों से उपजीवन, मन्त्रसे सर्प

आदि जीवोंका ग्रहण और दूसरे का विडम्बन अर्थात् नकल करना इस भांति के और भी जो तुच्छ कर्म हों उन को बुद्धिमान् पुरुष कभी न करे कपट, कृपणता, पिशुनता आदि दुष्टकर्म का सदा त्याग करे अत्यन्त हास्य बुरे कामका आरम्भ लीला करके अपनी इच्छा के आचार में प्रवृत्ति इन कर्मोंको त्याग करे और गुरुके समीप तो अवश्यही त्यागे गुरुके वचन से प्रतिकूल न कहे गुरुके अनुचित वचन को भी बुरा न जाने मन करके भी गुरु का अनिष्ट चिन्तन न करे अर्थात् बुरा न चाहे यतियों का आसन, वस्त्र, पादुका और दण्ड आदि माल्य शयन का स्थान पात्रछाया और यज्ञके उपकरणों को कभी पैरसे स्पर्श न करे देवता और गुरुका द्रोह कभी न करे जो भूलसे होजाय तो प्रणवका दशहज़ार जप करे और ज्ञानसे देवद्रोह, गुरुद्रोह करे तो कोटि जप करनेसे शुद्ध होय महापातक निवृत्त होने के लिये भी विधिपूर्वक कोटि जप करे पातकी पुरुष भला आचरण करे और इस का आधा जप करे तो शुद्ध होजाय और उपपातकी भी व्रतधारणपूर्वक इससे आधा जपकरे तो शुद्ध होय संध्या लोप होनेपर प्रणवका तीन बार उच्चारण करनेसे ब्राह्मण शुद्ध होता है आह्निक अर्थात् सब दिनके कर्म का लोप होनेपर एक शत जप करने से शुद्ध होता है आचार का उल्लङ्घन अभक्ष्य वस्तु [illegible] क्षण और अवाच्य वचन का कथन करनेहारा [illegible] एक सहस्र जपसे शुद्ध होता है काक, उलूक, [illegible] आदि पक्षियों को मारनेहारा अष्टोत्तरशत ज[illegible]रने से शुद्ध होता है परन्तु तत्त्ववेत्ता

और ब्रह्मवादी ब्राह्मण स्मरणमात्रसे ही शुद्ध होजाता है इसमें कुछ विकल्प नहीं क्योंकि आत्मवेत्ता पुरुषोंको कभी पापका स्पर्श नहीं होता वे सदा काञ्चनकी भांति निर्लेप हैं इसीसे जगत् भरमें ध्याननिष्ठ पुरुष शुद्ध हैं उन को प्रायश्चित्त आदिकी कुछ अपेक्षा नहीं क्योंकि शुद्ध पदार्थका फिर शोधन नहीं होसक्ता शीतल फेनरहित और वस्त्रसे छनेहुये जल करके सब क्रिया करे गन्ध वर्ण और रस करके दूषित अपवित्र स्थान में स्थित पङ्क पाषाण आदि से मलिन सिवार आदि से युक्त जल पल्वल अर्थात् छोटी तलाईका जल और समुद्रका जल इस भांति और भी जो दुष्ट जल होय उसका त्याग करे शुद्ध वस्त्र पहिन कर देवपूजा गुरुशुश्रूषा आदि सब सत्कर्म करे जिसके वस्त्र शुद्ध न हों वह पुरुष भी शुद्ध नहीं होता जिन वस्त्रों की देवकार्य में अपेक्षा पड़े उनका नित्य प्रक्षालन आदि शौच होना चाहिये और बाक़ी सब वस्त्र जब मलिन हों तब शुद्ध करने योग्य हैं दूसरे का पहिना हुआ वस्त्र कभी न धारण करे रेशमके और ऊन के वस्त्र वायु आदि रूक्ष पदार्थ से शुद्ध होते हैं अलसी के वस्त्र श्वेत सर्षपसे अंशुपट्ट अर्थात् जरीके वस्त्र बिल्व-फलोंसे और कम्बल आदि रेठाके फलों से शुद्ध होते हैं चर्म शणके वस्त्र और वेत्र के वस्त्रोंकी शुद्धि कर्पास वस्त्रों की भांति होती है वल्कल अर्थात् वृक्षकी त्वचा और छत्र चामर आदिकी शुद्धि वस्त्रोंके तुल्य है कांस्य भस्म करके शुद्ध होता है लोह क्षार करके, तांबा रांगा और शीशा अम्ल अर्थात् खटाईसे शुद्ध होते हैं सुवर्ण, चांदी,

मणि, पाषाण, शंख आदि के पात्र जलसे शुद्ध होते हैं अति मलिन पदार्थ भी अग्नि और जल के संयोग से शुद्ध होते हैं सब रसों की शुद्धि उत्प्लवन है अर्थात् मथके छान लेने से तृण काष्ठ आदि वस्तु जल के अभ्युक्षण से शुद्ध होते हैं स्रुक् स्रुव आदि यज्ञ के पात्र ऊखल मुशल आदि गरम जल से शुद्ध होते हैं सींग, काष्ठ और दांत से बनीहुई वस्तु छीलने से शुद्ध होती है इकट्ठे पदार्थों का शोधन जल के अभ्युक्षण से होता है और जो पदार्थ अलग अलग हों उनमें एक एक का शोधन करना चाहिये धान्य के ढेर में जितना अशुद्ध हो उतने को त्याग शेष को कुशा के जल करके मार्जन कर देने से शुद्धि होती है शाक, मूल, फल आदिकों की शुद्धि धान्य की भांति है जल के मार्जन और गोबर के लेपन से घर की शुद्धि होतीहै मृत्तिका का पात्र फिर अग्नि में पकालेने से शुद्ध होता है खोदने, लीपने, बहारने और जल सींचने से तथा गौओं के निवास से भूमि शुद्ध होती है भूमि पर गिरा हुआ जल शुद्ध है परन्तु इतना हो जिसके पान करने से एक गौ तृप्त होजाय और गन्ध, वर्ण, रस करके युक्त न हो तथा कोई अपवित्र वस्तु उसमें न गिरी हो दूधदोहन के समय बछड़े का मुख, वृक्ष से फल गिराने के समय पक्षी का मुख, आखेट में मृग मारने के समय श्वान का मुख और रति के समय गृहस्थों के लिये अपनी स्त्री का मुख पवित्र होताहै धोबी के धोये वस्त्रों को कुशा के जल से मार्जन कर धारण करे वर्णाश्रम के विभाग करके बेंचने के लिये बाज़ार में रक्खे हुये पदार्थ शुद्ध

होते हैं और आकर अर्थात् खानि से उत्पन्न हुये पदार्थ भी शुद्ध हैं छाया, वायु, रज, भूमि, अग्नि, मक्षिका और वेदपाठ के समय मुख से उड़े हुये जलविन्दु शुद्ध होते हैं सोके, भोजनकरके, जल आदि पानकरके, छींक मार के और अध्ययन आदि के समय निष्ठीवन अर्थात् थूंककर आचमन करने से शुद्ध होता है आचमन करते हुये दूसरे पुरुष के जलविन्दु जो अपने चरणों पर गिरें उनसे अपवित्र नहीं होता पतित मनुष्य, कुक्कुट, शूकर, काक, श्वान, ऊंट, गधा, चाण्डाल, श्मशान का यूप अर्थात् काष्ठ का स्तम्भ, रजस्वला, प्रसूतिका और चाण्डाली आदि को स्पर्श करके तथा अपनी स्त्री से मैथुन करके स्नान करने से शुद्ध होता है जननाशौच और मरणाशौच से युक्त भी पुरुष रजस्वला को स्पर्श करे तो स्नान करके शुद्ध होता है यति, वानप्रस्थ, नैष्ठिक, ब्रह्मचारी, राजा और राजमन्त्री आदिकों को आशौच नहीं होता परन्तु राजाओं को आवश्यक कार्य के समय आशौच नहीं होता और समय में तो होता ही है वैखानस और संचयन करनेहारे ब्राह्मणों को स्नानमात्र से आशौच की निवृत्ति होती है और जिनको आशौच का ज्ञान न हो उनको तथा जो पुरुष यज्ञ में दीक्षित हो उसको भी आशौच नहीं होता यज्ञ करनेवाले और जिनने वेद की कोई शाखा अध्ययन की हो वे एक दिन में शुद्ध होते हैं परन्तु यह शुद्धि आवश्यक कार्य में कही है सब मनुष्यों की शुद्धि चौथे दिन होती है जनन और मरण का आशौच साधारण मनुष्यों के लिये तीन दिन है परन्तु

बान्धवों को दशदिन पर्यन्त आशौच रहता है ग्यारह दिन के भीतर जो बालक मृत हो उसका आशौच स्नानमात्र से निवृत्त होता है ग्यारह दिन के अनन्तर और छह महीने से पहिले जो मृत हो उसका एक दिन आशौच रहता है सात वर्ष से पूर्व और छह महीने के अनन्तर जो मृत हो उसका तीन दिन आशौच है इसके अनन्तर यज्ञोपवीत होकर जिस ब्राह्मणबालक की मृत्यु हो उसका दश दिन आशौच होता है जन्म लेते ही जो मृत्यु हो उसके माता पिता को क्रम से दश दिन और तीन दिन आशौच होता है नालच्छेदन से प्रथम मृतहो तो तीन दिन और पीछे पिता को भी दश दिन होता है तीन वर्ष से प्रथम जो कन्या मृत हो उसके बान्धवों को स्नानमात्र से शुद्धि होती है और पिता को तीन दिन आशौच रहता है आठ वर्षपर्यन्त बान्धवों को एक रात्रि आशौच बारह वर्ष पहिले स्त्री मृत हो तो बान्धवों को तीन रात्रि आशौच होताहै सात पीढ़ी बीतने के अनन्तर सपिण्डता नहीं रहती है दश दिन व्यतीत होनेपर जो किसी बन्धु की मृत्यु सुने तो तीन दिन आशौच होता है छह महीने पहिले सुने तो पक्षिणी अर्थात् एक दिन एक रात्रि और दूसरा दिन आशौच होताहै वर्षसे प्रथम सुने तो एक दिन आशौच और वर्ष के अनन्तर मृत्यु का वृत्तान्त सुने तो स्नानमात्र से शुद्ध हो शव के स्पर्श करने से तीन रात्रि आशौच रहता है परन्तु बान्धव न हो तो उसके स्पर्श करनेहारे अर्थात् लेजाने और दग्ध करनेवाले स्नानमात्र से शुद्ध होते हैं शव के साथ

जानेवाले भी स्नानकर घृत का प्राशन अर्थात् थोड़ासा घी खाने से शुद्ध होते हैं आचार्य और श्रोत्रिय के मरण से तीन दिन का आशौच होता है मातुल अर्थात् मामा और अपने ऊपर उपकार करनेहारे पुरुष के मृत होने पर एक पक्षिणी आशौच होता है राजा, राजमन्त्री और देशान्तर में रहनेहारे स्नानमात्र से शुद्ध होते हैं क्षत्रिय को बारह दिन आशौच होताहै अभिषिक्त क्षत्रिय अर्थात् जिसका राज्याभिषेक हुआ हो उसको आशौच नहीं होता रण में और प्रमाद विषे मृत हुये पुरुष का भी आशौच नहीं होता वैश्य पन्द्रह दिन में और शूद्र एक मास में शुद्ध होता है हे मुनीश्वरो ! यह द्रव्यों की शुद्धि और आशौच का निर्णय हमने संक्षेप से कहा है यतियों को अर्थात् संन्यासियों को आशौच नहीं होता त्रेतायुग से लेकर प्रतिमास स्त्रियों को ऋतुधर्म होने लगा है सत्ययुग में सब स्त्रियों के साथ उत्पन्न होते थे और साथ ही रहते थे जिस भांति उत्तरकुरु के निवासी रहते हैं वर्ण आश्रम की व्यवस्था इसी भारतवर्ष में है और जम्बूद्वीप के आठ खण्डों में तथा महावीत, सुवीत आदि वर्षों में नहीं है परन्तु शाकद्वीप आदि पांच द्वीपों में भारतवर्ष के तुल्य ही व्यवस्था है सत्ययुग में रसोल्लास से वृत्ति थी त्रेता में गृहवृक्षों से वृत्ति भई परन्तु नारियों के ऋतुदोष से मनुष्यों के राग द्वेष आदि दोषों से काम मैथुन आदि के होने से कठोर वचन बोलने से वह वृत्ति जाती रही और जौ आदि चौदह प्रकार के अन्न ग्राम में और वन में उत्पन्न होनेलगे परन्तु स्त्रियों के

रजोदोष से वे भी नष्ट होगये थे फिर ब्रह्माजी ने उत्पन्न किये हैं इसकारण रजस्वला स्त्री अति अपवित्र होती है उसके साथ सम्भाषणमात्र भी न करना चाहिये पहिले दिन रजस्वला स्त्री चाण्डाली के तुल्य होती है दूसरे दिन ब्रह्मघातिनी के तीसरे दिन आधी ब्रह्महत्या उसमें निवास करती है चौथे दिन शुद्ध होती है फिर पन्द्रह दिन शुद्ध रहती है पांचवें दिन से देव, पितृकर्म के योग्य होती है ऋतु तो सोलह रात्रि रहता है परन्तु उसमें मूत्रत्याग के तुल्य शौच करना चाहिये परन्तु जो रुधिर का दर्शन होता रहे तो पांच दिन तक भी स्पर्श न करना चाहिये वीसवें दिन से फिर रजस्वला ही होजाती है परन्तु प्रकट एक मास व्यतीत होने पर होती है स्नान, शौच, गान, रोदन, हास्य, वाहन पर चढ़ना, तेल लगाना, जूआ खेलना, शरीरमें चन्दन आदि अनुलेपन लगाना, दिनमें सोना, दन्तधावन करना, मैथुन, मन वचन से देवता की पूजा और नमस्कार इसभांति के और भी काम रजस्वला न करे एक रजस्वला दूसरी रजस्वला को स्पर्श और उसके साथ सम्भाषण कर वस्त्रों के त्याग को वर्जित करे रजस्वला स्त्री स्नान करके दूसरे पुरुष को न देखे सूर्य भगवान् का दर्शन करे ब्रह्मकूर्च, पञ्चगव्य अथवा गौ का दूध अपनी शुद्धि के लिये पान करे रजस्वला स्त्री से चौथी रात्रि को सङ्ग करे तो अल्पायुष विद्याहीन व्रतभ्रष्ट पतित परस्त्रीगामी और अति दरिद्री पुत्र उत्पन्न होता है कन्या की इच्छा हो तो पांचवीं रात्रि को विधिपूर्वक गमन करे गर्भ में रक्त अधिक होने से कन्या और शुक्र अधिक

होने से पुत्र उत्पन्न होता है और दोनों तुल्य हों तो नपुंसक होता है पांचवीं रात्रि में गमन करे तो कन्या हो छठीं में सत्पुत्र हो अर्थात् पुंनामक नरक से पिता की रक्षा करनेहारा बालक उत्पन्न होता है और इसीसे पुत्र कहाता है सातवीं रात्रि में बन्ध्या कन्या आठवीं रात्रि में गमन करने से सर्वगुणसम्पन्न पुत्र उत्पन्न होताहै नवींमें कन्या दशवीं में पण्डित पुत्र ग्यारहवीं में कन्या बारहवीं रात्रि में गमन करने से अति धर्मज्ञ और श्रौत स्मार्त आचार का प्रवर्तन करनेहारा पुत्र उत्पन्न होता है तेरहवीं रात्रि में गमन करने से अति दुष्टा कन्या उत्पन्न होती है इस कारण उस रात्रि में गमन न करना चाहिये चौदहवीं रात्रि में पुत्र पन्द्रहवीं रात्रि में पतिव्रता कन्या और सोलहवीं रात्रि में गमन करने से ज्ञानी पुत्र उत्पन्न होता है स्त्रियों के मैथुन समय में जो वायु अर्थात् स्वर वाम चलता हो तो कन्या और दहिना स्वर चलता हो तो पुत्र उत्पन्न होता है पापग्रहों से रहित लग्न में पवित्र हो प्रसन्नता से शुद्ध स्त्री के साथ सङ्ग करे तो उत्तम सन्तान उत्पन्न हो हे मुनीश्वरो ! यतियों के धर्मसंग्रह में सब भूतों के लिये यह सदाचार हमने वर्णनकिया जो पुरुष पवित्र हो इसको श्रवणकरे अथवा निष्पाप ब्राह्मणों को सुनावे वह ब्रह्मलोकमें जा ब्रह्माजीकेसमीप निवास करे॥

नब्बे अध्याय ॥

सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो ! अब यह शिवजी का कहा हुआ और पाप निवृत्त करनेहारा यतियों के

लिये प्रायश्चित्त कथन करते हैं दिन रात्रि में मन, वचन और शरीर से तीन प्रकार का पाप होता है जिससे सब जगत् व्याप्त होरहा है यति कर्म के विना स्थित हैं इस कारण अति चञ्चल आयुष्को क्षणभर भी योग में लगावे योग परम बल है मनुष्यों के लिये योग से बढ़कर कोई शुभदायक कर्म नहीं परन्तु प्रमादी मनुष्यों को योग दुर्लभ है विद्वान् पुरुष योग की प्रशंसा करते हैं योगी पुरुष विद्या से अविद्या को जीत उत्तम ऐश्वर्य को पाय ब्रह्म और माया के विलासको विचार तुरीय पदको प्राप्त होते हैं भिक्षु अर्थात् संन्यासियों के लिये जो व्रत और उपव्रत हैं उनके अतिक्रमण होने से प्रायश्चित्त करना चाहिये काम से स्त्रीसङ्ग करके प्राणायामसहित शान्तपन व्रत कर कृच्छ्रव्रत करे फिर अपने आश्रम में आकर रहे तब भिक्षुशुद्ध होता है धर्म करके युक्त असत्य का बहुत पाप नहीं है परन्तु जहांतक होसके असत्यभाषण से बचे जो कदाचित् असत्यभाषण होजाय तो एक दिनरात्रि उपवास और सौ प्राणायाम करे तब शुद्ध हो असत् वाद और चोरी यति कभी न करे चाहे परम आपदा में भी मग्न हो चोरी से बढ़कर कोई अधर्म नहीं है चोरी भी एक प्रकार की हिंसा है क्योंकि मनुष्यों का बाहरी प्राण धन है इस कारण धन हरनेवाला उस के प्राण ही हरता है परन्तु जो दुष्ट संन्यासी ऐसा कर्म करे वह पश्चात्ताप करता हुआ एक वर्षपर्यन्त चान्द्रायण व्रत करे और एक वर्ष के अनन्तर भी पश्चात्ताप करता हुआ पृथ्वी पर विचरे तब उस पाप से छूटता है

मन, वचन, कर्म करके यति किसी जीव की हिंसा न करे जो भूल से किसी पशु और कृमि की हिंसा होजाय तो कृच्छ्रातिकृच्छ्र अथवा चान्द्रायण व्रत करने से शुद्ध होताहै स्त्री को देख जो यति का वीर्य स्खलित होजाय तो सोलह प्राणायाम करने से शुद्ध हो दिन में जो ब्राह्मण का वीर्य स्खलित होजाय तो तीन रात्रि उपवास और सौ प्राणायाम करे रात्रि में हो तो बारह प्राणायाम करने से शुद्ध हो एक घर का अन्न, मद्य, मांस, केवल लवण और कच्चा अन्न यतियों के लिये अभक्ष्य है इनका भक्षण करने-हारा प्राजापत्य और कृच्छ्रव्रत के करने से शुद्ध होता है और भी जो मन, वचन, शरीर से पाप बनपड़े उसका प्रायश्चित्त सत्पुरुषों से पूछकर करे तो शुद्ध हो संन्यासी शुद्ध होकर विचरे और सुवर्ण तथा लोष्ठ अर्थात् मट्टी केढेले को तुल्य समझे लोभग्रस्त न हो और सब भूतों में परमात्मा को समझे वह शाश्वत पद को प्राप्त होता है कभी जन्म नहीं लेता॥

इक्यानबे अध्याय॥

सूतजी कहतेहैं कि हे मुनीश्वरो! अब हम अरिष्टों का वर्णन करते हैं जिनके जानने से योगियों को मृत्यु का ज्ञान होता है अरुन्धती, ध्रुव, आकाशगङ्गा और छाया-पुरुष जिसको न देख पड़े वह एक वर्ष से अधिक नहीं जीता सूर्य तो किरणों से हीन और अग्नि किरणों करके युक्त जिसको दृष्टि आवे वह ग्यारह मास से आगे नहीं जीवे जो मूत्र, विष्ठा, सोना और चांदी प्रत्यक्ष अथवा

स्वप्न में वमन करे वह दश मास जीवे सुवर्ण के वृक्ष, गन्धर्व, नगर, भूत, प्रेत आदि का देखनेहारा नौ महीने जीता है स्थूल मनुष्य अकस्मात् दुर्बल होजाय अथवा दुर्बल स्थूल होजाय और जिसका स्वभाव बदल जाय वह आठ महीने जीता है धूलि में अथवा पङ्क अर्थात् कीचड़ में जिसके पैर का चिह्न खण्डित लगे वह सात मास जीवे काक, कपोत, गीध अथवा और कोई मांस भक्षण करनेहारा पक्षी जिसके मस्तक पर बैठे वह छह महीने जीता है जिसके ऊपर काकों की पंक्ति गिरे और धूलि की वृष्टि हो वह पांच, चार महीने जीवे जो विना बादल दक्षिण दिशा में बिजली देखे और जल में इन्द्र-धनुष देखे वह तीन और दो मास जीवे जल में और दर्पण में जो अपना प्रतिबिम्ब न देखे अथवा शिर से हीन प्रतिबिम्ब देखे वह एक मास जीता है जिसके शरीर में शवका अथवा वसा का गन्ध आने लगजाय वह एक पक्ष से अधिक नहीं जीता स्नान करते ही जिसका हृदय शुष्क होजाय अथवा मस्तक से धूम निकले वह दश दिन जीवे वायु सम्भिन्न होकर जिसके मर्मस्थानों को कृन्तन न करे और जल के छींटे लगने से जिसके रोमाञ्च न होवे उसकी मृत्यु समीप जानिये जो स्वप्न में रीछ और वानरों करके युक्त रथपर चढ़ नाचता गाता दक्षिण दिशा को जाय वह शीघ्र ही मरे काले वस्त्र पहिने कृष्णवर्ण स्त्री गाती हुई स्वप्न में जिसको दक्षिण दिशा की ओर लेजाय उसका मृत्यु समीप जाने स्वप्न में अपने कण्ठ के बीच छिद्र देखे और नग्न श्रमण अर्थात् जैन संन्यासी को

देखे तो मृत्यु आया जाने स्वप्न में जो कीचड़ के समुद्र में डूब जाय वह शीघ्र मृत्युवश होवे भस्म, अङ्गार, केश, नखों, नदी और सर्पों को जो स्वप्न में देखे वह दश दिन भी न जीवे कृष्णवर्ण अतिभयङ्कर पुरुष शस्त्र उठाये जिस पुरुष को पाषाणों से ताड़न करे वह न जीवे सूर्योदय के समय नित्य सम्मुख आय जिस पुरुष के शिवा बोले उसकाभी आयुष् समाप्त भया जानिये स्नान करते ही जिसके हृदय में पीड़ा होवे और दांत कांपने लगें वह शीघ्र ही मरे दिन में और रात्रि में जो बार बार त्रास को प्राप्त हो और जिसको दीपक का गन्ध न आवे उसको भी गतायुष् जाने जो दिन में तारामण्डल और रात्रि को इन्द्रधनुष देखे और दूसरे के नेत्रों में अपना प्रतिबिम्ब न देखे वह न जीवे जिसके एक नेत्र में जल टपकने लगजाय कान अपनेस्थानसे लटक पड़ें नासिका वक्र होजाय वह भी शीघ्रही मृत्युवश होवे जिसकी जिह्वा कृष्णवर्ण और कठोर होजाय मुख का वर्ण पीला पड़ जाय गण्ड अर्थात् गाल पर पिटिका अर्थात् फुन्सी होजाय वह भी शीघ्र ही मरे केश खोलकर हँसता गाता और नाचता हुआ स्वप्न में दक्षिण दिशा को जाय वह भी गतायुष् होताहै जिसकी मूर्ति श्वेत मेघ अथवा श्वेत सरसों के तुल्य श्वेत वर्ण की होजाय उसका मृत्यु समीप आया जानिये जो ऊंट अथवा गधों के रथ पर चढ़ स्वप्न में दक्षिण दिशा को जाय वह भी शीघ्र मरे ये दो परम अरिष्ट हैं एक तो कर्णों में शब्द न सुनपड़े दूसरा नेत्रों में ज्योति न देखे उन दोनों में से एक भी हो तो अवश्य ही

मृत्यु आया जानिये जो पुरुष स्वप्न में गढ़े के बीच गिरे और गढ़े का मुख बन्द होजाय और वह गढ़े से न निकले तो शीघ्र ही मृत्युवश होवे जिसकी दृष्टि लाल हो ऊपर को होजाय और चञ्चल होवे मुख सूखे नाभि में छिद्र होजाय मूत्र बहुत उष्ण उतरे वह भी न जीवे दिन में अथवा रात्रि में जो पुरुष प्रत्यक्ष माराजाय और मारनेवाले को न देखे वह भी गतायुष् होता है जो पुरुष अग्नि में प्रवेश करे और स्वप्न के अन्त में स्मृति को न प्राप्त हो वह शीघ्र ही मरे जो ओढ़े हुये श्वेत वस्त्रको स्वप्न में काले अथवा लाल वर्णका देखे वहभी अपनी मृत्युको समीप आया जाने इन अरिष्टों में कोई अरिष्ट उत्पन्न हुआ देख उस काल को समीप आया जान खेद और विषाद को त्याग बुद्धिमान् पुरुष संसारसे विरक्त हो घर से पूर्व दिशा अथवा उत्तर दिशा की ओर जाय एकान्त स्थान में जहां किसीकी बाधा न हो और अन्तरिक्ष अर्थात् घर की छत आदि न हो वहां पूर्वाभिमुख अथवा उत्तरमुख आसन पर बैठ आचमनकर स्वस्तिकासन बांध शिवजी को प्रणाम कर योग में युक्त हो ग्रीवा, शिर और सम्पूर्ण देहको सीधा कर सब ओरसे दृष्टि रोक निर्वातस्थान में स्थित दीपक की भांति निश्चल होजाय काम, वितर्क, प्रीति, सुख, दुःख आदि को मन से निग्रह कर सात्त्विक ध्यान करे काल के कर्मों को लिङ्गशरीरों में जान घ्राण, रसना, दृष्टि, स्पर्श, श्रवण, मन, बुद्धि और हृदय में धारणा करे इस योगधारणा को द्वादशाध्यात्म कहते हैं सौ अथवा पचास धारणा मस्तक में करे इसभांति धारणा

योगसे खिन्न भये योगी का वायु ऊपर को प्रवृत्त होता है ॐकार का उच्चारण करताहुआ उस पवन से देहको पूरित करे तो योगी ॐकारमय हो ब्रह्मसायुज्यको प्राप्त होता है अब ॐकारप्राप्ति का लक्षण कहते हैं इस प्रणव में तीन मात्राएँ हैं व्यञ्जन अर्थात् मकार ईश्वर है पहिली मात्रा राजस, दूसरी तामस, तीसरी सात्त्विक और अनुस्वाररूप आधी मात्रा निर्गुण है अर्थात् तीनों गुणों से रहित है तीसरी मात्रा गान्धार स्वर से उत्पन्न है इसीसे गान्धारी कहाती है पिपीलिका अर्थात् चींटी की गति के स्पर्शकी भांति उसकी सूक्ष्मगति मूर्धा अर्थात् मस्तक में लक्षित होती है जब प्रयुक्त ॐकारकी ध्वनि मस्तक से निकले तब योगी ॐकारमय होकर अक्षर ब्रह्म में लीन होता है प्रणव धनुष, आत्मा बाण और ब्रह्म लक्ष्य अर्थात् निशाना है सावधान हो ऐसा वेधन करे कि आत्मारूप बाण ब्रह्ममें मग्न होजाय अर्थात् आत्मा ब्रह्ममय होजाय ॐकाररूप एकाक्षर पद गुहा अर्थात् बुद्धि में स्थित है ॐकार ही तीन लोक, तीन वेद, तीन अग्नि और विष्णुके तीन क्रम अर्थात् पादन्यास हैं साढ़े तीन मात्रा ॐकार में हैं ॐकार करके प्रयुक्त अर्थात् प्रेरित योगी ब्रह्मसायुज्य को प्राप्त होता है प्रणव में अकार अक्षर है उकार संधिको प्राप्त भया है अनुस्वार सहित मकार करके युक्त ॐकार त्रिमात्र है ॐकार में अकार भूर्लोक है उकार भुवर्लोक और व्यञ्जन मकार स्वर्लोकहै तीनलोक ॐकार हैं उसका शिर स्वर्ग, पदब्राह्म, मात्रापाद, रुद्रलोकहै परन्तु शिवपद अमात्र अर्थात् मात्रातीत है इसभांति के ज्ञान

से वह तुरीय पद उपासनका विषय होता है अक्षय सुख की इच्छावाला पुरुष उस अमात्र और अक्षर पदकी उपासना यत्न से करे पहिली मात्रा ह्रस्व, दूसरी दीर्घ, तीसरी प्लुत ये तीन मात्रा क्रमसे जाननी चाहिये जितनी शक्ति हो उतनी धारणा बुद्धिमान् पुरुष करते हैं इन्द्रिय, मन और बुद्धिको अर्धमात्रारूप से जो आत्मा विषे ध्यान करे वह प्रतिमास सौ वर्षतक अश्वमेध करने से जो पुण्य होता है उसको प्राप्त होवे वह फल न उग्र तप करके मिले और न बड़ी बड़ी दक्षिणा करके युक्त यज्ञों से प्राप्त होवे जो मात्रासे प्राप्त होता है प्रणवमें जो प्लुतमात्रा है उसीका गृहस्थ और योगियों को ध्यान करना उचित है अणिमा आदि आठ प्रकार के ऐश्वर्य की प्राप्ति के लिये भी उसीका ध्यान करे इस भांति जो पुरुष जितेन्द्रिय और शुचि होकर आत्माको जाने वह सब पदार्थों को जानता है इस कारण पाशुपत योग करके आत्मा का चिन्तन करे आत्मज्ञानी सदा पवित्र होते हैं ऋक्, यजुः, साम और उपनिषद् इन सबको अध्यात्मचिन्तन करनेहारा ब्राह्मण योग के ज्ञानसे जानता है लिङ्गदेह से रहित होकर देवमय होजाता है और जन्म मरण से छूट शाश्वत पदको प्राप्त होता है जिस भांति पका फल पवनसे वृक्ष को छोड़ दूर गिरता है इसी भांति रुद्र के प्रणामसे पाप मनुष्यको त्याग देता है रुद्रका नमस्कार जैसा सब फलों का देनेहारा है ऐसा और देवता का नमस्कार नहीं है इससे मन, वचन और देह की नम्रतापूर्वक दश इन्द्रियों का विस्तार करनेहारे ब्रह्म श्रीमहेश्वर की उपासना करे

इस भांति ध्यान करता हुआ जो देहको त्यागे वह अपने तीन कुलों सहित शिवसायुज्य को प्राप्त होवे अथवा अरिष्ट देख मृत्युको समीप जान अविमुक्त क्षेत्र अर्थात् काशी में जाय किसी प्रकार से देह त्याग करे अथवा श्रीपर्वत में शरीर छोड़े वह पुरुष निस्सन्देह शिवसा-युज्य को प्राप्त होवे। जीवों को मुक्ति देनेहारा अविमुक्त क्षेत्र है इसकारण उसको सदा सेवे और मरण समय तो अवश्यही अविमुक्त क्षेत्रमें जाय पहुँचे॥

बानबे अध्याय॥

शौनक आदि ऋषि पूछते हैं कि हे सूतजी! जो काशी ऐसा पुण्यक्षेत्र है तो आप उसका प्रभाव हमसे कथन करें अविमुक्त क्षेत्र का माहात्म्य विस्तार से सुनवे की हमारी इच्छा है यह मुनिके वचन सुन सूतजी बोले कि हे मुनीश्वरो! जैसा शिवजीने कथन किया है वैसा हम संक्षेप से वर्णन करते हैं विस्तार से तो करोड़ों वर्ष में ब्रह्माजी भी वर्णन नहीं करसक्ते हैं हमारी तो क्या सामर्थ्य है हे मुनीश्वरो! पूर्वकाल में शिवजी विवाहकर हिमालय की पुत्री श्रीपार्वतीजी तथा नन्दी आदि गणों को साथ ले हिमालय के शिखर से चले और अविमुक्त क्षेत्र में आय अविमुक्तेश्वर लिङ्ग को देख वहांही निवास करते भये वाराणसी, कुरुक्षेत्र, श्रीपर्वत, महालय, तुङ्गेश्वर और केदार में जो पुरुष संन्यास ग्रहणकर निवास करे वह दूसरे जन्ममें पाशुपत योग को प्राप्त होता है इस कारण अविमुक्त क्षेत्र में निवासकर पाशुपत योग का

सेवन करे शिवजी अपनी इच्छा से एक उत्तम विमान बनाय उसमें पार्वती और नन्दी सहित बैठकर सब देवोद्यान अर्थात् आनन्दवन पार्वतीजी को दिखाते भये और प्रसन्न होकर अविमुक्त क्षेत्र का माहात्म्य और प्रशंसा पार्वतीजीके प्रति श्रीशिवजी आपही कथन करने लगे कि हे पार्वतीजी! देखो यह हमारा आनन्दवन अर्थात् अविमुक्त क्षेत्र फूले हुये गुल्म और भांति भांति की लताओंसे चारों ओर शोभित होरहा है प्रियंगु, तमाल, कांटों करके युक्त केतकी के वृक्ष, अतिसुगन्ध फूलोंवाले बकुल, अशोक, पुन्नाग आदि हजारों वृक्ष फूलोंसे लद रहेहैं जिनमें भ्रमरों की पंक्ति आनन्द से मधुपान करती हुई गुंजार कर रही हैं कहीं सरोवरों में कमल फूल रहे हैं अति मधुर वाणीवाले हंस, सारस, चक्रवाक और दात्यूह आदि पक्षी क्रीड़ा कर रहे हैं कहीं मयूर बोल रहेहैं कहीं फूलेहुये आमवृक्षोंपर लता लिपट रही हैं विद्याधर, सिद्ध, चारण आदि वृक्षों के नीचे बैठे हुये आनन्द से गान कररहे हैं अप्सराएं नृत्य करती हैं भांति भांति के पक्षी अपनी मीठी वाणीसे मन हरते हैं किसी ओर हारीत नामक पक्षी बोल रहे हैं कहीं हरी हरी दूर्वा को कस्तूरीमृग चरते हैं और सिंहकी गर्जना सुनकर भी नहीं डरते हैं यह वन फूले कमल उत्पल कुमुद आदिकों से भरेहुये सरोवरों से लताओं करके आलिङ्गित ऊंचे ऊंचे पुष्पित वृक्षों करके मयूर, पारावत, हंस, कोकिल आदि पक्षियोंके मीठे शब्दों करके और मधुपान करके मत्त भ्रमरों के गुञ्जार करके चित्तको अत्यन्त आनन्द

देता है कहीं वापियों के तटपर किन्नरों की नारियां विहार कर रही हैं किसी ओर विद्याधराङ्गनाएं वृक्षों में लटकती हुईं दोला अर्थात् हिंडोलों पर बैठकर झूलती हैं और मधुर मधुर शब्द से गाती हैं वृक्षोंकी घनी और ठण्ढी छाया में कोमल कोमल दूर्वाके अंकुर चरकर शीतल जल पानकर अलसाये हुये हरिण बैठे हैं हंसों के पक्ष पवन से उड़ेहुये कमलों के पराग से भूमि पीतवर्ण हो रही है कदलीवृक्षों के नीचे मयूर नाच रहे हैं और गिरे हुये उनके पक्षोंसे भूमि विचित्र होरही है कहीं वृक्षों के नीचे मनोहर शिलाओं पर बैठी किन्नरियां वीणा बजाती और मीठे स्वरसे गाती हैं मुनियोंके आश्रमोंके समीप हरे गोबर से लिपी हुई भूमि पर भांति भांति के पुष्प बिखर रहे हैं और मुनियोंके आश्रम वृक्षों से भरे अति शोभा देरहे हैं कहीं मूलसे लेकर ऊपर तक पनस वृक्ष फल रहे हैं कहीं अतिमुक्तक लताकी कुञ्जों में अपने प्रियों के साथ विहार करतीहुईं सिद्धाङ्गनाओं के नूपुरों का शब्द सुन पड़ता है प्रियंगु और आम्रकी मञ्जरियों पर भ्रमरियोंका कोलाहल होरहा है चन्द्रकिरणोंके तुल्य शुक्लवर्ण तिलकपुष्प सिन्दूर कुंकुम अथवा कुसुमके समान भासमान अशोक के फूल सुवर्णवर्ण कर्णिकारकुसुम इस भांति और भी विद्रुमके तुल्य रक्तवर्ण पुष्प अञ्जन के समान कृष्णपुष्प और हरित पीत आदि भांति भांति के पुष्प भूमिपर वृक्षों से गिरते हैं इस वनमें पुन्नागवृक्षों पर सैकड़ों पक्षियों का बोलना अपने फूलों के गुच्छोंके भारसे अशोक वृक्षोंका झुक जाना फूले कमलोंमें भ्रमरों

का क्रीड़ा करना और अतिमनोहर एकान्त और श्रम को हरनेहारे सघन लताकुञ्जों का होना मनको अतिही मोहित करताहै इसभांति तीनलोकके नाथ श्रीमहादेव जी अतिमनोहर वन की शोभा पार्वतीजी और गणों को दिखाते हुये वनविहार करनेलगे भांति भांति के पुष्प लेकर पार्वतीजी के प्रति अङ्गों को भूषित करते भये पार्वतीजी भी अपने हाथोंसे अति उत्तम पुष्प तोड़ कर शिवजी को अलंकृत करती भई इस भांति और भी सब गण परस्पर पुष्पक्रीड़ा करने लगे पार्वती भक्ति से पुष्पों करके शिवजी की पूजाकर अतिरमणीय उद्यान की शोभा देख नन्दी आदि गणों सहित हाथ जोड़ नम्र हो शिवजी के प्रति कथन करनेलगीं कि हे महाराज! इस दिव्य वनकी शोभा देखि अतिही मन मुदित भया अब इस अविमुक्त क्षेत्रका माहात्म्य सुनना चाहतीहूं आप कृपाकर इस क्षेत्र के गुण वर्णन कीजिये सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो! यह पार्वतीजी की प्रार्थना सुन प्रेमसे आलिङ्गन कर उनके मुखकमलकी सुगन्ध आघ्राण कर हँसतेहुये शिवजी कथन करने लगे कि हे प्रिये! यह वाराणसी नामक हमारा गुप्त क्षेत्र है और सब जीवों को मोक्ष देनेहारा है अनेक चिह्नों को धारण करनेहारे सिद्ध हमारे लोकको प्राप्तिकी इच्छासे पाशु-पत व्रतमें स्थित हो सब इन्द्रियों को जीतकर इसी क्षेत्र में योगका अभ्यास करते हैं अनेक वृक्षों से परिपूर्ण भांति भांति के पक्षियों करके शब्दायमान कमल, उत्पल, कुमुदआदिसे युक्त सरोवरों करके शोभित और अप्सरा,

गन्धर्व, विद्याधरों करके सेवित इसी क्षेत्र में हमको भी वास करना बहुत रुचता है जिस भांति हमारे भक्त सब कर्मों को हमारे बिषे अर्पण कर इस क्षेत्र में मुक्ति पाते हैं इस भांति और क्षेत्र में मुक्ति नहीं होती यहां प्राणत्याग करने से सबको मुक्ति मिलती है यह हमारा पुर गुप्तसे गुप्त है इसके प्रभावको ब्रह्मादिक देवता अथवा मोक्षकी इच्छावाले सिद्ध जानते हैं यह परमक्षेत्र है परागति है हमने कभी इस क्षेत्रका त्याग नहीं किया और न करेंगे इसीसे इसका नाम अविमुक्त क्षेत्र है नैमिष, कुरुक्षेत्र, पुष्कर, गङ्गाद्वार आदि क्षेत्रों के स्नान अथवा सेवनसे मोक्ष नहीं मिलता और यहां मोक्षकी प्राप्ति होती है इसी कारण और क्षेत्रों से यह उत्तम है प्रयाग में मोक्ष होता है अथवा यहां मोक्ष होता है परन्तु प्रयागसे भी यह क्षेत्र बढ़कर है धर्मकी उपनिषद् सत्य और मोक्षकी उपनिषद् शम है यह सब जानते हैं परन्तु तीर्थ क्षेत्रकी उपनिषद् को ऋषिभी नहीं जानते इस क्षेत्र में खाते पीते सोते क्रीड़ा करते और भी भले बुरे काम करते किसी समय जीव शरीरको त्यागे परन्तु मोक्षही पाता है हजारों पापकर पिशाच होकर काशी में रहना अच्छा है स्वर्ग में इन्द्र होकर निवास करना इसके आगे कुछभी नहीं इसलिये मुक्तिके अर्थ अविमुक्त क्षेत्रही सेवनीय है हमारा भक्त बड़ा तपस्वी जैगीषव्य मुनि इसी क्षेत्र के माहात्म्य से परम सिद्धि को प्राप्त भया जैगीषव्य की गुहा योगियों के लिये उत्तम स्थान है उस गुहा में बैठ हमारा ध्यान

करने से योग का अग्नि अत्यन्त दीप्त होता है और देवताओं को भी दुर्लभ कैवल्य पदको योगी प्राप्त होता है सब सिद्धान्त जाननेहारे और अव्यक्तलिङ्ग मुनि इसी क्षेत्रमें मोक्ष पाते हैं जो और स्थानों में अतिदुर्लभ है जे यहां निवास करें उनको हम योगका उपदेश करते हैं और अपना सायुज्य देते हैं कुबेर इसी क्षेत्रमें हमारा आराधनकर सिद्धिको प्राप्त भयाहै संवर्तमुनि और पराशरके पुत्र हमारे परमभक्त वेदव्यास इस क्षेत्रमेंही हमारा सेवनकर सिद्धि पावेंगे और व्यासजी इसी क्षेत्र में रमण करेंगे सब देवऋषियोंसहित ब्रह्माजी, विष्णुजी, सूर्य और इन्द्र आदि सब देवता यहांही हमारी उपासना करते हैं और भी दिव्य योगी गुप्तरूप से यहां रह कर एकाग्रचित्त हो भक्तिसे हमारा आराधन करते हैं विषयों में आसक्तचित्त अधर्मी मनुष्य भी यहां प्राण त्याग करें तो जन्म मरण के धन्धे से छूट जायँ फिर निर्मल जितेन्द्रिय व्रती हमारे भक्त सब संग छोड़ जे यहां निवासकरें और प्राण त्यागें उनको मोक्ष क्या दुर्लभ है हज़ार जन्म में भी योगी को वह फल नहीं प्राप्त होता जो यहां प्राणत्याग करनेहारे साधारण जीव को मिलताहै यहां ब्रह्माजीने दिव्य कैलासभवन नामक हमारा प्रासाद स्थापन किया है इस स्थानका नाम गोप्रेक्षक है इस स्थानमें आय जो पुरुष हमारा दर्शन करे वह सब पापों से मुक्त हो सद्गति पावे यहांही गौओं के पवित्र दुग्ध से ब्रह्माजीने कपिलाह्रद नाम तीर्थ रचा है और वृषभध्वजरूप से हमारा स्थापन किया है जो

कपिलाह्रद में स्नानकर वृषभध्वज का दर्शन करे वह पुण्यभागी होवे भद्रतोय नामक तीर्थ ब्रह्माजीने बनाया वहांही सब देवताओंने आराधन कर हमको प्रसन्न किया और यह प्रार्थना की कि हे ईश ! आप उपशम को प्राप्त होवें इसकारण उपशम नामक लिङ्ग ब्रह्माजी स्थापन करने लगे बीच में वही लिङ्ग लेकर विष्णुजीने स्थापन करदिया तब ब्रह्माजी मनमें क्रोधकर बोले कि हमारे लायेहुये लिङ्गको आपने क्यों स्थापन किया यह सुन विष्णुजीने कहा कि हे ब्रह्माजी ! हमारी शिवजी में अतिभक्ति है इसकारण यह लिङ्ग हमने स्थापन करदिया परन्तु आप मनमें क्षोभ न करें यह लिङ्ग आपके नाम से ही प्रसिद्ध होगा हे पार्वति ! तबसे यह लिङ्ग हिरण्यगर्भ कहाया जो इसका दर्शन करे वह हमारे लोक को जाय दूसरा लिङ्ग स्वर्लीनेश्वर नामक ब्रह्माजीने स्थापन किया इसके समीप जो प्राण त्याग करे वह जन्म मरणसे छूटे और योगियों की गतिको प्राप्त होवे इस स्थान में देवकण्टक बड़ा दुष्ट दैत्य हमने व्याघ्र का रूप धारणकर मारा इस कारण इसस्थान में हम व्याघ्रेश्वर नामसे स्थित भये व्याघ्रेश्वरका दर्शन करनेहारा कभी दुर्गति को नहीं प्राप्त होता हे पार्वति ! उत्पल और विदल नाम दो दैत्य बड़े प्रबल थे उनकी मृत्यु ब्रह्माजीने स्त्रीके हाथसे होना कल्पना कियाथा इस कारण दोनों तुमने अपने कन्दुक से मारे वह कन्दुक लिङ्गरूप से स्थित हुआ हमने भी उसमें आकर निवास किया इस कारण अतिपुण्यदायक यह स्थान

ज्येष्ठस्थान कहाया इसके चारों ओर देवताओंने भी अनेक लिङ्ग स्थापन किये यहां जो दर्शन करे वह दूसरे जन्म में हमारा गण होवे तुम्हारे पिता हिमालय ने यह क्षेत्र हमारा प्रिय जान शैलेश्वर नाम लिङ्ग यहां स्थापन किया उसके दर्शन करनेहारा दुर्गति को नहीं प्राप्त होता यह सब पापों के दूर करनेहारी वरुणा नदी इस क्षेत्रको भूषित करती हुई गङ्गाजी के साथ संगम करती है दोनों नदियों के संगमपर ब्रह्माजीने संगमेश्वर नामक लिङ्ग स्थापन किया है संगम में स्नान कर पवित्र हो जो पुरुष संगमेश्वर का दर्शन करे उसको जन्मका भय नहीं होता। यह क्षेत्र के मध्यमें मोक्ष की इच्छावाले योगी और सिद्धों का स्थान है यहां मध्यमेश्वर नामक लिङ्ग आपही प्रकट भया है मध्यमेश्वरका दर्शन करके जन्म सफल होता है यह लिङ्ग भृगुके पुत्र शुक्राचार्य ने अपने नाम से स्थापन किया है इस शुक्रेश्वर नाम लिङ्गका जो दर्शन करे वह सब पापोंसे मुक्त होवे और जन्म मरणसे छूटे पूर्वकालमें एक दैत्य ब्रह्मा जी से वर पाय जम्बुक अर्थात् शृगाल का रूप धार सबको पीड़ा देने लगा उसको हमने इस स्थानमें मारा तबसे यहां जम्बुकेश्वर नामक हमारा लिङ्ग देवताओं ने स्थापन किया जम्बुकेश्वर का दर्शन करने से सब मनोरथ सिद्ध होते हैं ये सब लिङ्ग शुक्र आदि ग्रहों ने स्थापन किये हैं इनके दर्शनसे भी सब कामना सिद्ध होती हैं इस भांति हे पार्वति ! इस क्षेत्रमें हमारे निवासस्थान कई हैं परन्तु मुख्य मुख्य आपसे कहे हैं और भी यह

गुप्त बात सुनो कि यह चारों ओर चारकोस का क्षेत्र है इसके भीतर मृत्यु होवे तो अवश्य मुक्ति होती है महालय पर्वत में और केदार में हमारा दर्शन करके गया होता है और यहां मुक्तही होजाता है पृथ्वीपर केदार, मध्येश्वर और महालय ये तीन हमारे पुण्यक्षेत्र हैं परन्तु यह क्षेत्र तीनों से उत्तम है क्योंकि यहां बैठकर सब लोक रचे हैं कभी इस क्षेत्रका हमने त्याग नहीं किया इससे अविमुक्त कहाया अविमुक्तेश्वर लिङ्ग अर्थात् विश्वनाथ का जो दर्शन करे वह सब पापों से और पशुपाश से मुक्त होवे शैलेश्वर, संगमेश्वर, स्वर्लीनेश्वर, मध्यमेश्वर, गोप्रेक्ष, ईशान, वृषभध्वज, हिरण्यगर्भ, उपशान्त, शुक्रेश्वर, व्याघ्रेश्वर, जम्बुकेश्वर और ज्येष्ठ स्थाननिवासी शिवका दर्शन करनेहारा पुरुष दुःख के सागर इस संसार में कभी नहीं आता सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो! इतना कह महादेवजी ने चारों ओर देखा उनकी दृष्टि पड़तेही वह सब देश देदीप्यमान होगया और भस्म धारण किये बड़े तपस्वी महामाहेश्वर सैकड़ों पाशुपत सिद्ध आय आय श्रीमहादेवजी के चरणकमलपर प्रणाम कर आत्मा में शिवका ध्यान करते हुये मानो शिवमें लीनही होगये हों ध्यानमें स्थित होगये इसी अवसरमें शिवजीने विराट्रूप धारण किया मानो इस रूपसे अभी सब जगत् का प्रलय करेंगे उस रूपकी ओर पार्वतीजी भी न देखसकीं और विचार किया कि यह रूप तो हमने कभी नहीं देखा यह इनका वास्तव रूप है यह मनमें विचार आपभी प्रकृतिरूप में स्थित

हो श्रीमहादेवजी को देखती भई वे योगी भी शिव का ध्यान करते हुये लिङ्ग शरीर को दग्ध कर सब पापों के हरनेहारे पञ्चाक्षर मन्त्र के बीज को स्मरण करते करते पुरुषरूप परमेश्वरके हृदयमें लीन होगये और शिवजी भी अपना पहिला सौम्यरूपही धारण करते भये यह देख शिवजी के चरणोंपर प्रणामकर पार्वतीजी पूछती भईं कि महाराज! ये आपके शरीरमें कौन लीन होगये आप कृपाकर मुझसे कथन करें यह सुन महादेवजी बोले कि हे पार्वति! जो मेरे भक्त व्रतमें स्थित होकर इस क्षेत्रमें योग का अभ्यास करते हैं उनके लिये इस मूर्तिको हम धारतेहैं और क्षेत्रके प्रभावसे और हमारी दृढ़भक्ति से एकही जन्म में उनके ऊपर हम अनुग्रह करते हैं इसीलिये ब्रह्मादिक देवता, सिद्ध, तपस्वी, वेद-वेत्ता ब्राह्मण इस क्षेत्र का सेवन करते हैं प्रति महीने की अष्टमी, चतुर्दशी, चन्द्र, सूर्य के ग्रहण, विषुव और अयन, संक्रांति और कार्त्तिककी पूर्णिमा आदि सब पर्वोंमें विशेष करके इस क्षेत्रका सब सेवन करते हैं वाराणसीमें उत्तरवाहिनी सब पाप हरनेहारी हमारे जटा-जूट से निकली है और तुम्हारे पिता हिमालयकी कन्या श्रीगङ्गाजी में पर्व के दिन जो आते हैं उनको सुनो सैकड़ों तीर्थों सहित कुरुक्षेत्र, पुष्कर, नैमिष, प्रयाग, पृथूदक, द्रुमक्षेत्र आदि अनेक तीर्थ, देवता, ऋषि, सन्ध्याऋतु, सव नदी, सब सरोवर, सातों समुद्र और भी सब देवतीर्थ प्रतिपर्व में भागीरथी के बीच आकर निवास करते हैं अविमुक्तेश्वर को देख त्रिविष्टपको देख

और कालभैरव के समीप प्राप्त होकर सब पापों से मुक्त होजाते हैं पृथिवीके सब पुण्यस्थान पर्वदिनों में अवश्य ही अविमुक्तक्षेत्र में प्रवेश करते हैं। केदारेश्वर, महालये-श्वर, मध्यमेश्वर, पाशुपतेश्वर, शंकुकर्णेश्वर, दोनों गोक-र्णेश्वर, द्रुमचण्डेश्वर, भद्रेश्वर, स्थानेश्वर, कालेश्वर, अजेश्वर, भैरवेश्वर, ओङ्कारेश्वर, अमरेश्वर, महाकाल, ज्योतिषेश्वर, भस्मगात्रेश्वर आदि अरसठ क्षेत्र भूमिपर हमारे मुख्य हैं ये सब पर्वदिनों में वाराणसी के बीच प्रवेश करते हैं इसीसे इस क्षेत्रमें मृत हुआ जीव मुक्ति पाता है गङ्गास्नान कर विश्वनाथ का दर्शन करे तो उसीक्षण हजारों यज्ञों के फलको प्राप्त होता है जितने हमारे क्षेत्र आकाश में, भूमि पर, पर्वतोंपर हैं सब में यह मुख्य है वेदमें अवि पाप को कहते हैं उससे मुक्त अर्थात् रहित होने करके भी यह क्षेत्र अविमुक्त कहाता है सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो! इतना पार्वतीजी के प्रति कथन कर महादेवजी कहते भये कि हे प्रिये! इस हमारे घर अविमुक्त क्षेत्र को भली भांति देख चलो इतना कह पार्वतीजी को सब अविमुक्तक्षेत्र दिखाकर श्रीमहादेवजी पार्वती और सब गणों सहित श्रीपर्वत को जाते भये सर्वव्यापी और सर्वात्मा श्रीमहादेवजी पार्वती जी सहित अविमुक्त क्षेत्रमें भी निवास करते भये श्रीपर्वत में जाय पार्वतीजी के प्रति कहने लगे कि हे पार्वति! कुण्डीप्रभ, वैश्रवणेश्वर, आशालिङ्ग, अबलेश्वर, विष्णु भगवान् के स्थापन किये रामेश्वर [illegible]त्र के दक्षिण द्वार में स्थित कुण्डलेश्वर, पूर्वद्वार में [illegible]रान्तक पर्वत के

साथही वृद्धिको प्राप्त और सब देवों करके पूजित मध्य-
मेश्वर, देवताओं के स्थापित और तीन लोकमें प्रसिद्ध
अमरेश्वर, गोचर्मेश्वर, इन्द्रेश्वर किसी कार्य के लिये
ब्रह्माजी के स्थापित कर्मेश्वर हमारा निवासस्थान सिद्ध-
वट ब्रह्माजी का बनाया हुआ अजबिल, बिलेश्वर में
हमारी दिव्य पादुका, शृङ्गाटक के आकार अर्थात्
त्रिकोण शृङ्गाटक नाम पर्वत में शृङ्गाटकेश्वर श्रीदेवीके
स्थापित मल्लिकार्जुन, युग के आदि में स्थापित किये
रजेश्वर, गजेश्वर, वैशाखेश्वर, कपोतेश्वर रुद्रके करोड़ों
गणों करके सेवित और सबसे अधिक कोटीश्वर तीर्थ,
दक्षिण में ब्रह्माजी का स्थापन किया द्विवेदकुलसंज्ञक,
उत्तर में विष्णुजी का स्थापन किया शैलज, हमारा
स्थापन किया हुआ बड़ा भारी लिङ्ग पश्चिम पर्वत में
ब्रह्मेश्वर ब्रह्माजी सहित सब मुनियों करके शोभित स्थान
को हमने अलंकृत किया इसलिये अलंगृह स्थान
कहाया उस अलंगृह को और उसके समीप तीर्थ को
हमारे व्योमलिङ्ग को स्कन्दके स्थापन किये कदम्बेश्वर,
नन्द आदिकों के स्थापित गोमण्डलेश्वर और देवह्रद
के ओर पास इन्द्र आदि देवताओं के स्थापित और
भी उत्तम उत्तम शिवलिङ्गों का तुम दर्शन करो और हे
पार्वति! हारपुर के समीप तुम्हारा हार गिरने से उत्पन्न
भये हारकुण्डनामक तीर्थ को शिवरुद्रपुर में तुम्हारे
पिताके स्थापित अचलेश्वरको, आपकी पुत्री चण्डिका
के स्थापन किये चण्डिकेश्वर को और उसके समीप
अम्बिकातीर्थ, रुचिकेश्वर और कपिलधारा आदि तीर्थों

को आप देखो हे पार्वति ! इन तीर्थों में जो हमारा पूजन करे वह हमारे लोकमें निवास करे श्रीशैल में जो ब्राह्मण प्राण त्याग करे वह मुक्ति पावे जैसे काशी में मुक्ति होती है वैसेही यहां भी होती है इन स्थानों में जो पुरुष हमको विधिपूर्वक घृत से महास्नान करावे वह हमारे सायुज्य को प्राप्त होता है सौ पल घृत से स्नान पच्चीस पलसे अभ्यङ्ग अपने त्रिशूल के अग्रसे दुग्ध करावे दो हज़ार पल गौके घृतसे महास्नान करावे और शर्करा आदि द्रव्योंसे लिङ्गको शुद्धकर पवित्र जलसे स्नान करावे शर्करा आदिकों से लिङ्गका मार्जन करके सौ यज्ञोंके फलको प्राप्त होताहै स्नान करानेसे दशहज़ार यज्ञ का फल, पूजा से लक्ष यज्ञ का फल और शिवलिङ्ग के आगे गीत नृत्य आदि से अनन्त यज्ञ का फल मिलता है महास्नान के बदले आठगुण केवल शुद्ध जल से अथवा गन्धजल से भक्ति करके स्नान करावे और पच्चीस पल शर्करादि द्रव्यों करके सब अनुलेपनादि करावे तो भी महास्नान के फलको प्राप्त होवे बिल्वपत्र, शमीपुष्प और कमल आदि और भी भांति भांति के पुष्प चढ़ावे परन्तु बिल्वपत्रका कभी त्याग न करे अर्थात् नया बिल्वपत्र न मिले तो पूर्वदिनका चढ़ाहुआ बिल्वपत्रही जलसे धोकर लिङ्गपर चढ़ा देवे चार द्रोण अथवा आठ द्रोण अक्षत चढ़ावे और इतनाही नैवेद्य अर्पण करे परन्तु दरिद्री ब्राह्मणको एक आढ़क अर्थात् द्रोण की चौथाई नैवेद्य चढ़ाने से भी सौ द्रोण नैवेद्य का फल मिलता है भेरी, मृदङ्ग, पटह, मुरज, वीणा आदि भांति

भांतिके बाजे बजावे और जागरण करे पीछे अपने पुत्र स्त्री बन्धुओं को साथ ले प्रदक्षिणा कर हाथ जोड़ (द्रव्यहीनं क्रियाहीनं श्रद्धाहीनं सुरेश्वर ॥ कृतं वा न कृतं वापि क्षन्तुमर्हसि शङ्कर) इस मन्त्र को पढ़ प्रार्थना करे और रुद्राध्याय त्वरित और शान्ति आदि पढ़ पञ्चाक्षरका जप करे इस प्रकार जो पुरुष महास्नान और पूजा करे वह सब यज्ञ और सब तीर्थों के फल को प्राप्त होवे हमारे सायुज्य को पावे हमारी प्रीति के लिये हमारे भक्तों को यह महास्नान विधिपूर्वक अवश्य करना चाहिये जो न करें वे हमारे भक्त भी नहीं यह शिवजी का वचन सुन श्रीपार्वतीजी काशी में जाय अविमुक्तेश्वर लिङ्ग को दूध और घृत से स्नान कराय भक्ति से पूजन करती भईं मन्दर पर्वत ने काशी में बहुत तप किया इसलिये उसके ऊपर अनुग्रहकर शिवजी ने अपना निवासक्षेत्र मन्दराचल में भी बनाया और मन्दराचलमें ही शिवजीने हिरण्याक्ष के पुत्र अन्धकासुर को अनुग्रह कर अपना गण ठहराया सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो ! यह सब कथा का सर्वस्व हमने आदर से आपको श्रवण कराया इस क्षेत्र के माहात्म्य को जो पढ़े अथवा सुने वह सब क्षेत्रों के पुण्य को पावे और जो पुरुष जितेन्द्रिय ब्राह्मण को सुनावे वह भी यज्ञों के फल को प्राप्त होवे ॥

तिरानबे अध्याय ॥

शौनक आदि ऋषि पूछते हैं कि हे सूतजी ! अन्धकासुर क्योंकर शिवजी का गण भया यह आप वर्णन

करें यह सुन सूतजी कहने लगे कि हे मुनीश्वरो! अन्ध-
कासुर जिस भांति शिवजी का गण भया और जो
जो वर उसने पाये सब हम संक्षेप से वर्णन करते हैं हिर-
ण्याक्ष दैत्य का पुत्र बड़ा पराक्रमी अन्धकनाम भया
उसने बड़े भारी तप से ब्रह्माजी को प्रसन्न कर बड़ा परा-
क्रम पाया और अवध्य भया सब लोकों को जीत स्वर्ग
को जा जीता और इन्द्र को बड़ा त्रास दिया और सब
देवताओं को मार, पीट, बांध, गिराय स्वर्ग से बाहर
किया देवता भी व्याकुलहो विष्णुजीको साथले अन्धक
के भय से मन्दराचल पर्वत में गये और शिवजी के आगे
सब दुःख जा रोया कि महाराज! अन्धकासुर ने हमारी
बड़ी दुर्दशा की अब आप के विना कोई हमारा
रक्षक नहीं इसी अवसर में देवताओं के पीछे लगाहुआ
अन्धकासुर भी मन्दराचल में जा पहुँचा अन्धक को
आया जान अपने गणों को साथ ले शिवजी भी उसके
सम्मुख जाते भये और ब्रह्मा, विष्णु, इन्द्र आदि देवता
और सब ऋषि जय जय शब्द करने लगे महादेवजीने
पहिले तो अन्धकासुर के करोड़ों दैत्यों को दग्ध किया
पीछे अन्धक को भी त्रिशूल से बेध लिया तबतो सब
देवता आनन्द से गर्जने लगे, मुनि नाचने लगे और
शिवजी के ऊपर पुष्पवृष्टि होने लगी त्रिशूल में प्रोत
हुआ अन्धकासुर भी विचार करने लगा कि मैंने जन्मा-
न्तर में शिवजी का बहुत आराधन किया है उसी पुण्य
से शिवजी ने अपने हाथ से मुझे त्रिशूल करके बेधा
जो पुरुष मरण के समय एकबार भी शिवस्मरण करे

वह शिवसायुज्य पावे फिर बारम्बार शिवस्मरण करने-
हारे की तो क्या बात है ब्रह्मा, विष्णु, इन्द्र आदि
सब देवता इनकी ही शरण में परे हैं इससे इनकी शरण
में ही रहना उत्तम बात है यह मन में विचार अन्धकासुर
शिवजी की स्तुति करने लगा शिवजी भी त्रिशूल में बंधे
हुये अन्धकके मुखसे स्तुति सुनकर प्रसन्न भये और दया
से कहने लगे कि हे दैत्येन्द्र! हम तुझसे प्रसन्न हैं वर मांग
वह भी शिवजी का दयायुक्त वचन सुन गद्गदवाणी से
कहने लगा कि महाराज ! मैं तो केवल आपके चरणोंमें
दृढ़ भक्ति चाहता हूं शिवजी भी उसका दृढ़ निश्चय देख
त्रिशूल से उतार अपनी भक्ति देकर गणोंमें मुख्य करते
भये इन्द्रादि देवता भी अन्धक को शिवजीका गण भया
देख सब उसको प्रणाम करते भये ॥

चौरानबे अध्याय ॥

शौनक आदि ऋषि अन्धकासुर की कथा सुन पूछते
हैं कि हे सूतजी ! अन्धक के पिता हिरण्याक्ष को विष्णु
भगवान् ने वाराहरूप धर क्योंकर मारा और विष्णुजी
के वाराह अवतार की दाढ़ शिवजीका भूषण क्योंकर भई
यह आप हमको विस्तारसे श्रवण करावें यह मुनियोंका
प्रश्न सुन सूतजी बोले कि हे मुनीश्वरो ! हिरण्यकशिपु
का भ्राता और अन्धक का पिता हिरण्याक्ष बड़ा प्रतापी
भया वह सब देवताओं को जीत इस भूमि को रसातल
में उठा लेगया और वहां जाय अपने कारागृह में भूमिको
रखदिया देवता भी हिरण्याक्ष से मार खाय भूमि गँवाय

दुःख पाय अति दीन हो विष्णु भगवान् की शरण में गये और भूमि का बन्धन में पड़ना तथा अपना पराजय पाना भगवान् को कह सुनाया भगवान् भी उनका वचन सुन भूमि का दुःख हरने के लिये लिङ्ग की उत्पत्ति के समय ब्रह्माजी के संग जो रूप धरा था वही यज्ञवाराह का रूप धरते भये और अपनी तीक्ष्ण दंष्ट्रा से हिरण्याक्ष को मार रसातल से भूमि को उठा लाये और अपने स्थान में स्थापन करादिया जिस भांति सब कल्पों में किया करते हैं। तबतो सब देवता बहुत प्रसन्न भये और इन्द्रादि देवताओं सहित ब्रह्माजी हाथ जोड़ स्तुति करने लगे॥

ब्रह्मोवाच॥ शाश्वताय वराहाय दंष्ट्रिणे दण्डिने नमः। नारायणाय शर्वाय ब्रह्मणे परमात्मने १ कर्त्रे धर्त्रे धरायास्तु हर्त्रे देवारिणां स्वयम्। कर्त्रे नेत्रे सुरेन्द्राणां शास्त्रे च सकलस्य च २ त्वमष्टमूर्तिस्त्वमनन्तमूर्तिस्त्वमादिदेवस्त्वमनन्तवेदितः। त्वया कृतं सर्वमिदं प्रसीद सुरेश लोकेश वराह विष्णो ३ तथैकदंष्ट्राग्रमुखाग्रकोटिभागैकभागार्धतमेन विष्णो। हताः क्षणात्कामददैत्यमुख्याः स्वदंष्ट्रकोट्या सह पुत्रभृत्यैः ४ त्वयोद्धृता देव धराधरेश धराधराकारधृताग्रदंष्ट्र। धराधरैः सर्वजनैः समुद्रैः सुरासुरैः सेवितचन्द्रवक्त्र ५ त्वयैव देवेश विभो कृतश्च जयः सुराणामसुरेश्वराणाम्। अहो प्रदत्तस्तु वरः प्रसीद वाग्देवतावारिजसम्भवाय ६ तव रोम्णि देव सकलासुरेश्वरा नयनद्वये शशिरवी पदद्वये। निहिता रसातलगता वसुन्धरा तव पृष्ठतः सकलतारकादयः ७

---

१ आपो ह्रस्वः।

जगतां हिताय भवता वसुन्धरा भगवन् रसातलपुटं गता तदा। अचलोद्धृता च भगवंस्त्वयैव तत्सकलं त्वयैव हि धृतं जगद्गुरो ८॥

इस प्रकार ब्रह्माजी भगवान् की स्तुति करते भये भगवान् भी प्रसन्न हो ब्रह्माजी सहित सब देवों को अनेक उत्तम उत्तम वर देते भये। सब मुनि भी भूमि को अपने स्थान पर प्राप्त भई देख अति प्रसन्न हो विष्णुभगवान् के समीप ही स्थित भूमि की प्रार्थना करते भये॥

अनेनैव वराहेण चोद्धृतासि वरप्रदे। कृष्णेनाक्लिष्ट-कार्येण शतहस्तेन विष्णुना १ धरणि त्वं महाभोगे भूमि-स्त्वं धेनुरव्यये। लोकानां धारणी त्वं हि मृत्तिके हर पातकम् २ मनसा कर्मणा वाचा वरदे वारिजेक्षणे। त्वया हतेन पापेन जीवामस्त्वत्प्रसादतः ३॥

भूमिभी ऋषियों से यह अपनी स्तुति सुन प्रसन्नता से कहने लगी कि वराह की दंष्ट्रा से भेदित मेरी मृत्तिका को इस मन्त्र से जो पुरुष मस्तक पर धारण करेगा वह सब पापों से मुक्त होगा और पुत्र, पौत्र, बल, आयुष्, धन आदि सब उत्तम वस्तु पावेगा और शरीर के अन्त में देवताओं के साथ विहार करेगा इस भांति सब देवता और मुनि भूमि से वर पा अपने अपने स्थान को गये और भगवान् भी वाराहरूप त्याग अपनी दंष्ट्रा को भूमि पर गेर क्षीरसागर को जाते भये परन्तु भूमि उस दंष्ट्रा का भार न सहसकी और व्याकुल हो कांपने लगी तब तो महादेवजी आये और भूमि का दुःख दूर करने के लिये उस वाराहदंष्ट्रा को [illegible]य अपना कण्ठभूषण बनाते भये

इसभांति विष्णु भगवान् ने बाराहरूप धार हिरण्याक्ष को मार भूमि का उद्धार किया और बाराहदंष्ट्रा को श्री महादेवजी ने धारण किया महाप्रलय के समय विष्णु, ब्रह्मा, इन्द्र आदि सब देवताओं के देहों करके भक्त-वत्सल श्रीमहादेवजी अपने लिये भूषण बनाते हैं अर्थात् अपने भक्तोंकी देहोंको आप धारते हैं इसीकारण बाराहदंष्ट्रा भी धारण की और श्रीमहादेवजी ही ब्राह्मणों को मुक्ति देनेहारे हैं॥

पञ्चानवे अध्याय॥

ऋषि पूछते हैं कि हे सूतजी! हिरण्याक्ष के बड़े भाई हिरण्यकशिपु को विष्णु भगवान् ने नृसिंह अवतार धार किस प्रकार मारा यह सारा वृत्तान्त आप कथन करें ऋषियों का प्रश्न सुन सूतजी कहनेलगे कि हे मुनीश्वरो! हिरण्यकशिपु का पुत्र प्रह्लाद हुआ वह बड़ा तपस्वी, सत्यवादी, धर्मज्ञ और महात्मा था और बाल्यावस्था से ही पुराणपुरुष श्रीविष्णु भगवान् की पूजा में तत्पर रहा करता और निरन्तर गोविन्द, नारायण आदि शब्दों को उच्चारण किया करता था उसकी यह चेष्टा देख अति क्रोध कर एक दिन हिरण्यकशिपु कहने लगा कि रे कुपात्र, प्रह्लाद! मेरे प्रताप के आगे कौन नारायण है और इन्द्र, चन्द्र, वरुण, कुबेर, वायु, सोम, ईशान, अग्नि, यम और ब्रह्मादि देवता सब मुझसे डरते हैं मेरे समान इन में से एक भी नहीं जो तू जीने की इच्छा रखता है तो मेरी ही पूजा किया कर और सब धंधे छोड़ दे नहीं तो

तेरा कल्याण न होगा इस भांति पिताका कठोर वचन सुनकर भी प्रह्लादने विष्णुपूजा का त्याग न किया और "नमो नारायणाय" यही वाक्य उच्चारण करता रहा और सब दैत्यों के बालकों को भी ब्रह्मविद्या का उपदेश देने लगा तबतो हिरण्यकशिपु दैत्यों से कहनेलगा कि देखो इन्द्र आदि देवता भी मेरी आज्ञाभङ्ग नहीं करसके और इस दुष्ट पुत्र ने मेरे सम्मुख ही आज्ञा न मानी इसलिये इस दुष्ट पुत्र को लेजाय किसी प्रकार से मारदो यह हिरण्यकशिपु की आज्ञा पाय बड़े क्रूर वे दैत्य भांति भांति के शस्त्रप्रहार प्रह्लाद के ऊपर करनेलगे परन्तु भगवान् के प्रभाव से सबके वार खाली गये और इसी अवसर में हिरण्यकशिपु का संहार करने के लिये विष्णु भगवान् भी नृसिंहरूप धार प्रकट भये और अपने तीक्ष्ण नखों करके परम निजभक्त प्रह्लाद के विरोधी उस दुष्ट दैत्य हिरण्यकशिपु का उदर विदारण करदिया और भूमिपर गेर उस दैत्य को भलीभांति पीसा इस प्रकार क्षणमात्र में दैत्य का संहार कर नृसिंह भगवान् गर्जने लगे उनके घोरशब्द से ब्रह्मलोकपर्यन्त सब लोक कांप उठे और सब सिद्ध, साध्य, ब्रह्मा, इन्द्र आदि देवताभी अपने अपने प्राण बचाने के लिये नृसिंहजी को छोड़ भयभीत हो भागे और सहस्रमुख, सहस्रपाद, सहस्रबाहु, सूर्य, सोम, अग्निरूप, सहस्रनेत्र, श्रीनृसिंहजी सब जगत् व्यापकर स्थित थे और गर्जते थे देवता भी गिरते पड़ते नृसिंह के भयसे भागते भागते लोकालोक पर्वतके समीप पहुँचे और पर्वत पर चढ़ साध्य, सिद्ध, यम, कुबेर, इन्द्र

और ब्रह्मा आदि सब नृसिंहजी की स्तुति करने लगे॥

देवा ऊचुः॥ परात्परतरं ब्रह्म तत्त्वात्तत्त्वतमं भवान्। ज्योतिषां तु परंज्योतिःपरमात्मा जगन्मयः १ स्थूलं सूक्ष्मं सुसूक्ष्मं च शब्दब्रह्ममयश्शुभः। वागतीतो निरालम्बो निर्द्वन्द्वो निरुपप्लवः २ यज्ञभुग्यज्ञमूर्तिस्त्वं यज्ञिनां फलदः प्रभुः। भवान्मत्स्याकृतिः कौर्मीमास्थाय जगति स्थितः ३ वाराहीं चैव त्वं सैंहीमास्थायेह व्यवस्थितः। देवानां राज्यरक्षार्थं निहत्य दितिजेश्वरम् ४ द्विजशापच्छलेनैवमवतीर्णोऽसि लीलया। न दृष्टं यत्त्वदन्यं हि भवान्सर्वं चराचरम् ५ भवान्विष्णुर्भवान् रुद्रो भवानेव पितामहः। भवानादिर्भवानन्तो भवानेव वयं विभो ६ भवानेव जगत्सर्वं प्रलापेन किमीश्वर। मायया बहुधासंस्थमद्वितीयमयं प्रभो ७ स्तोष्यामस्त्वां कथं भासि देवदेव मृगाधिप॥

इस नृसिंहस्तोत्रको जो पुरुष पढ़े इसके अर्थका विचार करे और ब्राह्मणों को सुनावे वह विष्णुलोक में निवास करे इसभांति देवताओं ने बहुतेरी स्तुति की परन्तु नृसिंहजी शान्त न भये तब सब देवता अपनी रक्षा के लिये मन्दराचल में शिवजी की शरणमें गये और वहां जाय पार्वतीजी के संग क्रीड़ा करते हुये और सब गण गन्धर्व विद्याधर आदिकों करके सेवित श्रीमहादेवजी के आगे सब नृसिंहजी की चेष्टा वर्णनकी और दण्डवत् प्रणाम श्रीमहादेव जी के आगे कर भय करके गद्गद वाणी से सब देवताओं सहित ब्रह्माजी हाथ जोड़ स्तुति करनेलगे॥

ब्रह्मोवाच॥ नमस्ते कालकालाय नमस्ते रुद्रमन्यवे।

नमः शिवाय रुद्राय शंकराय शिवाय ते १ उग्रोऽसि सर्व-भूतानां नियन्तासि शिवोऽसि नः । नमः शिवा शर्वाय शंकरायार्तिहारिणे २ मयस्कराय विश्वाय विष्णवे ब्रह्मणे नमः । अन्तकाय नमस्तुभ्यमुमायाः पतये नमः ३ हिरण्यबाहवे साक्षाद्धिरण्यपतये नमः । शर्वाय सर्वरूपाय पुरुषाय नमो नमः ४ सदसद्व्यक्तिहीनाय महतः कारणाय ते । नित्याय विश्वरूपाय जायमानाय ते नमः ५ जाताय बहुधा लोके प्रभूताय नमोनमः । रुद्राय नीलरुद्राय कद्रुद्राय प्रचेतसे ६ कालाय कालरूपाय नमः कालाङ्गहारिणे । मीढुष्टमाय देवाय शितिकण्ठाय ते नमः ७ महीयसे नमस्तुभ्यं हन्त्रे देवारिणां सदा । ताराय च सुताराय तारणाय नमोनमः ८ हरिकेशाय देवाय शम्भवे परमात्मने । देवानां शम्भवे तुभ्यं भूतानां शम्भवे नमः ९ शम्भवे हैमवत्याश्च मन्यवे रुद्ररूपिणे । कपर्दिने नमस्तुभ्यं कालकण्ठाय ते नमः १० हिरण्याय महेशाय श्रीकण्ठाय नमोनमः । भस्मादिग्धशरीराय दण्डमुण्डीश्वराय च ११ नमो ह्रस्वाय दीर्घाय वामनाय नमोनमः । नम उग्रत्रिशूलाय उग्राय च नमोनमः १२ भीमाय भीमरूपाय भीमकर्मरताय ते । अग्रेवधाय वै भूत्वा नमो दूरेवधाय च १३ धन्विने शूलिने तुभ्यं गदिने हलिने नमः । चक्रिणे वर्मिणे नित्यं दैत्यानां कर्मभेदिने १४ सद्याय सद्यरूपाय सद्योजाताय ते नमः । वामाय वामरूपाय वामनेत्राय ते नमः १५ अघोररूपाय विकटाय विकटशरीराय ते नमः । पुरुषरूपाय पुरुषैकतत्पुरुषाय वै नमः १६ पुरुषार्थप्रदानाय पतये परमेष्ठिने । ईशानाय नमस्तुभ्यमीश्वराय नमो

नमः । ब्रह्मणे ब्रह्मरूपाय नमः साक्षाच्छिवाय ते १७ ॥

इतनी स्तुतिकर ब्रह्मादि देवता श्रीमहादेवजी के प्रति कहनेलगे कि महाराज ! हिरण्यकशिपु नाम दैत्यके वध के लिये विष्णु भगवान् ने नृसिंहरूप धरा और अपने तीक्ष्ण नखों से उस दैत्यको मारा परन्तु दैत्यका वध होने के अनन्तर भी विष्णु भगवान् अपने अतिक्रूर नृसिंहरूप से सब जगत् को त्रास देरहे हैं अब इसमें जो कुछ उचित होय वह आप करें सदा दुष्टों को शासन करके आप हमारा कल्याण करते हैं कालकूट विषसे आपने ही हमारी रक्षा की है भगवन् ! आपका चरित्र शुद्ध है हम सब आपकी क्रीड़ाके लिये हैं अर्थात् आपके खिलौने हैं और हमारी उत्पत्ति और प्रलय आपकी आंख के उन्मेष और निमेष होते हैं हे शिव ! आपका कभी नाश नहीं होता आप अव्यय हैं हे नाथ ! इस समय विष्णु भगवान् ने हमको अति सताया है सब लोकोंके हित के अर्थ आप उनका संहार करें ॥

सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो ! इसभांति देवताओं के अतिदीनवचन सुन शिवजी ने उनको अभय दिया और हँसकर कहा कि तुम प्रसन्न रहो नृसिंह का संहार हम करेंगे यह सुन प्रसन्न हो शिवजी को प्रणाम कर सब देवों सहित इन्द्र और ब्रह्माजी अपने अपने लोकको गये और शिवजी भी शरभ पक्षीका रूप धर अतिगर्व को प्राप्त नृसिंहजी के समीप जाय उनके प्राण हरते भये विष्णु भगवान् भी उस नृसिंहदेह को छोड़ शिवजी को प्रणाम कर मनुष्यरूप धर अपने लोकको

सिधारे और सब देवताओं करके पूजित शरभरूप शिव अपने धामको गये इस शिवस्तुतिको जो पढ़े अथवा सुने वह शिवलोक में जाय शिवजीके समीप निवास करे ॥

छानबे अध्याय ॥

शौनक आदि ऋषि पूछते हैं कि हे सूतजी ! महाघोर शरभ का रूप शिवजी ने क्योंकर धरा और क्या क्या पराक्रम किया यह सब आप विस्तार से वर्णन करें यह सुन सूतजी कहते भये कि हे मुनीश्वरो ! देवताओं से स्तुति सुन नृसिंहरूप तेजका संहार करने के लिये श्रीमहादेवजी ने भैरवरूप महाप्रलय करनेहारे अपने अंश वीरभद्र रुद्र का स्मरण किया उसी क्षण वीरभद्र भी अट्टहास करतेहुये और नृसिंहरूप करोड़ गण नाचते कूदते उछलते कन्दुककी भांति ब्रह्मा आदि देवताओं से क्रीड़ा करतेहुये साथ लिये आप महादेव जी के सम्मुख खड़े भये जिनके तीन नेत्र प्रलय की अग्नि की भांति प्रज्वलित जटाजूट में चन्द्रकला धारे हाथों में सब शस्त्र लिये महाप्रचण्ड हुङ्कार शब्द से दशों दिशाओं को बधिर करतेहुये चन्द्रकलाकी भांति टेढ़ी और शुक्ल अतितीक्ष्ण जिनके दो दंष्ट्रा इन्द्रधनुष के समान जिनके भ्रू नील मेघ अथवा अञ्जन पर्वत के समान कृष्णवर्ण और अतिभयंकर लम्बी दाढ़ी से शोभित और हाथों से त्रिशूल घुमाते थे महादेवजी से कहतेभयेकि महाराज ! किसलिये मेरा स्मरण किया शीघ्र आज्ञा दीजिये यह वीरभद्र का वचन सुन श्रीमहादेव

जीने कहा कि हे वीरभद्र ! इस समय देवताओं को बड़ा भय होरहा है इस कारण उस नृसिंहरूप अग्निको शीघ्र ही जाय शान्त करो पहिले तो मीठे वचनों से उनको समझाओ जो न शान्त होयँ तो भैरवरूप दिखाओ सूक्ष्म को सूक्ष्म और स्थूल को स्थूल तेजसे संहार कर हमारी आज्ञासे नृसिंहका मुण्ड और चर्म हमारे लिये लावो यह शिवजी की आज्ञा पाय शान्तरूप से वीरभद्रजी नृसिंहजी के समीप गये और उनको अपने औरसपुत्र की भांति समझाने लगे कि हे नृसिंहजी ! आपने जगत् के सुखके लिये अवतार लिया है और परमेश्वर ने भी जगत् की रक्षाकाही अधिकार आपको देरक्खा है मत्स्य रूपधरि आपने इस जगत्की रक्षा की कूर्म और वाराह रूप से पृथ्वीको धारण किया इस नृसिंहरूप से हिरण्य कशिपु का संहार किया वामन रूप धरि राजा बलिको बांधा इस भांति जब जब लोकों को कुछ दुःख उत्पन्न होता है तब तब तुम अवतार लेकर सब दुःख दूर करते हो तुम सब जीवों के उत्पन्न करनेहारे और प्रभु हो तुम से अधिक कोई शिवभक्त नहीं तुमनेही सब धर्म और वेद अपने अपने मार्ग में स्थापन कररक्खे हैं और जिस लिये तुम्हारा यह अवतार हुआ वहभी मारागया अब तुम हमारे कहनेसे अतिघोर इस रूप का संहार करो जगत्को बहुत त्रास होरहा है सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो ! इस भांति वीरभद्रजी ने बहुत शान्त वचनों से नृसिंहजी को समझाया परन्तु वे न माने और इन के वचन सुन बड़ा क्रोधकर बोले कि वीरभद्र जहां से

तू आया है वहांही चला जा इस चराचर जगत् का अभी
मैं संहार करताहूं संहार करनेहारे का संहार नहीं हो-
सक्ता सबका संहार करनेहारा और शासन करनेहारा
एक मैं हूं मेरा संहार और शासन करनेहारा कोई नहीं
मेरे प्रसादसे सब जगत् अपनी मर्यादा में स्थित है सब
शक्तियोंका प्रवर्तन और निवर्तन करनेहारा मैंहूं जो सब
जगत्में विभूतिमान् श्रीमान् पराक्रमी जीव है वह मेरा
ही अंश है देवतालोग मेरी सामर्थ्य को जानते हैं सब
शक्तियों करके युक्त इन्द्र ब्रह्मा आदि देवता मेरे अंश हैं
चतुर्मुख ब्रह्मा मेरे नाभिकमल से उत्पन्न हुआ और
ब्रह्माके ललाटसे शिवकी उत्पत्ति भई है रजोगुण करके
युक्त ब्रह्मा और तमोगुण करके युक्त रुद्रहै सबका नियन्ता
मैंहूं मेरे से अधिक कोई देवता नहीं विश्व से अधिक
स्वतन्त्र कर्ता हर्ता सबका स्वामी मैंहूं इस मेरे तेजको कौन
संहार सक्ता है इसलिये मेरी शरण में प्राप्त हुआ तू
प्रसन्नता से अपने स्थान को जा इस जगत् का नाश
करने के अर्थ मुझे साक्षात् कालही जान मृत्यु का भी
मृत्यु मैंहूं हे वीरभद्र ! सब देवता मेरी कृपासे जीते हैं
परन्तु अब जगत्का संहार करूंगा सूतजी कहते हैं कि
हे मुनीश्वरो ! यह नृसिंहजी का अभिमानयुक्त वचन
सुन कुछ कोप कर हँसके कहनेलगे कि हे नृसिंह ! जगत
के संहार करनेहारे श्रीशिवजी को क्या तुम नहीं जानते
यह तुम्हारा अस्तव्यस्त बोलना केवल तुम्हारे नाशका
हेतु है पहिले जो जो अवतार तुमने लिये वे अब कहां
हैं इसलिये तुम भी कथाशेष होजाओगे अर्थात् न रहोगे

इस क्रूरता के कारण बहुत शीघ्र तुम्हारा संहार किया जावेगा तुम प्रकृति हो और शिवजी पुरुष हैं उन्होंने तुम में वीर्य का निषेक किया तब तुम्हारे नाभिकमलसे पद्ममुख ब्रह्मा उत्पन्न भये और सृष्टि के अर्थ ब्रह्माजी अपने ललाट में रुद्रका ध्यान करते हुये तप करनेलगे तब रुद्र भगवान् प्रसन्न होकर सृष्टि करनेकेअर्थ उनके ललाट से उत्पन्न भये इसमें क्या दूषण है महाभैरव देवदेव श्रीसदाशिवका मैं अंशहूं और विनय से अथवा बलसे तुम्हारा संहार करने की मुझे शिवजी ने आज्ञा दी है एक तुच्छ दैत्य का उदर विदारण करने से तुम को इतना अहङ्कार होगया है कि गर्ज गर्ज कर सब जगत् को त्रास देते हो असाधु पुरुष जो उपकार करे वह भी अपकार के तुल्य ही होता है हे नृसिंह! जो शिव को तुम अपना पौत्र समझते हो तो न तुम संहार करने हारे न पालन करनेहारे हो केवल अज्ञानसे अपने स्वरूप को भूलरहे हो कुम्हारके चाककी भांति शिवजीकी शक्ति से घूमते फिरते हो अपने को स्वतन्त्र मत समझो हे मूढ़! तेरे कूर्म अवतार का कपाल अब तक शिवजी ने हार में पिरो रक्खा है और वराह अवतारकी दाढ़ रुद्रने उखाड़ी और तुझे अति पीड़ादी तेरे विष्वक्सेनरूप को शिवजी ने अपने त्रिशूलके अग्रसे दग्ध किया दक्षके यज्ञ में तेरे यज्ञरूप का शिर मैंने काटा तेरे पुत्र ब्रह्माका पांचवां मस्तक अब तक कटाही पड़ा है तूही विचारले कि यह रुद्रका बल ब्रह्माका दिया है कि स्वाभाविक है शिवभक्त दधीचिने तेरा पराजय किया परन्तु ये सब बातें भूल

गया और फिर तेरे शिरमें खुजली चली यह सुदर्शन चक्र जिसके बलसे तू बड़ा पराक्रमी होरहा है कहां से पाया और किसने बनाया यहभी भूलगया प्रलयके समय सब लोकों का संहार मैंने किया तू तो निद्रावश हो समुद्रमें जा सोया इसीसे जानले कि जैसा तू सात्त्विक है तेरे से लेकर तृणपर्यन्त सब जगत् शिव की शक्ति से उत्पन्न है तू और अग्नि भी शिव के दिये शक्तिलेश से शक्तिमान् बनरहा है परन्तु तुम दोनों शिव के तेज के माहात्म्य को देख भी न सके विष्णुके परमपद को स्थूल-दृष्टि अर्थात् द्वैतवादी भी देखते हैं आदिति से वामनरूप करके, इन्द्रसे जयन्तरूप करके, अग्निसे स्कन्दरूप करके, यमसे नारायणरूप करके, वरुण से भृगुरूप करके और कलङ्की चन्द्रमा से बुधरूप करके तू उत्पन्न हुआ तो भी परमेश्वरही बनारहाहै तू कालहै और शिव कालकाल हैं शिवजी के अंश से ही तू मृत्यु का मृत्यु भयाहै मेरु पर्वत का धनुष धारनेहारे महावीर सुवर्णवर्ण शरभरूप श्रीशिव जी सब जगत् के शास्ता अर्थात् शासन करनेहारे हैं न तू शास्ता है और न ब्रह्मा यह सब बातें मनमें विचार इस क्रूररूप का संहार कर नहीं तो महाभैरवरूप शिवके क्रोधका वज्र अब तेरे मस्तकपर गिरेगा सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो! इतना सुनतेही नृसिंहजी क्रोधकी अग्निसे जल उठे और बड़ा घोर शब्द करके वीरभद्र जी को पकड़ना चाहा इसी अवसर में महाघोर शत्रुओं को भयदेनेहारा शिवतेज से उत्पन्न अतिदुर्धर्ष आकाश तक व्याप्त बड़ा भयङ्कररूप वीरभद्र का होगया उस

रूपका तेज सुवर्ण, चन्द्र, अग्नि, बिजली, सूर्यआदि सब के तेजोंसे विलक्षण था जिसके लिये कोई उपमा नहींहै सब तेज उसमें लीन होगये और नृसिंह तथा रुद्र के ये दो रूप प्रकट रहे अति भयङ्कर प्रलय करनेहारा रूप परमेश्वरको धारे देख देवता जय शब्द करने लगे वह रुद्रका रूप सहस्रभुजा धारे और मस्तक पर चन्द्र से शोभित था जिस रूपका आधा शरीर मृगका और आधा पक्षी का बड़े बड़े पंख, तीखी चोंच, वज्रके तुल्य नख, बड़ी बड़ी और अति तीक्ष्ण दाढ़, नीलकण्ठ, चार पाद, प्रलयाग्नि के समान देदीप्यमान देह, अतिकुपित और बड़े क्रूर तीन नेत्र और प्रलय के मेघों के समान जिस का गम्भीर शब्द था उस अतिदारुण हुङ्कारशब्द को करते हुये रुद्ररूप को देखते ही नृसिंहजी का सब बल पराक्रम नष्ट होगया और जैसे सूर्य के आगे खद्योत होजाय ऐसे निस्तेज होगये शरभरूप शिवभी अपने पुच्छसे नृसिंहके पांव लपेट हाथों से हाथ पकड़ छाती में चोंच के प्रहार देते हुये जैसे सर्पको गरुड़ ले उड़े ऐसेही भयभीत नृसिंहजी को अपने पक्षों के घात से मोहितकर आकाशको ले उड़े और आकाश में जाय फिर नृसिंहजी को भूमिपर गिराया और फिर उठाया इस भांति बहुत बार उठाय उठाय पटका और जब नृसिंहजी बहुत व्याकुल होगये तब लेकर उड़पड़े सब देवता स्तुति करते हुये उनके पीछे चले नृसिंहजी भी परवश और दीनमुख हुये आकाश में अपने को उठाये लेजाते शिवजी को देख हाथ जोर स्तुति करने लगे॥

नृसिंह उवाच ॥ नमो रुद्राय शर्वाय महाग्रासाय विष्णवे। नम उग्राय भीमाय नमः क्रोधाय मन्यवे १ नमो भवाय शर्वाय शङ्कराय शिवाय ते। कालकालाय कालाय महाकालाय मृत्यवे २ वीराय वीरभद्राय क्षयद्वीराय शूलिने। महादेवाय महते पशूनां पतये नमः ३ एकाय नीलकण्ठाय श्रीकण्ठाय पिनाकिने। नमोऽनन्ताय सूक्ष्माय नमस्ते मृत्युमन्यवे ४ पराय परमेशाय परात्परतराय ते। परात्पराय विश्वाय नमस्ते विश्वमूर्तये ५ नमो विष्णुकलत्राय विष्णुक्षेत्राय भानवे। कैवर्ताय किराताय महाव्याधाय शाश्वते ६ भैरवाय शरण्याय महाभैरवरूपिणे। नमो नृसिंहसंहर्त्रे कामकालपुरारये ७ महापाशौघसंहर्त्रे विष्णुमायान्तकारिणे। त्र्यम्बकाय त्र्यक्षराय शिपिविष्टाय मीढुषे ८ मृत्युञ्जयाय शर्वाय सर्वज्ञाय मखारये। मखेशाय वरेण्याय नमस्ते वह्निरूपिणे ९ महाघ्राणाय जिह्वाय प्राणापानप्रवर्तिने। नमश्चन्द्राग्निसूर्याय मुक्तिवैचित्र्यहेतवे १० वरदायावताराय सर्वकारणहेतवे। कपालिने करालाय पतये पुण्यकीर्तये ११ अमोघायाग्निनेत्राय लकुलीशाय शम्भवे। भिषक्तमाय मुण्डाय दण्डिने योगरूपिणे १२ मेघवाहाय देवाय पार्वतीपतये नमः। अव्यक्ताय विशोकाय स्थिराय स्थिरधन्विने १३ स्थाणवे कृत्तिवासाय नमः पञ्चार्थहेतवे। वरदायैकपादाय नमश्चन्द्रार्धमौलिने १४ नमस्तेऽध्वरराजाय वयसां पतये नमः। योगीश्वराय नित्याय सत्याय परमेष्ठिने १५ सर्वात्मने नमस्तुभ्यं नमः सर्वेश्वराय ते। एकद्वित्रिचतु-

पञ्चकृत्वस्तेऽस्तु नमोनमः १६ दशकृत्वस्तु साहस्रकृत्व-स्ते च नमोनमः। नमोऽपरिमितं कृत्वानन्तकृत्वो नमो नमः। नमोनमो नमोभूयः पुनर्भूयो नमोनमः १७॥

सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो ! इन एकसौ साठि अमृतमय नामों करके परमेश्वरकी स्तुति कर नृसिंह जी शुद्ध अन्तःकरणसे प्रार्थना करनेलगे कि महाराज ! जब जब मुझे अहङ्कार से अज्ञान होवे तब तब आप शासना करें यही मैं चाहताहूं वीरभद्र भगवान् भी उन की प्रार्थना सुन प्रसन्न भये और कहा कि हे विष्णो ! अब तू अशक्त भया और तेरा प्राणान्तक पराजय भया इतना कह नृसिंहजी का चर्म वीरभद्रजी ने उतारलिया और शरीर के शुक्लवर्ण अस्थि निकल आये और शिर भी काटलिया यह सब चरित देख ब्रह्मा आदि देवता हाथ जोर प्रार्थना करने लगे कि हे वीरभद्र ! जैसा मेघ सूखे वृक्षोंको हरा करे ऐसेही आपने हमको जीवदान दिया तुम्हारे भय से अग्नि दाह करता है, वायु बहता है, सूर्य उदय होता है, मृत्यु दौड़ता है वह अव्यक्त, चिदाकाश, कलातीत, सदाशिव तुम्हीं हो यह सब ब्रह्म-वादी कहते हैं हम जगत्का धारण करनेहारे कौन हैं सब आपकाही दिया सामर्थ्य है आपके गुण और रूप हम क्योंकर वर्णन करसक्ते हैं हे शिव ! सब उपद्रवोंमें आप हमारी रक्षा करते हो इस भांति के अनेक अवतार हमारे कल्याण के अर्थ आपके देखकर कभी हमको तमोगुणसे सन्देह उत्पन्न नहीं होता और आप का निर-न्तर चिन्तन भी विस्मृत नहीं होता अर्थात् सदा आपका

स्मरण करतेही रहते हैं गुञ्जाके तुल्य और पर्वतके समान आपके अनेक रूपहैं वेदवेत्ता ब्राह्मण आपके दो शरीर कहते हैं एक शान्तस्वरूप दूसरा महाघोर आप सदा हमारी रक्षा करें आपनेही सब जगत् अपने तेज से व्याप्त कर रक्खा है ब्रह्मा, विष्णु, इन्द्र, चन्द्र आदि सब देवता और असुर आपसे उत्पन्न भये हैं इन सबका और नृसिंह का आपही निग्रह भी करनेहारे हैं आठ मूर्ति धार कर सब जगत् को आपही धारे हैं हे भगवन्! हमारी रक्षा करें और इष्टवर भी आप हमको देवें यह ऋषि और देवताओं की प्रार्थना सुन वीरभद्र कहने लगे कि हे देवताओ! जिसभांति जलमें जल, दूधमें दूध और घृत में घृत गेरने से एक रूप होजाता है ऐसेही शिव में विष्णु लीन होजाते हैं शिव विष्णु में कुछ भेद नहीं यह महाबली और अहंकारयुक्त नृसिंहावतार विष्णु जगत् के संहार में प्रवृत्त भये इनको नमस्कार हो और जो पुरुष मेरे भक्त हों अवश्य इनका यजन करें इतना कह सब देवताओं के देखते देखते ही वीरभद्र भगवान् अन्तर्धान भये उसी दिनसे नृसिंहका चर्म शिवजी ने ओढ़ा और उनका मुण्ड अपनी मुण्डमाला का मध्यमणि बनाया सब देवता भी निरुपद्रव हो इस कथा को कीर्तन करते हुये और शिवजी का शरभरूप स्मरण कर कर चकित होतेहुये अपने अपने धाम को गये सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो! अति पवित्र, धन्य और यश, आयुष्, आरोग्य और पुष्टि देने-हारा सब विघ्न, व्याधि और अपमृत्युका निवारण करने-हारा महाशान्तिकर पुत्र पौत्रों की वृद्धि करनेहारा शत्रु-

समूहको पराजय देनेहारा सम्पूर्ण आधि, व्याधि, दुःस्वप्न, विष, ग्रह, भूत आदिका शमन करनेहारा योगसिद्धि और शिवज्ञान का प्रकाशक शिवलोकके लिये मानो सोपान विष्णुमाया का निवृत्त करनेहारा देवताओं को परम अर्थ देनेहारा वाञ्छासिद्धि देनेवाला और ऋद्धि तथा प्रज्ञाका प्रकाशक यह आख्यान है इसकारण सदा इस का पाठ करना चाहिये यह शिवजी का शरभरूप स्थिर-बुद्धि, उत्सुक और भक्त पुरुषों को प्रकट करना चाहिये और वैसेही पुरुषों को पढ़ना और सुनना भी चाहिये सब शिवजी के उत्सवों के दिन और चतुर्दशी, अष्टमी आदि पर्वदिनों में इसका पाठ करने से शिवसायुज्य मिलता है चोर, व्याघ्र, सर्प, सिंह आदिके भयमें भूकम्प, पांशुवृष्टि, उल्कापात, महावायु, अतिवृष्टि, अनावृष्टि, राजभय और दावाग्नि आदि उत्पात हों तो भी इस आख्यानको दृढ़व्रत शिवभक्त पुरुष पठन करे जिससे सब उत्पात दूर होते हैं नृसिंहजी के किये स्तोत्रको जो पढ़े अथवा सुने वह शिवलोक में जा शिवजी का गण हो॥

सत्तानबे अध्याय॥

शौनकआदि ऋषि पूछते हैं कि हे सूतजी! पूर्वकाल में श्रीशिवजी ने महापराक्रमी जलन्धर दैत्यको किस भांति मारा यह आप हमको श्रवण करावें यह मुनियों का वचन सुन सूतजी कहनेलगे कि हे मुनीश्वरो! समुद्र से उत्पन्न और बड़ा प्रतापी जलन्धर दैत्य पूर्वकाल में होता भया उसने बहुतकाल उग्रतप करके बड़ा पराक्रम

पाया और सब देवता, गन्धर्व, यक्ष, राक्षस, नाग आदिको जीत उसने ब्रह्माजी को भी जीत लिया और युद्धके लिये विष्णुजी के समीप गया विष्णुजीने भी कई दिन उसके साथ घोर संग्राम किया पर अन्तमें हारमानी इसप्रकार विष्णुजी को भी जीत बड़ा अभिमानी जलन्धर अपने दैत्यों से कहनेलगा कि हे दैत्यो! सब देवता हमने जीत लिये केवल एक शिव बाक़ी रहगये हैं नन्दीआदि गणों सहित शिवजी को जीत तुम सबको ही ब्रह्मा, विष्णु, शिव, इन्द्र, कुबेर आदि देवताओं का अधिकार देना चाहताहूं यह जलन्धर का वचन सुन सब दैत्य प्रसन्नता से गर्जनेलगे जलन्धर भी दैत्यों की चतुरङ्गिणी सेना संगले शिवजी के जीतने को जाता भया शिवजी भी जलन्धर को देख और उसके प्रति ब्रह्माजी का दिया वर अर्थात् शिवजी के विना और किसीके हाथ से तेरी मृत्यु न होगी इसको स्मरण कर कहनेलगे कि हे दैत्य-राज! युद्धसे तुझे क्या फलहै मेरे बाणों से भेदित होकर तू मृत्युवश हो जायगा इसकारण जहांसे आयाहै वहांही चला जा यह अतिकठोर शिवजी का वचन सुन बड़े क्रोधसे शिवजीके प्रति कहनेलगा कि हे शिव! इन बातों से पीछा न छूटेगा तुमको अवश्यही हमारे साथ युद्ध करना होगा यह सुन शिवजी ने अपने पाद के अंगुष्ठसे समुद्रके बीच एक बड़ा दारुण चक्र उत्पन्न किया और मनमें विचार किया कि यह हमारा उत्पन्न किया हुआ सुदर्शन चक्र तीनलोक का संहार करने को भी समर्थ है एक जलन्धर तो इसके आगे कौन कीट है यह मनमें

विचार हँसकर शिवजी ने जलन्धर से कहा कि हे दैत्य! जो तू बलका बड़ा अभिमान रखता है तो हमने अपने पादांगुष्ठ से जो यह सुदर्शनचक्र समुद्र के बीच निर्माण कियाहै इसको बाहर निकाल कन्धे पर रख इससे तेरे बलकी परीक्षा होजायगी तब हम युद्ध करेंगे यह शिवजी का वचन सुन क्रोधसे रक्त हुये नेत्रों करके मानो त्रैलोक्य को अभी दग्ध करदेवे जलन्धर कहने लगा कि हे शिव! तुझे और नन्दी आदि तेरे सब गणों को सब देवतों सहित इन्द्रको तथा इस सम्पूर्ण चराचर जगत् को अपनी गदासे संहार करनेको समर्थ हूं जिसभांति डुण्डुभ अर्थात् निर्विषसर्पों को गरुड़ संहार करे हे शिव! मेरे बाणों के आगे कौन ठहर सक्ता है मैंने अपनी बाल्यावस्थामें तपके बलसे ही विष्णुको जीतलिया और यौवन अवस्था में सब देवता और मुनियों सहित ब्रह्माजीको जीता और अपने उग्रतपसे त्रैलोक्य को दग्ध किया है रुद्र! तैंने कभी विष्णुको भी जीताहै कि विष्णु जीतनेहारे मुझसेही युद्धकर प्राण दिया चाहता है इन्द्र, अग्नि, यम, वरुण, वायु आदिदेवता मेरे गन्धको भी नहीं सहसक्ते जैसे गरुड़ के गन्ध से सर्प भागजाय इस भांति सब देवता पलायन करजाते हैं स्वर्गमें और भूमिपर जब कोई युद्ध करनेहारा मुझे न मिला तब मैंने अपनी भुजाओंसे पर्वतोंको घर्षण किया मन्दराचल, नीलपर्वत, सुमेरु आदि पर्वत भुजाओं की खुजली मिटाने को कईबार घर्षण करने से गिर गिर पड़े हैं हिमालय पर्वत में गङ्गा के प्रवाह को अपनी भुजाओंसे कई बार रोक दिया है मेरी नारियों के सेवकों

ने ही इन्द्र के वज्र को बांध दिया समुद्र का जलशोषण करनेहारा बड़वाग्नि का मुख मैंने तोड़डाला तब सब जगत् जलमय होगया ऐरावत आदि दिग्गज उठा उठा समुद्र में फेंकदिये रथसहित इन्द्र को घुमाकर ऐसा फेंका कि सौ योजनपर गिरा विष्णुसहित गरुड़ को नागपाश से बांध लिया उर्वशी आदि देवाङ्गना मैंने अपने कारागार अर्थात् बन्दीख़ाने में रक्खीं किसी प्रकार इन्द्र को बहुत दीन वचन बोलते देख एक शची को छोड़ दिया इस भांति अपने पराक्रम को कहांतक सुनाऊं परन्तु हे शिव ! तैंने अभी मेरा पराक्रम नहीं देखा जिससे बातें बनारहा है सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो ! यह जलन्धर का वचन सुन शिवजी ने क्रोधकर अपने नेत्रकोण से उसकी सब सेना और रथ को भस्म करदिया परन्तु जलन्धर के चित्त में कुछ भी क्षोभ न भया वह कहने लगा कि हे शिव ! सेना से मुझे कुछ प्रयोजन नहीं यह तो केवल शोभा के लिये थी मैं अकेला ही तुम सबका संहार करने में समर्थ हूं देवता और तेरे सब गण तथा यह वानरमुख नन्दी मेरे साथ युद्ध में समर्थ नहीं जो तेरी सामर्थ्य हो तो उठ और युद्ध करनेको मेरे सम्मुख खड़ा हो इतना कह शिवजी के सम्मुख खड़ा होगया और अपने भस्म हुये बान्धव तथा सेना का कुछ भी स्मरण न किया और मन में विचार किया कि इसके बनाये सुदर्शनचक्र से ही इसका संहार करूं यह मनमें ठान बड़ाघोर बाहुशब्दकर दोनों हाथों से अतिबल करके उस चक्र को उठाय अपने कांधेपर धरा कांधेपर

रखते ही वह चक्र अपनी बड़ी तीक्ष्णधार और अति भार से जलन्धर के शरीर में पार होगया और दो खण्ड हो दैत्य वज्र के प्रहारसे अञ्जन के पर्वत की भांति भूमि पर गिरा और उसके रुधिरसे सब भूमि व्याप्त भई तब शिवजी ने वह सब रक्त और उसका मांस रौरवनरकमें भेजा जिससे वहां रक्तकुण्ड बना इस भांति जलन्धर का संहार देख सब देवता बहुत प्रसन्न भये और शिवजी की स्तुति और जय शब्द करनेलगे हे मुनीश्वरो ! इस जलन्धर के संहार की कथा को जो पढ़े सुने अथवा भक्ति से ब्राह्मणों को श्रवण करावे वह शिवलोक में वास पावे और शिवजी का गण हो ॥

अट्ठानवे अध्याय ॥

शौनकआदि ऋषि पूछते हैं कि हे सूतजी ! वह सुदर्शनचक्र देवदेव श्रीमहादेवजी से विष्णुभगवान् ने क्योंकर पाया यह आप वर्णन करें। सूतजी कहने लगे कि हे मुनीश्वरो ! पूर्वकाल में देवता और दैत्यों का बड़ा घोर संग्राम हुआ उसमें दैत्यों ने शक्ति, मुशल, बाण, कुन्त, खड्ग आदि अनेक शस्त्रों से देवताओं को पीड़ित कर पराजित किया देवता भी युद्ध से विमुख हो अति दीनता से विष्णुभगवान् की शरण में गये उनको देख भगवान् ने कहा कि हे पुत्रो ! तुम ऐसे मलिनमुख और वस्त्रभूषणों से हीन शोकग्रस्त क्यों हो रहे हो और सब इकट्ठे होकर हमारे समीप क्यों आये इसका शीघ्र कारण कहो यह भगवान् का वचन सुन देवता बोले

कि महाराज! हम सब को दैत्यों ने बहुत सताया है इस लिये भयभीत हो आपकी शरण में आये हैं अब आपही माता, पिता और रक्षक हैं दानवों को संहार कर इस दुःख से हमारा उद्धार करें वैष्णव, रौद्र, ब्राह्म, याम्य, कौबेर, सौम्य, नैर्ऋत्य, वारुण, वायव्य, आग्नेय, ऐशान, वार्षिक, सौर, ऐन्द्र, कम्पन, जृम्भणआदि अस्त्रों करके सब दैत्य वरदानों के प्रभाव से अवध्य हैं इस कारण हम उनका कुछ भी नहीं कर सकते और सूर्य के तेज से विश्वकर्मा ने चक्र बना आपको दिया था जिसके बल से आप सब युद्धों में जय पाते थे वह भी दधीचि ने कुण्ठित करदिया और जो शार्ङ्ग दण्ड आदि आपके शस्त्र हैं वैसे दैत्यों ने भी ब्रह्माजी के वर से संपादन कर लिये हैं अब कोई शस्त्र अस्त्र आपके पास अथवा हमारे समीप ऐसा नहीं है जिससे दैत्यों का संहार हो शिवजी ने जलन्धर दैत्य के वध के लिये सुदर्शन नाम अति दारुण चक्र रचा था जो वह आपको मिले तो दैत्योंका वध हो और कोई दूसरा उपाय नहीं यह सुन देवताओं के प्रति विष्णु भगवान् कहने लगे कि हे देवताओ! शिवजी का आराधन कर शीघ्रही तुम्हारा दुःख हम दूर करेंगे शिवजी ने जलन्धर के वध के अर्थ जो चक्र रचा था उसको शिवजी के अनुग्रहसे पाय धुन्धु आदि अड़सठसौ मुख्य दैत्यों को मार तुम्हारा उद्धार करेंगे चिन्ता मत करो हे मुनीश्वरो! भगवान् इतना देवताओं के प्रति कथन कर हिमालय पर्वत में जाय मेरुपर्वत के समान अतिमनोहर विश्वकर्माका बनायाहुआ शिवलिङ्ग

स्थापनकर स्वस्तिसूक्त और रुद्राध्यायसे गङ्गाजल करके स्नान करा गन्ध, पुष्प, नैवेद्य आदि उपचारों से भली भांति पूजा कर भक्तिसे हवन कर हाथ जोर स्तुति करते भये और भव आदि सहस्रनामों के आदि में प्रणव और अन्तमें नमः लगाकर प्रतिनामसे एक एक कमल का पुष्प शिवलिङ्गके ऊपर चढ़ाने और इसी भांति नित्य हवन कर इसी सहस्रनाम से स्तुति करने लगे हे मुनीश्वरो! वह सहस्रनाम हम आपके प्रति कथन करते हैं॥

सहस्रनाम॥ श्रीविष्णुरुवाच॥ भवः शिवो हरो रुद्रः पुरुषः पद्मलोचनः। अर्थितव्यः सदाचारः सर्वशंभुमहेश्वरः। ईश्वरः स्थाणुरीशानः सहस्राक्षः सहस्रपात् १ वरीयान् वरदो वन्द्यः शंकरः परमेश्वरः। गङ्गाधरः शूलधरः परार्थैकप्रयोजनः २ सर्वज्ञः सर्वदेवादिर्गिरिधन्वा जटाधरः। चन्द्रापीडश्चन्द्रमौलिर्विद्वान् विश्वामरेश्वरः ३ वेदान्तसारसन्दोहः कपाली नीललोहितः। ध्यानाधारोऽपरिच्छेद्यो गौरीभर्ता गणेश्वरः ४ अष्टमूर्तिर्विश्वमूर्तिस्त्रिवर्गः स्वर्गसाधनः। ज्ञानगम्यो दृढप्रज्ञो देवदेवस्त्रिलोचनः ५ वामदेवो महादेवः पाण्डुः परिदृढो दृढः। विश्वरूपोविरूपाक्षो वागीशः शुचिरन्तरः ६ सर्वप्रणयसंवादी वृषाङ्को वृषवाहनः। ईशः पिनाकी खट्वाङ्गी चित्रवेशश्चिरन्तनः ७ तमोहरो महायोगी गोप्ता ब्रह्माङ्गहृज्जटी। कालकालः कृत्तिवासाः सुभगः प्रणवात्मकः ८ उन्मत्तवेषश्चक्षुष्यो दुर्वासाः स्मरशासनः। दृढायुध स्कन्दगुरुः परमेष्ठी परायणः ९ अनादिमध्यनिधनो गिरीशो गिरिबान्धवः। कुबेरबन्धुः श्रीकण्ठो लोकवर्णोत्तमोत्तमः १०

सामान्यदेवः कोदण्डी नीलकण्ठः परश्वधी। विशालाक्षो मृगव्याधः सुरेशः सूर्यतापनः ११ धर्मकर्माक्षमः क्षेत्रं भगवान् भगनेत्रभित्। उग्रः पशुपतिस्तार्क्ष्यप्रियभक्तः प्रियंवदः १२ दान्तो दयाकरो दक्षःकपर्दी कामशासनः। श्मशाननिलयः सूक्ष्मः श्मशानस्थो महेश्वरः १३ लोककर्ताभूतपतिर्महाकर्ता महौषधिः। उत्तरो गोपतिर्गोप्ता ज्ञानगम्यः पुरातनः १४ नीतिः सुनीतिः शुद्धात्मा सोमसोमरतः सुखी। सोमपोऽमृतपस्सोमो महानीतिर्महामतिः १५ अजातशत्रुरालोकःसंभाव्यो हव्यवाहनः। लोककारो वेदकारःसूत्रकारः सनातनः १६ महर्षिः कपिलाचार्यो विश्वदीप्तिस्त्रिलोचनः। पिनाकपाणिर्भूदेवः स्वस्तिदःस्वस्तिकृत्सदा १७त्रिधामा सौभगःशर्वः सर्वज्ञः सर्वगोचरः। ब्रह्मधृग् विश्वसृक् स्वर्गः कर्णिकारः प्रियः कविः १८शाखो विशाखो गोशाखःशिवोनैकःक्रतुः समः। गङ्गाप्लवोदकोभावःसकलःस्थपतिःस्थिरः १९ विजितात्मा विधेयात्मा भूतवाहनसारथिः। सगणोगणकार्यश्च सुकीर्तिश्छिन्नसंशयः २० कामदेवःकामपालो भस्मोद्धूलितविग्रहः। भस्मप्रियो भस्मशायी कामीकान्तःकृतागमः २१ समायुक्तोनिवृत्तात्मा धर्मयुक्तःसदाशिवः। चतुर्मुखश्चतुर्बाहुर्दुरावासोदुरासदः २२ दुर्गमोदुर्लभोदुर्गः सर्वायुधविशारदः। अध्यात्मयोगनिलयःसुतन्तुस्तन्तुवर्धनः २३ शुभाङ्गो लोकसारङ्गो जगदीशोऽमृताशनः। भस्मशुद्धिकरो मे[illegible]जस्वी शुद्धविग्रहः २४ हिरण्यरेतास्तरणिर्मरीचि[illegible]महिमालयः। महारुद्रोमहागर्भः सिद्धवृन्दारवन्दित[illegible] व्याघ्रचर्मधरोव्याली महाभूतोमहानिधिः।

अमृताङ्गोऽमृतवपुः पञ्चयज्ञःप्रभञ्जनः २६ पञ्चविंशति-
तत्त्वज्ञः पारिजातःपरावरः। सुलभःसुव्रतःशूरो वाङ्मयै-
कनिधिर्निधिः २७ वर्णाश्रमगुरुर्वर्णी शत्रुजिच्छत्रुता-
पनः। आश्रमःक्षपणःक्षामो ज्ञानवानचलाचलः २८
प्रमाणभूतोदुर्ज्ञेयः सुपर्णोवायुवाहनः। धनुर्धरोधनुर्वेदो
गुणराशिर्गुणाकरः २९ अनन्तदृष्टिरानन्दो दण्डोदम-
यितादमः। अभिवाद्यो महाचार्यो विश्वकर्माविशा-
रदः ३० वीतरागोविनीतात्मा तपस्वी भूतभावनः। उन्म-
त्तवेषःप्रच्छन्नो जितकामोजितप्रियः ३१ कल्याणप्रकृतिः
कल्पः सर्वलोकप्रजापतिः। तपस्वीतारकोधीमान्
प्रधानप्रभुरव्ययः ३२ लोकपालोऽन्तर्हितात्मा कल्पादिः
कमलेक्षणः। वेदशास्त्रार्थतत्त्वज्ञो नियमो नियमा-
श्रयः ३३ चन्द्रःसूर्यःशनिःकेतुर्विरामो विद्रुमच्छविः।
भक्तिगम्यः परंब्रह्म मृगबाणार्पणोऽनघः ३४ अद्रिराज-
लयःकान्तः परमात्मा जगद्गुरुः। सर्वकर्माचलस्त्वष्टा
माङ्गल्योमङ्गलावृतः ३५ महातपादीर्घतपाः स्थविष्ठः
स्थविरोध्रुवः। अहःसंवत्सरोव्याप्तिःप्रमाणंपरमंतपः ३६
संवत्सरकरोमन्त्रः प्रत्ययःसर्वदर्शनः। अजःसर्वेश्वरः
स्निग्धो महारेता महाबलः ३७ योगीयोग्योमहारेताः
सिद्धः सर्वादिरग्निदः। वसुर्वसुमनाःसत्यः सर्वपापहरो
हरः ३८ अमृतःशाश्वतःशान्तो बाणहस्तःप्रतापवान्।
कमण्डलुधरोधन्वी वेदाङ्गोवेदविन्मुनिः ३९ भ्राजिष्णु-
र्भोजनंभोक्ता लोकनेतादुराधरः। अतीन्द्रियोमहामायः
सर्वावासश्चतुष्पथः ४० कालयोगीमहानादो महोत्साहो
महाबलः। महाबुद्धिर्महावीर्यो भूतचारीपुरन्दरः ४१

निशाचरःप्रेतचारी महाशक्तिर्महाद्युतिः । अनिर्देश्य-
वपुःश्रीमान् सर्वहार्यमितोगतिः ४२ बहुश्रुतोबहुमयो
नियतात्माभवोद्भवः । ओजस्तेजोद्युतिकरो नर्तकःसर्व-
कामुकः ४३ नृत्यप्रियोनृत्यनृत्यः प्रकाशात्माप्रतापनः ।
बुद्धःस्पष्टाक्षरोमन्त्रःसम्मानःसारसम्प्लवः ४४ युगादिकृ-
द्युगावर्तो गम्भीरोवृषवाहनः । इष्टोविशिष्टःशिष्टेष्टःशरभः
शरभोधनुः ४५ अपांनिधिरधिष्ठानं विजयोजयकालवित्।
प्रतिष्ठितःप्रमाणज्ञो हिरण्यकवचोहरिः ४६ विरोचनः
सुरगणो विद्येशोविबुधाश्रयः । बालरूपोबलोन्माथी
विवर्तोगहनोगुरुः ४७ करणंकारणंकर्ता सर्वबन्धविमो-
चनः । विद्वत्तमोवीतभयो विश्वभर्तानिशाकरः ४८ व्यव-
सायोव्यवस्थानः स्थानदोजगदादिजः । दुन्दुभोललितो
विश्वो भवात्मात्मनिसंस्थितः ४९ वीरेश्वरोवीरभद्रोवीर-
हावीरभृद्विराट् । वीरचूडामणिर्वेत्तातीव्रनादोनदीधरः ५०
आज्ञाधार स्त्रिशूली च शिपिविष्टः शिवालयः । बाल-
खिल्योमहाचापस्तिग्मांशुर्निधिरव्ययः ५१ अभिरामः
सुशरणः सुब्रह्मण्यःसुधापतिः । मघवान् कौशिको
गोमान् विश्रामस्सर्वशासनः ५२ ललाटाक्षो विश्वदेहः
सारःसंसारचक्रभृत् । अमोघदण्डोमध्यस्थो हिरण्यो
ब्रह्मवर्चसी ५३ परमार्थःपरमयः शम्बरोव्याघ्रकोऽनलः ।
रुचिर्वररुचिर्वन्द्यो वाचस्पतिरहर्पतिः ५४ रविर्विरोचनः
स्कन्दः शास्तावैवस्वतोजनः । युक्तिरुन्नतकीर्तिश्च
शान्तरागःपराजयः ५५ कैलासपतिकामारिः सवितारवि-
लोचनः । विद्वत्तमोवीतभयो विश्वहर्तानिवारितः ५६
नित्योनियतकल्याणः पुण्यश्रवणकीर्तनः । दूरश्रवा

धिश्वसहोऽध्येयो दुःस्वप्ननाशनः ५७ उत्तारकोदुष्कृतिहा दुर्धर्षोदुःसहोऽभयः। अनादिर्भूर्भुवोलक्ष्मीः किरीटी त्रिदशाधिपः ५८ विश्वगोप्ताविश्वभर्ता सुधीरोरुचिराङ्गदः। जननोजनजन्मादिः प्रीतिमान्नीतिमान्नयः ५९ विशिष्टः काश्यपोभानुर्भीमो भीमपराक्रमः। प्रणवःसप्तधाचारो महाकायोमहाधनुः ६० जन्माधिपोमहादेवः सकलागमपारगः। तत्त्वातत्त्वविवेकात्मा विभूष्णुर्भूतिभूषणः ६१ ऋषिर्ब्राह्मणविज्जिष्णुर्जन्ममृत्युजरातिगः। यज्ञोयज्ञपतिर्यज्वा यज्ञान्तोऽमोघविक्रमः ६२ महेन्द्रो दुर्भरः सेनी यज्ञाङ्गोयज्ञवाहनः। पञ्चब्रह्मसमुत्पत्ति विश्वेशो विमलोदयः ६३ आत्मयोनिरनाद्यन्तो षड्विंशत्सप्तलोकधृक्। गायत्रीवल्लभःप्रांशुर्विश्वावासःप्रभाकरः ६४ शिशुर्गिरिरतःसम्राट् सुषेणःसुरशत्रुहा। अमोघोऽरिष्टमथनो मुकुन्दोविगतज्वरः ६५ स्वयंज्योतिरनज्योतिरात्मज्योतिरचञ्चलः। पिङ्गलःकपिलश्मश्रुः शास्त्रनेत्रत्रयीतनुः ६६ ज्ञानस्कन्धोमहाज्ञानी निरुत्पत्तिरुपप्लवः। भगो विवस्वानादित्यो योगाचार्योबृहस्पतिः ६७ उदारकीर्तिरुद्योगी सद्योगीसदसन्मयः। नक्षत्रमालीराकेशः स्वाधिष्ठानःषडाश्रयः ६८ पवित्रपाणिःपापारिर्मणिपूरो मनोगतिः। हृत्पुण्डरीकमासीनः शुक्लःशान्तो वृषाकपिः ६९ विष्णुर्ग्रहपतिःकृष्णस्समर्थोऽनर्थनाशनः। अधर्मशत्रुरक्षय्यः पुरुहूतःपुरुष्टुतः ७० ब्रह्मगर्भोबृहद्गर्भो धर्मधेनुर्धनागमः। जगद्धितैषीसुगतः कुमारःकुशलागमः ७१ हिरण्यवर्णोज्योतिष्मान् नानाभूतधरोध्वनिः। अरोगो नियमाध्यक्षो विश्वामित्रोद्विजोत्तमः ७२ बृहज्ज्योतिः

सुधामा च महाज्योतिरनुत्तमः। मातामहो मातरिश्वा नभस्वान्नागहारधृक् ७३ पुलस्त्यः पुलहोऽगस्त्यो जातूकर्ण्यः पराशरः। निरावरणधर्मज्ञो विरिञ्चिर्विष्टर-श्रवाः ७४ आत्मभूरनिरुद्धोऽत्रिर्ज्ञानमूर्तिर्महायशाः। लोकचूडामणिर्वीरश्चण्डः सत्यपराक्रमः ७५ व्यालकल्पो महाकल्पो महावृक्षः कलाधरः। अलङ्करिष्णुस्त्वचलो रोचिष्णुर्विक्रमोत्तमः ७६ आशुशब्दपतिर्वेगी प्लवनः शिखिसारथिः। असंसृष्टोऽतिथिः शक्रः प्रमाथी पापनाशनः ७७ वसुश्रवाः कव्यवाहः प्रतप्तो विश्वभोजनः। जर्यो जराधिशमनो लोहितश्च तनूनपात् ७८ पृषदश्वो नभोयोनिः सुप्रतीकस्तमिस्रहा। निदाघस्तपनो मेघः पक्षः परपुरञ्जयः ७९ मुखानिलः सुनिष्पन्नः सुरभिः शिशिरात्मकः। वसन्तो माधवो ग्रीष्मो नभस्यो बीजवाहनः ८० अङ्गिरामुनिरात्रेयो विमलो विश्ववाहनः। पावनः पुरुजिच्छक्रस्त्रिविद्यो नरवाहनः ८१ मनोबुद्धिरहङ्कारः क्षेत्रज्ञः क्षेत्रपालकः। तेजोनिधिर्ज्ञाननिधिर्विपाको विघ्नकारकः ८२ अधरोऽनुत्तरो ज्ञेयो ज्येष्ठो निःश्रेयसालयः। शैलो नगस्तनुर्दोहो दानवारिररिन्दमः ८३ चारुधीर्जनकश्चारु विशल्यो लोकशल्यकृत्। चतुर्वेदश्चतुर्भावश्चतुरश्चतुरप्रियः ८४ आम्नायोऽथ समाम्नायस्तीर्थदेवशिवालयः। बहुरूपो महारूपः सर्वरूपश्चराचरः ८५ न्यायनिर्वाहको न्यायो न्यायगम्यो निरञ्जनः। सहस्रमूर्धा देवेन्द्रः सर्वशस्त्रप्रभञ्जनः ८६ मुण्डो विरूपो विकृतो दण्डी दान्तो गुणोत्तमः। पिङ्गलाक्षोऽथ हर्यक्षो नीलग्रीवो निरामयः ८७ सहस्रबाहुः सर्वेशः शरण्यः सर्वलोकभृत्।

पद्मासनः परंज्योतिः परावरपरंफलम् ८८ पद्मगर्भो महा-
गर्भो विश्वगर्भो विचक्षणः। परावरज्ञो बीजेशः सुमुखः
सुमहास्वनः ८९ देवासुरगुरुर्देवो देवासुरनमस्कृतः।
देवासुरमहामात्रो देवासुरमहाश्रयः ९० देवादिदेवो
देवर्षिर्देवासुरवरप्रदः। देवासुरेश्वरो दिव्यो देवासुरम-
हेश्वरः ९१ सर्वदेवमयोऽचिन्त्यो देवतात्मात्मसम्भवः।
ईड्योऽनीशः सुरव्याघ्रो देवसिंहो दिवाकरः ९२ विबुधाग्र-
वरःश्रेष्ठः सर्वदेवोत्तमोत्तमः। शिवज्ञानरतःश्रीमान् शिखी
श्रीपर्वतप्रियः ९३ जयस्तम्भो विशिष्टम्भो नरसिंहनि-
पातनः। ब्रह्मचारी लोकचारी धर्मचारी धनाधिपः ९४
नन्दी नन्दीश्वरो नग्नो नग्नव्रतधरः शुचिः। लिङ्गाध्यक्षः
सुराध्यक्षो युगाध्यक्षो युगावहः ९५ स्ववशः सवशः स्वर्गः
स्वरः स्वरमयस्वनः। बीजाध्यक्षो बीजकर्ता धनकृद्धर्म-
वर्धनः ९६ दम्भोऽदम्भो महादम्भस्सर्वभूतमहेश्वरः।
श्मशाननिलयस्तिष्यः सेतुरप्रतिमाकृतिः ९७ लोकोत्तरः
स्फुटालोकस्त्र्यम्बको नागभूषणः। अन्धकारिर्मखद्वेषी
विष्णुकन्धरपातनः ९८ वीतदोषाऽक्षयगुणो दक्षारिः पूष-
दन्तहृत्। धूर्जटिः खण्डपरशुः सकलो निष्कलोऽनघः ९९
आधारः सकलाधारः पाण्डुराभो मृडो नटः। पूर्णः पूर-
यिता पुण्यः सुकुमारः सुलोचनः १०० सामगेयः प्रिय-
करःपुण्यकीर्तिरनामयः। मनोजवस्तीर्थकरो जटिलो जी-
वितेश्वरः १०१ जीवितान्तकरो नित्यो वसुरेता वसुप्रियः।
सद्गतिः सत्कृतिः सक्तः कालकण्ठः कलाधरः १०२ मानी
मान्यो महाकालः सद्भूतिः सत्परायणः। चन्द्रसञ्जीवनः
शास्ता लोकगूढोऽमराधिपः १०३ लोकबन्धुर्लोकनाथः

कृतज्ञः कृतिभूषणः। अनपाय्यक्षरः कान्तः सर्वशास्त्र-भृतांवरः १०४ तेजोमयो द्युतिधरो लोकमायाऽग्रणीरणुः। शुचिस्मितः प्रसन्नात्मा दुर्जेयो दुरतिक्रमः १०५ ज्योति-र्मयो निराकारो जगन्नाथो जलेश्वरः। तुम्बवीणी महा-कायो विशोकः शोकनाशनः १०६ त्रिलोकात्मा त्रिलोकेशः शुद्धः शुद्धिरथाक्षजः। अव्यक्तलक्षणोऽव्यक्तो व्यक्ता-व्यक्तो विशाम्पतिः १०७ वरशीलो वरतुलो मानो मान-धनोमयः। ब्रह्मा विष्णुः प्रजापालो हंसो हंसगति-र्यमः १०८ वेधा धाता विधाता च अत्ता हर्ता चतुर्मुखः॥ कैलासशिखरावासी सर्वावासी सतांगतिः १०९ हिरण्य-गर्भो हरिणः पुरुषः पूर्वजः पिता। भूतालयो भूतपतिर्भूतिदो भुवनेश्वरः ११० संयोगी योगविद् ब्रह्मा ब्रह्मण्यो ब्राह्मण-प्रियः। देवप्रियो देवनाथो देवज्ञो देवचिन्तकः १११ विष-माक्षः कलाध्यक्षो वृषाङ्को वृषवर्धनः। निर्मदो निरहङ्कारो निर्मोहो निरुपद्रवः ११२ दर्पहा दर्पितो दृप्तः सर्वर्तुपरिव-र्तकः। सप्तजिह्वः सहस्रार्चिः स्निग्धः प्रकृतिदक्षिणः ११३ भूतभव्यभवन्नाथः प्रभवो भ्रान्तिनाशनः। अर्थोऽनर्थो महाकोशः परकार्यैकपण्डितः ११४ निष्कण्टकः कृता-नन्दो निर्व्याजो व्याजमर्दनः। सत्त्ववान्सात्त्विकः सत्यकी-र्तिस्तम्भकृतागमः ११५ अकम्पितो गुणग्राही नैकात्मा-नैककर्मकृत्। सुप्रीतः सुमुखः सूक्ष्मः सुकरो दक्षिणो-ऽनलः ११६ स्कन्धः स्कन्धधरो धुर्यः प्रकटः प्रीतिवर्धनः। अपराजितः सर्वसहो विदग्धः सर्ववाहनः ११७ अधृतः स्वधृतः साध्यः पूर्तमूर्तिर्यशोधरः। वराहशृङ्गधृग्वायुर्बल-वानेकनायकः ११८ श्रुतिप्रकाशः श्रुतिमानेकबन्धुरनेक-

धृक्। श्रीवल्लभशिवारम्भः शान्तभद्रः समञ्जसः ११६ भूशयो भूतिकृद् भूतिभूषणो भूतिवाहनः। अकायो भक्तकायस्थः कालज्ञानी कलावपुः १२० सत्यव्रतमहात्यागी निष्ठाशान्तिपरायणः। परार्थवृत्तिर्वरदो विविक्तः श्रुतिसागरः १२१ अनिर्विण्णो गुणग्राही कलङ्काङ्कः कलङ्कहा। स्वभावरुद्रो मध्यस्थः शत्रुघ्नो मध्यनाशकः १२२ शिखण्डी कवची शूली चण्डी मुण्डी च कुण्डली। मेखली कवची खड्गी मायी संसारसारथिः १२३ अमृत्युः सर्वदृक् सिंहस्तेजोराशिर्महामणिः। असंख्येयोऽप्रमेयात्मा वीर्यवान् कार्यकोविदः १२४ वेद्यो वेदार्थविद्गोप्ता सर्वाचारो मुनीश्वरः। अनुत्तमो दुराधर्षो मधुरः प्रियदर्शनः १२५ सुरेशः शरणं सर्वः शब्दब्रह्मसतांगतिः। कालभक्षः कलङ्कारिः कङ्कणीकृतवासुकिः १२६ महेष्वासो महीभर्ता निष्कलङ्को विशृङ्खलः। द्युमणिस्तरणिर्धन्यः सिद्धिदः सिद्धिसाधनः १२७ निवृत्तः संवृतः शिल्पो व्यूढोरस्को महाभुजः। एकज्योतिर्निरातङ्को नरो नारायणप्रियः १२८ निर्लेपो निष्प्रपञ्चात्मा निर्व्यग्रो व्यग्रनाशनः। स्तव्यः स्तवप्रियः स्तोता व्यासमूर्तिरनाकुलः १२९ निरवद्यपदोपायो विद्याराशिरविक्रमः। प्रशान्तबुद्धिरक्षुद्रः क्षुद्रहा नित्यसुन्दरः १३० धैर्याग्र्यधुर्यो धात्रीशः शाकल्यः शर्वरीपतिः। परमार्थगुरुर्दृष्टिर्गुरुराश्रितवत्सलः। रसो रसज्ञः सर्वज्ञः सर्वसत्त्वावलम्बनः १३१ इति सहस्रनाम स्तोत्रम्॥

सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो! इन हज़ार नामों से विष्णु भगवान् ने शिवजी की स्तुति की और भक्ति से

पूजाकर प्रतिनाम करके कमलपुष्प चढ़ाने लगे इसी अवसरमें शिवजी ने उनकी भक्तिपरीक्षा के लिये गिने हुये सहस्र कमलोंमें से एक कमल गुप्त करदिया विष्णु जीने भी सब कमल चढ़ायकर देखा तो एक कमल घट गया तब भगवान् ने कमलपुष्प न मिलने से अपना नेत्रकमल उत्पाटन कर शिवजी के अर्पण किया इस भांति विष्णु भगवान् का दृढ़ भाव देख कोटिसूर्य के समान देदीप्यमान जटा और मुकुट से मण्डित ज्वाला-माला करके चारों ओर व्याप्त तीक्ष्णदंष्ट्र, अतिभयङ्कर हाथोंमें त्रिशूल, परशु, गदा, चक्र, कुन्त, पाश, वर और अभय धारण किये व्याघ्रचर्म ओढ़े सब शरीरमें भस्म लगाये अग्निकुण्डसे श्रीशिवजी प्रकट भये यह अति भयानक रूप शिवजी का देख सब देवता भयभीत हो भगे और सब ब्रह्माण्ड कांप उठा और चारों ओर सौ सौ योजन तक शिवजी के अतिउग्र तेजसे सब देश दग्ध होगये और ऊपर नीचे हाहाकार मचगया विष्णु भगवान् भक्तिसे प्रणामकर हाथ जोड़ आगे खड़े भये शिवजी भी भगवान्को हाथ जोड़े खड़े देख हँसकर कहने लगे कि हे विष्णुजी! देवताओं का कार्य हम जानते हैं और आपने भी हमारा बहुत आराधन किया इसलिये हम आपको सुदर्शन चक्र देते हैं और हमने अति भयंकर रूप इस कारण आपको दिखाया कि सुदर्शनचक्र भी ऐसा ही शत्रुओं को भय देनेहारा होगा जो हम सौम्य-रूपसे आपको सुदर्शनचक्र देते तो वह भी सौम्य हो जाता और देवताओंका कुछ कार्य सिद्ध न करता। शान्त

पुरुष को तपस्वी के साथ युद्ध करने के समय शान्त ही आयुध है परन्तु शत्रु के साथ युद्ध करने के अवसर शान्ति करने से अपने बल की हानि और उसके बल की वृद्धि होतीहै इसकारण युद्ध में शान्त न होना चाहिये हमारे इस रूप का ध्यान करते हुये युद्ध करो तो विना आयुध भी जय पाओ इतना कह हजारों सूर्यों के तुल्य प्रकाशमान सुदर्शनचक्र शिवजी ने विष्णु भगवान् को दिया और कमलके समान अति सुन्दर नेत्र भी दिये उसी दिनसे भगवान् का नाम पुण्डरीकाक्ष भया और भगवान् के ऊपर प्रेम से हाथ फेरकर शिवजी ने कहा कि तुमने अपनी दृढ़ भक्ति से हमको वश कर लिया और जो कुछ वर तुम चाहो वह मांगो यह परमेश्वरका वचन सुन विनय से भगवान् ने प्रार्थना की कि महाराज आपमें दृढ़भक्ति हो यही वर चाहताहूं यह सुन शिवजी ने उनको अपने में दृढ़ श्रद्धा दी और कहा कि हे विष्णुजी! हमारे प्रसादसे आप सब देवता और दैत्यों के पूज्य होगे जब दक्षकी पुत्री सती अपने माता पिता से क्रोधकर शरीर त्याग हिमालयके घरमें उत्पन्न होगी उस अपनी भगिनी को तुम ब्रह्माजी की आज्ञा से हमको विवाह दोगे उस दिनसे हमारे संबन्धी और जगत्पूज्य होजाओगे और हमको भी अपना मित्र समझोगे इतना कह शिवजी अन्तर्धान भये और भगवान् भी सुदर्शनचक्र पाय प्रसन्न होते हुये देवताओं के समीप गये और वहां जाय ब्रह्माजी से यह कहा कि इस हमारे किये हुये सहस्रनाम स्तोत्रको जो पढ़े सुने

अथवा उत्तम ब्राह्मणों को श्रवण करावे वह प्रतिनाम में सुवर्णदान का फल पावे और हज़ार अश्वमेध के फल को भी प्राप्त हो जो घृतसे भरे कलशों करके इस सहस्र नाम को पढ़ता हुआ शिवलिङ्ग को स्नान करावे वह भी हज़ार अश्वमेध के फलको पाय शिवजी का परम प्रिय और देवताओं में पूज्य होवे यह विष्णुजी का वचन सुन ब्रह्माजीने कहा कि ऐसाही होगा इतना कह शिवजी को प्रणामकर दोनों अपने अपने धामको गये सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो! इस सहस्रनाम से जो शिवजी की पूजा करे और सहस्रनामका ही निरन्तर जप किया करे वह परमगति को प्राप्त होता है इसमें कुछ सन्देह नहीं है॥

निन्नानबे अध्याय॥

शौनकादि ऋषि पूछते हैं कि हे सूतजी! देवी के संभव का आपने सूचनमात्र किया अब हम यह सुनना चाहते हैं कि सती भगवती ने क्योंकर शरीर त्याग किया, मेना के गर्भ में किस प्रकार जन्म लिया और विष्णुजी ने पार्वतीजी को शिवजी के प्रति किस भांति समर्पण किया और दक्षके यज्ञका विध्वंस क्योंकर भया यह सब आप विस्तारसे वर्णन करें यह मुनियोंका वचन सुन सब पौराणिकों में उत्तम सूतजी बोले कि हे मुनीश्वरो! यह सब कथा ब्रह्माजी ने सनत्कुमार जी से कही सनत्कुमारजी ने श्रीवेदव्यासजी को सुनाई और श्री वेदव्यासजी से हमने पाई वह कथा हम आपको विस्तार

से श्रवण कराते हैं भगरूप वह देवी लिङ्गमूर्ति सदा शिवकी प्रकृति है लिङ्ग भी सदा भययुक्त है इन दोनों से जगत्की उत्पत्ति है लिङ्गमूर्ति स्वयंप्रकाश सदाशिव तमोगुणसे परे स्थित है जलहरी के संयोगसे शिवलिङ्ग अर्धनारीश्वर होते हैं प्रथम अर्धनारीश्वर भगवान् ने ब्रह्माजी को उत्पन्न किया और उनको ज्ञानका उपदेश दिया ब्रह्माजी भी अर्धनारीश्वर प्रभुको देख और उन सेही अपने को उत्पन्न भया जान स्तुति करते भये और बारम्बार प्रणाम कर यह प्रार्थना की कि महाराज आप अपने स्त्री पुरुष रूपका विभाग करें यह ब्रह्माजीकी प्रार्थना सुन परमेश्वरने अपने वामभाग से श्रद्धा नामक पत्नी उत्पन्न की वह शिवजीकी प्रथम भार्या भई और शिवजी कि आज्ञासेही सती नामक दक्षकी पुत्री भई और शिवजी को व्याही गई कुछ कालके अनन्तर अपने पिता दक्ष की निन्दा कर शरीर त्याग हिमालयकी स्त्री मेनाके गर्भ से उत्पन्न भई नारद के शाप से अभिमानी दक्ष प्रजापति यज्ञ में शिवजीकी निन्दा करने लगा सती भगवती अपने पिता के मुख से शिवनिन्दा सुन योगमार्ग से अपना शरीर दग्धकर हिमालय के तपसे प्रसन्न हो उसी के घर में उत्पन्न भई शिवजी भी सतीको दग्ध भई जान और दधीचि का शाप मान दक्षयज्ञ को नष्ट करते भये च्यवन के पुत्र दधीचिने शिवजी के अनुग्रह से विष्णुजी को जीत उनको और सब देवताओं को शाप दिया कि तुम सब शिवजी की क्रोधाग्निमें दग्ध होगे॥

सौवां अध्याय॥

शौनक आदि ऋषि पूछते हैं कि हे सूतजी! दधीचि के शापसे दक्षके यज्ञमें शिवजीने क्योंकर विष्णुसहित देवताओं को दग्ध किया यह आप वर्णन कीजिये यह मुनियोंका वचन सुन सूतजी कहनेलगे कि हे मुनीश्वरो! दक्षके यज्ञ में जो देवता और मुनि थे सबको शिवजीने दग्ध किया सतीके वियोगसे खिन्न हो दक्षका यज्ञ नाश करने की आज्ञा शिवजी ने वीरभद्र को दी वीरभद्र भी शिवजीकी आज्ञा पाय अपने रोमोंसे करोड़ों गण उत्पन्न कर सबको साथले रथपर बैठ ब्रह्माजीको सारथि बनाय दक्षके यज्ञको जातेभये और सब गण भांति भांति के शस्त्र हाथों में ले विमानों पर चढ़ भूमिको कँपाते हुये उनके आगे पीछे चले हिमालयपर्वत में हरिद्वारके समीप कन-खलनाम तीर्थ में दक्षका यज्ञ होरहा था वीरभद्र की यात्रा के समय अति प्रचण्ड पवन चला जिससे वृक्ष उड़ने लगे भूमि कांपनेलगी पर्वतों के शिखर टूट टूट गिरने लगे समुद्रका जल अतिक्षोभ को प्राप्त भया सूर्य, ग्रह, नक्षत्र सब निस्तेज होगये अग्नि प्रज्वलित न होते भये इसभांति अनेक दारुण उत्पात भये वीरभद्र ने भी दक्षके यज्ञवाटमें जाय दक्षसे कहा कि सब देवता और मुनियोंसहित तेरा नाश करने को मुझे शिवजीने भेजा है इतना कह यज्ञशाला में आग लगवादी और सब गण क्रोधकर यूप अर्थात् यज्ञस्तम्भों को उखाड़ उखाड़ अग्नि में पटकनेलगे और होता, प्रस्तोता,

अध्वर्यु, ऋत्विज् आदिकों को गणोंने उठाय उठाय गङ्गाके प्रवाहमें फेंकदिया इन्द्रने वज्र उठाया तब वीर-भद्रने इन्द्रकी भुजा स्तम्भन कर दी भगनाम आदित्य के नेत्र अपने नखों से उखाड़ लिये मूका मार पूषाके दांत गिरादिये पादांगुष्ठसे चन्द्रमा को मार गिराया वीर-भद्रजीने फिर क्रोधकर इन्द्रका शिर काट लिया अग्निके दोनों हाथ छेदनकर जिह्वा भी खैंचली यमका दण्ड छीन माथेमें खात मारी ईशाननाम दिक्पालको त्रिशूल से भेदन करदिया इसभांति देवताओं का संहारकर मुनियों को सम्हाला उस अवसर में जो देवता अथवा मुनि सम्मुख आया उसीके खड्गसे दो खण्ड करदिये तब विष्णु भगवान् युद्ध करने को उठे वीरभद्र का और भगवान्का अति दारुण युद्ध होने लगा जिसमें तीन लोक कांप उठे और विष्णु भगवान् ने अपनी मायासे शङ्ख, चक्र, गदा, पद्म धारे हजारों नारायण उत्पन्न किये वे सब वीरभद्रके साथ युद्ध करनेलगे वीरभद्रने भी उन सब नारायणों को शस्त्रोंसे हटाय एक गदा का प्रहार विष्णु भगवान् की छातीमें ऐसा किया कि मूर्च्छित हो भूमिपर गिरे और थोड़ेही कालमें सम्हल कर उठे और अतिक्रोध कर वीरभद्र के मारने को सुदर्शनचक्र उठाया परन्तु वीरभद्र ने चक्रसहित उनकी भुजा को स्तम्भन करदिया और तीन बाणोंसे शार्ङ्गनामक विष्णु का धनुष काटदिया और अतितीक्ष्ण एक बाणसे विष्णु भगवान्का मस्तक छेदन करदिया और उस मस्तकको अपने मुखपवन से उड़ाकर आहवनीय नाम अग्नि-

कुण्ड में गेरा इसभांति क्षणमात्र में सब यज्ञशाला दग्ध करदी कलश फोड़ दिये यूप उखाड़ डाले और यज्ञ के सब सभासद मारदिये तब यज्ञभी भयभीत हो मृगका रूप धारकर आकाशकी ओर भगा परन्तु वीरभद्रने एक बाणसे उसका भी शिर उड़ादिया। धर्म, प्रजापति, कश्यप बहुत पुत्रों करके युक्त अरिष्टनेमि, अङ्गिरामुनि, कृशाश्व और जो जो इधर उधर भागते हुये देखपड़े सबके मस्तकों में पाद से ताड़न कर गिराया सरस्वती और देवमाता की नासिका अपने तीक्ष्ण नखों से उखाड़ ली और दक्षप्रजापति का शिर काटकर अग्निमें दग्ध कर दिया इस प्रकार क्षणभर में उस दक्ष के यज्ञवाट को श्मशानके तुल्य करदिया और अतिक्रोध से गर्जने लगे तब हाथ जोड़ ब्रह्माजी प्रार्थना करनेलगे कि हे वीरभद्रजी! आपने सब यज्ञ का नाश किया देवता और मुनि मारदिये अब आप क्रोधको शान्त करें अपने गणों को भी रोकें यह ब्रह्माजी का वचन सुन वीरभद्र शान्त भये और अपने सब गणों को भी चारों ओर से बुला लिया इस अवसर में नन्दी आदि गणों को साथ ले श्रीमहादेवजी भी वहां आये उनको देख ब्रह्माजी ने बहुत स्तुति की और शिवजी को प्रसन्न जान यज्ञ में मारे गये देवता और मुनियोंको फिरभी जीवदान मिलनेके लिये प्रार्थना की श्रीब्रह्माजीकी प्रार्थना सुन श्रीमहादेवजी ने जो जो यज्ञमें मारेगये और जिनके अङ्ग भङ्ग होगये थे सबको पहिले की भांति करदिया और जीवदान दिया सरस्वती और देवमाता की नासिका ठीक करदी

इन्द्र, विष्णु और दक्षका शिर लगादिया परन्तु दक्षका पूर्व शिर अग्नि में दग्ध होगया था इस कारण यज्ञ के पशुका मस्तक काट दक्षके लगाया दक्षभी फिर जीवदान पाय हाथ जोड़ शिवजी की स्तुति करनेलगा उसकी स्तुतिसे प्रसन्न हो शिवजी ने दक्षको अपना गण बनाया और भांति भांतिके वर दिये नारायण, ब्रह्मा, इन्द्र आदि सब देवता और मुनि परमेश्वरकी स्तुति करने लगे शिवजी भी प्रसन्न हो उनसबको अभीष्ट वर देकर अन्तर्धान भये और देवता भी अपने अपने धामोंको गये॥

एकसौ एक अध्याय॥

ऋषि पूछते हैं कि हे सूतजी! सती भगवती हिमालय की पुत्री किस भांति भईं और शिवजी को क्योंकर ब्याही गईं यह आप कहें यह मुनियों का प्रश्न सुन सूतजी कहते भये कि हे मुनीश्वरो! हिमालय ने बहुत तप किया तब प्रसन्न हो भगवती ने उसके घर जन्म लिया हिमालय ने भी प्रसन्नता से सब जातकर्म आदि संस्कार अपनी पुत्री के किये भगवती भी अपनी दो छोटी भगिनियोंसमेत बारह वर्ष की अवस्था में तप करने लगीं भगवती का उग्रतप देख बड़े बड़े ऋषिभी स्तुति करतेथे इन तीनों बहिनोंमें बड़ी का नाम पार्वती अथवा अपर्णाथा दूसरी का नाम एकपर्णा और तीसरी का नाम एकपाटला था पार्वतीजी ने ऐसा तप किया कि शिवजी उनके वश भये इसी अवसर में तार नामक दैत्य बड़ा प्रतापी भया जिसका पुत्र तारक और पौत्र

तारकाक्ष, विद्युन्माली और कमलाक्ष ये तीन थे तारकने बड़े घोर तपसे ब्रह्माजी को प्रसन्न कर बहुत पराक्रम पाया और त्रैलोक्य को जीत विष्णु भगवान् को जीतने गया विष्णु भगवान् के साथ दिव्य हज़ार वर्षतक दिन रात तारक ने युद्ध किया अन्तमें झुँझलाय रथसहित विष्णु भगवान् को उठाय सौ योजन पर फेंक दिया विष्णु भगवान् भी हारमान अन्तर्धान भये और तारक भी इन्द्र आदि सब देवताओं को जीत ब्रह्माजी के अनुग्रह से तीनलोक का स्वामी बनगया देवता सब स्थानसे भ्रष्ट होगये तब इन्द्र ने बृहस्पतिसे कहा कि महाराज तारके पुत्र तारक ने हम सबको युद्धमें जीत लिया और स्थान छीन लिये सब देवता स्थानच्युत होने से घबराय रहे हैं हमारे सब शस्त्र उस दुष्ट दैत्यके प्रभाव से कुण्ठित होगये उसने हज़ारों वर्ष विष्णु भगवान् से युद्ध किया परन्तु जयही पाया उसके आगे हम सरीखे तो खड़े भी नहीं होसक्के युद्ध की तो कथाही दूर है बृहस्पति यह दीन वचन इन्द्र का सुन सब देवता और इन्द्र को साथ ले ब्रह्माजीके समीप गये और अपना सब कष्ट ब्रह्माजी को सुनाया ब्रह्माजी ने उनकी प्रार्थना सुन कहा कि हे देवताओ ! तुम्हारा सब दुःख हमको विदित है इसकी निवृत्ति का उपाय हम कहते हैं दक्ष की अवज्ञासे सती भगवती ने अपने शरीरका त्याग किया और हिमालय के घरमें जन्म लिया है अब ऐसा उपाय करो कि जिस से [illegible]लय की पुत्री श्रीपार्वतीजी के रूप से शिवजी [illegible] का आकर्षण हो उनके संयोग से जो पुत्र

उत्पन्न होगा वह सब देवसेना का स्वामी और तारका-
सुर का संहार करनेहारा होगा इतना ब्रह्माजी का वचन
सुन सब देवताओंसहित इन्द्र ब्रह्माजी को प्रणाम कर
मेरुपर्वत को जाते भये वहां जाय कामदेव का स्मरण
किया स्मरण करतेही अपनी पत्नी रति को साथ लिये
कामदेव आय पहुँचे और इन्द्र को तथा बृहस्पति को
प्रणाम कर कहा कि किस निमित्त हमारा स्मरण किया
शीघ्र आज्ञा दीजिये यह कामदेव का वचन सुन बृह-
स्पति बोले कि हे कामदेव! ऐसा उपाय करो कि जिस
में शिवजी से पार्वती का समागम होजाय तब हमारा
कार्य सिद्ध हो और शिवजी भी बहुत दिन के वियोग
में पार्वती को पाय प्रसन्न होंगे और तुमको उत्तम वर
देंगे यह कामदेव बृहस्पति का वचन सुन उनको तथा
इन्द्र को प्रणाम कर रतिसहित शिवजी के आश्रम को
जाता भया वहां जाय वसन्त को सहाय पाय शिवजी से
पार्वतीजी के समागम होने का विचार करने लगा इस
अवसर में शिवजी ने उसका अभिप्राय जान क्रोधकर
अपने तृतीय नेत्र से उसको देखा देखतेही कामदेव
भस्म की ढेरी भया और रति विलाप करनेलगी रति
का अतिकरुणा विलाप सुन शिवजी के हृदय में दया
आई और कहा कि हे रति! यह तेरा पति शरीर विना
ही सबके देह में निवास करेगा और जब भृगु के शाप
से विष्णुजी वसुदेव के पुत्र होंगे तब उनका पुत्र प्रद्युम्न
नाम तेरा पति कामदेव होगा और तबहीं तुझसे उस
का समागम होगा इतना शिवजी का वचन सुन कुछ

चित्तमें धैर्य कर अपने पतिके मित्र वसन्त को साथ ले रति निजधाम को गई ॥

एकसौ दो अध्याय ॥

सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो! पार्वतीजी के उग्र-तप से प्रसन्न हो ब्रह्माजी का वचन मान आश्रमोंके हित के अर्थ शिवजी ने पार्वतीजी से विवाह किया मरीचि आदि ऋषियोंको साथले ब्रह्माजी पार्वतीजी के तपोवन में गये और वहां जाय पार्वतीजी की प्रदक्षिणा कर शिर नवाय हाथ जोड़ ब्रह्माजी कहने लगे कि हे पार्वति! इस उग्रतप से लोक को क्यों सन्ताप देती हो यह जगत् आपने ही उत्पन्न किया है इस कारण इसकी रक्षा करना ही आपको उचित है और हे माता! जिनके हम सब किङ्करहैं वे शङ्कर आपही आय तुमको वरेंगे तुम्हारे विना शिव नहीं रहसके इतना कह पार्वतीजी को प्रणाम कर ब्रह्माजी तो अपने लोक को गये और ब्राह्मण का रूप धार श्रीमहादेवजी अनुग्रह करने के अर्थ पार्वतीजी के आश्रम में आये पार्वतीजी ने भी अपने तपोबलसे और अनुमान से जाना कि ब्राह्मण का रूप धारे ये शिवजी महाराजही हैं यह मनमें निश्चयकर विधिपूर्वक उनकी पूजा करी और हाथ जोड़ भक्तिसे स्तुति भी करी शिवजी भी प्रसन्न हो हँसकर कहने लगे कि हे पार्वति! तेरे तप से हम बहुत प्रसन्न हैं हिमालयके घर आय शीघ्र तुम से विवाह करेंगे क्योंकि मर्यादाका भङ्ग न करना चाहिये इतना कह अन्तर्धान भये और पार्वती भी अपना

अभीष्ट वर पाय पिताके घरको आई मेना और हिमाचल भी पार्वती को देख बहुत प्रसन्न भये और उनके तपकी प्रशंसा करने लगे हिमालय को यह विदित न था कि पार्वतीजी के ऊपर शिवजी का अनुग्रह होगया है इस लिये कुछ दिन के अनन्तर पार्वतीजी का स्वयंवर ठहराया और सब देवताओं को निमन्त्रण भेज बुलवाया हिमालय के निमन्त्रण से ब्रह्मा, विष्णु, इन्द्र, अग्नि, भास्कर, भग, त्वष्टा, अर्यमा, विवस्वान्, यम, वरुण, वायु, सोम, ईशान, ग्यारहरुद्र, सब मुनि, अश्वनीकुमार, आदित्य, गन्धर्व, गरुड़, यक्ष, सिद्ध, साध्य, दैत्य, किंपुरुष, नाग, समुद्र, नद, वेद, मन्त्र, स्तोत्र, क्षण, सर्प, पर्वत, यज्ञ, सूर्य आदि ग्रह और तैंतीसहज़ार तैंतीस सौ तैंतीस देवता पार्वती के स्वयंवर में इकट्ठे भये इस अवसर में रत्नजटित सुवर्ण के विमान पर पार्वतीजी भी आरूढ़ भईं मालिनी नाम सखीने उनके ऊपर पूर्णचन्द्रके तुल्य छत्र धारण किया विजयाने सूर्यमुखी पंखा लिया दो सखी दोनोंओर चामर हाथों में लेकर खड़ी भईं और अप्सरा नृत्य करने लगीं गन्धर्व, सिद्ध, चारण, वन्दी आदि स्तुति पढ़नेलगे जया नाम भगवतीकी सखी कल्पवृक्ष के पुष्पोंसे बनीहुई स्वयंवरमाला को लिये स्थित थी इस अवसर में शिवजी बालक का रूप धार पार्वतीजीके अङ्क अर्थात् गोदमें आय बैठे उनको देख सब देवता बड़े कुपित भये कि यह कौन मूढ़ बालक है जो इस समय पार्वतीजी की गोद में आय बैठा क्रोध कर इन्द्रने वज्र उठाया परन्तु बालकरूप शिवजी ने

अपनी दृष्टिसे ही उसकी भुजा स्तम्भन करदी तब अग्नि ने शक्ति, यमने दण्ड, निर्ऋतिने खड्ग, वरुण ने नागपाश, वायुने ध्वजा, ईशानने त्रिशूल और कुबेरने गदाको शिवजी पर चलाना चाहा परन्तु इन्द्रकी भांति सब जड़ होगये तब रुद्रोंने शूल, आदित्योंने मूसल, अष्टवसुओं ने शिवजी के ऊपर मुद्गर उठाये इन सबको भी दृष्टिमात्र से शिवजी ने कुण्ठित किया तब शिर हिलाते हुये चक्र लेकर विष्णुभगवान् उठे उनका मस्तक और चक्रसहित भुजा उठतेही ऐसे जड़भये कि किसी भांति न हिले पूषा ने क्रोधसे दांत कटकटाय उस बालक की ओर देखा इससे उसके दांत गिरगये इस भांति सब देवता बल और तेजके नष्टहोने से भीतरही भीतर क्रोधकी अग्निकरके दग्धहोनेलगे तब ब्रह्माजी ने देवताओं की यह दशादेख उद्विग्नहो देवताओं के पराभव का कारण जानने के अर्थ ध्यान किया तो जाना कि ये साक्षात् सदाशिवही बालकरूप धार पार्वती के उत्सङ्ग में आय बैठे हैं इनके आगे देवताओं का पराक्रम क्योंकर चल सके यह मनमें विचार अति शीघ्रता से उठ बालकरूप शिवजी के चरणों पर ब्रह्माजी ने प्रणाम किया और भक्तिसे हाथजोड़ स्तुति करने लगे ॥

ब्रह्मोवाच ॥ स्रष्टा त्वं सर्वलोकानाम्प्रकृतेश्च प्रवर्तकः । बुद्धिस्त्वं सर्वलोकानामहंकारस्त्वमीश्वरः १ भूतानामिन्द्रियाणाञ्च त्वमेवेश प्रवर्तकः । तवाहं दक्षिणाद्धस्तात्सृष्टः पूर्वम्पुरातनः २ वामहस्तान्महाबाहो देवो नारायणः प्रभुः । इयं च प्रकृतिर्देवी सदा ते सृष्टिकारणा ३ पत्नी-

रूपं समास्थाय जगत्कारणमागता। नमस्तुभ्यम्महादेव महादेव्यै नमोनमः ४ प्रसादात्तव देवेश नियोगाच्च मयाप्रजाः। देवाद्यास्तु इमाः सृष्टा मूढास्त्वद्योगमोहिताः ५ कुरु प्रसादमेतेषां यथापूर्वं भवन्त्विमे ६॥

सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो! इसप्रकार शिवजी की स्तुतिकर ब्रह्माजी ने देवताओं से कहा कि हे मूढ़ो! तुम नहीं जानते कि बालक का रूप धारे ये साक्षात् सदाशिवही हैं अब इनकी ही शरण में जाओ जिससे तुम्हारा कल्याण होवे यह सुन सब देवता शिवजी को बारम्बार प्रणाम करने लगे तब शिवजी ने प्रसन्न हो ब्रह्माजी के कथन से उनका अपराध क्षमा किया और पहिले की भांति सब के अङ्ग करदिये और आप भी अपना तीन नेत्रों करके युक्त निज रूप धारण किया उनके तेज से ब्रह्मा, विष्णु, इन्द्र, चन्द्र, सूर्य, सिद्ध, साध्य, यम, रुद्र आदि सब देवताओं की दृष्टि हत हो गई इसकारण सबने शिवजी से यही प्रार्थना करी कि महाराज! हमको आप दिव्यदृष्टि दीजिये जिससे आप के स्वरूप का हमको यथार्थ ज्ञान हो यह देवताओं की बिनती सुन शिवजी ने सब देवताओं को और हिमालय को दिव्यदृष्टि दी तब सब ब्रह्मा आदि देवता हिमालय और पार्वतीजी भक्ति से शिवजी को प्रणाम करते भये सुनि स्तुति करने लगे सिद्ध चारण आदिकों ने पुष्पदृष्टि करी इस अवसर में सब देवताओं के सम्मुख पार्वतीजी ने स्वयंवरमाला लेकर शिवजी के चरण कमलों में रखदी यह देख सब देवता बहुत प्रसन्न भये

और पार्वतीजी की प्रशंसा करने लगे और ब्रह्मा आदि सब देवता पार्वतीसहित शिवजी के चरणों में शिर नवाय स्तुति करते भये ॥

एकसौ तीन अध्याय ॥

सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो! ब्रह्माजीने हाथजोड़ श्री महादेवजी से प्रार्थना करी कि महाराज! अब आप विवाह कीजिये यह सुन शिवजी ने ब्रह्माजी से कहा कि बहुत अच्छा आप सब विवाह की सामग्री इकट्ठी करें हम विवाह करेंगे यह शिवजी की आज्ञा पाय एक रत्न-मय बहुत उत्तम पुर बनाया और दिति, अदिति, दनु, कद्रु, कालिका, पुलोमा, सुरसा, सिंहिका, विनता, सिद्धि, माया, क्रिया, दुर्गा, सुधा, स्वाहा, सावित्री, गायत्री, रजनी, दक्षिणा, द्युति, बुद्धि, ऋद्धि, वृद्धि, सरस्वती, राका, कुहू, सिनीवाली, अनुमती, धरणी, धारणी, इला, शची, नारायणी आदि सब देवमाता और देवाङ्गना शिवजी के विवाह का उत्सव सुन अति हर्ष से वहां आईं नाग, यक्ष, गन्धर्व, गरुड़, किन्नरगण, समुद्र, पर्वत, संवत्सर, मास, ऋतु, वेद, मन्त्र, यज्ञ, धर्म, प्रणव और अनेक द्वारपाल शिवजी के विवाह में आये एक करोड़ अप्सरा और कई करोड़ उनकी दासी तथा सब द्वीपोंमें जितनी नदियां थीं वे नारी रूप धार धार बड़ी प्रसन्नता से वहां आईं शुक्लवर्ण करोड़ों गण शिवजी के विवाहो-त्सवमें आये दश करोड़ गण साथ ले करके कराक्षनाम मुख्य गण आया आठ करोड़ के साथ विद्युत् चौंसठ

करके विशाख नव करके पारियात्र छह करोड़ों के साथ सर्वान्तक और विकृतानन बारह करोड़ करके ज्वालाकेश सात करके समद आठ करके दुन्दुभि पांच करके कपाली छह करके सन्दारक कोटि कोटि करके कण्डक और कुम्भक आठ करके विष्टम्भ हजार कोटि करके युक्त पिप्पल और सन्नाद आठ करके आवेष्टन सात करके चन्द्रतापन हज़ार कोटि करके युक्त महाकेश बारह कोटि करके कुण्डी और पर्वतक सौ सौ कोटि करके काल, कालक, महाकाल और अग्निक एक एक कोटि करके अग्निमुख आदित्य मूर्धा और घनावह कोटि कोटि करके सन्नाम कुमुद अमोघ और कोकिल साठ कोटि करके काकपाद और सन्तानक नव कोटि करके महाबल मधुपिङ्ग और पिङ्गल नब्बे कोटि करके नील और पूर्णभद्र सत्तर कोटि करके चतुर्वक्त्र और कई करोड़ गणों करके युक्त रुद्र शिवजी के विवाह में आये सहस्र कोटि भूत और चौंसठ कोटि रोमज गणों करके युक्त श्रीवीरभद्र आये तीस कोटि करके करण नब्बे कोटि करके पञ्चाक्ष शतमन्यु और काष्ठकूर चौंसठ कोटि करके सुकेश वृषभ और विरूपाक्ष और चौंसठ चौंसठ करोड़ गणों करके सहित तालकेतु षडास्य, पञ्चास्य, सनातन, संवर्तक, चैत्र, लकुलीश, दीप्तास्य, लोकान्तक, दैत्यान्तक, मृत्यु, हृत, जय, कालहा, काल, विषाद, विषद, विद्युत, कान्तक, असनि, भासक और शिवजी के अति प्रिय भृङ्गी रिटि आये इस भांति और भी असंख्यातगण स्वर्ग पाताल आदि सब लोकों के निवासी बड़े पराक्रमी सब

हज़ार हज़ार भुजाओं करके युक्त जटा, मुकुट, हार, कुण्डल, केयूर आदि भूषणों से भूषित मस्तकपर चन्द्र-कला धारे सब नीलकण्ठ और त्रिलोचन कोटि सूर्यों के समान प्रकाशमान अणिमा आदि सिद्धियों करके युक्त ब्रह्मा, विष्णु और इन्द्रके तुल्य जिनका प्रताप सब शिवजी के विवाह में इकट्ठे भये तुम्बुरु, नारद, हाहा, हूहू आदि गन्धर्व अनेक भांति के बाजे लेलेकर वहां आये और बड़े बड़े ऋषि भी शिवजी के विवाह में आय वेदमन्त्र पढ़नेलगे इसप्रकार बड़ा भारी समुदाय शिवजी के विवाह में एकत्र भया और चारों ओर नृत्य गीत होनेलगा इस अवसर में विष्णुजी सब भूषणोंसे भूषित कर पार्वतीजी को ब्रह्माजी के रचे नवीन नगर में लाये वहां ब्रह्माजी ने विष्णु भगवान् से कहा कि हे विष्णुजी! आप और भगवतीजी शिवजी के वाम अङ्ग से उत्पन्न भये और उनके दक्षिण अङ्ग से हमारी उत्पत्ति है यह हिमालय हमारा अंश है और यज्ञ के लिये उत्पन्न किया है फिर शिवजी की मायासेही भगवती हिमालय की कन्या भई और श्रौत, स्मार्त धर्म की प्रवृत्ति के अर्थ शिवजी विवाह करने आये हैं सब जगत् की आपकी और हमारी यह पार्वती माता हैं और शिवजी पिता हैं इस शिवजीकी मूर्तियोंसेही जगत् उत्पन्न भयाहै क्योंकि भूमि, जल, अग्नि, आकाश, पवन, सूर्य, चन्द्र ये सब शिवजीकी मूर्ति हैं यह पार्वती शुक्ल, कृष्ण, लोहित वर्णों से युक्त अजा अर्थात् माया है और तुम भी प्रकृतिरूप हो अब हमारे और हिमालय के वचनसे शिवजी के प्रति

पार्वतीजी को देना उचित है यह हिमालय के और आप के साथ शिवजी का बहुत उत्तम सम्बन्ध होगा पद्मकल्प में आपकी नाभिकमल से हम उत्पन्न भये हैं और हिमालय हमारा अंश है इसकारण हमारे और हिमालय के भी आप गुरु हैं सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो! यह ब्रह्माजीका वचन शिवजीने, विष्णुभगवान्ने और सब देवताओं ने स्वीकार किया और विष्णुभगवान् ने उठ कर शिवजी को प्रणाम किया और उनके चरण धोय उस चरणोदक को अपने, ब्रह्माजी के और हिमालय के मस्तक पर छिड़का और शिवजी से प्रार्थना की कि महाराज! यह पार्वती मेरी छोटी भगिनी है इसको आप ग्रहण करें यह कह हाथमें जल लेकर पार्वतीजी को संकल्पकर शिवजीके अर्पण किया और भक्तिसे अपने आत्माको भी शिवजी को निवेदन करदिया सब वेदार्थके पारगामी मुनि कहने लगे कि दान करनेहारा दान द्रव्य दान ग्रहण करनेवाला और दानका फल सब शिवही है इसकी माया से सब जगत् व्याप्त है इतना कह प्रीति से रोमाञ्चित हो शिवहीको बार बार प्रणाम करते भये आकाश में दुन्दुभि बजने लगे सिद्ध और चारणों ने पुष्पवर्षा की अप्सरा नाचने लगीं मूर्तिमान् चारों वेद शिवजी की स्तुतिमें प्रवृत्त भये लज्जायुक्त पार्वतीजीको देख शिवजी और शिवजी को प्रेम से देख देख पार्वतीजी मनही मन में प्रसन्न होतेथे इस अवसरमें शिवजीने विष्णुभगवान् से कहा कि हम बहुत प्रसन्न हैं वर मांगो तब विष्णुजी ने कहा कि महाराज! आपके चरणों में दृढ़भक्ति बनी रहे

यह वर चाहते हैं शिवजीने भी उनको अपनी दृढ़भक्ति दी और उनका दूसरा नाम ब्रह्माभी रक्खा इसी समय ब्रह्माजी ने शिवजी से प्रार्थना की कि हवन आदि सब विवाह की विधि करनी चाहिये जो आपकी आज्ञा हो तो हम हवन आदि कर्म करें क्योंकि हम आपके विवाह में आचार्य हैं यह ब्रह्माजी की प्रार्थना सुन शिवजी ने कहा कि हे ब्रह्माजी ! जो कुछ इस समय उचित हो वह आप कीजिये हम तो सब आपकाही कहा करेंगे यह शिवजी की आज्ञा पाय ब्रह्माजी ने शिवजी और पार्वतीजी का हाथ मिलाया और श्रौत, स्मार्त मन्त्रों करके मूर्तिमान् अग्नि में लाजाहोम कराय वर और वधू को अग्नि की तीन प्रदक्षिणा कराय दोनों के हाथ अलग अलग किये और विष्णुजीके लायेहुये ब्राह्मणों की विधिपूर्वक पूजाकी इसप्रकार विवाह कराय ब्रह्माजी ने शिवजी को प्रणाम किया और पाद्य, अर्घ्य, आच-मन, मधुपर्क आदि उपचारों से शिवजी का पूजन किया और इन्द्र आदि देवताओं सहित हाथ जोड़ स्तुति करने लगे भृगुआदि ऋषि और सूर्यआदि ग्रह अक्षत तिल तण्डुलों से शिवजी का पूजन करते भये विवाह होने के अनन्तर अग्निका विसर्जन किया हेमुनीश्वरो! लोकहित के अर्थ इस भांति शिवजी से पार्वतीजी का विवाह भया इस शिवविवाह की कथाको जो भक्तिसे सुने पढ़े अथवा वेद वेदाङ्गजाननेहारे शुद्ध ब्राह्मणोंको श्रवण करावे वह शिवजी का गण हो सदा शिवजी के समीप निवास करे जहां इसको पठनकरे वहां अवश्य शिवजी

आते हैं इस कारण हे मुनीश्वरो ! उत्तम स्थान में ही पठन करना चाहिये इस प्रकार शिवजी विवाह कर पार्वतीजी और नन्दी आदि गणों को साथले काशी में आय आनन्द से निवासकरते भये वहां पार्वतीजीने अवि-मुक्तक्षेत्र का माहात्म्य पूछा तब शिवजी कहने लगे कि हे प्रिये ! इस क्षेत्र का माहात्म्य कहां तक वर्णन करें जहां बड़े बड़े पापी मरनेसे ही मुक्ति पाते हैं परन्तु और स्थानों में किये पाप काशी में निवृत्त होते हैं और काशी में पाप करनेसे मनुष्य नरकवासकर पिशाच होताहै पर काशीमें पिशाच होकर रहनाभी स्वर्ग में इन्द्रवनके रहनेसे उत्तम है जिस क्षेत्रमें त्रिविष्टपेश्वर, विश्वेश्वर, ओंकारेश्वर, कृत्तिवासेश्वर आदि शिवलिङ्ग हैं वहां मुक्ति क्यों न होवे इसभांति संक्षेप से क्षेत्रमाहात्म्य कह सब गणोंको छोड़ पार्वतीजीको साथले आनन्दवन में विहार करने लगे वहां ही दैत्यों को विघ्न और देवताओंको अविघ्न देनेहारे श्री गणेशजी उत्पन्नभये हे मुनीश्वरो ! यह शिवविवाह की कथा जैसी हमने वेदव्यासजी से सुनीथी वैसेही आपको श्रवण करादी अब आप क्या सुनना चाहते हैं सो कहें॥

एकसौचार अध्याय॥

शौनक आदि ऋषि पूछते हैं कि हे सूतजी ! गणेश जीका जन्म किस प्रकार हुआ और गणेशजी का क्या प्रभावहै यह आप वर्णनकरें यह सुन सूतजी कहनेलगे कि हे मुनीश्वरो ! शिव पार्वती तो विहार करनेमें प्रवृत्त भये और देवताओंने परस्पर विचार किया कि दैत्य सब

यज्ञ तप आदि करके शिवजीको तथा ब्रह्माजीको प्रसन्न कर मन माना वर ले लेते हैं और सदा हमारा पराजय करते हैं इस कारण शिवजी से प्रार्थना करें कि दैत्यों के कर्मोंमें विघ्न और हमारे कर्मोंमें अविघ्न करनेके अर्थ तथा नारियोंको पुत्र देने के अर्थ और मनुष्यों के सब काम सिद्ध होने के लिये गणपति को उत्पन्न करें यह मन में ठान सब देवता शिवजीके समीप जाय स्तुति करनेलगे ॥

देवा ऊचुः ॥ नमः सर्वात्मने तुभ्यं सर्वज्ञाय पिनाकिने। अनघाय विरिञ्चाय दैत्याः कार्यार्थदायिने १ अकायाया-र्थकायाय हरेः कायापहारिणे। कायान्तःस्थामृताधार-मण्डलावस्थिताय ते २ कृतादिभेदकालाय कालवेगाय ते नमः। कालाग्निरुद्ररूपाय धर्माद्यष्टपदाय च ३ काली-विशुद्धदेहाय कालिकाकारणाय ते। कालकण्ठाय मुख्याय वाहनाय वराय ते ४ अम्बिकापतये तुभ्यं हिरण्यपतये नमः। हिरण्यरेतसे चैव नमः शर्वाय शूलिने ५ कपालद-ण्डपाशासिचर्माङ्कुशधराय च। पतये हैमवत्याश्च हेम शुक्लाय ते नमः ६ पीतशुक्लाय रक्षार्थं सुराणां कृष्णवर्त्मने। पञ्चमाय महापञ्चयाज्ञिनां फलदाय च ७ पञ्चास्य फणिहा-राय पञ्चाक्षरमयाय ते। पञ्चधा पञ्चकैवल्यदेवैरर्चित-मूर्तये ८ पञ्चाक्षरदृशे तुभ्यं परात्परतराय ते। षोडशस्वर-वज्राङ्गवक्त्रायाक्षयरूपिणे ९ कादिपञ्चकहस्ताय चादिह-स्ताय ते नमः। टादिपादाय रुद्राय तादिपादाय ते नमः १० पादिमेढ्राय याद्यङ्गधातुसप्तकधारिणे। शान्तात्मरूपिणे साक्षात्क्षदन्तक्रोधिने नमः ११ लवरेफहलाङ्गाय निरङ्गाय च ते नमः। सर्वेषामेव भूतानां हृदि निस्वनकारिणे १२

सुवोरन्ते सदासद्भिर्दृष्टायात्यन्तभानवे । भानुसोमाग्नि-नेत्राय परमात्मस्वरूपिणे १३ गुणत्रयोपरिस्थाय तीर्थ-पादाय ते नमः । तीर्थतत्त्वाय साराय तस्मादपि पराय ते १४ऋग्यजुःसामवेदाय ओङ्काराय नमोनमः । ओङ्कारे त्रिविधं रूपमास्थायोपरिवासिने १५ पीताय कृष्णव-र्णाय रक्तायात्यन्ततेजसे । स्थानपञ्चकसंस्थाय पञ्चधाण्ड-बहिःक्रमात् १६ ब्रह्मणे विष्णवे तुभ्यं कुमाराय नमो नमः । अम्बायाः परमेशाय सर्वोपरिचराय ते १७ मूल-सूक्ष्मस्वरूपाय स्थूलसूक्ष्माय ते नमः । सर्वसङ्कल्प-शून्याय सर्वस्माद्रक्षिताय ते १८ आदिमध्यान्तशू-न्याय चित्संस्थाय नमो नमः । यमाग्निवायुरुद्राम्बु-सोमशक्रनिशाचरैः १९ दिङ्मुखे दिङ्मुखे नित्यं सगणैः पूजिताय ते । सर्वेषु सर्वदा सर्वमार्गैः सम्पूजिताय ते २० रुद्राय रुद्रनीलाय कद्रुद्राय प्रचेतसे । महेश्वराय धीराय नमः साक्षाच्छिवाय ते २१ ॥

हे मुनीश्वरो! इसभांति स्तुति करके सब देवता कहने लगे कि हे नाथ! इस स्तुतिके व्याज (बहाने) से आपके चरित्रका वर्णन किया यह आप क्षमा करें इस स्तोत्रको जो पुरुष पढ़े सुने अथवा सुनावे वह परमधाम पावे ॥

एकसौ पांच अध्याय ॥

सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो! शिवजी भी इस प्रकार स्तुति सुनकर देवताओं को दर्शन देतेभये सब देवता शिवजी का दर्शन पाय अतिप्रसन्न भये और बारम्बार प्रणाम करनेलगे शिवजीने कहा कि जो अभीष्ट

वर हो वह मांगो हम प्रसन्न हैं तब सब देवताओं की ओरसे बृहस्पति कहनेलगे कि महाराज सब देवताओं के शत्रु दैत्य निर्विघ्न आपका आराधन करते हैं और आप भी उनपर शीघ्रही प्रसन्न होजाते हैं अब सब देवताओं की यही प्रार्थना है कि उनके कर्मों में विघ्न हुआ करे यह वर मिले देवताओं की इसप्रकार प्रार्थना सुन शिवजी ने पार्वतीजी के गर्भ से पुत्र उत्पन्न किया जिन का मुख हस्तीका सा था और हाथों में त्रिशूल, पाश धारण किये थे उनका जन्म होतेही पुष्पवृष्टि भई सब देवता और गण गणेशजीके चरणोंमें प्रणाम करनेलगे गजाननभी अपने माता पिताके आगे आनन्दसे नृत्य करनेलगे पार्वतीजीने अतिसुन्दर भूषण वस्त्रों से गजाननको भूषित किया और शिवजीने जातकर्म आदि सब संस्कार किये और गजाननको अपनी गोद में ले आलिङ्गन कर प्रेम से मस्तक सूंघ शिवजी कहने लगे कि हे पुत्र! दैत्यों के नाश के लिये देवता, ऋषि और ब्रह्मवेत्ता ब्राह्मणोंके उपकारके अर्थ तुम्हारा अवतार भया है भूमि पर जो दक्षिणाहीन यज्ञ करे उसके धर्ममें तुम विघ्न करो जो पुरुष अन्याय से अध्ययन, अध्यापन, व्याख्यान आदि कर्म करे उसके प्राण हरो पतित पुरुष, स्त्री और भी जो अपने धर्मसे च्युत हों उनके कर्मों में विघ्न करो हे विनायक! जो स्त्री पुरुष सदा भक्तिसे तुम्हारा पूजन करते रहें उनको अपने समान करो तुम्हारे भक्त बालक, युवा, वृद्ध कैसेही हों उनकी रक्षा करो सब जगत् में विघ्नों के स्वामी तुम पूज्य और वन्दनीय होगे जो पुरुष

हमारा, विष्णुजी का और ब्रह्माजी का यज्ञों से यजन करेंगे वे प्रथम तुम्हारा पूजन करलेंगे तुम्हारा पूजन किये विना श्रौत, स्मार्त में गलकृत्य जो पुरुष करेगा उसको वह अमङ्गलही होगा चारोंवर्ण सब सिद्धियों के अर्थ भक्ष्य, भोज्य आदि से तुम्हारी पूजा करेंगे गन्ध, पुष्प आदि से तुम्हारी पूजा विना किये देवताओं के भी कार्य सिद्ध न होंगे जो तुम्हारी पूजा करेंगे वे देवताओंके भी पूज्य होंगे हम, विष्णु, इन्द्र भी जो कार्यके आरम्भमें तुम्हारा पूजन न करें तो विघ्न करो इस भांति शिवजी ने गणेशजी को उत्पन्न कर सब विघ्नों का स्वामी किया और भांति भांति के वर दिये गणेशजी भी शिवजी को प्रणाम कर भक्ति से हाथ जोड़ उनके सम्मुख खड़े भये हे मुनीश्वरो! स्कन्दके ज्येष्ठ भ्राता गणपति की यह उत्पत्ति हमने वर्णन की जो पुरुष इसको भक्ति से पढ़े, सुने अथवा ब्राह्मणों को श्रवण करावे वह सुखी होवे॥

एकसौ छह अध्याय॥

शौनक आदि ऋषि पूछते हैं कि हे सूतजी! गजानन की उत्पत्ति हमने सुनी अब आप यह वर्णन करें कि शिवजीने नृत्य किस प्रकार किया और किस अर्थ किया यह मुनियों का प्रश्न सुन सूतजी बोले कि हे मुनीश्वरो! पूर्वकाल में बड़ा पराक्रमी दारुकनाम एक दैत्य भया उसने देवता और ऋषियों को अति पीड़ा दी उस दैत्यकी मृत्यु स्त्री के हाथ से थी इस कारण स्त्री रूप धार सब देवता उसके साथ युद्ध करनेलगे तो भी

न जीते तब सब व्याकुल हो शिवजी के शरणमें गये और शिवजी को बारम्बार प्रणाम कर दारुकदैत्य का उपद्रव सुनाया और कहा कि महाराज वह स्त्रीवध्य है इस कारण हमारा बल पौरुष उसके आगे नहीं चल सकता यह ब्रह्मा आदि देवताओं की प्रार्थना सुन शिवजी ने हँसकर पार्वतीजी से कहा कि हे प्रिये ! तुम देवताओं का कष्ट दूर करो यह शिवजी का वचन सुन पार्वतीजी अपने एक अंशसे शिवजी के शरीर में प्रवेश करती भई और दूसरे अंश से शिवजी के समीप स्थित रहीं शिवजी के समीप पार्वतीजी को पूर्ववत् बैठी देख यह बात ब्रह्मादिक देवताओंने भी न जानी कि पार्वतीजी ने शिवजी में प्रवेश किया है पार्वतीजी का जो अंश शिवजी के देहमें प्रविष्ट भया वह उनके कंठमें स्थित विषके प्रभाव से कृष्णवर्ण होगया शिवजी ने भी यह बात जान उस अंशको काली भगवती के रूप करके अपने तृतीय नेत्रसे उत्पन्न किया अति भयंकर रूप कृष्णवर्ण कंठ में विष धारण किये हाथमें त्रिशूल लिये मस्तक पर चन्द्र-कला धारे तीन नेत्रों से शोभित भांति भांति के सर्पों के भूषण पहिने श्रीकाली भगवती को देख सब देवता भयभीत हो भगे और काली भगवती के साथ अनेक देवी, सिद्ध, पिशाच आदि शिवजी के तृतीय नेत्र से उत्पन्न भये और काली भगवती ने शिवजी की आज्ञा पाय अतिशीघ्रता से दारुण दैत्यका संहार किया परन्तु काली भगवती के क्रोधरूप अग्नि से सब जगत् भस्म होनेलगा तब शिवजी भगवती का क्रोध पान करने के

अर्थ बालकरूप धार श्मशान अर्थात् काशी में रोदन करनेलगे भगवती ने भी शिवकी माया से मोहित हो उस बालकरूप शिवको गोद में ले अपना स्तन उसके मुखमें दिया उस बालकने भी स्तन के दुग्ध के साथ भगवती का सब क्रोध पान करलिया उसी क्रोध के पान से वह बालकरूप शिव क्षेत्रपाल भये क्षेत्रपाल की भी आठ मूर्तियां हैं। इसभांति शिवजी ने बालक रूप धार भगवती का क्रोध हरा और भगवतीकी प्रीति के लियेही शिवजी ने सन्ध्यासमय भूत प्रेतों को साथ ले ताण्डव किया शिवजी का उत्तम नृत्य देख अपनी योगिनियों सहित भगवती भी नृत्य करती भईं और ब्रह्मा, विष्णु, इन्द्र आदि देवता काली, भगवती, पार्वती और शिवजी को बारम्बार प्रणाम करते भये और हाथ जोड़ सब देवताओं ने भक्ति से स्तुति भी करी हे मुनीश्वरो! यह शिवजी के ताण्डव का वर्णन हमने संक्षेप से किया है परन्तु सनक आदि मुनि यह भी कहते हैं कि शिवजी का ताण्डव केवल आनन्दके अर्थ है और कुछ कारण नहीं है हे मुनीश्वरो! अब आप क्या श्रवण किया चाहते हैं सो कथन करें॥

एकसौ सात अध्याय॥

ऋषि पूछते हैं कि हे सूतजी! उपमन्यु को शिवजीने क्षीरसमुद्र किसभांति दिया और अपना गण कैसे बनाया यह आप हम को श्रवण करावें सूतजी कहने लगे कि हे मुनीश्वरो! इस प्रकार काली भगवती के अवतार

होनेके अनन्तर उपमन्यु ने शिवजीका आराधन किया और अपना अभीष्टफल पाया हे मुनीश्वरो! उपमन्यु नाम एक ब्राह्मणका बालक था उसने एकबार अपने मातुलके घरमें दूध पिया इससे दूधके स्वादको जानगया था फिर वह अपने मातुलपुत्रको एक दिन दूध पीते देख रोता हुआ अपनी माता के समीप आया और कहने लगा कि हे माता! मुझे भी गरम गरम गौका बहुतसा दुग्ध लादे मेरी बहुत इच्छाहै यह पुत्रका वचन सुन वह अपने दारिद्र्यको स्मरण कर रोने लगी और उपमन्यु भी दूधही दूध पुकारता था पुत्र को दूधके लिये अति रोदन करते देख उसकी माताने एकएक कण बीनकर कुछ अन्न इकट्ठाकर रक्खा था उसमें से थोड़ा सा पीसकर जलमें घोल उपमन्युको दिया और कहा कि हे पुत्र! ले यह दूध पीले यह माता का वचन सुन उपमन्यु बोला कि यह कृत्रिम दूध मैं नहीं पीता मैं दूधका स्वाद जानता हूं इतना कह रोने लगा तब उसकी माता व्याकुल हो उपमन्यु को गोद में ले उसके आंसू पोंछ कहने लगी कि हे पुत्र! स्वर्ग, पाताल, पृथ्वी आदि सब स्थानों में रत्नों के प्रवाह बहते हैं परन्तु भाग्यहीन पुरुषों को नहीं मिल सकते राज्य, स्वर्ग, मोक्ष और क्षीर आदि उत्तम भोजन और भांति भांति के पदार्थ शिवजी के अनुग्रह विना नहीं मिलसकते और देवों का आराधन करने-हारे पुरुष अनेक दुःख भोगते हैं केवल शिवाराधनसे ही सब दुःखों का नाश होता है हे पुत्र! हमने शिवका आराधन नहीं किया इसलिये हमको दुग्ध दुर्लभ है

पूर्वजन्म में शिवजी के निमित्त अथवा विष्णु भगवान् के निमित्त जो पदार्थ दिया हो वही दूसरे जन्म में मिलता है यह माता का वचन सुन उपमन्यु कहने लगा कि हे माता! शोक मतकर मैं उग्रतप करके शिव जीका आराधन कर क्षीरसमुद्रको अपने अधीन करूंगा इतना कह माता को प्रणाम कर तप करने के लिये प्रवृत्त भया उसकी माताने भी कहा कि हे पुत्र! उत्तम क्षेत्र में जाय भली भांति शिवजी का आराधन कर जिससे तेरे सब मनोरथ सिद्ध हों यह माता की आज्ञा पाय हिमालय पर्वत में जाय अन्न जलको त्याग केवल वायु भक्षण करता हुआ शिवजी की प्रसन्नता के लिये तप करने लगा थोड़ेही कालमें उसके अतिउग्र तप से सब जगत् सन्तप्त भया तब देवता विष्णुजीसे कहने लगे कि महाराज! सब जगत् व्याकुल होरहाहै इसका कारण नहीं जानते यह देवताओंका वचन सुन भगवान् ने विचार किया तो जाना कि उपमन्यु के उग्र तप का यह प्रभाव है यह जान सब देवताओं को साथ ले विष्णु भगवान् मन्दराचल में गये वहां जाय शिवजी को प्रणाम कर हाथ जोड़ कहने लगे कि महाराज! एक ब्राह्मण का बालक क्षीरसमुद्र के अर्थ तप कररहा है उसके दारुण तपसे सब जगत् व्याकुल है इसलिये आप उस बालक को तप से निवृत्त करें यह विष्णु भगवान्का वचन सुन शिवजी इन्द्रका रूप धार ऐरावत हस्ती पर चढ़ सब देवताओं को साथ ले उपमन्यु के आश्रम को जाते भये और सूर्य भगवान्ने उनके ऊपर

छत्र धारण किया उपमन्यु भी इन्द्र को देख प्रणामकर हाथ जोड़ कहनेलगा कि हे देवराज! आपने मेरे ऊपर बड़ा अनुग्रह किया आपके आगमन से यह मेरा आश्रम पवित्र भया यह उपमन्यु का वचन सुन इन्द्र रूप शिवजीने कहा कि हे मुनिबालक! तेरे तपसे हम प्रसन्न हैं जो तेरी इच्छा हो वह वर मांग यह सुन उपमन्युने कहा कि महाराज! शिवजी में दृढ़ भक्ति हो यही वर चाहताहूं यह सुन हँसकर इन्द्ररूप शिवजीने कहा कि हे उपमन्यु! सब देवताओं का राजा और त्रैलोक्यका स्वामी मैं हूं मुझको तू नहीं जानता अब तू मेरा भक्त होजा और निरन्तर मेराही यजनकर जिस से सब कल्याण होवें निर्गुण शिवसे क्या लेगा यह अति कठोर वचन सुन उपमन्यु बोला कि अरे इन्द्रका रूप धारे तू कोई दुष्ट दैत्य है और मेरे तप में विघ्न करने आया है तू शिवकी निन्दा करता है इसीसे मैं जानता हूं कि कोई असुर है इतना तो तूने ठीक कहा कि शिव निर्गुण हैं तेरे से शिवनिन्दा सुन मुझे भी बहुत पाप लगा इसलिये तुझे मारकर मैं भी अपना शरीर त्याग करूंगा जो पुरुष शिवनिन्दक को मार आपभी मररहे वह शिवलोक को जाता है और शिवनिन्दा करनेहारेकी जो जिह्वा उखाड़ ले तो इक्कीस कुलसहित मुक्ति पावे हे दुष्ट, दैत्य! अब मैं क्षीरसमुद्र की इच्छा छोड़ पहिले शिवास्त्र करके तुझे संहारकर अपना शरीर त्यागता हूं इतना कह भस्मकी मुष्टि अथर्वास्त्र से अभिमन्त्रण कर इन्द्ररूप शिवजीके ऊपर छोड़ी और अपना शरीर दग्ध

करनेके अर्थ आग्नेयीधारणा का ध्यान करनेलगा इस अवसर में भक्तवत्सल श्रीमहादेवजी ने सौम्यधारणा करके आग्नेयीधारणा निवृत्तकर उपमन्यु के शरीर की रक्षा की और नन्दी की प्रेरणा से चन्द्रक नाम गणने शिवजी के शरीर से अथर्वास्त्र को हरा और शिवजी ने अपना चन्द्रशेखर रूप उपमन्यु के आगे प्रकट किया उसी समय क्षीरसमुद्र, दधिसमुद्र, घृतसमुद्र और भांति भांति के भक्ष्य, भोज्य, अपूप, लड्डू आदि पदार्थों के पर्वत उपमन्युके चारों ओर होगये और हँसके अति दयालु श्रीशंकर ने उपमन्यु से कहा कि हे पुत्र! अपने बान्धवों सहित सब पदार्थों का यथेच्छ भोगकर हे उपमन्यु! यह पार्वती तेरी माता है और हमने तुझको अपना पुत्र बनाया और दूध, दही, घृत, शर्करा आदि पदार्थों के समुद्र तथा सब भांति के भक्ष्य भोज्यों के पर्वत तुझको हमने दिये और तुझे अमर कर अपना गण बनाया अब और भी जो वर तुझको अभीष्ट हो मांग इतना कह शिवजी ने उपमन्युको अपनी भुजाओं से उठाय आलिङ्गनकर उसका मस्तक सूंघ श्रीपार्वती की गोदमें दिया पार्वतीजी ने भी प्रसन्न हो ब्रह्मविद्या और योगैश्वर्य उसको दिया उपमन्यु भी शिवजी का पुत्र बन भांति भांति के वर पाय प्रेम और हर्ष से गद्गद वाणी हो शिवजी की स्तुति करता भया और स्तुति के अन्त में श्रीमहादेवजी से यह वर मांगता भया कि हे देवदेव! आपके चरणकमलमें दृढ़ श्रद्धा होवे और सदा आपका सान्निध्य बनारहे यह उपमन्युका वचन सुन

उसके सब मनोरथ पूरे कर पार्वती सहित श्रीसदाशिव अन्तर्धान भये हे मुनीश्वरो ! इस कथाको जो पढ़े अथवा सुने वह उपमन्युकी भांति शिवजीका कृपापात्र होवे और शिवगण होकर शिवलोक में वास करे ॥

एकसौआठ अध्याय ॥

शौनक आदि ऋषि पूछते हैं कि हे सूतजी ! हमने सुना है कि श्रीकृष्ण भगवान् ने धौम्य मुनिके ज्येष्ठ भ्राता उपमन्यु सेही पाशुपत व्रतकी दीक्षा ग्रहण की और दिव्य ज्ञान पाया यह आप हमको श्रवण करावें कि श्रीकृष्ण किस भांति उपमन्यु के शिष्य भये यह मुनियोंका प्रश्न सुन सूतजी कहनेलगे कि हे मुनीश्वरो ! अपनी इच्छासेही विष्णु भगवान् ने वसुदेवके घर जन्म लिया तौभी मनुष्यदेह की शुद्धिके अर्थ और पुत्रप्राप्ति के लिये श्रीकृष्ण भगवान् उपमन्युके आश्रम में तप करनेगये वहां जाय तीन प्रदक्षिणा कर उपमन्यु के चरणों पर भगवान् ने प्रणाम किया उपमन्यु के दर्शन सेही श्रीकृष्ण भगवान् के कायज और कर्मज सब मल नष्ट होगये उपमन्यु ने भी "अग्निरिति भस्म" इत्यादि मन्त्रों से भस्म को अभिमन्त्रण कर अपने सब देहमें लगाया और श्रीकृष्ण भगवान् को भी भस्मोद्धूलन कराय दिव्य पाशुपत ज्ञानका उपदेश किया भगवान् भी पाशुपत योग पाय उग्र तप करनेलगे और एक वर्ष के अन्तमें महादेवजी ने प्रसन्न हो उनको वर दिया जिससे भगवान् ने बड़ा पराक्रमी साम्ब नामक पुत्र पाया उसी

दिनसे पाशुपत दिव्य ज्ञान को जाननेहारे बड़े बड़े ऋषि और योगी श्रीकृष्ण भगवान् के समीप रहनेलगे हे मुनीश्वरो! जो आपने पूछा सो हमने कथन किया अब और भी एक मुक्ति का उपाय कहतेहैं कि जो पुरुष सुवर्णकी मेखला अर्थात् जलहरी, जलहरी रखने का आधार, दण्ड, सुवर्ण का लिङ्ग, छत्र, पङ्खा, लेखनीक्षुर अर्थात् चाकू, मषीभाजन अर्थात् दावात, कैंची और जलपात्र ये सब उपकरण सोने चांदी अथवा तांबेकेही बनवाय अपने चित्तके अनुसार पाशुपतयोगी को देवे वह सब पापों से मुक्त हो अपने कुलसहित शिवलोकमें निवास करता है इसमें कुछ सन्देह नहीं इस दान से गृहस्थ संसार बन्धन से मुक्त होता है योगियों को देने से शिवजी बहुत प्रसन्न होतेहैं इस कारण राज्य, पुत्र, धन, घोड़े, हाथी आदि वाहन अथवा सर्वस्वही दान करे जो मोक्षकी इच्छा रखता होवे तो इस अनित्य शरीर करके नित्य और संसारसागर के पार करनेहारा दिव्य पाशुपतज्ञान अवश्य साधन करना चाहिये हे मुनीश्वरो! यह सब शिवकथा हमने संक्षेप से वर्णनकी इसको जो पढ़े अथवा सुने वह विष्णुलोक में निवासकरे॥

पूर्वार्ध समाप्त॥

श्रीगणेशाय नमः ॥

श्रीलिङ्गपुराण भाषा

उत्तरार्ध ॥

पहिला अध्याय ॥

शौनक आदि ऋषि पूछतेहैं कि हे सूतजी! श्रीकृष्ण भगवान् किस कर्म करके प्रसन्न होते हैं यह आप हमसे कथन करें क्योंकि आप सब बातों में चतुर हो यह मुनियोंका प्रश्न सुन सूतजी बोले कि हे मुनीश्वरो! यही प्रश्न राजा अम्बरीषने मार्कण्डेय मुनि से किया था तब मार्कण्डेयने अम्बरीषको जो उत्तर दिया वह हम आप को श्रवण कराते हैं राजा अम्बरीष पूछतेहैं कि हे मार्कण्डेयजी! आप सब धर्मोंके पारगामी और पुराणों के रहस्यको जाननेहारे हो इसलिये कृपाकर यह कथन करो कि नारायणके रचे दिव्य धर्मोंमें परमेश्वर के भक्तों के लिये कौन धर्म उत्तम है सूतजी कहतेहैं कि हे मुनीश्वरो! यह राजा का प्रश्न सुन हाथ जोड़ नारायण को प्रणाम कर मार्कण्डेय मुनि कहनेलगे कि हे राजन्! नारायण का स्मरण, पूजन, भक्ति से प्रणाम ये सब कर्म एक एक अश्वमेध का फल देते हैं क्योंकि वह नारायण एक परमात्मा और पुरुषोत्तम है उससे ब्रह्मा उत्पन्न भये और ब्रह्माजीसे सब जगत् इस कारण जगत्कर्त्ता नारायणही हैं अब एक नारायणका अतिप्रिय धर्म कहते हैं जो हमने जाना और प्रत्यक्ष भी देखा है त्रेतायुग में

नारायण का भक्त एक कौशिक नाम ब्राह्मण था वह सदा भगवान् के आगे सामवेद का गान किया करता और सोने, बैठने, खाने, पीने आदि किसी समय भी नारायण को नहीं भूलता एक समय वह ब्राह्मण किसी विष्णुक्षेत्रमें जाय ताल, स्वर, मूर्च्छना, लय, श्रुति आदि गानके अङ्गों सहित भक्ति से भगवान् के उदार चरित्रों को नित्य गानेलगा और भिक्षासे अपने कुटुम्बका और अपना निर्वाह किया करता किसी दिन पद्माक्ष नामक एक ब्राह्मणने सत्पात्र जान इसको उत्तम भोजन दिया उस दिन कौशिक बहुत प्रसन्न भया और नारायण के गुण गाया किया इस भांति वह पद्माक्ष नामक ब्राह्मण नित्यही कौशिकको निर्वाह के योग्य अन्न देदेता और इसका गान भी कभी कभी सुनता कुछ दिनके अनन्तर ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्यजातिके सात कौशिकके शिष्य गानविद्या में अतिनिपुण और नारायण के भक्त वहां आये उन अपने शिष्योंको देख कौशिक बहुत प्रसन्न भये वे भी सब नारायण का कीर्तन करनेलगे और पद्माक्ष सबको नित्य भोजनभी देदेता उसी क्षेत्रमें मालव नाम एक वैश्य मालवी नाम अपनी भार्या सहित रहा करता वह वैश्य नित्य नारायण के मन्दिर में दीपमाला करता और उसकी स्त्री गोबर से भगवान् के मन्दिरको लीपती और दोनों स्त्री पुरुष कौशिक का गान भी सुनते इसी भांति कुशस्थलसे और भी पचास ब्राह्मण नारायण के भक्त और सङ्गीतविद्या में कुशल वहां आये और कौशिक का गान सुननेलगे तबतो कौशिकके गानकी

बहुत प्रसिद्धि भई और उस देश का राजा कलिङ्ग भी वहां आया और कौशिकसे कहा कि तेरे गान की ख्याति सुनकर मैं आया हूं जिस भांति तू विष्णुके गुण कीर्तन करता है इसी भांति मेरा यश गाय मुझे रिझाये तो मन माना फल पावेगा यह राजा का वचन सुन कौशिक और उसके शिष्य कहनेलगे कि हे राजन्! हमारी जिह्वा विष्णु के विना दूसरे का यश कभी कथन न करेंगी और कौशिक का गान सुननेहारे पुरुषोंने भी यही कहा कि हमारे कान विष्णु के विना दूसरे का चरित्र नहीं सुनना चाहते इस कारण न तो कौशिक तुम्हारा यश गावें और न हम सुनें यह सुन राजाने बहुत क्रोध किया और अपने गवैयों से कहा कि तुम मेरा यश गावो देखें ये ब्राह्मण क्योंकर नहीं सुनते यह राजा की आज्ञा पाय अनेक गायक गानेलगे और राजा ने चारों ओर से उनको रोंकदिया जिससे जाने न पावें और अपना यश उनको श्रवण करवानेलगा तब ब्राह्मणों ने काष्ठ शंकुओं करके अपने कान बन्द करलिये और कौशिक तथा उनके शिष्यों ने भी जाना कि हमसे बलात्कार करके यह राजा अपना यश गवावेगा यह मन में सोच सब ने अपनी अपनी जिह्वा कटवाडाली तब तो राजाने बड़ा ही कोप किया और सबका धन हर अपने देश से निकलवा दिया वे सब ब्राह्मण भी उत्तर दिशा में जाय नारायण का आराधन कर कुछ कालमें शरीर त्याग यमलोक में जाते भये उन सबको आये देख यमराज विचार करनेलगे कि इनको कौन गति देनी चाहिये

इसी अवसर में ब्रह्माजी ने इन्द्र आदि देवताओं से कहा कि इन कौशिक आदि ब्राह्मणों को यहां लाकर उत्तम उत्तम स्थानों में सुखपूर्वक रक्खो हे देवताओ! इस भांति और भी जो पुरुष गान योग करके नित्य विष्णु भगवान् का आराधन करें उनको यहां वास दिया करो इसीमें तुम्हारा कल्याण है इतना वचन ब्रह्माजी से सुनतेही सब देवता कौशिक, पद्माक्ष, माल्लव आदिकों के नाम लेले पुकारनेलगे और सबको विमानमें बिठाय क्षणमात्र में ही ब्रह्मलोक को लेगये उन सबको देख ब्रह्माजीने उठकर सब का आगत स्वागत किया और बड़े आदर से उनकी पूजा की और सब ब्रह्मलोक में उत्सव हुआ फिर ब्रह्माजी उन सबको साथ ले विष्णु-लोक को गये और विष्णु भगवान् का दर्शन किया श्वेतद्वीप के निवासी विष्णुभक्त और सब चारों भुजाओं में शंख, चक्र, गदा, पद्म धारे बड़े तेजस्वी अट्ठासी हज़ार पार्षद भगवान् को चारों ओर से सेवन करते थे नारद और सनकादि मुनि और अनेक दिव्य स्त्री और गन्धर्व भगवान् की सेवा में तत्पर थे एक हज़ार योजन लम्बे चौड़े और हज़ार ही द्वारों करके युक्त मणियों के अतिदेदीप्यमान विमान में स्थित रत्नजटित सिंहा-सन पर श्रीभगवान् विराजमान थे ब्रह्माजी भी भगवान् को प्रणाम कर स्तुति करनेलगे भगवान् ने कौशिक आदि अपने भक्तों को बड़े आदर से अपने समीप बैठाया सब विष्णुलोक में जय जय शब्द होनेलगा और विष्णु भगवान् ने कहा कि हे ब्रह्माजी! ये कौश-

स्थलनिवासी ब्राह्मण हमारे अनन्यभक्त कौशिक का हित करने में तत्पर थे और नित्य हमारी कीर्ति श्रवण किया करते इस कारण ये साध्य नामक देवता होवें और सब लोकों में अपनी इच्छा से विचरें इतना ब्रह्माजी से कह कर कौशिक से भगवान् ने कहा कि हे कौशिक! अपने शिष्यों सहित सदा तू हमारे समीप निवास कर और मालव वैश्य से कहा कि तूभी अपनी स्त्रीसहित हमारे लोक में निवास कर और आनन्द से दिव्यगान सुनाकर और पद्माक्ष से कहा कि तूने हमारे भक्तों को अन्न दिया और हमारा यश सुना इस कारण तू चक्रवर्ती राजा हो और सुखपूर्वक यहां आय हमारा भी दर्शन कियाकर इतना कह ब्रह्माजी से भगवान् ने कहा कि इस कौशिक का मधुर गान सुनने से मेरी योगनिद्रा खुल गई अपने शिष्यों सहित यह विष्णुक्षेत्र में हमारे गुण गाया करता और अतिक्रूर कलिङ्ग राजा के कथन से गान न किया अपनी जिह्वा काटडाली और हमारे विना दूसरे की स्तुति न की इस कारण सालोक्य मुक्ति इसको हमने दी और भी इन सब ब्राह्मणों ने राजा का यश न सुना और काष्ठके शङ्कुओं से अपने कान फोड़लिये इससे इनको साध्य नाम देवता बनाय हमने अपने समीप रक्खा यह मालव नाम वैश्य और इसकी स्त्री नित्य हमारे क्षेत्र में मार्जन और दीपमाला कर भक्तिसे हमारा यश सुनते थे इस कारण इनको हमने अपने सनातन लोक में निवास दिया पद्माक्ष कौशिक को भोजन दिया करता इसलिये असंख्य धन का स्वामी भया और

हमारा दर्शन भी नित्य पाया यह भगवान् का वचन सुन ब्रह्मा आदि सब देवता स्तुति करने लगे इसी अवसर में वीणा बजाती हुई और मधुर शब्द से गान करती हुई लाखों स्त्रियों करके सेवित उत्तम उत्तम वस्त्र भूषणों से शोभायमान मन्द मन्द हास करती भई लक्ष्मी भगवती वहां आई तब भुशुण्डी परिघ आदि शस्त्र हाथोंमें धारे पर्वत के तुल्य शरीर विष्णुपार्षदों ने सब देवता और ऋषियों को बाहर किया केवल एक तुम्बुरु गन्धर्व को भगवान्‌की आज्ञासे वहां रहने दिया लक्ष्मीजी भगवान् के वामभाग में सिंहासन के ऊपर बैठीं और वीणा ले कर अति मधुर स्वर से ताल सहित तुम्बुरु गान करने लगा कुछ काल तुम्बुरु का गान सुन प्रसन्न हो लक्ष्मी सहित भगवान् ने दिव्य वस्त्र भूषण माला आदि देकर सत्कार से तुम्बुरु को बिदा किया तुम्बुरु प्रसन्न होता हुआ बाहर आया वहां सब ऋषियों ने उसकी बहुत प्रशंसा करी और नारदमुनि तुम्बुरुका सत्कार देख मन में अति दुःखी भये और चिन्ता करने लगे कि देखो तुम्बुरु भगवान् के एकान्त समय में भी रहा और गाय बजाय भगवान् को रिझाय सिरोपाव पाय प्रसन्न होता हुआ यहां आया और हम बाहर निकाले गये हमारे जन्म को धिक्कार है ऐसा कौन उपाय हो कि तुम्बुरु की भांति हमभी भगवान् के अन्तरङ्ग होवें और समीप पहुँचें अब हम जीते कहां जायँ और सबके आगे क्या कहें और क्योंकर मुख दिखावें इस भांति अनेक विचार करतेहुये और तुम्बुरु के सत्कार का स्मरण कर कर रोदन करते

हुये नारद मुनि भगवान् के आराधन के लिये तप करने बैठगये और भगवान् का ध्यान करनेलगे इस भांति एक हज़ार दिव्य वर्षपर्यन्त नारद मुनिने उग्र तप किया और जब तुम्बुरु का स्मरण होजाता तभी अपने को धिक्कार देते हे राजा, अम्बरीष ! हज़ार वर्ष के अनन्तर जो भगवान् ने किया वह सुनो॥

दूसरा अध्याय॥

मार्कण्डेयमुनि कहते हैं कि हे राजा, अम्बरीष ! हज़ार वर्ष के अनन्तर प्रसन्न हो भगवान् ने तुम्बुरु के समान नारद को किया इस कारण हे राजन् ! गान से भगवान् वहुत प्रसन्न होते हैं और कौशिक की भांति ज्ञान, तेज, कीर्ति, तुष्टि और उत्तमलोक देतेहैं पद्माक्ष आदिकों को भी भगवान् ने सिद्धि दी इस कारण हे राजा, अम्बरीष ! विष्णुभक्तों को विष्णुक्षेत्रों में अवश्य गीत, नृत्य, वाद्य आदि का उत्सव करना चाहिये और भक्ति से श्रवणभी करना चाहिये जो पुरुष विष्णुक्षेत्र में गीत, नृत्य और विष्णुकीर्तन आदि करे वह विष्णुसायुज्य पावे इस कारण हे महाराज! आपको भी यही करना उचित है जो कुछ आपने पूछा हमने सब वर्णन किया अब और जो आपकी इच्छा हो सो कहें हम आपको श्रवण करावें॥

तीसरा अध्याय॥

राजा अम्बरीष पूछते हैं कि हे मार्कण्डेयजी ! नारद मुनि को कौन से योग से गानविद्या प्राप्त भई और तुम्बुरु के तुल्य किस काल में भये यह आप कृपाकर

मुझे श्रवण करावें यह राजा का प्रश्न सुन मार्कण्डेय मुनि कहने लगे कि हे राजन्! यह सब कथा नारदजी से हमने सुनी है वही तुमको भी सुनाते हैं दिव्य हज़ार वर्ष पर्यन्त बड़ा उग्रतप नारदजी ने किया तब आकाशवाणी भई कि हे नारद! ऐसा उग्रतप क्यों करता है मानसोत्तर पर्वत में जाकर गानबन्धु नाम उलूक को देख तो तुझको भी गानविद्या प्राप्त होगी यह आकाशवाणी सुन नारद मुनि प्रसन्न होते हुये मानसोत्तर पर्वत में गये वहां जाके देखा कि चारों ओर गन्धर्व, किन्नर, यक्ष, अप्सरा और सिद्ध बैठे हैं और बीच में गानबन्धु नाम उलूक बैठा हुआ सबको संगीतविद्या सिखा रहा है और वे सब मधुरस्वर से गाने का अभ्यास कररहे हैं गानबन्धुने नारदजी को देख प्रणाम किया और प्रीतिसे आसनपर बैठाय प्रार्थना करी कि महाराज आपने मेरे ऊपर बड़ा अनुग्रह किया अब आज्ञा कीजिये कि मैं आपकी क्या सेवा करूं यह सुन नारद मुनि बोले कि हे उलूकेन्द्र! पूर्वकाल में लक्ष्मीसहित भगवान् ने हमारा अनादर कर तुम्बुरुका गान श्रवण किया ब्रह्मा आदि देवताभी भगवान्की आज्ञासे बाहर निकाले गये केवल गानविद्या में निपुण कौशिक आदि भगवान्के भक्त वहां रहे जो गानविद्या से विष्णु का आराधन कर उन के गण बनगये थे तुम्बुरु का अतिसत्कार देख हमको बड़ा खेद हुआ और मनमें विचार किया कि जप तप सब वृथा है जिस प्रकार गानसे विष्णु भगवान् प्रसन्न होते हैं ऐसा दूसरे किसी कर्म से नहीं होते यह मनमें

विचार गानविद्या की प्राप्ति के लिये दिव्य हज़ार वर्ष पर्यन्त हमने घोर तप किया तब आकाशवाणी भई कि हे नारद! गानबन्धु के समीप जा वहां तेरा सङ्कल्प सिद्ध होगा यह सुन हे पक्षिराज! हम आप के समीप आये अब आप हमको अपना शिष्य बनाय संगीतविद्या का उपदेश करें यह सुन उलूक बोला कि हे नारद मुनि! पहिले मेरा वृत्तान्त सुन लीजिये पूर्वकाल में भुवनेशनाम एक बड़ा धर्मात्मा राजा भया जिसने हज़ार अश्वमेध, हज़ारों वाजपेययज्ञ किये और करोड़ों गौ, हाथी, घोड़े, वस्त्र, सुवर्ण ब्राह्मणों को दिये परन्तु सब राज्य में यह आज्ञा दे रक्खीथी कि जो कोई गान करेगा वह वध्य होगा वेदविहित कर्मोंसे भगवान् का आराधन करो गान का कुछ प्रयोजन नहीं केवल सूत, मागध, वन्दी और स्त्रियां गान किया करें इनके विना जो गावेगा वह अवश्य दण्ड पावेगा यह आज्ञा सब राज्य में देदी थी उसके राज्य में हरिमित्र नाम एक विष्णुभक्त ब्राह्मण था वह एक दिन नदीके तटपर जाय भगवान् की मूर्ति पधराय भक्तिसे धूप दीप भांति भांति के मिष्टान्न पायस आदि नैवेद्य चढ़ाय प्रणामकर वीणा ले एकाग्रचित्त हो भगवान् के गुण मीठे स्वर से ताल सहित गाने लगा उसका गान सुन राजा के दूत वहां पहुँचे और ब्राह्मणकी पूजा सामग्री नदीमें फेंक ब्राह्मण को बांध विष्णुप्रतिमा सहित राजाके समीप लेगये राजा ने भी उसका सब वृत्तान्त सुन बड़ा तिरस्कार किया और अतिकोपकर सब धन हर ब्राह्मणको राज्यसे बाहर

निकलवा दिया और विष्णुमूर्ति कोभी राजा के म्लेच्छ सेवक उठा लेगये कुछ काल के अनन्तर राजा मृत्युवश भया और स्वर्ग में गया परंतु क्षुधासे बहुत व्याकुल था तब तो यमराजके समीप जाय कहने लगा कि हे यम-राज! ऐसा मैंने क्या पाप किया कि स्वर्गमें भी यह पापिनी क्षुधा मुझे सताती है इसका कुछ आप उपाय बतावें यह सुन यमराज बोले कि हे राजन्! तूने बड़ा भारी पाप किया है कि अतिविष्णुभक्त हरिमित्र ब्राह्मण को इतना दण्ड दिया उस पापसे तेरे सब यज्ञादिकोंका फल नष्ट होगया तेरे सेवकों ने सब पूजा सामग्री का नाश किया और ब्राह्मण का सब धन तूने हरकर उसको राज्य से निकाल दिया इस पापका यह फल है कि पर्वतके कोटर अर्थात् गुफा में जाकर निवास कर और तेरा पूर्व शरीर वहां रक्खा है उसको नित्य भोजन कियाकर इस भांति एक मन्वन्तर नरकदुःख भोगकर पृथ्वी में मनुष्यजन्म पाय ज्ञानको प्राप्त हो मुक्त होगा इतना कह यमराज अन्तर्धान भये इस अवसरमें हरिमित्रभी कालवश हुआ और भगवान्की आज्ञा से उसको अपने भाई बन्धुओं समेत दिव्य विमानपर बैठाय भगवान् के गण बड़े आदर से विष्णुलोकको लेजाते भये और राजा भी यम-राजकी आज्ञासे इसी पर्वत के कोटर में आकर रहा और नित्य अपने पूर्व शरीर को खाने लगा जो यमदूतों ने लाकर वहां रख छोड़ा था इतनी कथा कह उलूकराज बोला कि हे नारदजी! उसी समय में उस राजाके समीप गया तब राजा ने मुझे अपना सब वृत्तान्त सुनाया मैं

भी राजाका समाचार सुन हरिमित्रको देखनेके लिये गया उसको परमसुखी देख गानविद्या में मेरी भी रुचि भई और इन्द्रद्युम्न के प्रसाद से दीर्घ आयुष् तो मुझे पहिलेही प्राप्त हुआ था तब मैंने किन्नरों से साठहजार वर्ष पर्यन्त संगीतविद्या में अभ्यास किया और गाते गाते मेरी जिह्वा और स्वर अतिस्पष्ट होगये दश मन्वन्तरों तक गान करते करते इस विद्या का मैं आचार्य होगया और गन्धर्व किन्नर आदि सब मेरे समीप संगीतविद्या सीखने के लिये आने लगे हे नारद ! तप करके गान-विद्या नहीं प्राप्त होती वह तो केवल अभ्याससे मिलती है इसलिये आपभी मुझसे सीखें और अभ्यास करें मार्कण्डेय मुनि कहते हैं कि हे राजा, अम्बरीष ! ऐसा उलूकका वचन सुन नारद मुनि उसके शिष्य भये और भगवान् का ध्यान कर गाने में अभ्यास करने लगे तब उलूक ने कहा कि हे नारद मुनि ! अब तुम लज्जा छोड़ गाने का अभ्यास करो क्योंकि स्त्रीसङ्ग, गीत, द्यूत, कथा, व्यवहार, भोजन, धनका अर्जन, आय, व्यय आदि कर्मोंमें लज्जा त्यागे विना काम नहीं चलता और संकुचित होकर बहुतसे वस्त्र ओढ़कर हाथ हिलाते हुये ऊपर को हाथ और दृष्टि करके और मुँहबाय कर न गाना चाहिये गान के समय हास्य, क्रोध, कांपना अपने अथवा दूसरे के अंगोंको देखना, उठना और कार्य का स्मरण करना आदि काम अच्छे नहीं होते हैं क्षुधा, तृषा, भय आदि से व्याकुल होकर तथा अन्धकार में भी न गाना चाहिये हे राजन् ! इस भांति नारदजी को

उपदेशकर दिव्य हज़ारवर्ष पर्यन्त उलूकराजने संगीत-
विद्या सिखाई एक हज़ार वर्ष में सब गीतों के प्रस्तार
वीणा की गति और तीन लाख निन्नानबे हज़ार छःसौ
भेद स्वरों के नारदजी ने भलीभांति सीख लिये और
सब गन्धर्व किन्नर आदि भी संगीतविद्या में नारदजी
की प्रशंसा करने लगे नारदजी ने गानबन्धुसे कहा कि
हे पक्षिराज! तुम्हारी कृपा से हमने संगीतविद्या का
पार पाया अब आपकी हम क्या सेवा करें सो कहो यह
सुन उलूकराजने कहा कि ब्रह्माजीके दिनमें चौदह मनु
बीतते हैं पीछे प्रलय होता है हे नारदजी! तब तक
मेरा आयुष् है आप मेरे शरीरका कल्याण मनाया करें
और मुझे किसी बात की इच्छा नहीं यह सुनि नारद
मुनि बोले कि हे गानबन्धु! तुम सदा प्रसन्न रहो और
इस शरीरके अनन्तर तुम गरुड़ होगे अब हमको जाने
की आज्ञा दीजिये हे राजा, अम्बरीष! इतना कह उलूक-
राजकी आज्ञा पाय नारद मुनि श्वेतद्वीप को जाते भये
वहां जाय भगवान् के आगे बहुत भक्ति से गान किया
परन्तु उनका गान सुन भगवान् बोले कि हे नारद!
अब तक भी आप तुम्बुरु के तुल्य नहीं भये इसलिये
अट्ठाईसवें द्वापर के अन्त में यदुवंश के भूषण वसुदेव
के पुत्र कृष्ण नाम से हम उत्पन्न होंगे उस समय आप
हमको स्मरण करा देना तब हम आपको संगीतविद्या
सिखावेंगे जिससे आप तुम्बुरुके तुल्य होजाओगे तब
तक आपने गानबन्धु से जितना गाना सीखा है उससे
ही कालक्षेप करें और देवता, गन्धर्व आदि को संगीत-

विद्या सिखाया करें यह भगवान्‌की आज्ञा पाय नारद मुनि प्रणाम कर भगवान् को स्मरण करते हुये वहां से चले और वरुण, यम, अग्नि, इन्द्र, कुबेर, वायु, ईशान आदि के लोकों में बिचरते वीणा बजाते और भगवान् के चरित्र भक्ति से गाते अपना समय बिताने लगे किसी समय ब्रह्मलोक में जाय हाहा हूहू नाम गन्धर्वों का गान सुना और आपभी ब्रह्माजी के आगे गान किया ब्रह्माजी ने भी गान सुनकर नारद मुनि का बहुत सत्कार किया वहां से सत्कार पाय नारद मुनि तुम्बुरु के घर गये और वीणा बजाय गाने लगे परन्तु वहां देखा कि साता स्वर देहधारे तुम्बुरुके घरमें क्रीड़ा कर रहे हैं तब तो नारद मुनि वहां से चले आये फिर तीन लोकमें बिचरने लगे परन्तु सात स्वरोंकी अङ्गना नारद मुनिकी वीणा के तारों में स्थित नहीं होती थीं इस कारण नारद मुनि बहुत व्याकुल थे इतने में कृष्णावतार होगया जान नारद मुनि भूमि पर आये और द्वारका के समीप रैवतक पर्वत में विहार करतेहुये श्रीकृष्ण भगवान् के समीप गये और भक्ति से प्रणाम कर श्वेतद्वीप का सब वृत्तान्त स्मरण कराया तब श्रीकृष्णचन्द्र ने अपनी रानी जाम्बवती से कहा कि हे प्रिये ! तुम नारदजी को गाना और वीणा बजाना सिखाओ जाम्बवती भी भगवान्‌की आज्ञा पाय हँसती हुई नारदजी को सिखाने लगी इस भांति एक वर्ष तक गाना सीख नारद मुनि भगवान् के समीप आये तब भगवान्‌ने कहा कि अब एकवर्ष सत्यभामासे आप संगीत

सीखें भगवान्की आज्ञानुसार एक वर्ष सत्यभामा से भी नारदमुनि ने गीतवाद्य में अभ्यास किया और भगवान् के समीप आये परंतु भगवान्ने फिर भी उनका गाना सुनकर कहा कि अभी आप रुक्मिणीसे और भी सीखें ऐसा श्रीभगवान् का वचन सुन नारद मुनि रुक्मिणी के महल में जाय गाने लगे तब रुक्मिणी की दासियों ने कहा कि हे मुने ! तुमको इतने दिन गाते हुये तो भी स्वर तालकी कुछ खबर नहीं ऐसा दासियों का वचन सुन नारद मुनि लज्जित भये और रुक्मिणी से गाना सीखने लगे और तीन वर्षपर्यन्त सीखा तब स्वरों की नारी उनकी वीणा के तारों में प्राप्त भई और नारदजी को वीणा बजाना भलीभांति आया भगवान् ने नारद मुनि को तीन वर्ष के अनन्तर बुलाय आप संगीतविद्या सिखाई और सब स्वर तालोंके भेद बताये और कहा कि हे नारद मुनि ! अब आप तुम्बुरु से भी अधिक संगीत-विद्या में निपुण होगये हो इस कारण तुम्बुरु के साथ आप भी हमारे सम्मुख गाया करें ऐसा भगवान् का वचन सुन प्रसन्नतासे नारद मुनि उठकर नाचनेलगे और श्रीकृष्ण भगवान् जब शिवपूजन करनेलगे उस समय भगवान् की आज्ञासे रुक्मिणी जाम्बवती को साथ ले नारद मुनि ने शिवजी की स्तुति गाई भगवान् भी नारद का गाना सुन बहुत प्रसन्न भये और कहा कि हे नारदजी ! अब आप गानविद्या में अतिनिपुण होगये यह भगवान् से सुन भक्ति से प्रणाम कर अतिमुदित होतेहुये नारद मुनि तीनों लोकों में बिचरते भये इतनी

कथा सुनाय सूतजी बोले कि हे मुनीश्वरो ! यह नारद मुनि की गानविद्या प्राप्त होने का क्रम हमने वर्णन किया जो ब्राह्मण भगवान् के गुण गावे वह सालोक्य मुक्ति पावे और जो पुरुष भक्ति से शिवजी के गुणों का कीर्तन करे वह तो भगवान् के देह में लीन होजाय परन्तु भगवान् के गुण कीर्तन को छोड़ और कुछ गावे तो नरक ही पावे इस कारण सदा भक्तिसे भगवान् के गुणही गावे और सुने गानविद्या से विना परिश्रम मुक्ति मिलती है इससे यह विद्या सबसे उत्तम है ॥

चौथा अध्याय ॥

शौनक आदि ऋषि पूछते हैं कि हे सूतजी ! भगवान् के परमभक्त वैष्णवों के क्या चिह्न हैं और भगवान् उनको कौन गति देते हैं यह सब आप वर्णन करें। ऐसा मुनियोंका प्रश्न सुन सूतजी बोले कि हे मुनीश्वरो ! इस प्रश्न को राजा अम्बरीष ने भी मार्कण्डेय मुनि से किया था उन्होंने जो उत्तर दिया वह हम आप को श्रवण कराते हैं राजा अम्बरीष का प्रश्न सुन मार्कण्डेय मुनि बोले कि हे राजन् ! जहां विष्णुभक्त रहें वहां साक्षात् नारायण का निवास होता है। जो पुरुष सर्वत्र विष्णु भगवान् को व्याप्त जानें और भगवान् का नाम श्रवण करतेही जिन पुरुषों के देहमें कम्प रोमाञ्च और नेत्रोंसे अश्रुपात हो और जो पुरुष श्रौत स्मार्तधर्म में प्रवृत्त विष्णुभक्तों को देख अतिहर्षित होवें वे वैष्णव कहाते हैं विष्णुभक्त को सम्मुख आते देख जो पुरुष भक्ति से

प्रणाम आदि करें और विष्णुभक्तों को विष्णु भगवान् के तुल्य समझें वे वैष्णव होते हैं और तीनों लोकों में जय पाते हैं। विष्णुभक्तों के खोटे वचन भी सुनकर जो पुरुष क्रोध न करे और भक्ति से उनके आगे हाथ ही जोड़ता रहे वह वैष्णव होता है जो पुरुष गन्ध पुष्प आदि उत्तम पदार्थों को आप धारण न करे और यही जाने कि ये सब पदार्थ भगवान्के अर्पण होने चाहिये वह वैष्णव है विष्णुक्षेत्रों में जो पुरुष भक्ति से शुभकर्म ही करे और एकाग्रचित्त हो भगवान् की मूर्ति का पूजन करे वह विष्णुभक्त कहाता है मन वचन कर्म करके नारायण में तत्पर रहे और न्यायसे भोजनादि करे वह महाभागवत है नारायणका भक्त प्रसन्न हो जिसका अन्न भोजन करे उसके साक्षात् नारायण ही भोजन करते हैं अपने पूजन से भी अधिक अपने भक्तों का पूजन देख भगवान् प्रसन्न होते हैं निष्पाप भगवान्के भक्तसे देवता भी भयभीत होते हैं और उसको प्रणाम करते हैं पूर्वकाल में परम वैष्णव च्यवन ऋषिको देख यमराज भी आसन छोड़ उठ खड़े भये और भक्तिसे प्रणाम किया इस कारण विष्णुभक्तों का सदा पूजन करना उचित है जो वैष्णवों का सत्कार करे वह विष्णु भगवान् के समीप निवास करे और देवताओंके हज़ारों भक्तोंसे विष्णुभक्त अधिक होता है और हज़ारों विष्णुभक्तों से एक शिवभक्त उत्तम है शिवभक्त से उत्तम इस लोक में कोई नहीं यह निश्चय है धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष की प्राप्ति के लिये सदा शिवभक्त अथवा विष्णुभक्तों का पूजन करना चाहिये ॥

पांचवां अध्याय ॥

इस भांति वैष्णवों का माहात्म्य सुन शौनक आदि ऋषि पूछते हैं कि हे सूतजी ! हमने सुना है कि राजा अम्बरीष परम विष्णुभक्त था और विष्णु भगवान् का सुदर्शनचक्र अम्बरीष के शत्रु, रोग और भय आदिको निवृत्त करता था अब हम उस अम्बरीष राजा का चरित्र माहात्म्य और भक्ति श्रवण किया चाहतेहैं आप विस्तार से वर्णन करें यह मुनिवचन सुन सूतजी बोले कि हे मुनीश्वरो ! सब पापहरनेहारा अम्बरीष का चरित्र हम वर्णन करते हैं आप प्रीति से श्रवण करें राजा त्रिशंकु की रानी पद्मावती नाम बड़ी पतिव्रता और विष्णु भगवान् की भक्ता थी भगवान् के पूजनके लिये चन्दन, पुष्प, माला, धूप, दीप, नैवेद्य आदि सब सामग्री अपने हाथों से संपादन करती और भगवान् के मन्दिर को अपने हाथों से मार्जन करती और भक्ति से भगवान् की पूजा कर सब दिन नारायण के नाम उच्चारण करती हुई बिताती और वैष्णवों का भी भक्ति से पूजन करती इस प्रकार भगवान् की सेवा करते करते दश हज़ार वर्ष व्यतीत भये एक दिन एकादशी का व्रत और जागरण कर द्वादशी के दिन रानी और राजा दोनों ने विष्णु भगवान्‌के मन्दिर में शयन किया रानी को स्वप्न में नारायण ने कहा कि हे पतिव्रते ! तू क्या चाहती है हमसे मांग यह भगवान्‌की आज्ञा पाय रानी ने प्रार्थना की कि महाराज ! मैं ऐसा पुत्र चाहती

हूं कि आपका परम भक्त हो और सम्पूर्ण पृथ्वी का राजा हो यह सुन भगवान्‌ने एक फल रानी को दिया और आप अन्तर्धान भये रानी भी प्रभात उठी और फलको देख अति हर्षितहो अपने पतिसे सब वृत्तान्त कहा और पतिकी आज्ञा पाय उस फलको रानी ने भक्षण किया थोड़े कालके अनन्तर रानी गर्भवती भई और समय पूरा होने पर उत्तम लक्षणों से युक्त पुत्र उत्पन्न भया पुत्रको देख राजा रानी बहुत प्रसन्न भये और सब संस्कार कर उसका नाम अम्बरीष रक्खा वह राजकुमार जन्मसे ही विष्णुभक्त और बड़ा धर्मात्मा भया कुछ कालके अनन्तर अपना राज्य अम्बरीष को दे राजा त्रिशंकु परलोकको सिधारा राजा अम्बरीष भी राज्यभार मन्त्रियों पर रख तप करने गया एक हज़ार वर्षपर्यन्त सूर्यमंडल में स्थित शंख, चक्र, गदा, पद्म धारे सुवर्ण वर्ण सब भूषणों से भूषित पीताम्बर पहिने ब्रह्म विष्णु शिवस्वरूप से स्थित नारायण का ध्यान अपने हृदयकमल में करता हुआ और नारायण के नाम उच्चारण करता हुआ बड़ा उग्र तप करता भया एक हज़ार वर्षके अनन्तर नारायण इन्द्रका रूप धार और ऐरावत हस्तीका रूप धारे गरुड़पर चढ़ अम्बरीष के समीप आये और कहा कि हे राजन् ! मैं इन्द्रहूं जो वर तू चाहे वह मांग मैं तेरा मनोरथ सिद्ध करूंगा यह सुन राजा बोला कि हे इन्द्र ! तेरी प्रसन्नता के लिये मैंने तप नहीं किया और न तुझसे कुछ वर चाहूं मेरे स्वामी तो नारायणहैं जब वे अनुग्रह करेंगे तब वर मांगूंगा हे इन्द्र !

मेरी बुद्धि में भेद मत उत्पन्न कर जहां से तू आया है वहांहीं चला जा यह राजा का वचन सुन हँस कर भगवान् ने अपना रूप प्रकट किया चक्र, गदा, खड्ग और शार्ङ्ग नामक धनुष भुजाओं में धारे गरुड़पर चढ़े सब देवता जिनके चारों ओर स्तुति कररहे हैं ऐसा भगवान् का रूप देख राजा अम्बरीष भक्ति से बारंबार प्रणाम कर स्तुति करनेलगा ॥

प्रसीद लोकनाथेश मम नाथ जनार्दन । कृष्ण विष्णो जगन्नाथ सर्वलोकनमस्कृत १ त्वमादिस्त्वमनादिस्त्वमनन्तः पुरुषः प्रभुः। अप्रमेयो विभुर्विष्णुर्गोविन्दः कमलेक्षणः २ महेश्वराङ्गजो मध्ये पुष्करः खगमः खगः। कव्यवाहः कपाली त्वं हव्यवाहः प्रभञ्जनः ३ आदिदेवः क्रियानन्दः परमात्मात्मनिस्थितः । त्वां प्रपन्नोऽस्मि गोविन्द जय देवकिनन्दन ४ जय देव जगन्नाथ पाहि मां पुष्करेक्षण । नान्या गतिस्त्वदन्या मे त्वमेव शरणं मम ५ ॥

सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो ! राजासे इस भांति स्तुति सुन प्रसन्नहो भगवान् ने कहा कि हे राजन् ! जो तेरी इच्छा हो मांग वही मिलेगा हमारे भक्त हमको अति प्रियहैं तूभी हमारा भक्तहै इस कारण तेरा मनोरथ पूर्ण करने को हम यहां आये हैं यह भगवान् का वचन सुन राजा अम्बरीषने प्रार्थना की कि महाराज ! मैं य चाहताहूं कि जिसभांति मन वचन कर्म से आप शि भक्तहैं ऐसाही मैं आपका भक्त रहूं और सब जगत् वैष्णव बनाय राज्य करूं यज्ञ होम आदिसे देवताओं प्रसन्न करूं और सब शत्रुओं को मार वैष्णवों का पा

करूं यह राजाकी प्रार्थना सुन भगवान्‌ने कहा कि ऐसा ही होगा और यह सुदर्शनचक्र जो हमको शिवजी के अनुग्रह से मिला है तेरे राज्यमें सब रोग, शत्रु, ऋषि-शाप और भांति भांतिकी विपत्तियोंका नाश किया करेगा इतना कह भगवान् अन्तर्धान भये और राजा अम्बरीष भी भगवान् को प्रणाम कर प्रसन्न होता हुआ अपनी राजधानी अयोध्या में आय धर्मराज्य करने लगा ब्राह्मण आदि चारों वर्णोंको अपने अपने धर्ममें प्रवृत्त किया घर घर में भगवान् की पूजा और वेदध्वनि होने लगी चारों ओर यज्ञों की धूम धाम मची सौ अश्वमेध और सौ वाजपेय राजाने किये इस भांति राजा अम्बरीष का धर्मराज्य प्रवृत्त होने पर दुर्भिक्ष रोग आदि सब उपद्रव प्रजासे दूर भये और सब जीव हृष्ट पुष्ट नारायण के स्मरणमें तत्पर आनन्द से अपना कालक्षेप करने लगे इस प्रकार [illegible] करते करते कुछ काल के अनन्तर राजा अम्बरी[illegible] अति रूपवती और सब शुभ लक्षणों से युक्त एक कन्या उत्पन्न भई उसके जन्ममें राजाने बड़ा उत्सव किया और उस कन्या का नाम श्रीमती रक्खा वह कन्या चन्द्रकलाकी भांति लोकलोचनों को आनन्द देतीहुई प्रतिदिन बढ़नेलगी और वर योग्य भई राजा उस कन्या के विवाह की चिन्ताहीमें था कि नारद और पर्वत दोनों मुनि वहां आये राजा ने उन दोनोंका बड़ा सत्कार किया और आसनपर बैठाया उनने भी श्रीमती को देख और उसके रूप पर मोहितहो पूछा कि हे राजन्! यह कन्या कौन है यह सुन राजाने हाथ जोड़ प्रार्थना

की कि महाराज! यह मेरी पुत्री है अब वर योग्य भई इसकी मुझे दिन रात्रि चिन्ता रहती है कि कोई उत्तम पति इसको प्राप्त हो यह राजा का वचन सुन नारदजी की इच्छा भई कि यह कन्या हमको मिलजाय तो बहुत अच्छी बात है और यही सङ्कल्प पर्वत मुनि के हृदय में भी उपजा कि हमसेही इस कन्या का विवाह हो तो ठीकहै पहिले नारदजी ने राजा को एकान्त में ले जाय कहा कि इस अपनी कन्यासे हमारा विवाह करदो और इसीभांति पर्वतने भी एकान्त में राजासे कहा दोनों का वचन सुन राजा व्याकुल भया और हाथ जोड़ प्रार्थना करनेलगा कि महाराज! यह एक कन्या है और आप दोनों इसकी इच्छा करते हो अब आपही आज्ञा करें कि मैं कौन कौन से इसका विवाह करूं हे मुनीश्वरो! अब मेरी यही इच्छा है कि यह कन्या अपनी प्रसन्नता से तुम दोनों में से जिसको वरे वही इसका भर्ता हो यह राजा का वचन सुन नारद और पर्वत प्रसन्न हो कहने लगे कि बहुत ठीक है ऐसाही होना चाहिये परन्तु कल हम दोनों आवेंगे उस समय जिस पर इच्छा हो उसको तुम्हारी कन्या वरे राजा ने भी उनका वचन स्वीकार किया दोनों मुनि अपने अपने मन में प्रसन्न होते हुये चले परन्तु थोड़ी दूर जाकर नारद जी ने पर्वत का साथ छोड़ दिया और विष्णुलोकमें गये वहां जाय प्रणामकर भगवान् से प्रार्थना की कि महाराज! हमको कुछ एकान्त में प्रार्थना करनी है भक्तवत्सल भगवान् ने भी सबको वहां से अलग किया और नारद

मुनि से कहा कि अब आप कहें नारद मुनि भी चारों ओर देख एकान्त जान भगवान् से कहने लगे कि आप का भक्त राजा अम्बरीष है उसके अति रूपवती श्रीमती कन्या है उसको हमने और पर्वतने राजा से मांगा परन्तु दोनोंकी याचना से राजाने व्याकुल हो कहा कि महाराज! एक कन्या है मैं किसको दूं और किसको न दूं यह कन्या आपही जिसको वरे वही इसका पति होवे यह राजा का वचन सुन हमने कहा कि कल प्रभात हम दोनों आवेंगे तब स्वयंवर करना इतना राजा से कह हम आपके समीप आये हैं अब हम यह चाहते हैं कि पर्वत का मुख जिस भांति बन्दर का सा देखपड़े ऐसा आप अनुग्रह करें हम आप के भक्त हैं इसलिये आप को हमारी प्रार्थना स्वीकार करनी चाहिये यह सुन हँसकर भगवान् ने कहा कि हे नारदजी! आप प्रसन्नता से जाइये जैसा आपने कहा वैसाही होगा यह भगवान् का वचन सुन प्रसन्न होते हुये नारद मुनि भगवान् को प्रणाम कर अयोध्या को गये इसी अवसर में पर्वत मुनि भी पहुँचे और नारदजी की भांति एकान्त में भगवान् से प्रार्थना की कि महाराज! नारदजी का मुख गोलांगूल अर्थात् लंगूर का सा देखपड़े आप ऐसी कृपा करें हम आपके भक्त हैं इसलिये हमारी प्रार्थना आप को अङ्गीकार करनी चाहिये भगवान् ने पर्वत मुनि की प्रार्थना सुन कहा कि ऐसाही होगा तुम अयोध्या को जाओ परन्तु यह समाचार नारद जी से न कहना इतना कह भगवान् ने पर्वत मुनि को विस-

र्जन किया पर्वत मुनि भी मनही मन में प्रसन्न होते अयोध्या में पहुँचे राजाने दोनों मुनियों को प्राप्त भये देख सब अयोध्या को ध्वजा तोरण पुष्पमाला और भांति भांति के मण्डपों से भूषित कराया सब रास्तों में सुगन्ध जलसे छिड़काव कराय पुष्प बिखरवाये चारों ओर दिव्य धूपों का सुगन्ध फैला इसप्रकार सब नगरी शोभित कीगई और भांति भांति के सिंहासन बिछाये गये इस अवसर में राजकन्या सब शृङ्गार कर अनेक रूपवती युवती सङ्ग लिये स्वयंवरसभा में आई और नारद तथा पर्वत भी उस सभामें आय पहुँचे राजाने दोनों मुनियोंको बड़ा सत्कार कर आसनपर बैठाया और अपनी श्रीमती नाम पुत्री से कहा कि हे पुत्रि! इन दोनों मुनियों में जिससे तेरा चित्त प्रसन्नहो उसको स्वयंवर-माला पहिनादे यह पिताकी आज्ञा पाय सुवर्णमाला हाथ में ले श्रीमती मुनियों के समीप गई और दोनोंको जो देखा तो एक का मुख बन्दर का और दूसरे का लंगूर का देखपड़ा तबतो भयभीत भई और कांपने लगी तब राजाने कहा हे पुत्रि! क्या विचार करतीहै एकको माला पहिनादे यह पिता का वचन सुन श्रीमती ने कहा कि हे पितः! इन दोनों के मुख बन्दर और लंगूर केसे हैं और शरीर मनुष्यका है ये दोनों और कोई हैं नारद और पर्वत नहीं देख पड़ते परन्तु एक और पुरुष सोलहवर्ष की अवस्था का सब भूषण पहिने श्यामवर्ण दीर्घ भुजा ऊंची छाती धनुष्के समान टेढ़ी भ्रू उदरमें तीन बली कमल के तुल्य नेत्र चन्द्र के समान मुख सुन्दर ऊंची

नासिका कुन्दकी कली से दन्त और कमल के समान कोमल और रक्तवर्ण चरणों करके युक्त अति सुन्दर और पीत वस्त्र पहिने देखपड़ता है और मेरी ओर देख देख दक्षिण भुजा पसार कर हँसता है यह कन्या का वचन सुन नारदजी के मन में सन्देह भया और श्रीमती से पूछा कि हे कन्ये! उस पुरुषकी भुजा कितनी हैं श्रीमती ने कहा कि दो भुजा हैं इसी भांति पर्वत ने भी पूछा कि उस पुरुष ने कण्ठ में क्या पहिन रक्खा है और हाथों में क्या क्या शस्त्र धारे हैं श्रीमती ने उत्तर दिया कि गले में पांच रङ्ग के पुष्पों की उत्तम माला और हाथों में धनुर्बाण धारण कर रक्खे हैं यह सुन दोनों मुनि परस्पर विचार करने लगे कि यह कौन मायावीहै हमारी जान में तो वह बड़ा तस्कर विष्णुही इस उत्तम कन्या को हरने आया है जो उसके मनमें यह कपट न होता तो हम दोनोंके मुख बन्दर और लंगूरके क्यों बनादेता इस भांति दोनों मुनि व्याकुल हो अनेक चिन्ता की बातें करनेलगे राजा ने हाथ जोड़ दोनों से कहा कि महाराज! आपने यह क्या किया कि आप का मुख देख कन्या भयभीत होती है यह सुन क्रोध कर दोनों मुनि बोले कि हे राजन्! यह तेराही कुछ प्रपञ्चहै अपनी कन्या से कहदे कि एक को वरलेवे राजा ने भी भयसे कन्या को कहा कि हे पुत्रि! एक को वरले तब वह फिर माला लेकर उठी परन्तु वही मनोहरमूर्ति पुरुष देख पड़ा और ये दोनों मुनि वैसेही देखे श्रीमती ने भी निर्भयहो माला उस पुरुष के गलेमें डालदी माला डालतेही वह

दिव्य पुरुष राजकन्याको अपने सङ्गले अन्तर्धान भया तब तो सब सभाके लोग ऊंचे ऊंचे स्वरों से कहने लगे कि श्रीमती ने भगवान् का बहुत आराधन किया था इसीसे विष्णु भगवान् उसके पति भये और अपने लोक को लेगये धन्यहै श्रीमती और राजा अम्बरीष भी धन्य है कि जिसके घर ऐसी कन्या उत्पन्न भई नारद और पर्वत भी इसभांति अपना तिरस्कार देख अति दुःखी भये और दोनों उठकर विष्णुलोक को गये भगवान् ने भी दोनों मुनियों को दूरसे आते देख श्रीमती से कहा कि हे प्रिये! नारद और पर्वत आते हैं इसलिये तुम गुप्त होजाओ यह भगवान् की आज्ञा पाय वह तो गुप्त भई और दोनों मुनि भगवान्के समीप आपहुँचे और प्रणाम किया भगवान् ने भी उनको आदर से बैठाया तब नारद जी बोले कि हमसे आपने कपट किया और उस कन्या को आप हरलाये यह सुन भगवान् ने कानों पर हाथ धरे और कहा हे मुनीश्वरो! मुझे इस वृत्तान्त का ठीक भी नहीं कि आप दोनों क्या करते फिरते हैं यह सुन नारदजी ने भगवान् के कान में कहा कि हमारे कहने से पर्वत का मुख तो आपने बन्दर का बनादिया सो ठीकही किया परन्तु हमारा मुख लंगूर का क्यों बना दिया तब भगवान् ने नारदजी के भी कानही में कहा कि आपके अनन्तर पर्वत मुनिभी हमारे समीप आये और आपकी भांति हमसे प्रार्थना की तब हमने आप का मुख लंगूर का करदिया इतना कह भगवान् बोले कि हे मुनीश्वरो! हमको आप दोनों तुल्य हो इसलिये

दोनों का वचन मानना पड़ा इसमें हमारा कौन अप-
राध है यह सुन नारदजी ने कहा कि जो आप ऐसा
कहते हैं तो वह दोनों भुजाओं में धनुर्बाण धारे पुरुष
कौन था जो हम दोनोंके बीच श्रीमती को देखपड़ा और
उसको उड़ा लाया तब भगवान् ने कहा कि महाराज !
अनेक मायावी पुरुष जगत् में फिरते हैं क्या जानें
श्रीमती को कौन हरलाया हम तो शपथ खाकर कहते
हैं कि आप दोनोंकी आज्ञा से आपके मुख बनाये और
हमारी चार भुजाहैं और शंख, चक्र, गदा, पद्म धारते
हैं यहभी आप जानतेहो कि हमारी कुछ इच्छा उस
कन्याके लिये नहीं थी इसभांति भगवान्‌के वचन सुन
दोनों मुनि बोले कि ठीक है इसमें आप का कुछ दोष
नहीं यह सब उस दुष्ट राजाकी ही मायाहै इतना कह
भगवान् को प्रणाम कर दोनों वहांसे चले और राजा
अम्बरीषके समीप आये और क्रोधसे कहने लगे कि
राजा तू बड़ा दुष्ट है तैंने हम दोनों को बुलाया और
कन्या किसी तीसरे पुरुष को देदी इसलिये तमोगुण
तेरी बुद्धि को ढांक लेगा जिससे तू अपनी आत्मा को
न जानेगा इतना कहतेही एक अन्धकार का पुञ्ज वहां
से उत्पन्न भया और राजाकी ओर चला तब सुदर्शन-
चक्र ने प्रकट हो उस अन्धकार को हटाया वह अन्ध-
कार नारद और पर्वत की ओर चला और सुदर्शन-
चक्रभी दोनों मुनियोंके पीछे लगा और मुनि भयभीत
हो वहां से भगे और लोकालोक पर्वतपर्यन्त भागते
फिरे परन्तु सुदर्शनचक्र और उस अन्धकार ने उनका

पीछा न छोड़ा तब तो अति व्याकुल हो भगवान्की शरणमें गये और कहा कि हे प्रभो! हमारी रक्षा करो राजकन्या के निमित्त हमारी यह दुर्दशा भई तब भगवान् ने विचार किया कि ये दोनों हमारे भक्तहैं और अम्बरीष भी हमाराही भक्त है इसलिये हमको तीनों की रक्षा करना उचित है यह विचार सुदर्शनचक्र और अन्धकार को निवारण किया और अन्धकार से कहा कि सुदर्शनचक्र हमारी आज्ञा से राजा की रक्षा करता है इसलिये यह निष्फल नहीं होसक्ता और ऋषिशापभी वृथा न होना चाहिये इस कारण अम्बरीष के वंश में बड़ा धर्मात्मा राजा दशरथ होगा उसके ज्येष्ठ पुत्र हम होंगे हमारा नाम राम होगा और हमारी दक्षिण भुजा भरत, वाम भुजा शत्रुघ्न और शेष का अवतार लक्ष्मण ये तीन हमारे भ्राता होंगे तब हमारी भार्या सीता को रावण हरेगा उस समय तू हमारे समीप आजाना हम तुझको ग्रहण करेंगे अब मुनियों का पीछा छोड़ दे इतना भगवान् का वचन सुन अन्धकार नाश को प्राप्त भया और सुदर्शनचक्र अपने स्थान को गया दोनों मुनिभी बड़े भयसे छूट भगवान् को प्रणाम कर वहां से चले और परस्पर कहनेलगे कि अब हम जन्मपर्यन्त किसी कन्यासे विवाहकी इच्छा न करेंगे राजा अम्बरीष बहुत कालपर्यन्त निष्कण्टक राज्य कर अन्त में विष्णुलोक को गया दोनों मुनियों के शाप को सत्य करनेके लिये विष्णु भगवान् दशरथके पुत्र रामचन्द्र भये और तमोगुणसे अपने स्वरूपको भूलगये भृगु आदि मुनि

भी भगवान् को देख यह कहते भये कि माया न करनी चाहिये माया करने से आप को मुनिशाप भोगना पड़ा कुछ कालके अनन्तर नारद और पर्वतभी विष्णु भगवान् की सब माया जानगये और भगवान् से विमुख हो शिवभक्त होगये यह हमने अम्बरीष का माहात्म्य और विष्णु भगवान् का मायावीपना आपको श्रवण कराया इसको जो पढ़े सुने अथवा ब्राह्मणों को श्रवण करावे वह मायाको जीत इन्द्रलोकमें निवास करे॥

छठा अध्याय॥

शौनक आदि ऋषि पूछते हैं कि हे सूतजी! विष्णु भगवान् का मायावीपना हमने श्रवण किया अब आप यह वर्णन करें कि ज्येष्ठादेवी अर्थात् अलक्ष्मी की उत्पत्ति क्योंकर भई हमने सुना है कि ज्येष्ठादेवी विष्णु भगवान् से ही उत्पन्न भई है यह मुनियों का प्रश्न सुन सूतजी कहने लगे कि हे मुनीश्वरो! विष्णु भगवान् ने जगत् दो प्रकार से उत्पन्न किया है धर्म, ब्राह्मण, वेद और लक्ष्मी ये सब एकभाग में और अधर्म, वेद के विरोधी मनुष्य और अलक्ष्मी दूसरे भागमें उत्पन्न किये पहिले अलक्ष्मी उत्पन्न भई पीछे लक्ष्मी इस कारण अलक्ष्मी ज्येष्ठा कहाई समुद्रमथन के समय विष के अनन्तर अलक्ष्मी और पीछे लक्ष्मीकी उत्पत्ति भई है दुःसह नाम ऋषिने अलक्ष्मी से विवाह किया और अलक्ष्मी को साथ ले दुःसहऋषि तीन लोकमें विचरने लगे परन्तु जहां वेदध्वनि होती हो शिव विष्णु के

नाम कोई उच्चारण करता हो विभूति धारे हो अथवा यज्ञका धूम उठता हो इन स्थानों में भय से वह अलक्ष्मी कभी नहीं जाती थी यह देख दुःसहमुनि के मनमें बड़ा सन्देह भया इसी अवसर में मार्कण्डेयमुनि वहां आये उनको दुःसहमुनि ने प्रणाम किया और प्रार्थना की कि महाराज! यह मेरी भार्या किसी उत्तम स्थान में प्रवेश नहीं करती और इसके सङ्ग से मैं भी कहीं नहीं जासक्ता यह भार्या क्या मेरेलिये बाधा ठहरी मैं कहां कहां जाऊं और कहां कहां न जाऊं इस भार्या से मैं अतिदुःखी हूं यह सुन मार्कण्डेयमुनि बोले कि हे दुःसह! यह तेरी भार्या अलक्ष्मी है और इसके नाम ज्येष्ठा, अशुभा, अकीर्ति आदि अनेक हैं शिवभक्त विष्णुभक्त वेदमार्ग पर चलनेहारे और भस्म से भूषित महात्मा जहां निवास करें वहां इसको लेकर कभी प्रवेश मत करना नारायण, हृषीकेश, पुण्डरीकाक्ष, माधव, अच्युत, अनन्त, गोविन्द, वासुदेव, जनार्दन आदि विष्णु नाम और रुद्र, ईश्वर, शंकर, शिव, शिवतर, महादेव, उमापति, हिरण्यपति, हिरण्यबाहु, विषाङ्क, वामदेव आदि शिव के नाम जो पुरुष उच्चारण करते हों उनके धन, घर, बाग, गोष्ठ आदि में कभी प्रवेश मत कर क्योंकि ज्वाला मला से व्याप्त अति भयङ्कर विष्णु का सुदर्शनचक्र उनके अशुभ को नाश करताहै जिस घरमें स्वाहाकार वषट्कार आदि शब्दों का उच्चारण हो जहां वेदध्वनि होती हो नित्य नैमित्तिक कर्मों में तत्पर ब्राह्मण रहते हों उन के

समीप मत जाओ जिनके घरमें अग्निहोत्र, शिवलिङ्ग, विष्णुमूर्ति, चण्डिकामूर्ति और शिवमूर्ति स्थित हो उन के घर को दूरसे त्याग करो जो नित्य नैमित्तिक यज्ञोंसे महेश्वर का यजन करते हैं और वेदपाठी ब्राह्मण, गौ, गुरु, अतिथि और शिवभक्तों का जहां पूजन होता हो हे दुःसह ! वहां इसको लेकर कभी प्रवेश मत करना यह सुनि दुःसहमुनि बोला कि महाराज ! इन स्थानों में तो आपने मुझे जाने का निषेध किया अब आप मुझे यह भी आज्ञा करें कि कौन कौन स्थानों में इसको लेकर मैं प्रवेश करूं यह दुःसह का वचन सुन मार्कण्डेयमुनि कहनेलगे कि हे दुःसह ! जहां भार्या और भर्ता का परस्पर कलह हो वहां तू अपनी भार्या अलक्ष्मी सहित प्रवेश कर जहां शिवकी निन्दा होती हो वहां निर्भय होकर प्रवेश कर जहां शिव और विष्णुकी भक्ति न हो वहां निवास कर जप, होम, ब्राह्मणभोजन आदि जिनके घरमें न होते हों विभूति जिनके घर में न हो नित्य अथवा चतुर्दशी कृष्णाष्टमी आदि पर्वों में जहां शिवपूजा न हो वहां सदा निवास कर सन्ध्यासमय जो पुरुष भस्म धारण न करे और नमः शिवाय, नमः कृष्णाय, नमो ब्रह्मणे इत्यादि मंत्रों का उच्चारण न करे उनके घर में अपनी भार्या सहित सुखसे निवास कर जहां वेदध्वनि शिवपूजा और पितृकर्म अर्थात् श्राद्ध तर्पण आदि न होते हों वहां आनन्द से बसो जिस घर में रात्रिके समय नित्य कलह हो वहां निर्भय हो प्रवेश करो जिस घर में श्रोत्रिय

अर्थात् वेदके जाननेहारे ब्राह्मण, अथिति, गुरु, गौ, शैव, वैष्णव न हों वहां प्रवेश करो जिस घरमें पुरुष बालकों को विना दिये उत्तम भक्ष्य पदार्थ आपही खाजायँ और बालक उनकी ओर देखते रहें वहां निवास करो जहां अग्निहोत्र शिवपूजन अथवा विष्णुपूजन न हो और मूर्ख, निर्दय, दाम्भिक आदि दुष्ट पुरुष निवाश करते हों वहां तुम भी अपनी भार्या सहित प्रवेश करो जिस घरमें कुटुम्बिनी अर्थात् घरवाली का आदर न हो वहां प्रसन्न होकर भार्या सहित निवास करो जिनके घर में कांटों के वृक्ष आक आदि दूधवाले वृक्ष पलाश अगस्त्य निष्पाप बल्ली अर्थात् मटरकी बेल, बंधुजीव अर्थात् गुलदुपहरिया, करवीर, लगर, मल्लिका, कन्या अर्थात् घीकुवार, अजमोद, निम्ब, केला, ताल, तमाल, भिलावा, इमिली, बड़, पीपल, आम्र, गूलर, कटहर आदि वृक्ष हों और घरमें अथवा बागमें निम्ब वृक्ष हो और उसमें काकका घर हो वहां निर्भय हो प्रवेश करो जिस घरमें स्त्री दण्डिनी अर्थात् दण्ड धारण करे और मुण्डिनी अर्थात् मूड़ मुड़ाये हो वहां निवास करो जिनके घरमें एक दासी अथवा तीन गौ पांच महिषी छह घोड़े और सात हाथी हों वहां अलक्ष्मी सहित वास करो जिसके घरमें चामुण्डादेवी हो और प्रेतरूपा डाकिनी तथा क्षेत्रपाल आदि की पूजा हो वहां प्रवेश करो संन्यासी की मूर्ति क्षपणक अर्थात् नंगा रहनेहारा बौद्ध भिक्षु और बुद्ध की प्रतिमा जहां हो वहां सदा निवास करो जो पुरुष सोते, बैठते, खाते, पीते, चलते, फिरते, परमेश्वर के

नाम स्मरण न करें उनके घरमें सुखसे बसो जहां पाखंडी श्रौत स्मार्त धर्म के विरोधी महादेवजी के निन्दक विष्णु-भक्ति से हीन नास्तिक और शठ पुरुष निवास करते हों वहां तुम भी अपनी भार्या सहित आनन्द से निवास करो जो पुरुष शिवजी को सब देवताओं से अधिक न समझें सब देवताओं के तुल्यही जानें यह न समझें कि ब्रह्मा, विष्णु, इन्द्र आदि देवता शिवजीकी कृपासे अपने अपने अधिकार पर स्थित हैं और यह कहें कि ब्रह्मा, विष्णु, इन्द्र सब तुल्यही हैं उन मूढ़ों के घरमें जो सूर्य और खद्योत को समान समझें अर्थात् शिवजीको और देवताओं के बराबर जानें तुम सुख से निवास करो जो मनुष्य भोजन बनाय अकेले भोजन करलें और स्नान आदि मंगलकर्मों से हीन हों उनके घरमें तुम निवास करो जो स्त्री शौच आचार से हीन हो देह का शृंगार न करे और सर्वभक्षिणी हो उसके समीप निवास करो जो पुरुष मलिन वस्त्र पहिने दन्तधावन न करें पैरों का मल न उतारें सन्ध्यासमय शयन अथवा भोजन करें बहुत भोजन करें बहुत पान करें सदा जुआ खेलते रहें ब्राह्मणों का धन हरें अपूज्यों की पूजा करें शूद्रका अन्न भोजन करें मद्य पान करें मांस खायँ परस्त्रीगमन करें पर्व दिनमें भी परमेश्वर का पूजन न करें दिन में अथवा सन्ध्यासमय मैथुन करें पिछली ओर से मैथुन में प्रवृत्त हों श्वान अथवा मृग की भांति मैथुन करें जलमें मैथुन करें गोशाला में मैथुन करें रजस्वला चण्डाली अथवा कन्या के साथ संग करें उन सबके घर में आनन्द से

प्रवेश करो जो पुरुष स्त्री को द्रावण होने के अर्थ अनेक भांति की औषध लिंगमें लेप कर गमन करें उनके समीप निवास करो हे दुःसह! अधिक कहने से क्या प्रयोजन है जहां शिव और विष्णुकी भक्ति से हीन मनुष्य रहते हों वहां तुम भी अपनी भार्या सहित निवास करो सूत जी कहते हैं हे मुनीश्वरो! इतना उपदेश दुःसहऋषि के प्रति कहकर जलसे अपने नेत्र धोय मार्कण्डेय मुनि अंतर्धान भये और दुःसह भी अपनी भार्या समेत मार्कण्डेय जी के बताये स्थानों में निवास करने लगा विशेष करके जहां शिव और विष्णु के निन्दक रहते थे वहां रहता था एक दिन दुःसह ने ज्येष्ठा से कहा कि हे प्राणप्यारी! इस तड़ाग के तटपर आश्रम के बीच यह पीपल का पेड़ है तुम इसमें ठहरो तब तक हम रसातल में हो आते हैं अपने और तुम्हारे निवासके लिये अच्छा स्थान देख कर तुम्हारे समीप आवेंगे यह पति का वचन सुन अलक्ष्मी बोली कि हे प्रिय! आप के आने तक मैं क्या भोजन करूं और मुझे कौन बलि देगा दुःसह ने कहा कि जो स्त्री धूप दीप बलि आदि तुम को देवे उस से अपना निर्वाह करना और उनके घरमें कभी प्रवेश भी मत करना इतना कह दुःसहमुनि तालाब में गोता मारगये और ज्येष्ठा वहां बैठी बैठी उनकी राह देखने लगी परन्तु दुःसह तो आज कल भी नहीं आये एक दिन लक्ष्मीजीको संग लिये विष्णु भगवान् वहां आये उन को देख प्रणाम कर अलक्ष्मी ने कहा कि महाराज! मेरा पति मुझे छोड़ पाताल को चलागया और मैं अनाथ

जीविका विना अति दुःखीहूं आप कुछ मेरे निर्वाह का उपाय करदेवें सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो! ज्येष्ठा का यह दीन वचन सुन भगवान् ने हँसकर कहा कि जो मेरे भक्त सब जगत् के प्रभु श्रीमहादेवजी की और जगन्माता श्रीपार्वतीजी की निन्दा करें उनके धन को तू आनन्द से भोग महादेवजी की इच्छा से ब्रह्माजी और हम उत्पन्न हुये हैं इसलिये जो महादेवजी की निन्दा कर हमारा पूजन करें वे हमारे भक्त नहीं शत्रु हैं उनके धन, घर, क्षेत्र, बाग, तालाव, यज्ञादिकों में तुम सुख से अपना कालक्षेप करो इतना कह अलक्ष्मी को बिदाकर उसके दर्शन से उत्पन्न भये अमङ्गल की शान्ति के लिये विष्णु भगवान् रुद्राध्याय का पाठ करते भये हे मुनीश्वरो! अलक्ष्मी को सदा बलि देना चाहिये विशेष करके वैष्णवों को सब यत्न से अलक्ष्मी का गन्ध पुष्प बलि आदि करके पूजन करना चाहिये और नारियों को भी भांति भांति के बलि ज्येष्ठा के प्रति देने चाहिये इस अलक्ष्मी की कथाको जो पढ़े सुने अथवा ब्राह्मणों को सुनावे वह लक्ष्मीवान् हो और सद्गति पावे॥

सातवां अध्याय॥

शौनक आदि ऋषि पूछते हैं कि हे सूतजी! कौनसे मन्त्रके जपसे जीव संसार के भयसे मुक्तहो सब पापों को दूर करसद्गति पाताहै और अलक्ष्मीको त्याग लक्ष्मीवान् होता है यह आप हमसे कथन करें यह मुनि का वचन सुन सूतजी बोले कि हे मुनीश्वरो! यह बात ब्रह्माजी ने

वशिष्ठजी को उपदेश की थी वह हम आपको श्रवण कराते हैं आप भी भगवान् को प्रणाम कर इस मोक्षके उपाय को प्रीति से श्रवण करें जो पुरुष मन वचन कर्मसे पुण्यकर्म करतारहै और चलते, फिरते, सोते, बैठते, खाते, पीते, जागते, श्वास लेते और नेत्रोंके निमेष उन्मेष समयमें भी "ॐ नमो नारायणाय" इस मन्त्र का उच्चारण करता रहे और अन्न जल आदि को इसी मन्त्र से अभिमन्त्रण कर ग्रहण करे वह सब पातकों से मुक्तहो सद्गति पाता है और नारायण का नाम सुनते ही अलक्ष्मी भग जाती है और लक्ष्मी समीप आती है सब शास्त्रों को मथन कर और वारंवार विचार यह निश्चय किया है कि नारायण का सदा ध्यान करना चाहिये जो "ॐ नमो नारायणाय" इस मन्त्र का जप करता रहे उसको और मन्त्र अथवा व्रतों से कुछ प्रयोजन नहीं यह मन्त्र सब अर्थोंका साधन करनेहाराहै इसको जो सदा जपतारहै वह अपने कुटुम्ब सहित विष्णुलोक को जाय हे मुनीश्वरो! दूसरा मन्त्र देवदेव विष्णु भगवान् का द्वादशाक्षर है जो हमने जपा है उसका हम संक्षेप से माहात्म्य वर्णन करते हैं पूर्वकालमें एक बड़ा तपस्वी ब्राह्मण था बहुत तप करते करते एक पुत्र उस ब्राह्मण के घर उत्पन्न भया ब्राह्मणने भी उसके सब संस्कार कर यज्ञोपवीत किया और ऐतरेयनामक उस बालकको विद्याभ्यास कराने लगा परन्तु उसकी जिह्वा ऐसी जड़ थी कि वह एक शब्द का उच्चारण भी नहीं कर सक्ता था केवल "ॐनमो भगवते वासुदेवाय" इस मन्त्रको किसी भांति कहता

रहता यह पुत्रकी दशा देख ब्राह्मण अति दुःखी भया और दूसरा विवाह किया ईश्वरकी इच्छा से उस दूसरी स्त्री में कई पुत्र उत्पन्न भये और सबके सब वेद शास्त्र पढ़ थोड़ेही काल में बड़े विद्वान् होगये उन को देख ब्राह्मण अति प्रसन्न होता था परंतु ऐतरेय की माता अपने पुत्रकी मूर्खता देख बहुत दुःखी थी एक दिन अपने पुत्रसे कहनेलगी कि हे ऐतरेय! ये तेरे भाई वेद वेदाङ्गों में पारगामी लोकमें विद्या के बल से प्रतिष्ठा सम्पादन कर अपनी माताको अति आनन्द देते हैं और मेरे मंदभागिनी के तू एकही पुत्र उत्पन्न भया वह भी कुलक्षण और जड़ भया इस कारण हे पुत्र! इस जीवन से जो मुझे मृत्यु प्राप्त हो तो बहुत अच्छा हो यह माताका वचन सुन ऐतरेय वहांसे उठकर यज्ञवाटमें गया जहां ब्राह्मण यज्ञ कर रहे थे ऐतरेय को देखतेही सब की जिह्वा ऐसी कुंठित भई कि एक भी वेदमन्त्र किसीके मुखसे नहीं निकलता था तब तो सब ब्राह्मण मोहित भये ऐतरेयने भी द्वादशाक्षरमन्त्रका उच्चारण किया मन्त्र का उच्चारण करतेही ऐतरेय के मुख से अनर्गल वाणी निकली यह देख सब ब्राह्मण ऐतरेयको प्रणामकर उसकी पूजा करने लगे वह यज्ञ ऐतरेयने पूर्ण कराया और सभा के बीच अङ्गों सहित चारों वेद और छहों शास्त्रों मे परीक्षा दी तब सब ब्राह्मण ऐतरेय की प्रशंसा करने लगे और उसके ऊपर सिद्ध चारण आदिकों ने पुष्पवृष्टि की इस भांति यज्ञ को समाप्त करवाय दक्षिणा में बहुत सा धन पाय अपनी माता को आय आनन्द दिया यह हमने

द्वादशाक्षर मन्त्र का प्रभाव संक्षेप से वर्णन किया जिसके पढ़ने और सुनने से महापातक भी कटजाते हैं जो पुरुष नित्य द्वादशाक्षर मन्त्र को जपता रहे वह निश्चयही विष्णु भगवान्‌के दिव्य लोकमें निवास करता है पापी मनुष्य भी द्वादशाक्षर मन्त्रको जपता रहे तो निस्संदेह उत्तम गति पावे फिर अपने धर्म में स्थित सदाचार और महात्मा पुरुष इस मन्त्रके जप से क्योंकर सद्गति न पावे॥

आठवां अध्याय॥

सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो! "ॐ नमो नारायणाय" यह अष्टाक्षर मन्त्र और "ॐ नमो भगवते वासुदेवाय" यह द्वादशाक्षर मन्त्र है ये दोनों मन्त्र भगवान्‌के सब मन्त्रों में उत्तम हैं परन्तु "ॐ नमः शिवाय" यह शिवजी का षडक्षर मन्त्र सब वेद के अर्थ का सारहै और सब कार्योंका साधन करनेहारा है इसी भांति "शिवतराय" यह पञ्चाक्षर मन्त्र सब मनोरथ सिद्ध करता है "मयस्कराय" यह भी दिव्य पञ्चाक्षर मन्त्र कल्याणदायकहै और "नमस्ते शङ्कराय" यह सप्ताक्षर मन्त्र प्रकृति पुरुषरूप रुद्र का है इन मन्त्रों करके ब्रह्मा, विष्णु, इन्द्रआदि देवता मुनि और उत्तम ब्राह्मण शिवजीका यजन करते हैं "नमः शिवाय, नमस्ते शङ्कराय, मयस्कराय, रुद्राय, शिवतराय" ये पांचों शिवजी के महामन्त्र हैं इनके उच्चारण करने से ब्रह्म-हत्या आदि पांचों महापातक उसी क्षण निवृत्त होजाते हैं हे मुनीश्वरो! पूर्वकाल में बड़ा सामर्थ्यवान् एक

धुन्धुमूक नाम ब्राह्मण था प्रभु नाम मनु के तीसरे आवर्त के त्रेतायुग में और मेघवाहन कल्पमें धुन्धुमूक के घर पुत्र उत्पन्न भया भगवान् ने मेघ का रूप धार शिवजी को अपने ऊपर चढ़ाया परन्तु उनका भार न सम्हारसके इसलिये शिव जी की प्रार्थना कर विष्णु भगवान् ने बहुत तप किया और बड़ा ऐश्वर्य तथा बल शिवजी के अनुग्रह से पाया इस कारण उस कल्प का नाम मेघवाहन भया मेघवाहन कल्पमें ऋषि के शाप से धुन्धुमूक ब्राह्मण के घर बड़ा दुष्ट पुत्र उत्पन्न भया धुन्धुमूक ने अमावास्या के दिन रुद्रमुहूर्त में दिनके समय विना इच्छा अपने विशल्पा नाम स्त्री से संग किया और वह गर्भवती भई समय पूरा होने पर रुद्रमुहूर्त में और शनिदृष्ट लग्न में माता पिता को अरिष्ट देनेहारा पुत्र बड़े कष्टसे उसके उत्पन्न भया उस समय मित्र और वरुण ने कहा कि हे धुन्धुमूक! यह बड़ा दुष्ट पुत्र तेरे घर उत्पन्न भया है परन्तु वशिष्ठजी बोले कि दुष्ट तो ठीकहै परन्तु बृहस्पति के अनुग्रह से यह सब पातकों से मुक्त हो जायगा धुन्धुमूक ऐसे पुत्र को देख अति दुःखी भया परन्तु जातकर्म आदि सब संस्कार उसके करे और विद्या पढ़ाय उसका विवाह किया परन्तु वह अपनी स्त्री को छोड़ एक शूद्रीमें आसक्त भया और उसके साथ मद्यपान कर दिन रात रमण किया करता भोजन भी उसीके साथ करता कुछ काल के अनन्तर किसी निमित्त से उस शूद्रीके साथ धुन्धुमूक के पुत्र का विरोध होगया एक दिन अवसर पाय उस शूद्रीको उस

ब्राह्मण ने मारडाला तब तो उस शूद्रीके भाई बन्धुओंने इकट्ठे हो इसके पिता धुन्धुमूकके प्राण लिये और अन्य भी जो घरमें धुन्धुमूक की स्त्री आदि जीव थे सब का संहार किया परन्तु वह धुन्धुमूक का पुत्र भग गया था इस कारण बचा राजाने उन सब शूद्रोंको प्राणान्त दण्ड दिया इस भांति धुन्धुमूकका और उस शूद्रीका सब कुटुम्ब नष्ट भया धुन्धुमूक का पुत्र भी भय से भगता भगता प्रारब्धवश बृहस्पतिके आश्रममें जाय पहुँचा बृहस्पतिने भी इसे ब्राह्मण जान पाशुपत व्रत पञ्चाक्षर और षडक्षर मन्त्र का उपदेश किया उसने भी मन्त्र पाय एक एक लक्ष जप दोनों मन्त्रों का किया और एक वर्षपर्यन्त पाशुपत व्रत में रहा पीछे आयुष् समाप्त होनेपर मृत्युवश हो यमलोक में गया यमराज ने इसका बड़ा आदर किया और इसके माता पिता स्त्री जो शूद्रोंके हाथ मारे जानेसे नरकों में पड़ेथे सबको छोड़ दिया वह सब अपने कुटुम्ब समेत दिव्य विमान में बैठ शिवजी की आज्ञा से कैलास को गया वहां जाय श्रीमहादेवजी का उत्तम गण होकर आनन्द से निवास करता भया इस कारण अष्टाक्षर और द्वादशाक्षरसे भी पञ्चाक्षर मन्त्रका फल कोटिगुणा अधिकहै षडक्षर मन्त्रको जपे अथवा आदिमें मायाबीज लगाकर जपे वह परमगति को प्राप्त हो हे मुनीश्वरो! यह कथा का सर्वस्व मन्त्रों का फल हमने आपको श्रवण कराया इसको जो पुरुष पठन करे व श्रवण करे अथवा उत्तम ब्राह्मणों को सुनावे वह ब्रह्मलोक में निवास पावे॥

नवां अध्याय॥

शौनक आदि ऋषि पूछतेहैं कि हे सूतजी! पूर्वकाल में देवताओं ने साक्षात् ब्रह्माजीने तथा विष्णु भगवान् ने पाशुपत व्रत किया और आपने वर्णन किया कि अति दुराचार धुन्धुमूक के पुत्र ने पाशुपत व्रत से सद्गति पाई अब आप यह कथन करें कि शिवजी पशुपति क्योंकर हैं और पाशुपत व्रत से सिद्धि क्योंकर होती है यह सुन सूतजी कहनेलगे कि हे मुनीश्वरो! ब्रह्माजी के पुत्र सनत्कुमारजी रुद्रशाप से उष्ट्र की देह धार मरुस्थल में रहे और फिर शिवजी के अनुग्रह से और ब्रह्माजीकी आज्ञासे उस देहको त्याग कर मेरु पर्वतके ऊपर शिलाद के पुत्र नन्दीके समीप आये और उनको प्रणाम कर सनत्कुमारजी प्रश्न करते भये कि हे नन्दीश्वरजी! शिवजी पशुपति क्योंकर हैं यह सुन नन्दीने सनत्कुमारजीको जो उत्तर दिया वह सनत्कुमारजी ने वेदव्यासजी से कहा और व्यासजीने हमको उपदेश किया वही हम आपको श्रवण कराते हैं आप सब शिवजीको नमस्कार कर भक्ति से श्रवण करें यह कह सूत जी बोले कि हे मुनीश्वरो! सनत्कुमारजीने पूछा कि हे नन्दीश्वरजी! पशु कौन है और शिवजी पशुपति क्योंकर हैं कौन से पाशसे पशु बँधे हैं और उनकी मुक्ति क्योंकर होती है यह आप कथन करें यह सनत्कुमारजी का प्रश्न सुन नन्दी कहने लगे कि हे सनत्कुमारजी! आप शान्तचित्त और परम शिवभक्त हैं इस कारण हम आप से यह सब रहस्य कथन करते

हैं ब्रह्मा से लेकर स्थावरपर्यंत सब पशु हैं और शिवजी उन सबके स्वामी हैं इस कारण पशुपति कहाते हैं वेही मायापाश से पशुकी भांति सब को बांधते हैं और ज्ञान-योगसे शिवही मुक्त करते हैं शिवजीके विना अविद्या-पाशमें बँधेहुये जीवों को कोई नहीं छुटा सक्ता चौबीस तत्त्व परमेश्वर के पाश हैं उन पाशों से जीवों को बांधता है और अपने भक्तों को पाशों से छुटाता है दश इन्द्रिय, मन, बुद्धि, अहङ्कार, चित्त, भूत, तन्मात्रा ये सब पाशहैं इनसे बँधेहुये अपने भक्तों को परम दयालु वह शिवही मुक्त करता है परमेश्वर के सेवक भक्त कहाते हैं क्योंकि भज धातु सेवा अर्थ में है उसीसे भक्त यह शब्द सिद्ध होताहै ब्रह्मासे लेकर स्तम्बपर्यन्त सब जीवों को त्रिगुण पाशों से बांध परमेश्वर कार्य करवाता है और दृढ़ भक्ति से जो पशु परमेश्वर का आराधन करते हैं उनको उस पाशसे मुक्त कर देता है सब पाशों को काटनेहारी परमेश्वर की भक्तिहै मन वचन और कर्म से भक्ति तीन प्रकार की है शिव सत्य है और सर्वव्यापक है यह जानना और ध्यान करना यह मानस भक्ति है प्रणव आदि मन्त्रों का जप वाचिक भक्ति है और प्राणायाम आदि कायिक भक्ति है धर्म अधर्मरूप पाशों से बँधेहुये जीवों को मुक्ति देनेहारा एक शिवही है चौबीस तत्त्व और शब्द आदि विषय माया के पाश हैं तथा अविद्या, अस्मिता, राग, द्वेष और अभिनिवेश ये पांच क्लेश भी पाशही हैं इन सब में बँधे जीवों को शिवही मुक्ति देताहै तम, मोह, महामोह, तामिस्र और अन्धतामिस्र ये पांच भेद

अविद्याके हैं अविद्या को तम अस्मिता को मोह रागको महामोह द्वेषको तामिस्र और अभिनिवेश को अन्धतामिस्र कहते हैं तम आठ प्रकार का है मोह आठ प्रकार का महामोह दश प्रकार का तामिस्र अठारह प्रकार का अन्धतामिस्र अठारह प्रकार का है सर्वान्तर्यामी शिव से अविद्या का कुछ भी सम्बन्ध नहीं हुआ न है और आगे भी न होगा इसी भांति द्वेष से भी तीनों कालों में परमेश्वर का सम्बन्ध नहीं अभिनिवेश से भी कुछ सम्बन्ध नहीं शुभ अशुभ कर्म और उनके फलों से भी तीन काल में शिवका सम्बन्ध नहीं सुख दुःख आशय कर्मसंस्कार और भोगसंस्कारों से परमेश्वर का कुछ सम्बन्ध नहीं जड़ और चैतन्य इस प्रपंच से शिव परे है लोक में सब से अधिक ज्ञानैश्वर्य है वह शिवमें है इस कारण शिव सब से पर है प्रत्येक सृष्टि के आरम्भ में जो ब्रह्मादिक उत्पन्न होते हैं उनको सब शास्त्रों का उपदेश शिवही करते हैं इस कारण शिव गुरुओंके भी गुरुहैं ब्रह्मादिक कालके वशहैं और शिव कालातीतहैं शिव और जीव का सेव्य सेवक सम्बन्ध अनादिहै यद्यपि शुद्ध चैतन्य शिवको अपना कुछ प्रयोजन नहीं तो भी सब का कारण वही है उस शिवका वाचक प्रणवहै शिव रुद्र आदि शब्दों में प्रणव श्रेष्ठहै शिवके वाचक प्रणवके जपसे और भावन से जो सिद्धि प्राप्त होतीहै वह और मन्त्रोंके जपसे नहीं मिलसकती पाशुपतयोग शिवजीने सूर्यरूपसे याज्ञवल्क्य के तपसे प्रसन्नहो उसको उपदेश किया याज्ञवल्क्य मुनि ने कहा कि

हे गार्गि ! अयोगी पुरुष परमेश्वरको स्थूल विराट्रूप से वर्णन करतेहैं और योगी उसको निषेध मुखसे प्रतिपादन करते हैं अर्थात् वह परमेश्वर अदीर्घ, अलोहित, अमस्तक, अनस्तमित अर्थात् कभी अस्त नहीं होता इसीसे नित्यानन्द रसस्वरूप असंग, अगन्ध, अरस, अचक्षुष्क, अकर्ण, अवाङ्मन, सगोचर, अतेजस्क, अप्रमाण, असुख, अनामगोत्र, अमर, अजर, अनामय, अमृत, ॐकार प्रतिपाद्य, असंवृत, अपूर्व, अपर, अबाह्य, अभोक्ता और सर्वभोक्ता है इस भांति पाशुपतयोग से जो परमेश्वर को जाने वह अन्तकाल में परमेश्वरमें ही लीन होताहै हे पुरुष ! ॐकाररूप दीपक को प्रज्वलित कर और पवन से भी अधिक वेगवाले तथा सब इन्द्रियों के स्वामी मनको रोंक कर अन्तर्यामी और सूक्ष्मरूप परमेश्वर को ढूंढ़ वाग्जालों करके क्यों वृथा विवाद करताहै और किसीका तुझको भय नहीं अपने देहमें विराजमान शिवको देख और शास्त्ररूप गहरे अँधेरे में मत फिर यह मुनियों के प्रति शिवजी का किया उपदेश मुमुक्षु पुरुष पंडितों के साथ विचार कर भलीभांति जाने तो आनन्दरूप अपने आत्माको पंचकोशों से बचाय मोक्षको प्राप्त करता है ॥

दशवां अध्याय ॥

सनत्कुमारजी कहते हैं कि हे नन्दिकेश्वरजी ! आप शिवजी की महिमा फिर भी वर्णन करें आपके मुखसे शिवजी का गुण सुनते सुनते हमारा आत्मा तृप्त नहीं

होता यह सुन नन्दी कहने लगे कि हे सनत्कुमार ! हम संक्षेप से शिवजीकी महिमा आपसे कथन करते हैं शिव को प्रकृति,बुद्धि,अहंकार,मन,चित्त, श्रोत्र, त्वचा, चक्षु, जिह्वा, घ्राण,वाक्, पाणि, पाद, पायु, उपस्थ और भूत तन्मात्रा इन का कुछ भी बंधन नहीं वह शिव स्वभाव सेही नित्य शुद्ध,बुद्ध,चैतन्यस्वरूप है और उसको मुनि लोग नित्य मुक्त कहते हैं उस अनादि मध्य पुरुषरूप शिवकी आज्ञा से प्रकृति बुद्धि को उत्पन्न करती है बुद्धि से अहंकार, अहंकारसे दश इन्द्रिय, मन और तन्मात्रा उस अन्तर्यामी शिवकी आज्ञा से उत्पन्न होतेहैं तन्मात्राओं से आकाश आदि पंचमहाभूत उत्पन्न होतेहैं ब्रह्मा से लेकर तृणपर्यंत सबजीवोंके देहोंको शिवजीकी आज्ञा से पंचमहाभूत उत्पन्न करतेहैं शिवजी की आज्ञासे बुद्धि सब अर्थोंका निश्चय करती है अन्तर्यामी उस शिवका ऐश्वर्य और विभूति स्वभाव से हीहैं शिवकी आज्ञा से अहंकार सब अर्थोंका अवमान करता है चित्त स्मरण करताहै, मन संकल्प करताहै कर्ण आदि अपने अपने विषयों को ग्रहण करतेहैं यह शिवकाही किया नियमहै वाणी वचन कहती है व किसी पदार्थका लेनदेन नहीं करसक्ती हस्त ग्रहण करते हैं गमन आदिनहीं करसक्ते पाद गमन करते हैं उत्सर्ग अर्थात् मलका त्याग नहीं करसक्ते पायु उत्सर्ग करता है बोल नहीं सक्ता परमेश्वरकी आज्ञासे सब जीवों को उपस्थ आनन्द देता है उसी शिवके शासनसे आकाश सब जीवों को अवकाश देता है प्राण अपानआदि अपने भेदों करके

सब जीवों के शरीरको वायु धारण करताहै और शिवकी आज्ञासेही सात स्कन्धों में आवह आदि भेदोंसे स्थित होकर लोकयात्रा को करता है और नाग आदि भेदों से शरीरों में स्थितहै देवताओं का हव्य, पितरों का कव्य, अग्नि धारण करता है और सब जीवों के उदर में स्थित होकर आहार का परिपाक करताहै परमेश्वर की आज्ञासे जल सबको जिलाताहै और पृथ्वी चराचर जीवोंको धारण करतीहै शिवकी आज्ञाको कोई भङ्ग नहीं कर सकता शिव की आज्ञासे ही इन्द्र सब जीवोंको वृष्टिसे धारण करता है यमराज जीते हुये जीवों को व्याधि और मृत हुओं को यातना देताहै और शिवकीही अलंघनीय आज्ञासे विष्णु भगवान् देवताओं की रक्षा और दैत्यों तथा अधर्मियों का संहार करते हैं वरुण जल से लोकों का संभावन करताहै और दैत्य तथा दुष्टजीवोंको अपने पाशोंसे बांध जल में डुबो देता है शिवकी आज्ञा से कुबेर प्रारब्धानुसार सब जीवोंको धन देता है उसी शिव के शासन से सूर्यनारायण उदय अस्तरूप कालको धारण करते हैं चन्द्रमा सब ओषधियों और जीवोंको अपनी अमृतमय किरणों से आनन्द देता है। आदित्य, वसु, रुद्र, मरुत, अश्विनीकुमार, गन्धर्व, सिद्ध, साध्य, चारण, यक्ष, राक्षस, पिशाच, ग्रह, नक्षत्र, तारा, यज्ञ, वेद, तप और ऋषियों के समूह सब शिवकी आज्ञा में स्थित हैं। पितरों के समूह, सात समुद्र, पर्वत, नदी, सरोवर, वन सब शिव के नियोग में हैं। कला, काष्ठा, मुहूर्त, दिन, पक्ष, मास, ऋतु, अयन, युग और मन्वन्तर सब शिवकी आज्ञा से

स्थित हैं पर परार्ध आदि संख्या, देवताओंकी आठ जाति, तिर्यक् अर्थात् पशु पक्षी आदिकों की पांच जाति और मनुष्य ये चौदह योनियों में स्थित सम्पूर्ण भूत सब लोकों के निवासी शिवकी आज्ञा के अधीन हैं पाताल आदि चौदह भुवन सब पदार्थों करके युक्त और आवरणों सहित ब्रह्माण्ड शिवकी आज्ञा में स्थित हैं पीछे जितने ब्रह्माण्ड होचुके और आगे जो होंगे सब शिवकी आज्ञा में हैं इस प्रकार कोई भी ऐसा जड़ अथवा चैतन्य पदार्थ नहीं है जो शिव की आज्ञा से बाहर हो ॥

ग्यारहवां अध्याय ॥

सनत्कुमारजी कहते हैं कि हे परम शिवभक्त, नन्दिकेश्वरजी! आप शिवविभूतियों का वर्णन विस्तार से करें यह सुन नन्दिकेश्वर कहने लगे कि हे ब्रह्मपुत्र, सनत्कुमार! योगीन्द्र शिव पार्वती की विभूतियों का हम वर्णन करते हैं आप भक्तिसे श्रवण करें परमात्मा को शिव अर्थात् कल्याणरूप कहते हैं और उसकी पत्नी शिवा अर्थात् कल्याणरूपा है, शिव ईश्वर है, पार्वती माया है, शिव पुरुष, पार्वती प्रकृति, शिव अर्थस्वरूप, पार्वती वाणी अर्थात् शब्दरूपा, शिव दिन, पार्वती रात्रि, शिव यज्ञ, पार्वती दक्षिणा, शिव आकाश, पार्वती पृथ्वी, शिव समुद्र, पार्वती बेला, शिव वृक्ष, पार्वती लता, शिव ब्रह्मा, पार्वती सावित्री, शिव विष्णु, पार्वती लक्ष्मी, शिव इन्द्र, पार्वती शची, शिव अग्नि, पार्वती स्वाहा, शिव

यमराज, पार्वती यमपत्नी, शिव वरुण, पार्वती वरुण की भार्या, शिव वायु, पार्वती वायुकी स्त्री, शिव कुबेर, पार्वती ऋद्धिनाम कुबेर की भार्या, शिव चन्द्रमा, पार्वती रोहिणी, शिव सूर्य, पार्वती सुवर्चला, शिव स्कन्द, पार्वती देवसेना, शिव दक्षप्रजापति, पार्वती प्रसूति, शिव मनु, पार्वती शतरूपा, शिव रुचिनाम प्रजापति, पार्वती आकूति, शिव भृगु, पार्वती ख्याति, शिव मरीचि, पार्वती संभूति, शिव शुक्र, पार्वती रुचिरा, शिव अंगिरा, पार्वती स्मृति, शिव पुलस्त्य, पार्वती प्रीति, शिव पुलह, पार्वती दया, शिव क्रतु, पार्वती सन्नति, शिव अत्रि, पार्वती अनसूया, शिव वशिष्ठ, पार्वती ऊर्जा है। इस भांति जगत् में सब पुरुष शिव और स्त्री पार्वती हैं पुंल्लिङ्गवाचक सब पदार्थ शिव की विभूति हैं और स्त्रीलिंगवाचक पार्वती की विभूति हैं सब पदार्थों की शक्ति पार्वतीरूप है आठ प्रकृति और विकृति पार्वती की विभूति हैं जिस भांति अग्नि में विस्फुलिंग हैं इस प्रकार शिव में सब जीव हैं सब शरीर गौरीरूप हैं और शरीरी अर्थात् जीव शिवरूप हैं श्राव्य अर्थात् सुननेके योग्य जो पदार्थ सो पार्वती और श्रोता शिव हैं सब विषय पार्वती और विषयी शिव हैं स्रष्टव्य अर्थात् सिरजने योग्य सब पदार्थ पार्वती और स्रष्टा अर्थात् सिरजनेहारा शिव है दृश्य पार्वती द्रष्टा शिव रस पार्वती रसका आस्वादन करनेहारा शिव घ्रेय अर्थात् सूंघने के सब पदार्थ पार्वती और घ्राता अर्थात् सूंघनेहारा महेश्वर मन्तव्य अर्थात् मानने के योग्य पदार्थ पार्वती मन्ता अर्थात् मनन करनेहारा शिव बोद्धव्य

पार्वती बोद्धा शिव जलहरी पार्वती और लिंग शिव है इसी कारण सब सुर असुर जलहरी में शिवलिंग स्थापन कर पूजतेहैं जो पदार्थ जगत् में लिंगयुक्त हैं सब शिव की विभूति और भगयुक्त पार्वती की विभूति हैं सम्पूर्ण ब्रह्माण्डमें ज्ञेय अर्थात् जानने योग्य पदार्थ पार्वती और ज्ञाता अर्थात् जाननेहारा शिवहै क्षेत्र पार्वती और क्षेत्रज्ञ परमेश्वरहै जिस राजा के राज्य में शिवको छोड़ मनुष्य और देवता का यजन करते हैं वह राजा अपने राज्य सहित रौरव नरक को जाता है शिव को छोड़ और देवता में भक्ति करना ऐसा है जैसा अपने पति को त्याग कर नारीका जार में आसक्त होना ब्रह्मा आदि देवता, बड़े बड़े राजा मुनि आदि सब शिवलिंग की पूजा करते हैं विष्णुके अवतार रामचन्द्रजीने ब्रह्माके प्रपौत्र रावणको मारनेकेलिये तथा तदुत्पन्न ब्रह्महत्या-रूप पापनिवृत्ति के लिये समुद्र के तटपर शिवलिंग स्थापन किया हज़ारों पाप करके और सैकड़ों ब्राह्मण मारकर जो शुद्धभाव से शिवजी के शरण में जाय वह निस्सन्देह मुक्ति ही पावे सब लोक लिंगमय हैं और लिंगमें स्थितहैं इस कारण शाश्वतपद की इच्छावाला पुरुष सदा शिवलिंग की पूजा करे सर्वरूप से स्थित शिव पार्वतीका सदा पूजन, वन्दन और चिन्तन कल्याण के लिये करना उचित है॥

बारहवां अध्याय॥

सनत्कुमारजी कहते हैं कि हे नन्दिकेश्वरजी! शिव

जीकी आठ मूर्तियोंका ऐश्वर्य आप हमको श्रवण करावें नन्दिकेश्वर ने कहा कि हे ब्रह्मपुत्र! हम आप को अष्ट-मूर्तियों की महिमा श्रवण कराते हैं प्रीतिसे सुनो भूमि, जल, अग्नि, वायु, आकाश, सूर्य, चन्द्र और यजमान ये शिव की आठ मूर्ति हैं आकाश, आत्मा, चन्द्र, अग्नि, सूर्य, मेघ, पवन ये भी शिवकी मूर्तिहैं सूर्यरूप परमात्मा में अग्निहोत्रके अर्पण करने से सब देवता तृप्त होते हैं जिसभांति वृक्षका मूल सींचने से शाखा पत्र आदि का पोषण होता है इसीभांति एक शिव के यजन से सब का संतोष है वह सूर्यरूप सदाशिव बारह रूपों से संसार का पालन करता है अमृता नाम किरण उस सूर्य की सब भूतों को जीवन देतीहै चन्द्र नाम किरण ओषधियों की वृद्धि के लिये हिमकी वृष्टि करती है शुक्लनाम किरण गर्मी करती है जिससे सब शस्य अर्थात् खेती पकती है हरिकेश नाम रश्मि नक्षत्रों को तेज देतीहै विश्वकर्म नाम किरण बुधका पोषक है विश्वव्यच किरण शुक्रको तेज देती है संयद्वसु नाम किरण मंगल को पोषण करती है अर्वावसु किरण बृहस्पतिको तेज देती है स्वराट् नाम किरण शनैश्चर का पोषक है और उस शिवस्वरूप सूर्य का सुषुम्णाख्य किरण चन्द्रमा को पुष्ट करती है उस जगद्गुरु सदाशिव की चन्द्ररूप मूर्ति सौम्य पदार्थों की प्रकृति है वही चन्द्ररूप सब जीवों के देहों में वीर्यरूप से स्थित है और सब जीवों का मन वही चन्द्ररूप शिवहै षोडश कलात्मक चन्द्ररूप महेश्वर सबके देहों में स्थित है वही देवता

और पितरों को अमृत करके पुष्ट करता है वही जीवों के कल्याण के अर्थ सब ओषधियों को पोषण करता है शिवकी चन्द्ररूप मूर्तिको पार्वती ही जानो यज्ञ जीव तप जल ओषधी आदि सब पदार्थों का स्वामी वही चन्द्ररूप शिव है सब इन्द्रिय और उनके अधिष्ठाता देवताओं करके भी वह निराकृत अमृतमय शिव अग्राह्य है अर्थात् इन्द्रियआदि करके उसका ज्ञान नहीं होसकता जब वह शिव जीवरूप से अपने आत्मा में स्थित हो जाता है तब मद्य की भांति मद करनेहारी माया लीन होजाती है शिवकी यजमानमूर्ति हव्य करके देवताओंका और कव्य करके पितरों का ...षण करती है वही मूर्ति अग्निमें आहुति देकर वृष्टि करतीहै जिससे सब चराचर जगत्का निर्वाह होताहै ब्रह्माण्डके भीतर बाहर व्याप्त और सब शरीरोंमें स्थित जल उस शिवकी मूर्तिहै नदी नद समुद्र आदि में वही शिवकी जलमूर्ति स्थितहै और सबका जीवन करती है और चन्द्ररूप पार्वती के हृदयमें भी वही शिवकी जलमूर्ति स्थितहै ब्रह्माण्डों के भीतर बाहर यज्ञों में और प्रत्येक जीवों के शरीर में वह अग्नि-मूर्ति शिव स्थित है देवताओं के लिये हव्य और पितरों के लिये कव्य वही शिवकी अग्निमूर्ति पहुँचाती है इस कारण सब मूर्तियों में अग्निमूर्ति उत्तम है सब ब्रह्माण्डोंके भीतर बाहर स्थित उन्चास भेदोंसे स्थित सब जीवोंकी प्राणरूप उस शिवकी वायुमूर्ति है प्राण आदि नाग कूर्म आदि और आवह आदि भेद सब उस वायुमूर्ति शिवके हैं ब्रह्माण्डों के भीतर बाहर और सब

शरीरों में शिवकी आकाशमूर्ति स्थित है सब ब्राह्मणों की मुख्य देवता और चराचर जगत् को धारण करने-हारी शिवकी भूमि मूर्ति है सब स्थावर जंगम जीवों के शरीर पंचमहाभूत अर्थात् शिवकी पांच मूर्तियों से बने हैं पंचभूत चन्द्र सूर्य और आत्मा ये शिवकी आठ मूर्ति हैं आत्मा जिसको यजमान भी कहते हैं वह शिव की आठवीं मूर्ति है और सब शरीरों में स्थित है दीक्षित ब्राह्मण को भी यजमान अथवा आत्मा कहते हैं कल्याण की इच्छावाले पुरुषों को ये शिव की आठ मूर्ति सदा वंदनीय और पूज्य हैं॥

तेरहवां अध्याय॥

सनत्कुमारजी कहते हैं कि हे नन्दिकेश्वर जी! फिर भी आप अष्टमूर्ति शिवकी महिमा वर्णन करें निरन्तर हमारा आत्मा शिवजी के गुणानुवाद को श्रवण करना चाहता है यह सुनि नन्दी कहने लगे कि हे सनत्कुमार जी! अष्टमूर्तियों से सब जगत् में व्याप्त श्रीमहेश्वर की महिमा हम वर्णन करते हैं आप श्रवण करें चरा-चर जीवों के धारण करनेहारे पृथ्वीरूप शिवको वेद और शास्त्रों के जाननेहारे मुनि लोग शर्व कहते हैं शर्व की भार्या विकेशी और पुत्र अंगारक है जलमूर्ति शिव को भव कहते हैं उनकी पत्नी उमा और पुत्र शुक्र है अग्निमूर्ति शिवका नाम पशुपति है उनकी भार्याका नाम स्वाहा और पुत्र का नाम षण्मुख अर्थात् कार्तिकेय है पवनात्मा शिवका नाम ईशान है उनकी पत्नी शिवा और

पुत्र मनोजव नामक है आकाशरूप शिवको भीम कहते हैं उनकी भार्या दशदिशा और पुत्र सर्ग है सूर्यमूर्ति सदाशिव को देवता लोग रुद्र कहते हैं उनकी भार्या सुवर्चला और पुत्र शनैश्चर है सोममूर्ति महेश्वर को महादेव कहते हैं उनकी पत्नी रोहिणी और पुत्र बुध है यजमानरूप महादेवजी को उग्र कहते हैं और कोई ईशान भी कहते हैं उन के मत में पवन मूर्ति शिव की उग्र संज्ञाहै यजमानमूर्ति उग्र नाम सदाशिव की पत्नी दीक्षा और पुत्र सन्तान नामक है सब जीवों के शरीरों में जो कठिनसा पार्थिव भाग है वह शर्व का अंश है द्रव-रूप जलभाग भव का अंश है तेजोरूप सब के शरीर में अग्नि का भागहै वह पशुपति का अंशहै प्राण आदि वायुभाग ईशान का अंशहै सब देहों में सुषिर अर्थात् छिद्ररूप आकाश का भाग भीम का अंश है सबके नेत्र आदिकों में जो तेज सूर्य का भाग है वह रुद्र का अंश है सब का चन्द्ररूप मन महादेव का अंश है सब का आत्मा यजमानरूप उग्र नामक मूर्ति का अंश है चौदह योनियों में जीव कहीं उत्पन्न हो परंतु उसके शरीरमें शिवकी अष्टमूर्ति अवश्य रहेंगी शरीरमें सात मूर्ति हैं और आठवीं यजमान नाम मूर्ति सबका आत्मा है हे सनत्कुमारजी! जो अपना कल्याण चाहते हो तो सर्वलोकात्मक अष्टमूर्ति परमेश्वर को सब प्रकार से भजो किसी जीवपर भी तुम दया करोगे तो वही शिव का आरधन होगा किसी जीव को क्लेश दोगे तो वह क्लेश सर्वव्यापी शिव को होगा किसी जीव की अवज्ञा

करोगे वह शिवही की अवज्ञा अर्थात् अनादर होगा किसी जीवको अभय दोगे वह शिव का आराधन होगा सबको अभय देना और सबके ऊपर उपकार करना यह सब पूजनों में उत्तम शिवपूजन है इस कारण हे सनत्कुमारजी! तुम भी शिवजी की प्रसन्नता के अर्थ सब जीवों को अभयदान करो और सबके ऊपर उपकार किया करो इससे उत्तम परमेश्वर के प्रसन्न करने का कोई उपाय नहीं है॥

चौदहवां अध्याय॥

सनत्कुमारजी कहते हैं कि हे नन्दिकेश्वरजी! आप हमको परम पवित्र और कल्याणदायक पंचब्रह्मोंका वर्णन विस्तार से श्रवण करावें यह सनत्कुमारजी का वचन सुन नन्दी कहने लगे कि हे सनत्कुमार! पंचब्रह्म शिव काही स्वरूप हैं अब हम आपको उनका तत्त्व बताते हैं सब लोकोंका सिरजनेहारा पालन करनेहारा और संहार करनेवाला वह पंचब्रह्मरूप शिव है सब जगत् का उपादान कारण और निमित्त कारण वह शिव है उसकी पंचब्रह्म नामक पांच मूर्ति हैं शिवकी पहिली मूर्ति क्षेत्रज्ञ है जिसको ईशान कहते हैं जो सब प्रकृतिवर्गका भोग करताहै दूसरी मूर्ति प्रकृति है जिसका नाम तत्पुरुष है वह परमात्मा की गुहाहै तीसरी मूर्ति बुद्धि है जिसके धर्म आदि आठ अंग हैं उसको अघोर कहते हैं चौथी मूर्ति अहंकार है जो सब जगत् में व्याप्त है उसका नाम वामदेवहै पांचवीं शिव की मूर्ति मनस्तत्त्व है जो

सब शरीरों में स्थित है उसका नाम सद्योजात है श्रोत्र इन्द्रियरूप से ईशान सबके देहों में स्थित हैं त्वक् इन्द्रियरूप तत्पुरुष हैं चक्षुः इन्द्रियरूप अघोर हैं रसना इन्द्रियरूप वामदेव हैं और घ्राणइन्द्रियरूप से सब जीवों के शरीर में सद्योजात विराजमान हैं इसी भांति सब प्राणियोंके देहोंमें वाक्इन्द्रिय ईशान पाणिइन्द्रिय तत्पुरुष पादइन्द्रिय अघोर पायुइन्द्रिय वामदेव और उपस्थइन्द्रियरूप से सबके देहों में सद्योजात स्थित हैं और वेद शास्त्र जाननेहारे विद्वान् यह भी कहते हैं कि शब्दतन्मात्रारूप ईशान हैं जिनसे आकाश उत्पन्न हुआ है स्पर्शतन्मात्रारूप तत्पुरुष हैं जो पवन के उत्पन्न करनेहारे हैं रूपतन्मात्रास्वरूप अघोर हैं जिनसे अग्नि उत्पन्न हुआ है रसतन्मात्रारूप वामदेव जलों के सिरजनेहारे हैं गंधतन्मात्रारूप सद्योजात हैं जिनने पृथ्वी को रचा है आकाशरूप बड़े विस्तार से उत्पन्न भये शिवको ईशान कहते हैं सब जगत् में व्याप्त पवन-रूप परमेश्वर को तत्पुरुष कहते हैं वेदवक्ताओं के पूज्य अग्निरूप शिवको अघोर कहते हैं सब जगत् के जीवन जलरूप महेश्वरको वामदेव कहते हैं चराचर संसारको धारण करनेहारे भूमिरूप शिवका नाम सद्योजात है सब स्थावर जंगमरूप जगत् पंचब्रह्मस्वरूप है तत्त्ववेत्ता मुनि कहते हैं कि यह शिवका विलास है जगत् में जो पच्चीस तत्त्वोंका प्रपंच देख पड़ता है यह सब पंचब्रह्म-रूप शिव है इस कारण कल्याण की इच्छावाले पुरुषों को सदा वह शिवही पूजनीय और चिन्तनीय है॥

पंद्रहवां अध्याय ॥

सनत्कुमारजी कहते हैं कि हे नन्दिकेश्वरजी! आप सर्वज्ञ हैं इस कारण और भी शिवजीका प्रभाव आप वर्णन करें सनत्कुमारजीका वचन सुन नन्दी कहते हैं कि हे सनत्कुमार! अनेक मुनियों ने अनेक प्रकारों से शिवमाहात्म्य वर्णन किया है वह हम आपको सुनाते हैं एकाग्रचित्त होकर श्रवण करो कोई सत् कोई असत् और कोई मुनि उस शिवको सत् असत्का पति कहतेहैं भूतों के भाव आदि विकारसे वह शिव व्यक्त और सत् कहाता है और भूतभावविकारके विना उसीको अव्यक्त और असत् कहते हैं परंतु सत् और असत् शिवकेही रूप हैं उससे भिन्न नहीं और इन दोनों का पति भी शिव ही है इस कारण वह सदा सदसत्पति भी कहाता है कोई मुनि शिवको क्षर अक्षर और क्षर अक्षर से पर कहते हैं अव्यक्त को अक्षर और व्यक्त को क्षर कहते हैं ये दोनों रूप भी शिवके हैं और इनसे पर होने करके उस महेश्वरको तत्त्ववेत्ता मुनि क्षर अक्षर से पर कहते हैं इस कारण सब जीवों में व्याप्त जो शिवको स्मरण करता है वह मुक्त होता है कोई आचार्य परमकारण शिव को समष्टिव्यष्टिरूप और समष्टिव्यष्टिका कारण भी कहते हैं योगशास्त्रके ज्ञाता मुनि अव्यक्तको समष्टि और व्यक्त को व्यष्टि कहते हैं और इन दोनोंका कारण भी शिवहीहैं इस कारण समष्टि आदि भी शिवकेही रूप हैं कोई महात्मा क्षेत्र और क्षेत्रज्ञरूप से शिवको कहते

हैं चौबीस तत्त्वोंको क्षेत्र कहतेहैं और उनका भोग करने-
हारा पुरुष क्षेत्रज्ञ है शिवसे भिन्न कोई पदार्थ जगत् में
नहीं है अपरब्रह्म अर्थात् शब्दब्रह्म और परब्रह्म वही
अनाद्यंत महादेव है भूत, इन्द्रिय, अन्तःकरण आदि
का शब्द आदि विषयात्मक अपरब्रह्म है और सच्चिदा-
नन्दस्वरूप परब्रह्म है ये दोनों ब्रह्म शिव ही रूप
हैं कोई शिव को विद्या अविद्यारूप कहते हैं लो
धाता और विधाता वही आदिदेव महेश्वर है
विद्या कहते हैं और सम्पूर्ण प्रपंच अविद्या है
विद्या और पर ये भी शिवके रूप कोई आगमके जान
हारे योगी कहते हैं बहुत प्रकार के अर्थों में विज्ञानक
नाम भ्रान्ति है सबको आत्मरूप से जानना विद्या है
और विकल्परहित तत्त्व को पर कहतेहैं वह पर तत्त्वरूप
शिव सर्वत्र व्याप्त है और कुछ नहीं व्यक्त अव्यक्त और
ज्ञ ये तीन नाम कोई शिव के कहते हैं तेईस तत्त्वों का
नाम व्यक्त है प्रकृति को अव्यक्त कहते हैं और ज्ञ शब्द
पुरुष का वाचक है जो सबगुणों का भोग करता है ये
तीनों शिव के रूप हैं इस कारण जगत्में शिव से भिन्न
कोई पदार्थ नहीं ॥

सोलहवां अध्याय ॥

सनत्कुमार कहते हैं कि हे नन्दिकेश्वरजी ! आप
और भी वर्णन करें कि मुनि लोग शिवके क्या क्या नाम
धरते हैं आपकी अमृतरूप वाणी को पान करते
मेरा मन नहीं भरता यह सुन नन्दीने कहा कि हे ब्रह्मपुत्र

फिर भी हम वर्णन करते हैं जो शिवके नाम मुनि कहते हैं कोई कोई वेदसमुद्र के पारगामी ऋषि क्षेत्रज्ञ प्रकृति अव्यक्त और कालात्मा उस महेश्वर को कहते हैं क्षेत्रज्ञ पुरुष को कहते हैं प्रकृति प्रधान का नाम है प्रकृति के सब विकार व्यक्त कहाते हैं और प्रकृति तथा व्यक्त के विस्तार का मुख्य कारण काल है ये चारों परमेश्वरके रूप हैं कोई आचार्य हिरण्यगर्भ, पुरुष, प्रधान और व्यक्त ये चार रूप परमेश्वरके बताते हैं इस जगत् का कर्ता हिरण्यगर्भ अर्थात् ब्रह्मा है भोक्ता पुरुष अर्थात् विष्णु मुख्य कारण प्रधान और सब विकार व्यक्तहैं ये चारों और बुद्धि आदि चारों शिव के रूप हैं कोई शिवको पिंडस्वरूप और जातिस्वरूप कहते हैं चराचर जगत् के शरीर पिंड कहाते हैं और जातिशब्द उनके रूपों का वाचक है यथा मनुष्यजाति पशुजाति इत्यादि कोई शिवको विराट् और हिरण्यगर्भ कहते हैं संपूर्ण लोक विराट् है और लोक का कारण हिरण्यगर्भ है कोई योगी शिव को सूत्ररूप कहते हैं क्योंकि संपूर्ण लोक मणियों की भांति उसमें प्रोत अर्थात् पिरोये हुये हैं कोई कोई महात्मा स्वयंज्योति और स्वयंवेद्य शिव को अन्तर्यामी और पर कहते हैं सब जीवों के शरीर में वर्तमानहै इस कारण अन्तर्यामी और सबसे उत्तमहै इस निमित्त पर कहाता है प्राज्ञ, तैजस और विश्व ये तीनों रूप भी शिव के हैं इनकोही विराट्, हिरण्यगर्भ और अव्याकृत कहते हैं और सुषुप्ति, स्वप्न तथा जाग्रत् ये तीनों अवस्था भी इनकी वाचक हैं तीनों अवस्था में

वर्तमान उस तुरीयरूप शिव के हिरण्यगर्भ पुरुष और काल ये तीनों रूप जगत् का सृष्टि, स्थिति और संहार करते हैं रुद्र, विष्णु और ब्रह्मा ये तीनों अवस्था शिव की हैं इनकाही आराधन करके जीव मुक्ति पाते हैं कर्ता, क्रिया, कार्य और कारण ये चारों भी शिव के रूप हैं प्रमाता, प्रमाण, प्रमेय और प्रमिति ये भी शिवके रूप हैं ईश्वर, अव्याकृत प्राण, विराट्, भूत, इन्द्रिय और आत्मा ये सब शिव के ही विकार हैं जैसे समुद्रका तरङ्ग ईश्वर जगत् का निमित्त कारण है अव्याकृत प्रधान को कहते हैं प्राण हिरण्यगर्भ का नाम है विराट् लोक का वाचक है महाभूत ही भूत कहाते हैं और कार्य इन्द्रिय है परमात्मा शिव से भिन्न कोई नहीं है शिव से पच्चीस तत्त्व उत्पन्न भये हैं जिस भांति जल से तरङ्ग उत्पन्न होते हैं परन्तु शिवतत्त्व पच्चीस तत्त्वों से परहै तत्त्व शिव से भिन्न नहीं जैसे कटक कुण्डल आदि सुवर्ण से भिन्न नहीं होसकते सदाशिव आदितत्त्व भी शिवतत्त्व से ही उत्पन्न भये हैं माया, विद्या, क्रियाशक्ति ज्ञानशक्ति और क्रियामयी भी शिव से उत्पन्न भई हैं जिस प्रकार सूर्य से किरणें उत्पन्न होती हैं। हे सनत्कुमार! जो सब प्रकार से कल्याण चाहते हो तो सर्वात्मा और सर्वाश्रय शिव को भजो उसके विना जगत् में कोई दूसरी वस्तु नहीं है॥

सत्रहवां अध्याय॥

सनत्कुमारजी पूछते हैं कि हे सब गणों के स्वामी, नन्दिकेश्वरजी! शिवजी शरीरी क्योंकर भये रुद्र कैसे

हैं सर्वात्मा शिवजी किस भांति हैं पाशुपतव्रत क्योंकर है और देवताओं ने शिवजी को कैसे सुना और देखा यह आप वर्णन करें आपके वचनामृत सुनने से मुझे तृप्ति नहीं होती है यह सनत्कुमारजी का प्रश्न सुन प्रसन्न हो नन्दी कहनेलगे कि हे सनत्कुमारजी! अव्यक्त अर्थात् परमात्मा से स्थाणु अर्थात् जगत्रूप मण्डप के स्तम्भ और मङ्गलमूर्ति शिव प्रकट भये उन्होंने अपने मुख से उत्पन्न भये ब्रह्माजीको सम्मुख खड़े देखा और जगत् रचने की आज्ञा दी उसने भी परमेश्वर की आज्ञा पाय सब जगत् रचा वर्ण और आश्रमों की व्यवस्था की यज्ञ के लिये सोम उत्पन्न किया सोमनाम उमासहित रुद्र का है सोम से चरु, अग्नि, यज्ञ, इन्द्र और विष्णु उत्पन्न भये इस कारण सब जगत् सोमरूप है सब देवताओं ने रुद्राध्याय से रुद्र की स्तुति की। रुद्र भी सब देवताओं के ज्ञान को हर उनके मध्य में स्थित हुये तब देवता मूढ़ हो उनसे पूछने लगे कि तुम कौन हो तब रुद्र ने कहा कि हे देवताओ! मैं एक पुराणपुरुष हूं पूर्वकाल में मैंही था अब मैंही हूं और आगे भी मैंही हूंगा मेरे विना इस जगत् में कोई भी नहीं है नित्य, अनित्य, अनघ, ब्रह्म, ब्रह्म का पति, दिशा, विदिशा, प्रकृति, पुरुष, त्रिष्टुप्, अनुष्टुप्, जगती आदि छन्द, सत्य, सर्वगत, शान्त, त्रेताग्नि, गौरव, गुरु, पृथ्वी, गह्वर, गहन, गोचर, सब तत्त्वोंमें ज्येष्ठ, समुद्र, जल, तेज, वेदी अर्थात् परिष्कृत यज्ञभूमि, ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, अथर्वण वेद, आकाश, इतिहास

पुराणादि, कल्प, कल्पना, अक्षर, क्षर, क्षान्ति, क्षमा, शान्ति, सब वेदों में गुप्त, पुष्कर, पवित्र, अन्त मध्य बहिर्गत, पीछे, आगे, अन्धकार, प्रकाश, ब्रह्मा, विष्णु, महेश्वर, बुद्धि, अहंकार, तन्मात्रा, इन्द्रिय आदि सब पदार्थ मैंही हूं इसभांति सर्वत्र जो पुरुष मुझेही जाने वह सर्ववेत्ता कहाता है सर्वात्मा परमेश्वर मैं हूं वाणी को वेदों करके सब ब्राह्मण और हविको ब्राह्मण्य करके आयुष् करके आयुष् को सत्यसे सत्य को धर्म करके धर्म को और अपने तेज से सबको मैंही तर्पित करता हूं इतना कह शिवजी वहांही अन्तर्धान भये तब तो विष्णु आदि देवता परमकारण रुद्र को न देख उनका ध्यान करने लगे पीछे इन्द्रादि सब देवता और मुनि ऊपरको भुजा उठाय शिवकी स्तुति करने लगे॥

अठारहवां अध्याय॥

देवा ऊचुः॥ य एष भगवान् रुद्रो ब्रह्मविष्णुमहेश्वराः। स्कन्दश्चापि तथा चेन्द्रो भुवनानि चतुर्दश॥ अश्विनौ ग्रहताराश्च नक्षत्राणि च खं दिशः १ भूतानि च तथा सूर्यः सोमश्चाष्टौ ग्रहास्तथा। प्राणः कालो यमो मृत्युरमृतः परमेश्वरः २ भूतं भव्यं भविष्यं च वर्तमानं महेश्वरः। विश्वं कृत्स्नं जगत्सर्वं सत्यं तस्मै नमो नमः ३ त्वमादौ च तथाभूतो भूर्भुवः स्वस्तथैव च। अन्ते त्वं विश्वरूपोऽसि शीर्षं तु जगतः सदा ४ ब्रह्मैकस्त्वं द्वित्रिधार्थमधश्च त्वं सुरेश्वर। शान्तिश्च त्वं तथा पुष्टिस्तुष्टिश्चाप्यहुतं हुतम् ५ विश्वं चैव तथाविश्वं

दत्तं वादत्तमीश्वरम् । कृतं चाप्यकृतं देवं परमप्यपरं ध्रुवम् ॥ परायणं सतां चैव असतामपि शङ्करम् ६ अपामसोममम्मृता अभूमागन्मज्योतिरविदामदेवान्। किं नूनमस्मान्कृणवदरातिः किमु धूर्तिरमृतं मर्त्यस्य ७ एतज्जगद्धितं दिव्यमक्षरं सूक्ष्ममव्ययम् ८ प्राजापत्यं पवित्रं च सौम्यमग्राह्यमव्ययम्। अग्राह्येणापि वा ग्राह्यं वायव्येन समीरणम् ९ सौम्येन सौम्यं ग्रसति तेजसा स्वेन लीलया । तस्मै नमोपसंहर्त्रे महाग्रासाय शूलिने १० हृदिस्था देवताः सर्वा हृदि प्राणो प्रतिष्ठिताः। हृदि त्वमसि यो नित्यं तिस्रो मात्राः परस्तु सः ११ शिरश्चोत्तरतश्चैव पादौ दक्षिणतस्तथा। यो वै चोत्तरतःसाक्षात्स ॐकारः सनातनः १२ ॐकारो यः स एवेह प्रणवो व्याप्य तिष्ठति। अनन्तस्तारसूक्ष्मं च शुक्लं वैद्युतमेव च १३ परंब्रह्म स ईशान एको रुद्रः स एव च। भवान्महेश्वरः साक्षान्महादेवो न संशयः १४ ऊर्ध्वमुन्नामयत्येव स ॐकारः प्रकीर्तितः। प्राणानवति यस्तस्मात्प्रणवः परिकीर्तितः १५ सर्वं व्याप्नोति यस्तस्मात्सर्वव्यापी सनातनः। ब्रह्मा हरिश्च भगवानाद्यन्तं नोपलब्धवान् १६ तथान्ये च ततोऽनन्तो रुद्रः परमकारणम्। यस्तारयति संसारात्तार इत्यभिधीयते १७ सूक्ष्मो भूत्वा शरीराणि सर्वदा ह्यधितिष्ठति। तस्मात्सूक्ष्मः समाख्यातो भगवान्नीललोहितः १८ नीलश्च लोहितश्चैव प्रधानपुरुषश्च यः। स्कन्दतेऽस्य यतः शुक्रं तथा शुक्लमपैति च १९ विद्योतयति यस्तस्माद्वैद्युतः परिगीयते। बृहत्त्वाद्बृंहणत्वाच्च बृहते च परापरे २० तस्माद्बृंहति

यस्माद्धि परंब्रह्मेति कीर्तितम् । अद्वितीयोऽथ भगवां-
स्तुरीयः परमेश्वरः २१ ईशानमस्य जगतः स्वदृशां
चक्षुरीश्वरम् । ईशानामिन्द्रसूर्यः सर्वेषामपि सर्वदा २२
ईशानः सर्वविद्यानां यत्तदीशान उच्यते । यदीक्षते
च भगवान् निरीक्ष्यमिति चाज्ञया २३ आत्मज्ञानं
महादेवो योगं गमयति स्वयम् । भगवांश्चोच्यते देवो
देवदेवो महेश्वरः २४ सर्वाँल्लोकान् क्रमेणैव यो गृह्णाति
महेश्वरः । विसृजत्येष देवेशो वासयत्यपि लीलया २५
एषो हि देवः प्रदिशोऽनुसर्वाः पूर्वो हि जातः स उ गर्भे
अन्तः । स एव जातः स जनिष्यमाणः प्रत्यङ्मुख-
स्तिष्ठति सर्वतोमुखः २६ उपासितव्यं यत्नेन तदेतत्सद्भि-
रव्ययम् । यतो वाचो निवर्तन्ते अप्राप्य मनसा सह २७
तदग्रहणमेवेह यद्वाग्वदति यत्नतः । अपरं च परं वेत्ति
परायणमिति स्वयम् २८ वदन्ति वाचः सर्वज्ञं शङ्करं
नीललोहितम् । एष सर्वो नमस्तस्मै पुरुषः पिङ्गलः
शिवः २९ स एष स महारुद्रो विश्वं भूतं भविष्यति ।
भुवनं बहुधाजातं जायमानमितस्ततः ३० हिरण्यबाहु-
र्भगवान् हिरण्यपतिरीश्वरः । अम्बिकापतिरीशानो हेम-
रेता वृषध्वजः ३१ उमापतिर्विरूपाक्षो विश्वसृग्विश्व-
वाहनः । ब्रह्माणं विदधे योऽसौ पुत्रमग्रे सनातनम् ३२
प्रहिणोतिस्म तस्यैव ज्ञानमात्मप्रकाशकम् । तमेकं पुरुषं
रुद्रं पुरुहूतं पुरुष्टुतम् ३३ बालाग्रमात्रं हृदयस्य मध्ये
विश्वं देवं वह्निरूपं वरेण्यम् । तमात्मस्थं येऽनुपश्यन्ति
धीरास्तेषां शान्तिः शाश्वती नेतरेषाम् ३४ महतो यो
महीयांश्च अणोरप्यणुरव्ययः । गुहायां निहितश्चात्मा

जन्तोरस्य महेश्वरः ३५ वेश्मभूतोस्य विश्वस्य कमलस्थो हृदिस्वयम् । गह्वरं गहनं तत्स्थं तस्यान्तश्चोर्ध्वतः स्थितम् ३६ तत्रापि दहं गगनमोङ्कारं परमेश्वरम् । बालाग्रमात्रं तन्मध्ये ऋतं परमकारणम् ३७ सत्यं ब्रह्म महादेवं पुरुषं कृष्णपिङ्गलम् । ऊर्ध्वरेतसमीशानं विरूपाक्षमजोद्भवम् ३८ अधितिष्ठति योनिं योऽयोनिं वाचैक ईश्वरः । देहं पञ्चविधं येन तमीशानं पुरातनम् ३९ प्राणेष्वन्तर्मनसो लिङ्गमाहुर्यस्मिन् क्रोधो या च तृष्णा क्षमा च । तृष्णां छित्त्वा हेतुजालस्य मूलं बुद्ध्या चित्तं स्थापयित्वा च रुद्रे ४० एकं तमाहुर्वै रुद्रं शाश्वतं परमेश्वरम् । परात्परतरं चापि परात्परतरं ध्रुवम् ॥ ब्रह्मणो जनकं विष्णोर्वह्नेर्वायोः सदाशिवम् ४१ ॥

हे सनत्कुमारजी ! इस भांति सब देवता जब स्तुति करचुके तब ब्रह्माजी ने कहा कि हे देवताओ ! शिवजी की शीघ्र प्रसन्नता के लिये हम आपको पाशुपतव्रत का उपदेश करते हैं । जिसके करने से शिवजी आपके ऊपर बहुत शीघ्र अनुग्रह करेंगे । प्रथम तो पूर्वोक्त रीतिसे अपने हृदयकमल में शिवका ध्यान करे अग्निबीज से भूतशुद्धि की रीति करके प्रत्येक अङ्गको शुद्ध कर पांच भूतोंको शब्दादि गुणों के क्रम से एक दूसरे में लीन करे पांचभूत क्रम से पञ्चमात्र चतुर्मात्र त्रिमात्र द्विमात्र और एकमात्रहैं और वह निर्गुणरूप अमात्र है जो द्वादशान्त में स्थित है इस विधि से भूतों का संहार कर फिर उत्पन्न करे और अपने अपने स्थानों में स्थापित कर अमृतरूप हो पाशुपतव्रत करे प्रथम सङ्कल्प करे

कि यह पाशुपतव्रत मैं करता हूं पीछे उपवास कर पवित्र हो स्नान कर शुक्ल वस्त्र, शुक्ल यज्ञोपवीत और शुक्लमाला आदिसे भूषित हो वेदत्रयीके मन्त्रोंसे अग्नि स्थापन कर हवन करे हवन के मन्त्र ये हैं॥ वायवः पञ्च शुध्यन्तां वाङ्मनश्चरणादयः। श्रोत्रं जिह्वा ततः प्राणास्ततो बुद्धिस्तथैव च १ शिरः पाणिस्तथा पार्श्वं पृष्ठोदरमनन्तरम्। जङ्घे शिश्नमुपस्थं च पायुर्मेढ्रं तथैव च २ त्वचं मांसं च रुधिरं मेदोऽस्थीनि तथैव च। शब्दः स्पर्शश्च रूपं च रसोगन्धस्तथैव च ३ भूतानि चैव शुध्यन्तां देहे मेदादयस्तथा। अन्नं प्राणा मनो ज्ञानं शुध्यन्तां वै शिवेच्छया ४॥

घृत, समिध और चरु करके इन मन्त्रों से हवन कर रुद्राग्निका विसर्जन करे और भस्म लेकर "अग्निरिति भस्म" इत्यादि मन्त्रों से अभिमन्त्रण कर सब अङ्गों में धारे यह पाशुपतव्रत पशुपाश का दूर करनेहारा है ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और विशेष करके संन्यासियों को यह व्रत करना चाहिये इसविधि से वानप्रस्थ, गृहस्थ और ब्रह्मचारी मुक्ति पाते हैं किसी अग्निहोत्र की भस्म लेकर अभिमन्त्रित कर धारे तो पातक उपपातक निवृत्त होजाते हैं अग्नि का वीर्य भस्म है भस्मयुक्त अग्नि वीर्यवान् होता है जो पुरुष भस्म से स्नान करे, भस्म में शयन करे और जितेन्द्रिय रहे वह सब पापोंसे छूट शिवसायुज्य को जाता है विभूति धारनेहारे मनुष्य का सदा आदर और पूजा करे कभी उसको रे तू आदि कठोर शब्द न कहे इस अपराध को शिवजी क्षमा नहीं करते शिवजी ने यह कहा है कि भस्म धारण करनेहारा हमारा

पुत्रही है और गणेशजी के तुल्य प्रिय है इस कारण भस्म धारण करनेहारे का कभी अप्रिय न करे अज्ञानी भी भस्म का त्रिपुण्ड् धार जो कर्म करे वह सफल होता है और भस्म धारण विना ज्ञानी के भी कर्म व्यर्थ होते हैं इस कारण सब सत्कर्मों में भस्म का त्रिपुण्ड् अवश्य धारण करना चाहिये नन्दिकेश्वर कहते हैं कि हे सनत्कुमारजी ! इतना सब देवताओं के प्रति उपदेश कर ब्रह्माजी भस्म धारण करते भये और सब देवताओं को भी विभूति धारण कराई तब श्रीमहादेवजी पार्वती और गणों सहित देवताओं पर अनुग्रह करने के अर्थ वहां प्रकट भये सब देवताओं ने शिवजी को देख प्रसन्न हो रुद्राध्याय से स्तुति की शिवजी ने प्रसन्न हो कृपादृष्टि से देवताओं की ओर देख कहा कि हम तुम से प्रसन्न हैं वर मांगो ॥

उन्नीसवां अध्याय ॥

नन्दी कहते हैं कि हे सनत्कुमारजी ! शिवजी की अमृतमय वाणी सुन प्रसन्न हो प्रणाम कर सब देवता पूछते भये कि हे महाराज ! आपकी पूजा किस विधि कहां और किस रूप करके करनी चाहिये और पूजा में किस किस को अधिकार है ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र, स्त्री और कुण्ड गोलक आदि वर्णसंकर किस भांति आपका यजन करें यह आप सब जगत् के हित के अर्थ हमको उपदेश करें ऐसा देवताओं का वचन सुन और उनकी भक्ति देख सूर्यमण्डल में स्थित श्रीमहादेवजी

मेघगर्जन की भांति गम्भीर शब्द से कहते भये उस अवसरमें देवताओं ने शिवजी का रूप देखा कि पार्वती जी सहित सूर्यमण्डल में विराजरहे हैं कोटि सूर्य के समान प्रकाशमान जिनके आठ भुजा चार मुख बारह नेत्र जटा और मुकुट धारे संपूर्ण रत्नोंके भूषणोंसे भूषित रक्तवस्त्र, रक्तचन्दन और रक्तपुष्पों की माला से अलंकृत हैं जिनका अतिप्रसन्न पूर्वमुख पीतवर्ण और तत्पुरुष-रूप हैं दक्षिणमुख नीलवर्ण बड़ी बड़ी दंष्ट्राओं करके भयङ्कर रक्तवर्ण केशश्मश्रु अर्थात् दाढ़ी करके युक्त और अघोररूप है उत्तर का मुख विद्रुमवर्ण अतिप्रसन्न वर देनेहारा वामदेवरूप है पश्चिममुख गोदुग्धकी भांति शुक्लवर्ण मोतियों के हार और तिलक से भूषित सद्यो-जातरूपहै उनके चारों ओर चार चार मुखों करके युक्त आदित्य, भास्कर, भानु और रवि हाथ जोड़े खड़े हैं और इनके समीप क्रम से विस्तारा, उत्तरा, बोधनी और आप्यायनी ये चार शक्ति एक एक मुख और चार चार भुजाओं करके युक्त सब भूषणों से भूषित स्थितहैं जिनकी दाहिनी ओर ब्रह्मा और बाईं ओर विष्णु विराज रहे हैं धर्म, ज्ञान, वैराग्य, ऐश्वर्य और दीप्ताआदि नव शक्तियों करके युक्त श्वेतकमलके ऊपर बैठे हैं जिन में दीप्ता दीप की शिखा के तुल्य सूक्ष्मा विद्युत् अर्थात् बिजली के समान, जया अग्नि की ज्वाला के सदृश, प्रभा सुवर्ण के तुल्य विभूति विद्रुम अर्थात् मूंगे के सम विमला कमल के तुल्य अमोघा कमल की कर्णिका के समानवर्ण विद्युत् अनेक वर्णों करके युक्त और मध्य में

चार मुख और चार वर्णोंकरके युक्त सर्वतोमुखी है चन्द्र, मङ्गल, बुध, बृहस्पति, शुक्र और शनैश्चर शिवजी के चारों ओर स्थित हैं सूर्य साक्षात् शिव और चन्द्रमा पार्वती और बाक़ी के ग्रह पञ्चमहाभूत हैं जिनसे चराचर जगत् व्याप्त है ऐसा शिवजी का रूप देख सब मुनि हाथ जोड़ भक्ति से स्तुति करने लगे॥

ऋषय ऊचुः॥ नमः शिवाय रुद्राय कद्रुद्राय प्रचेतसे। मीढुष्टमाय शर्वाय शिपिविष्टाय रंहसे १ प्रभूते विमले सारे आधारे परमे सुखे। नवशक्त्यावृतं देवं पद्मस्थं भास्करं प्रभुम् २ आदित्यं भास्करं भानुं रविं देवं दिवाकरम्। उमां प्रभां तथा प्रज्ञां संध्यां सावित्रिमेव च ३ विस्तारामुत्तमां देवीं बोधनीम्प्रणमाम्यहम्। आप्यायनीं च वरदां ब्रह्माणं केशवं हरम् ४ सोमादिवृन्दं च यथाक्रमेण संपूज्य मन्त्रैर्विहितक्रमेण। स्मरामि देवं रविमण्डलस्थं सदाशिवं शङ्करमादिदेवम् ५ इन्द्रादिदेवांश्च तथेश्वरांश्च नारायणं पद्मजमादिदेवम्। प्रागाद्यधोर्ध्वं च यथाक्रमेण वज्रादि पद्मं च तथा स्मरामि ६ सिन्दूरवर्णाय समण्डलाय सुवर्णवज्राभरणाय तुभ्यम्। पद्माभनेत्राय सपङ्कजाय ब्रह्मेन्द्रनारायणकारणाय ७ रथं च सप्ताश्वमनूरुवीरं गणं तथा सप्तविधं क्रमेण। ऋतुप्रवाहेण च बालखिल्यां स्मरामि मन्देहगणाक्षयं च ८ हुत्वा तिलाद्यैर्विविधैस्तथाग्नौ पुनः समाप्यैव तथैव सर्वम्। उद्वास्य हृत्पङ्कजमध्यसंस्थं स्मरामि बिम्बं तव देवदेव ९ स्मरामि बिम्बानि यथाक्रमेण रक्तानि पद्मामललोचनानि। पद्मं च सव्ये वरदं च वामे करे तथा भूषितभूषणानि १०

दंष्ट्राकरालं तव दिव्यवक्त्रं विद्युत्प्रभं दैत्यभयङ्करं च।
स्मरामि रक्षाभिरतं द्विजानां मन्देहरक्षोगणभर्त्सनं च ११
सोमं सितं भूमिजमग्निवर्णं चामीकराभं बुधमिन्दुसूनुम्।
बृहस्पतिं काञ्चनसन्निकाशं शुक्रं सितं कृष्णतरं च
मन्दम् १२ स्मरामि सव्यमभयं वाममूरुगतं करम्।
सर्वेषां मन्दपर्यन्तं महादेवं च भास्करम् १३ पूर्णेन्दुवर्णेन
च पुष्पगन्धप्रस्थेन तोयेन शुभेन पूर्णम्। पात्रं दृढं
ताम्रमयं प्रकल्प्य दास्ये तवार्घ्यं भगवन् प्रसीद १४
नमः शिवाय देवाय ईश्वराय कपर्दिने। रुद्राय विष्णवे
तुभ्यं ब्रह्मणे सूर्यमूर्तये १५॥

नन्दी कहते हैं कि सूर्यमण्डल में शिवजीकी पूजा कर जो पुरुष तीनकाल इस उत्तम स्तोत्र को पढ़े वह अवश्य शिवसायुज्य पावे॥

बीसवां अध्याय॥

नन्दिकेश्वरजी कहते हैं कि हे सनत्कुमारजी! इस भांति मुनियोंसे स्तुति श्रवण कर प्रसन्न हो सूर्यमण्डल में स्थित महादेवजी ने कहा कि हमारी पूजाके अधिकारी ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य हैं शूद्रको पूजन का अधिकार नहीं शिवपूजन करनेहारे तीन वर्णों की सेवा से शूद्रको भी पूजाका फल प्राप्त होताहै अथवा स्त्री और शूद्र ब्राह्मण द्वारा पूजन करावें तो भी उत्तम फल को प्राप्त होते हैं क्षत्रिय भी ब्राह्मणों से पूजन करावें और दक्षिणादे उनको प्रसन्न करें तो पूर्ण फल पाते हैं इतना कह श्रीशङ्कर अन्तर्धान भये और देवता तथा मुनि भी

शिवजी का ध्यान करते और प्रसन्न होते अपने अपने धाम को गये हे सनत्कुमारजी! मन, वचन, कर्म करके धर्म, अर्थ, काम और मोक्षकी प्राप्ति के लिये आदित्य-रूप सदाशिव का सदा भक्तिसे अर्चन करना चाहिये इतनी कथा सुन शौनक आदि मुनि पूछते भये कि हे सूतजी! बहुत काल तप करके षडंगवेद और सांख्य-योगसे भक्तों के हितके लिये शिवजीने जो शास्त्र उद्धार किया है जो वर्णाश्रमधर्मों के समान और कहीं कहीं विलक्षण है उस आग्नेयमें शिवजीकी पूजा, स्नान और योग आदि किस विधि वर्णन किये हैं यह आप वर्णन करें हमको श्रवण करनेकी बहुत इच्छा है यह मुनियों का वचन सुन सूतजीने कहा कि हे मुनीश्वरो! यही बात नन्दी से सनत्कुमार ने भी पूछी थी उनने जो सनत्कुमार के प्रति उपदेश किया वह आपको सुनाते हैं मेरु पर्वत के ऊपर सनत्कुमारजी पूछते हैं कि हे नन्दिकेश्वरजी! धर्म, काम, अर्थ और मोक्षको देनेहारे शिवपूजन का क्या विधान है यह आप कृपा कर हमको उपदेश करें यह सुन नन्दी कहने लगे कि हे ब्रह्मपुत्र! गुरु और शास्त्र से जैसा हमने जाना है वैसा आपके प्रति कथन करते हैं शिवशास्त्र के आचार्य को गौरव अर्थात् बड़ाई से गुरु कहते हैं आप आचार में रहें औरों को आचारमें स्थापन करें और शास्त्रके अर्थोंका आचयन अर्थात् संचय करें वह आचार्य कहाता है कल्याण की इच्छावाला शिवभक्त प्रथम वेदार्थ के तत्त्व को जानने-हारे प्रियदर्शन अर्थात् जिसके दर्शन से चित्त प्रसन्न

होजाय श्रुति, स्मृतिमार्ग में तत्पर लोलता और चप-
लता से रहित आचारके पालनमें रत सब समयों में
स्थित और भस्म धारण करनेहारे गुरुको ढूंढ़े ऐसा गुरु
पाय तन, मन, धन से निष्कपट हो इतनी सेवा करे
कि जिसमें वे प्रसन्न होजायँ क्योंकि गुरु की प्रसन्नता से
पशुपाश बहुत शीघ्र कटजाते हैं गुरु मान्य, पूज्य और
साक्षात् सदाशिव है गुरु भी तीन वर्षपर्यन्त ब्राह्मण
शिष्य की परीक्षा करे जो वस्तु उसको अतिप्रिय हो
उससे लेवे अनेक भांति के कार्यों की आज्ञा देवे उत्तम
को अधम कार्य में और अधम को उत्तम कार्य में लगावे
और कभी क्रोध कर ताड़न आदि भी कर देवे इतना
होनेपर भी जो शिष्य विषाद को प्राप्त न हो और
पहिली भांति सेवामें तत्पर रहे वह शिवधर्म का अधि-
कारी होताहै शिवभक्त जितेन्द्रिय, धर्मनिष्ठ, शीत, उष्ण
आदि के सहनेहारा, उद्योगी, परोपकार में निरत, गुरु-
शुश्रूषा में परायण, सरल और मृदु स्वभाव, स्वस्थचित्त,
गुरुके अनुकूल प्रिय बोलनेहारा, अहंकारसे हीन, स्पृहा
और स्पर्धासे रहित, शौच आचारआदि गुणों से युक्त,
दम्भ और मात्सर्य से रहित और श्रुति स्मृतिमार्गपर
चलनेहारा शिष्य अधिकारी है इस भांति के शिष्य
को गुरु भी मन, वचन, कर्म करके तत्त्वशुद्धि के लिये
शोधे जो शिष्य शुद्ध विनय करके युक्त, मिथ्या और कटु
वचन कभी न बोले और गुरुकी आज्ञा पालन करे उस
पर अवश्य गुरु का अनुग्रह होना चाहिये गुरुभी शास्त्र-
वेत्ता, तपस्वी, बुद्धिमान्, लोकप्रिय, लोकाचार को जानने

हारा और तत्त्ववेत्ता मोक्ष देने में समर्थ होता है सब लक्षणों से सम्पन्न सब शास्त्र जाननेहारा और सब विधानों में कुशल भी गुरु हो परन्तु तत्त्ववेत्ता अर्थात् आत्मज्ञान करके युक्त न हो तो निष्फलही है जिसको आत्मज्ञान नहीं है वह शिष्य पर क्योंकर अनुग्रह कर सकता है प्रबुद्ध अर्थात् ज्ञानी गुरु आप शुद्ध है और शिष्य को शुद्ध कर सकता है आत्मज्ञान से हीन गुरु केवल पशुहै और उसके शिष्य भी सब पशुही हैं इस कारण तत्त्ववेत्ता आप मुक्त है और शिष्य को मुक्त कर सकता है अज्ञानी गुरु अज्ञानी शिष्य का उद्धार किस प्रकार करे क्योंकि एक शिला दूसरी शिला को नदी में नहीं पार कर सकती जो नाममात्र के ज्ञानी हैं उनके लिये मुक्ति भी नाममात्र ही है योगी गुरु के दर्शन, स्पर्श और सम्भाषण सेभी सब पाशोंके भेदन करनेहारी आज्ञा अर्थात् अनुग्रह शीघ्र होती है अथवा योगमार्ग करके गुरु शिष्य के देह में प्रवेश कर सब तत्त्वों को शोध उसको बोध करे योगियों के लिये ज्ञानयोग से षडध्व शुद्धि करनी योग्य है धर्मात्मा और वेद के पारगामी ब्राह्मण क्षत्रिय अथवा वैश्य शिष्य को भलीभांति परीक्षाकर कर्णपरम्परागत अर्थात् एक गुरु से दूसरे गुरु को प्राप्त ज्ञानसे एक दीपकसे दूसरे दीपक की भांति गुरु चैतन्य करे भुवनाध्वा, कलाध्वा, मन्त्राध्वा, पदाध्वा और तत्त्वाध्वा, वर्णाध्वा ये षडध्व जिस गुरु की सामर्थ्य और आज्ञामात्र से भेदन होजाय उस गुरु की कृपासे सिद्धि और मुक्ति मिलती है पृथ्वी आदि पंचभूत भुवनाध्वा

हैं, मन बुद्धि अहङ्कार और अव्यक्त यह कलाध्वा हैं, कर्मेन्द्रिय मन्त्राध्वा, शब्द स्पर्श आदिक पदाध्वा, ज्ञानेन्द्रिय वर्णाध्वा पुरुष से लेकर ब्रह्मापर्यन्त सब तत्त्वों के प्रकाश करनेहारा ईशत्व और उन्मत्व तत्त्वाध्वा है इस शिवात्मिका तत्त्वशुद्धि को योगी के विना और कोई नहीं जान सकता॥

इक्कीसवां अध्याय॥

सूतजी कहतेहैं कि हे मुनीश्वरो! गंध वर्ण, रस आदिकों से भूमिकी परीक्षा कर उसमें सुन्दर मंडप रचे और वितान पुष्पमाला आदि से भूषितकर उसके बीच परमेश्वर के आवाहन योग्य एक हाथ की वेदी रच उसमें रत्नचूर्ण करके श्वेत अथवा रक्त अष्टदल कमल बनावे उसके बाहर शोभा उपशोभा द्वार आदि पंचरंगके रत्नचूर्ण से रचे इस भांति कमल रच उसकी कर्णिकामें शिवजी का आवाहन कर अपनी शक्तिके अनुसार पूजन करे आठ दलोंमें अणिमा आदि आठ सिद्धि स्थितहैं वैराग्य और ज्ञानरूप कमल का नाल है धर्ममय कंद अर्थात् मूल है वामा, ज्येष्ठा, रौद्री, काली, विकरणी, बलविकरणी, बलप्रमथिनी और सर्वभूतदमनी ये आठ शक्ति केसरों में और नवीं मनोन्मनी शक्ति कर्णिका में अर्थात् शिवजी के आसनस्थान में ध्यान करे इन आठ शक्तियोंके साथ वामदेव आदि आठ मूर्तियों को मिलाय एक एक मिथुन का न्यास करे और मनोन्मनी के संग मनोन्मन महादेव का योग कर मध्य में न्यास करे सोम, सूर्य और

अग्निके सम्बन्ध से प्रणवरूप और सूर्य के तुल्य भासमान तत्पुरुष को पूर्वपत्र में न्यास करे नील वर्ण अघोरको दक्षिणपत्र में जपापुष्प के समान अरुण वर्ण वामदेव को उत्तरदल में गोदुग्ध के समान शुक्लवर्ण सद्योजात को पश्चिमदलमें और शुद्ध स्फटिकके समान ईशानको कर्णिका में न्यास करे फिर "चन्द्रमण्डलसंकाशाय हृदयाय नमः" इस मंत्रको अग्निकोण के दल में "धूम्रवर्चसे शिरसे नमः" इस मंत्र को ईशानदलमें "रक्ताभायै शिखायै नमः" इसको नैर्ऋत्यदलमें "अञ्जनाभाय कवचाय नमः" इसको वायव्यकोण के दल में "पिङ्गलेभ्यो नेत्रेभ्यो नमः" इस मंत्र को ईशानदल में और "अग्निशिखाभाय अस्त्राय नमः" इस मंत्रको चारों दिशाओंमें न्यास करे फिर सृष्टिमार्ग से शिव, सदाशिव, महेश्वर, रुद्र, विष्णु और ब्रह्मा को भावन करे और शिवाय रुद्ररूपाय शान्त्यतीताय शम्भवे। शान्ताय शान्तदैत्याय नमश्चन्द्रमसे तथा १ विद्याय विद्याधराय वह्नये वह्निवर्चसे। कालायै च प्रतिष्ठायै तारकायान्तकाय च २ निवृत्त्यै धनदेवाय धारायै धारणाय च॥ इन मंत्रों करके पंचमहाभूतरूप सदाशिव का ध्यान करे जिनका ईशान मुकुट तत्पुरुष मुख अघोर हृदय वामदेव गुह्य सत् असत् की व्यक्ति के कारण सद्योजात सम्पूर्ण देह है पंच मुख दश भुजाओं करके युक्त अड़तीस कलारूप शिव का ध्यान करे जिनमें आठ कला सद्योजात में, तेरह कला वामदेव में, आठ अघोर में, चार तत्पुरुष में और पांच कला ईशान में स्थित हैं हंसगायत्री करके

ॐकाररूप प्रकृति सहित जन्म मरण से रहित अकार-स्वरूप और आ, ई, ऊ, ए अर्थात् देवी, गणेश, सूर्य, विष्णुरूप अणु से अणु और महत् से महान् ऊर्ध्वरेता सनातन सहस्रशीर्ष, सहस्राक्ष, सहस्रहस्त, सहस्र चरण, चन्द्र और सूर्य के समान द्वादशान्त भ्रूमध्य तालु मध्य गल और हृदयमें विराजमान आनन्द और अमृत-स्वरूप कोटि विद्युत् के तुल्य प्रकाशमान श्याम रक्त शक्तित्रयके ऊपर स्थित तीन तत्त्वों करके युक्त विद्या मूर्तिमय ईशानदेव को क्रम से यजन करे और पूर्व आदि दिशाओं में क्रमसे इन्द्र आदि लोकपाल और उनके वज्र आदि आयुधों का पूजन करे फिर उत्तम चरु सिद्ध कर आधा शिवजी को निवेदन कर आधे चरु का होम करे और होमशेष चरु अघोरमन्त्र से अभि-मन्त्रण कर शिष्य को भोजन करावे शिष्य भी चरुको भक्षण कर आचमन करे और शुचि होकर तत्पुरुष का यजन करे और ईशानमन्त्र से अभिमन्त्रण कर पञ्चगव्य का प्राशन करे वामदेवमन्त्र से सर्वांग में भस्म धारे और गुरु शिष्य के कर्णों में रुद्रगायत्री जपे फिर सूत्र से वेष्टित पिधान अर्थात् ढँकने करके युक्त दो दो उत्तम वस्त्रों से आच्छादित और सुवर्ण तथा रत्न जिनके बीच में पड़े हुये ऐसे पांच सुवर्ण के कलश स्थापन करे और पांच ब्राह्मणों से यथाशक्ति होम करावे पीछे मण्डल के दक्षिण ओर दर्भशय्या के ऊपर गुरु शिष्य को शयन करावे और शिष्य भी शिवका स्मरण करता हुआ सोवे और जो स्वप्न देखे वह गुरुको प्रभात उठ कहे गुरु भी

जो उस स्वप्न को दुःस्वप्न समझे तो शान्ति के लिये अघोरमन्त्र करके घृत की अष्टोत्तरशत आहुति देवे इसभांति अधिवासन के अनन्तर शिष्य को स्नान कराय उत्तम वस्त्र भूषणों से भूषित कर पगड़ी बँधवाय मङ्गल मनाय दुकूल आदि वस्त्र से उसके नेत्र बांध गुरु-मण्डल में प्रवेश करावे वहां जाय सुवर्णपुष्पों करके युक्त पुष्पों से शिष्य की अंजलि भर उससे मण्डल की प्रदक्षिणा करावे वह भी रुद्राध्याय अथवा प्रणव का उच्चारण करता हुआ तीन प्रदक्षिणा कर ईशानमन्त्र से पुष्पाञ्जलि को मण्डल में गेरे वह पुष्पाञ्जलि जिस मन्त्र पर पड़े वही मन्त्र उसको सिद्ध होता है फिर शुद्ध जल और अघोरमन्त्र से अभिमन्त्रित भस्म लेकर शिष्य को स्पर्श करे और शिष्य के मस्तक पर हाथ धर गन्ध पुष्प आदि से गुरु उसका पूजन करे पश्चिमद्वार प्रवेश करने के लिये सब वर्णों को उत्तम है विशेष करके क्षत्रियों के लिये बहुत श्रेष्ठ है फिर गुरु शिष्य के नेत्र खोल मण्डल का दर्शन करावे और दक्षिणामूर्ति के समीप कुशासन पर बैठाय पञ्चतत्त्व प्रकार से तत्त्वशुद्धि करे अहंकारपर्यन्त अण्डको निवृत्तिकला करके अहंकार से प्रकृतिपर्यन्त प्रतिष्ठा कला करके प्रकृति से पुरुष तक विद्या कला करके जान उसके ऊपरका मार्ग शिवभक्ति से शुद्ध कर शिष्य को तुरीय शिव में प्राप्त करे और योगेश्वर शिवके समर्चन के लिये प्रकृति, पुरुष, ईश्वर, रूपातीत तत्त्व अथवा अहंकारआदि चार तत्त्व के क्रम से शान्त्यतीत कलामें स्थित सदाशिव को ईशानमन्त्र से

होम करे सद्य आदि चार मन्त्रों करके शान्तिकलापर्यन्त होम करे फिर ईशानमन्त्र से परम शिव को अष्टोत्तरशत आहुति देकर ऋत्विजों से दिग्देवताओं का होम करावे ईशान दिशा में ईशानमन्त्र करके प्रधान याग करे समिधा, घृत, चरु, लाजा, सर्षप, यव और तिल इन सात द्रव्यों से मन्त्र के आदि में प्रणव और अन्त में स्वाहा लगाय होम करे और ईशानमन्त्र से पूर्णाहुति देवे हंसमन्त्रसहित प्रणव आदि अघोरमन्त्र से प्रायश्चित्त किया जाता है जयादि स्विष्टपर्यन्त तीन प्रकार का अग्निकार्य पूर्वोक्त प्रधान होम के साथ युक्त करे फिर गुरुबीजादि पञ्च ब्रह्ममन्त्रों करके पञ्चभूत और ईशानमन्त्र करके प्राण अपान का निरोध कर छठे मन्त्र अर्थात् "नमो हिरण्यबाहवे" इस मन्त्र करके आत्म प्राण वात कुलाकुल का भेदन करे फिर ब्रह्मा को विष्णु में विष्णुको हर में हरको रुद्र में रुद्रको ईशान में और ईशान को शिव में उपसंहार कर फिर सृष्टिक्रम से भवभयहरण रुद्र का चिन्तन करे पीछे शिष्य के जीवको रुद्र में स्थापन कर ताड़न, द्वारदर्शन, दीपन, ग्रहण, पूजासहित बन्धन और अमृतीकरण विधिपूर्वक करावे अघोरमन्त्र के आदि में सद्योजातमन्त्र और अन्त में "नमो हिरण्यबाहवे" इत्यादि तथा सबके अन्त में फट् यह शब्द लगा करके पृथिवी आदि पञ्चभूतप्रकार से संहारमन्त्र होता है सद्योजात आदि में " नमो हिरण्यबाहवे" अन्त में और शिखा तथा फट् अन्तमें लगाने से ताड़न और तत्त्वों के द्वारदर्शन का मन्त्र होता है

अघोरमन्त्र से सम्पुटित ईशानमन्त्र दीपन का मन्त्र है सद्योजातमन्त्र से सम्पुटित ईशानमन्त्र ग्रहण और बन्धन का मन्त्र होता है और त्र्यम्बकमन्त्र अमृतीक-करण का मन्त्र है फिर शान्त्यतीता, शान्ति, विद्या, प्रतिष्ठा और निवृत्तिकला का संक्रमण कर तत्त्व, वर्ण, कला, भुवनमन्त्र और पद इन षडध्वों का यथाविधि शोधन करे पीछे प्रणव और मायाबीज सम्पुटित मन्त्रों करके स्तुति करे और इन्हीं मन्त्रों करके पूजा, प्रोक्षण, ताड़न, हरण, संहत का संयोग, विक्षेप, अर्चना, अग्नि का गर्भधारण और यजन करे भानु का अविद्या के लय करने में अधिकार है ईशानमन्त्र के अन्त में मायाबीज लगाने से उद्धार प्रोक्षण और ताड़न का मन्त्र होता है और फडन्त अघोरमन्त्र करके संहार होता है यह क्रम योगमार्ग करके प्रति तत्त्व में है प्राणायाममें जितने काल स्थितरहे तबतक विषुव अर्थात् तत्त्वसंज्ञक योग करके निवृत्तिसे शिवपर्यन्त आत्मा को लेजाय नासाग्रमें दृष्टि से अथवा द्वादशान्तमें ध्यान करनेसे योगियों का आत्मा समताको प्राप्त होता है और स्थानों में नहीं और सुख दुःख आदि द्वन्द्वों को योगी सहे यह शिवजीका शासन है इसके अनन्तर वस्त्र और सूत्र से वेष्टित तीर्थजल से पूर्ण रत्नयुक्त सुवर्ण चांदी अथवा ताम्र का कलश लेकर संहितामन्त्र और रुद्राध्याय का पाठ करताहुआ कुशा के कूर्च से गुरु शिष्य का अभिषेक करे शिष्य भी शिव और अग्निके सम्मुख दीक्षा ग्रहण कर नियम करे कि चाहे प्राण जायँ अथवा शिरश्छेदन होजाय परन्तु शिव-

पूजन किये विना भोजन न करूंगा इस भांति दीक्षा ग्रहण कर और नियम धार तीन काल अथवा एक काल नित्य शिवपूजा करे क्योंकि अग्निहोत्र, वेदपाठ और बड़ी बड़ी दक्षिणा के यज्ञ शिवपूजा की एक कला अर्थात् सोलहवें भाग के भी तुल्य नहीं हैं सदा यज्ञ करे सदा दान देवे और वायु भक्षण कर तप करे तोभी एक बार भी किये शिवपूजन के फलको नहीं प्राप्त होता जो पुरुष एक काल दो काल अथवा तीन काल शिवपूजन करतेहैं वे साक्षात् रुद्रही हैं रुद्रही रुद्रको स्पर्श करे रुद्रही रुद्रको अर्चन करे रुद्रही रुद्रको कीर्तन करे और रुद्रही रुद्रको प्राप्त हो हे सनत्कुमार! शिवार्चन के लिये यह अधिकारी और विधि का क्रम हमने संक्षेप से कहा इससे चारों पुरुषार्थ प्राप्त होते हैं॥

बाईसवां अध्याय॥

नन्दी कहते हैं कि हे सनत्कुमारजी! प्रथम सौरस्नानादि कर्म करके शिवस्नान और भस्मस्नान करे पीछे शिवपूजन करे अब हम सौरस्नान की विधि कहते हैं "ॐ भूः ॐ भुवः ॐस्वः ॐमहः ॐजनःॐतपःॐसत्यम् ॐ ऋतम् ॐ ब्रह्म" इन नव मन्त्रों में छठे मन्त्रसे मृत्तिका लेकर भक्ति से भूमिपर स्थापन करे दूसरे मन्त्र से जल करके अभ्युक्षण कर तीसरे मन्त्रसे शोधे चौथे मन्त्रसे मृत्तिकाके भाग कर प्रथम मन्त्र से शरीर का मल निवृत्त कर छठे मन्त्रसे स्नान करे फिर स्नान कर शेष मृत्तिका को हाथ में ले छठे मन्त्र से सात बार अभिमन्त्रण कर

वाम हस्त को मूलमन्त्र से शुद्ध करे छठे मन्त्र को दश बार पढ़ दिग्बन्धन करे फिर वाम हस्त से तीर्थको स्पर्श कर दक्षिण हस्त से शरीर को लेपन कर सब मन्त्रों से फिर स्नान करे पीछे शृङ्गपलाश के पत्र अथवा दोने में जल लेकर सूर्यको स्मरण करताहुआ सब सिद्धि के देनेहारे सौरमन्त्रों करके अभिषेक करे अब हम सब वेदके सार वाष्कल आदि मन्त्र और अङ्गमन्त्र कहते हैं "ॐभूः ॐभुवः ॐस्वः ॐमहः ॐजनः ॐतपः ॐसत्यम् ॐ ऋतम् ॐ ब्रह्म" इस नवाक्षर मन्त्रका नाम वाष्कलहै क्षरण न होने से सात लोक अक्षर कहाते हैं और ऋत तथा ब्रह्म भी अक्षर अर्थात् नाशहीन हैं "ॐ भूर्भुवःस्वः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियो योनः प्रचोदयात् ॐ नमः सूर्याय खखोल्काय नमः" यह सूर्य भगवान् का मूलमन्त्र है पूर्वोक्त नवाक्षरमन्त्र और इस मूलमन्त्र से सूर्यकी पूजा करे अब हम क्रम से अङ्गमन्त्र कहते हैं जिनके आदिमें प्रणव और मध्य में व्याहृति हैं 'ॐ भूः ब्रह्म हृदयाय' 'ॐ भुवः विष्णुकण्ठाय' 'ॐ स्वः रुद्रशिरसे' 'ॐभूर्भुवःस्वःज्वालामालिनीशिखायै' 'ॐमहः महेश्वराय कवचाय' 'ॐ जनः शिवाय नेत्रेभ्यः' 'ॐ तपः पातकाय अस्त्रायफट्' ये सात अङ्गमन्त्र हैं इन सब मन्त्रों करके ब्राह्मण क्षत्रिय अथवा वैश्य शृङ्ग आदि पात्र अथवा ताम्रपात्र में कुश और पुष्प सहित जल लेकर अपना अभिषेक करे फिर रक्त वस्त्र धारण कर आचमन करे "सूर्यश्चमा" इत्यादि मन्त्रसे प्रातःकाल "अग्निश्चमा" इत्यादि मन्त्र से सायंकाल और "आपः पुनन्तु" इत्यादि

मन्त्रसे मध्याह्न के समय आचमन करे फिर छठे मन्त्र से शुद्धि कर वौषडन्त मूल और नवाक्षर मन्त्र का जप करे सब अंगुलि अंगुष्ठ मध्यमा अनामिका हस्ततल तर्जनी अंगुष्ठ और मुष्टि करके क्रमसे षडङ्गन्यास करे इस भांति न्यास करनेसे अति पवित्र देह को नवाक्षरमय करे और यह भावना करे कि मैं साक्षात् सूर्य हूं फिर वाम हस्त में गन्ध और श्वेत सर्षपयुक्त जल लेकर मूल और अग्र सहित आठ कुशाके कूर्च से इन मन्त्रों करके तथा आपोहिष्ठादिमन्त्रों करके मार्जन करे पीछे शेष जलको बाईं ओर के नासापुट से आघ्राण कर पापपुरुष सहित शरीर का अज्ञान धोय देहमें शिवकी भावना करता हुआ कृष्णवर्ण उस जलको दहिने नासापुट से निकाल शिला के ऊपर गेरे यह सब कर्म भावना से करे पीछे सब देवता ऋषि भूत और पितरों का तर्पण करे प्रातःकाल मध्याह्न और सायंकालमें व्यापिनी परा और ज्योत्स्ना संध्या का उपासन करे और सूर्य भगवान् को अर्घ्य देवे अर्घ्य की विधि यह है कि रक्तचन्दन के जल से भूमि पर एकहाथ का मण्डल बनाय पूर्वाभिमुख बैठ सम्मुख ताम्रपात्र धरे उसमें रक्तचन्दन सहित एक सेर जल भरके रक्तपुष्प, तिल, कुशा, अक्षत, दूर्वा और अपामार्ग डाले अथवा केवल गोघृतसे ही पात्र पूर्ण करे पीछे दोनों जानु भूमि पर [illegible] पात्रको दोनों हाथों से मस्तकपर्यन्त उठाय सूर्य भगवान् का स्मरण कर मूलमन्त्र और नवाक्षरमन्त्र [illegible] अर्घ्य देवे दश हजार अश्वमेध यज्ञ करने से जो [illegible] होता है वही इस अर्घ्यदानसे है इस

भांति सूर्य भगवान् को अर्घ्य देकर देवदेव श्रीमहादेव जी का अर्चन करे अथवा सूर्यपूजन करके आग्नेय-स्नान अर्थात् भस्मस्नान करे यही रीति शिवस्नानकी है केवल मन्त्रों में भेद है सौरस्नान और शैवस्नान के प्रथम दंतधावन करना चाहिये स्नान कर गणपति वरुण और गुरुको प्रणाम कर पद्मासनसे बैठ तीर्थकी पूजा करे पीछे तीर्थजल से पूर्णपात्र लेकर पादुका अर्थात् खड़ाऊं पहिन शुद्धमार्ग से पूजास्थान में आवे वहां आसन पर बैठ पहिली भांति करन्यास देहन्यास कर अर्घ्यपात्र स्थापन करे और विधिसे प्राणायाम भी करे कमल आदि रक्तपुष्प पूजन के लिये अपने दक्षिण भागमें और जल-पात्र वाम भाग में स्थापन करे सूर्यपूजा में ताम्रपात्रों का विशेष फल है अर्घ्यपात्र ले जलसे धोय अस्त्रमन्त्र करके तीर्थजल से पूर्ण कर उसमें रक्तचंदन आदि सब अर्घ्यद्रव्य डाल पहिली भांति स्थापन कर कवच से अवगुण्ठन करे पीछे उस अर्घ्यपात्र के जलसे सब पूजा-द्रव्यों का प्रोक्षण कर सूर्य भगवान् की पूजा करे। "आदित्यो वै तेज ऊर्जो बलं यशो विवर्द्धति"। इत्यादि यजुर्वेद की श्रुति करके सूर्य भगवान् को नमस्कार कर आसन देवे प्रभूत विमलसार आराध्य परम और सुख को आग्नेय आदि कोण और मध्यमें हृदय करके न्यास करे और इसीभांति षडङ्ग का भी न्यास करे पीछे बीज, अंकुर, छिद्र सहित नाल, सूत्र, कंटक, दल, दलों के अग्र कर्णिका और केसरों सहित श्वेत रक्त अथवा सुवर्ण कमलका ध्यान करे कमलके आठों दलों में दीप्ता, सूक्ष्मा,

जया, भद्रा, विभूति, विमला, अघोरा, विकृता और मध्यमें सर्वतोमुखी को स्थापन करे ये नवों शक्ति सब भूषण पहिने हाथ जोड़े सूर्य भगवान् की ओर मुख किये खड़ी हैं अथवा हाथों में कमल लिये हैं ऐसा ध्यान करे फिर नवाक्षर वाष्फलमन्त्र से सूर्य भगवान् का आवाहन सन्निधापन आदि करे और पद्ममुद्रा दिखावे फिर मूलमन्त्र और नवाक्षरमन्त्र से अर्घ्य, पाद्य, आचमन फिर अर्घ्यस्नान, रक्तचन्दन, रक्तकमल, धूप, दीप, नैवेद्य, मुखवास, तांबूल, आरती आदि उपचारों करके पूजन करे पीछे आग्नेय, ईशान, नैर्ऋत्य, वायव्य, पूर्व और पश्चिम में प्रणव आदि नमोन्त नेत्रपर्यंत छः अङ्गमन्त्रों से पूजन कर कर्णिका में सातवें मन्त्र अर्थात् अस्त्रमन्त्र से पूजा करे और अपने हृदय में सूर्य भगवान् का ध्यान करे हृदय आदि सब अङ्ग देवता विद्युत्के समान वर्ण और शान्तस्वरूप हैं अस्त्रदेवता का रौद्रस्वरूप और दंष्ट्रा से भयानक मुखहै ये सब देवता दहिने हाथ में वर वाम हस्त में कमल धारे सब भूषणों से भूषित रक्तवस्त्र रक्तपुष्पों की माला और रक्तचन्दन से अलंकृत हैं और मण्डल के मध्यमें सिन्दूरकी भांति अरुणवर्ण दोनों हाथों में कमल धारण किये रक्तवस्त्र माला भूषण और आलेपन से शोभित सूर्य भगवान्का ध्यान करे मण्डल के चारों ओर सोम, मङ्गल, बुध, बृहस्पति, शुक्र, शनि, राहु और केतु का पूजन करे ये सब ग्रह दो दो नेत्र और दो दो भुजाओं करके युक्तहैं राहुका केवल ऊपरका शरीरहै शनैश्चर दंष्ट्रायुक्त भयङ्कर मुख खोले भृकुटी

चढ़ाये हाथों में वर और अभय धारे और कुटिल दृष्टि है इन सब ग्रहों के नामों के आदि में प्रणव और अन्त में नमः लगा कर पूजा करे पीछे सूर्य भगवान् के पास ऋषि, देव, गन्धर्व, नाग, अप्सरा, ग्रामणी, यक्ष और राक्षस इन सात गणों की पूजा कर सूर्य भगवान् के आगे वेदमय सात अश्वों की पूजा करे और बालखिल्य गण तथा निर्माल्यग्राही का यजन करे इन सब देवताओं की आसन आवाहन आदि उपचारों से पूजा करे और अर्घ्य देवे और उद्वासन अर्थात् विसर्जन के समय भी अर्घ्य देवे पीछे एक सहस्र पांचसौ अथवा अष्टोत्तरशत वाष्कलमन्त्र का जप कर दशांश हवन करे पश्चिम दिशामें वर्तुल कुण्ड एक मेखला करके युक्त बनावे नित्य नैमित्तिक कर्म में एक हस्त प्रमाण कुण्ड उत्तम होता है और मेखलाकी ऊँचाई और चौड़ाईका प्रमाण चार अंगुल है दश अंगुल प्रमाण अश्वत्थपत्र के आकार नाभि बनाय कुण्ड में स्थापन करे और पांच अंगुल प्रमाण हस्ती के ओष्ठ के समान आकार योनि अपने सम्मुख स्थापन करे एक अंगुल विस्तारका नाल बनावे और कुण्ड के चारों ओर दो अंगुल भूमि छोड़ कर मेखला करे इस प्रकार यत्नसे रमणीय कुण्ड बनाय हवन करे षष्ठमन्त्र से उल्लेखन कर जलसे कुण्डको प्रोक्षण कर प्रथम मन्त्र से मध्य में आसन कल्पना कर प्रथम मन्त्र से ही प्रभावती शक्ति को आसन के ऊपर स्थापन करे वाष्कलमन्त्र करके गन्ध पुष्प आदिकों से पूजन कर अग्नि प्रज्वलित करे उसका नाम सूर्याग्नि है पहिली

भांति अग्नि में कमल की भावना कर मध्य में सूर्य भगवान् की पूजा करे पीछे वाष्कलमन्त्र करके दश आहुति देवे और अङ्गमन्त्रों करके एक एक आहुति देकर जयादिस्विष्टपर्यन्त समिधा का प्रक्षेप करे यह सब मार्गों में सामान्य विधि है मूलमन्त्र का और वाष्कलमन्त्र का यथाशक्ति हवन कर पूर्णाहुति देवे और पूजा हवन आदि सब सूर्य भगवान् को समर्पण करे फिर अङ्गपूजा कर अर्घ्य दे प्रदक्षिणा कर नमस्कार करे और विसर्जन कर सूर्य भगवान् को हृदय में स्थापन करे इस भांति सूर्यपूजन कर धर्म, अर्थ, काम और मोक्षकी प्राप्ति के लिये शिवपूजन करे यह सूर्यपूजन का विधान हमने संक्षेप से वर्णन किया है इस विधि से जो पुरुष एक बार भी सूर्यपूजन करे वह सब पापों से मुक्त हो और पुत्र, पौत्र, धन, धान्य, मित्र, बन्धु, वाहन, भूषण और तेज से युक्त हो चिरकाल तक सब भोग भोग कर सूर्यलोक में जाता है वहां बहुत काल सूर्य भगवान् के समीप निवास कर फिर भूमिपर धर्मनिष्ठ राजा अथवा वेद वेदाङ्ग का जाननेहारा ब्राह्मण होता है और पूर्व जन्म की दृढ़ वासना से फिर सूर्य भगवान् का आराधन कर सदा सूर्य भगवान् के समीप निवास करता है ॥

तेईसवां अध्याय ॥

नन्दी कहते हैं कि हे सनत्कुमारजी ! अब हम आप को शिवपूजन का विधान बताते हैं तीनकाल

चढ़ावे हाथ पूजन करे और शक्ति हो तो अग्निकार्य अर्थात् हवन भी करे पूर्वरीतिसे स्नान और तत्त्वशुद्धि कर पुष्प गन्ध और जल लेकर पूजास्थान में प्रवेश करे वहां आसन के ऊपर बैठ तीन प्राणायाम कर भूतशुद्धिकी रीति से दहन आप्लावन आदि करके गन्ध आदि से अपने हस्तोंको सुगन्धित कर योगशास्त्र में कही हुई महायोनिमुद्रा रचे और अव्यक्त बुद्धि अहङ्कार और तन्मात्राओंसे उत्पन्न देह को ज्ञानाग्नि से दग्ध कर शिवामृत से पवित्र नया शरीर उत्पन्न करे ग्रीवा अर्थात् कण्ठ से एक वितस्ति नीचे और नाभि से एक वितस्ति प्रमाण ऊपर हृदयहै वही विश्वका महत् आयतन अर्थात् बड़ाभारी स्थान है उस हृदयकमल की कर्णिका में साक्षात् सदाशिव का ध्यान करे कि जिनके पञ्चमुख प्रतिमुखमें तीन तीन नेत्र और मस्तक पर चन्द्र है और स्फटिक के समान जिनका वर्ण सब भूषणोंसे भूषित और पद्मासन बांधे बैठेहैं जिनका ऊर्ध्वमुख शुक्लवर्ण, पूर्व मुख कुंकुम अर्थात् केसर के समान वर्ण, दक्षिण मुख नीलवर्ण, उत्तर मुख अति अरुणवर्ण और पश्चिम मुख गोदुग्ध के समान अतिश्वेत है जो शूल, परशु, खड्ग, वज्र और शक्ति बाईं ओर के पांच हाथों में और पाश, अंकुश, घण्टा, नाग और बाण दहिनी ओर के पांच हाथोंमें धारण किये हैं अथवा दो ही भुजाओं का ध्यान करे जिनमें वर और अभय धारण कर रक्खे हैं सम्पूर्ण भूषणों से भूषित विचित्र वस्त्र पहिने पञ्चब्रह्मरूप जिनके अङ्ग इस भांति सदाशिव का ध्यान करे हे सनत्कुमार! पञ्चब्रह्म और

शिवाङ्ग पहिले कहे हैं अब शक्तिभूत हृदयादिक सुनो॥ ॐ ईशानः सर्वविद्यानां हृदयाय शक्तिबीजाय नमः॥ ॐ ईश्वरः सर्वभूतानाममृताय शिरसे नमः॥ ॐ ब्रह्माधिपतये कालाग्निरूपाय शिखायै नमः॥ ॐ ब्रह्मणोऽधिपतये कालचण्डमारुताय कवचाय नमः॥ ॐ ब्रह्मणे बृंहणाय ज्ञानमूर्तये नेत्राय नमः॥ ॐ शिवाय सदाशिवाय पाशुपताखायाप्रतिहताय फट्फट्॥ ॐ सद्योजाताय भवेनातिभवे भवस्वमां भवोद्भवाय शिवमूर्तये नमः॥ ॐ हंसशिखाय विद्यादेहाय आत्मस्वरूपाय परापराय शिवाय शिवतमाय नमः॥ इनमें प्रथम छः मन्त्र षडङ्ग के हैं सातवां मूर्तिमन्त्र और आठवां विद्यामन्त्र है ये सब शिवशास्त्र में कहे हैं और बाष्कलमन्त्र सूर्य का मूलमन्त्र और अङ्गमन्त्र प्रथम वर्णन कर चुके हैं इस भांति मन्त्रमय सदाशिवको अपने हृदयकमल में यजन करे नाभिस्थानमें शिवाग्नि उत्पन्न कर विधिपूर्वक हवन करे रक्त कमलासन पर विराजमान पञ्चब्रह्ममूर्ति सदाशिव को सकलीकरण अर्थात् उनके देहमें षडङ्गन्यास कर मूलमन्त्र, ब्रह्ममन्त्र, मूर्तिमन्त्र और अङ्गादिमन्त्रों से हवन करे मनसे ही घृत और समिधों का हवन कर ज्ञानियों के लिये शिवशास्त्र में कही हुई चन्द्रमण्डल से उत्पन्न अमृतधारा का चिन्तन कर उसीसे पूर्णाहुति करे और शिवजी के मुख में प्राप्त भई पूर्णाहुति का ध्यान करे फिर सब कृत्य समाप्त कर शुद्ध दीपशिखाकार शैव तेजको ललाटमें, भ्रूमध्य में अथवा हृदयकमल में भावना करे और लिङ्ग में तथा स्थण्डिलमें बाह्य शिवपूजन करे॥

चौबीसवां अध्याय ॥

नन्दी कहतेहैं कि हे सनत्कुमारजी ! शिवशास्त्रकी रीति से पूजाविधानकी व्याख्या हम संक्षेप करके वर्णन करते हैं जिसभांति पूर्वकालमें श्रीमहादेवजीने अपने मुखसे वर्णन की है शिवस्नान और भस्मस्नानके अनन्तर दोनों हाथों को चन्दनसे चर्चित कर वौषडन्त मूलमन्त्रसे अञ्जलि बांधि मूर्तिविद्या और अङ्गमन्त्रोंका जप कर अंगुष्ठ से कनिष्ठापर्यन्त ईशानआदि पांच मन्त्रों का न्यास करे पूर्वोक्ताङ्गमन्त्रों में से हृदयमन्त्र आदि तीन मन्त्र कनिष्ठा तर्जनी और मध्यमा में न्यास करे चौथे मन्त्रको अंगुष्ठ में पांचवेंको अनामिकामें और छठे मन्त्रको दोनों हस्तों के तलद्वयमें न्यास करे पीछे तर्जनी अंगुष्ठके योगसे छोटिका मुद्रा करके नाराच मुद्रा करके और अस्त्रसे मूलमन्त्रका जप करता हुआ विघ्नोत्सारण करे और चतुर्थमन्त्र करके अवगुण्ठन करे इसको शिवहस्त कहते हैं उसी हस्तसे शिवपूजा करनी चाहिये तत्त्वोंबिषे विद्यमान आत्मा को स्थापन कर तत्त्वशुद्धि करे भूमि, जल, अग्नि, वायु और आकाशपर्यन्त पञ्चकोशों को अतिक्रमण कर अहङ्कार महत्तत्त्व प्रकृतिका भी उल्लङ्घन कर शुद्धकोटि अर्थात् ब्रह्मके समीप अमृतधारा सहित सुषुम्णामार्ग करके आत्मा को स्थापन कर पहिले तत्त्वशुद्धि करे फडन्त षष्ठ अर्थात् "नमो हिरण्यबाहवे" इत्यादि सद्योजात और अघोरमन्त्र करके भूमिकी शुद्धि होती है षष्ठ सहित सद्योजात-

मन्त्र और फडन्त अघोरमन्त्र करके जलतत्त्व की शुद्धि होतीहै फडन्त आग्नेय तृतीयमन्त्र से अग्निशुद्धि फडन्त और षष्ठ सहित वायव्य चतुर्थमन्त्र करके वायु शुद्धि षष्ठ और फडन्त तथा सद्योजातमन्त्र सहित तृतीय करके आकाशतत्त्व की शुद्धि होती है इस भांति तत्त्वों का उपसंहार कर सद्योजात और षष्ठ सहित तृतीय करके तथा फडन्त मूलमन्त्र करके ताड़न करे तृतीयमन्त्र करके संपुटित मूलमन्त्रसे ग्रहण और मायाबीज संपुटित मूलसे दिग्बन्धन करे इसी भांति शान्त्यतीतासे निवृत्ति-कलापर्यन्त पहिली भांति ध्यान कर तत्त्वत्रय अर्थात् ब्रह्मा विष्णु और रुद्र का ध्यान करे और दीपशिखाकार योगशास्त्र प्रसिद्ध पुर्यष्टक सहित और त्रयातीत अर्थात् विश्व, प्राज्ञ, तैजस से पर आत्मा का ध्यान कर कुण्डली के प्रबोध से उत्पन्न भई अमृतधारा को सुषुम्णा में ध्यान करे शान्त्यतीता से निवृत्तिपर्यन्त पांच कलाओं में नाद, बिन्दु, अकार, उकार और मकार तथा शिव, सदाशिव, रुद्र, विष्णु और ब्रह्मा का ध्यान सृष्टिक्रमसे करके अमृतीकरण और ब्रह्मन्यास कर पञ्चमुखों में पञ्च-दश नेत्रोंका न्यास करे और मूलमन्त्रसे पादादिके शाक्त-न्यास करके महामुद्राको बांध "शिवोऽहम्" अर्थात् मैं शिव हूं ऐसा ध्यान करे फिर शक्त्यादिकों का न्यास कर हृदय में शक्ति करके बीज, अंकुर, छिद्र, कण्टक और सूत्र सहित नाल, पत्र, केसर और कर्णिकायुक्त कमलका ध्यान कर उसमें धर्म, ज्ञान, वैराग्य, ऐश्वर्य और सूर्य, सोम, अग्नि, मण्डल तथा दलोंमें वामा, ज्येष्ठा, रौद्री,

काली, कलविकरणी, बलविकरणी, बलप्रमथनी, सर्वभूत-
दमनी और कर्णिकामें मनोन्मनीको ध्यावे इस आसन
के ऊपर सदाशिवका ध्यान करे फिर नाभिमें अग्नि-
कुण्डके मध्य इसी भांति आसन के ऊपर शिवजीका
चिन्तन कर ललाटमें दीपशिखाकार शिवका चिन्तन
करे और बिन्दुसे शिवमण्डल में गिरती हुई अमृत-
धारा का ध्यान करे यह आत्मशुद्धि है प्राण अपानका
संयम कर सुषुम्णा में वायुको स्थापन करे षष्ठमन्त्र से
तालुमुद्रा अर्थात् खेचरीमुद्रा और दिग्बन्धन करे यह
देहशुद्धि है वस्त्रसे सब पूजापात्रों को पोंछ अर्घ्यपात्रा-
दिकों में प्रणव से तत्त्वत्रय का न्यास कर उनके ऊपर
बिन्दुका ध्यान कर जलसे पूर्ण करे और संहिता अर्थात्
मन्त्रसमूह से अभिमन्त्रण कर प्रथम मन्त्र से उनका
अर्चन द्वितीय से अमृतीकरण तृतीय से शोधन चतुर्थ
से अवगुण्ठन पञ्चम से अवलोकन और षष्ठसे रक्षा
करके चतुर्थमन्त्र से कुशकूर्च करके सब पदार्थ और
आत्मा का अर्घ्यपात्र के जल से प्रोक्षण करे और प्रत्येक
पदार्थ पर पुष्प रख उनका शोधन करे सद्योजातसे गन्ध,
वामदेव से वस्त्र, अघोर से भूषण, तत्पुरुषसे नैवेद्य
और ईशान से पुष्पों को अभिमन्त्रण करे शेष पदार्थों
को शिवगायत्री से प्रोक्षण करे पञ्चामृत पञ्चगव्य आदि
द्रव्यों को ब्रह्ममन्त्र अङ्गमन्त्र और मूलमन्त्रसे अभि-
मन्त्रण कर प्रत्येक पदार्थ को मूलमन्त्रसे धूप दीप आच-
मन देकर धेनुमुद्रासे अमृतीकरण कवचसे अवगुण्ठन
और अस्त्र से रक्षा करे यह द्रव्यशुद्धि है हृदयमन्त्रसे

अर्घ्योदकयुक्त गन्ध लेकर द्रव्यशुद्धिकी भांति अस्त्र-मन्त्रसे सब शुद्धि कर पुष्पाञ्जलि ग्रहण कर पूजा समाप्ति-पर्यन्त मौन से प्रणव आदि नमोन्त सब मन्त्रों को जप पुष्पाञ्जलि देवे यह मन्त्रशुद्धि है अपने अग्रभागमें सामा-न्यार्घ्यपात्र को जल से पूर्ण कर गन्ध पुष्प उसमें डाल सब मन्त्रों से अभिमन्त्रण करे फिर धेनुमुद्रा से अमृती-करण कवचसे अवगुण्ठन और अस्त्रसे रक्षा करे पूर्व दिनके पूजित शिवलिङ्गको गायत्रीसे अर्चन कर सामा-न्यार्घ्य देकर गन्धपुष्प धूप और आचमनीय देवे प्रत्येक उपचार के अन्त में स्वधा अथवा नमःशब्द को उच्चा-रण करे फिर पञ्चब्रह्ममन्त्रों से अलग अलग पुष्पा-ञ्जलि देकर फडन्तअस्त्र से निर्माल्य उतार कर ईशान दिशा में चण्ड की पूजा करे पीछे लिङ्गपीठ अर्थात् जल-हरी को सामान्य अस्त्र से और शिवलिङ्ग को पाशुप-तास्त्रमन्त्र से शोधे और लिङ्गके मस्तकपर पुष्प रख कर पूजा करे यह लिङ्गशुद्धि है कूर्मशिला के ऊपर आसन उसके ऊपर क्रम से बीज अंकुर ब्रह्मशिला छिद्र सहित और कंटक तथा सूत्रयुक्त नाल, दल, कर्णिका, केसर, धर्म, ज्ञान, वैराग्य, ऐश्वर्य, सूर्यादि तीन मण्डल, वामा आदि आठ शक्ति और कर्णिका में मनोन्मनी और मनोन्मन का ध्यान करे और "अनन्तासनाय नमः" इस मन्त्रसे आसन देकर उसके ऊपर निवृत्ति आदि कलायुक्त षट्-कोश सहित वेदमूर्ति सदाशिव का ध्यान करे दोनों हाथों में पुष्प लेकर दोनों अंगुष्ठों से पुष्प को दबाय आवाहन-मुद्रा करके धीरे धीरे हृदयसे मस्तकपर्यन्त आरोपण कर

हृदयमन्त्र सहित मूलमन्त्र को प्लुतस्वर से उच्चारण कर बिंदुस्थान से दीपशिखाकार सर्वतोमुख हस्त व्याप्य व्यापकस्वरूप परमेश्वर को सद्योजातमन्त्र से आवाहन कर स्थापन करे पहिली भांति हृदयमन्त्र करके शिवशक्ति समवाय अर्थात् सामरस्य करके परमीकरण अमृतीकरण आदि करे हृदय मन्त्रादि मूलमन्त्र युक्त सद्योजातमन्त्र से आवाहन हृदय और मूलयुक्त वामदेवमन्त्र से स्थापन हृदय और मूल सहित अघोर मन्त्र से सन्निरोधन हृदय और मूलयुक्त तत्पुरुष से सान्निध्य और हृदय और मूलमन्त्रयुक्त ईशानमन्त्र से पूजन करे यह उपदेश है जिसभांति पञ्चमन्त्रों करके पहिले अपने देह का निर्माण किया इसीभांति देवता और अग्निका भी देहनिर्माण करे शिवजी के रूपका ध्यान कर मूल से नमस्कारान्त सब उपचार समर्पण करे आचमनीय स्वधान्त देवे अथवा सब उपचारों के अन्तमें स्वाहाशब्द का उच्चारण करे वौषडन्त मूल करके पुष्पाञ्जलि देवे सब उपचार हृदयमन्त्र से ईशानमन्त्र से रुद्रगायत्री से अथवा "ॐ नमः शिवाय" इस मूलमन्त्र से परमेश्वर के अर्पण पाद्य अर्घ्य आचमनीय आदि करे फिर पुष्पाञ्जलि देकर धूप आचमन दे छठे मन्त्रसे पुष्पोंको उतार पूजाका विसर्जन कर मूलमन्त्र करके शुद्ध जल और पंचामृत आदि द्रव्यों से स्नान करावे प्रत्येक द्रव्यके स्नान में ईशानमन्त्र से आठ आठ पुष्पांजलि देवे पीछे अर्घ्य, गंध, पुष्प, धूप, आचमनआदि देकर फडंत अस्त्रमन्त्र से सब पूजाद्रव्योंको लिंगसे दूर कर शुद्ध जल से स्नान

कराय पिसेहुये आमलक हलदी का उबटना और गरम जलसे जलहरी समेत शिवलिंगको शुद्धकर सुगन्धयुक्त सुवर्णजल से रुद्राध्याय नीलरुद्र त्वरितसूक्त पञ्चब्रह्म-मन्त्र और "नमः शिवाय" करके शिवलिंग को स्नान करावे स्नान कराय एक पुष्प शिवलिंग के मस्तक पर रक्खे कभी लिंग को शून्यमस्तक न करे क्योंकि जिस राजा के राज्य में शिवलिंग शून्यमस्तक रहे वहां अलक्ष्मी, महारोग, दुर्भिक्ष और वाहनों का क्षय होता है और राजा तथा राष्ट्रका नाश होजाताहै इस कारण धर्म, काम, अर्थ और मोक्षकी सिद्धिके लिये कभी लिंगको शून्यमस्तक न रक्खे इस भांति लिंगको स्नान कराय शुद्ध वस्त्र से पोंछ मूलमन्त्र करके गन्ध, पुष्प, वस्त्र, भूषण, धूप, आचमन, दीप, नैवेद्य आदि देवे केवल प्रणवसे लिंग के ऊपर पूजन को पवित्रीकरण कहते हैं दीप और आरार्तिक को धेनुमुद्रासे अमृतीकरण कवचसे अवगुंठन और षष्ठमन्त्र से रक्षणाकर लिंगके ऊपर मध्य में और अधोभागमें साधारणता से दिखावे और मूलसे नमस्कार करे इसभांति आवाहन, स्थापन, निरोधन, सान्निध्य, पाद्य, आचमनीय, अर्घ्य, गंध, पुष्प, धूप, दीप, नैवेद्य, आचमनीय, हस्तोद्वर्तन अर्थात् हाथ धोने का उबटना, मुखवास, ताम्बूल आदि उपचारों से ब्रह्म-मन्त्र और अंगमन्त्रों करके परमेश्वर का पूजन करे पूजा के अनन्तर सकलध्यान, निष्कलध्यान, परावरध्यान, मूलमन्त्रजप, ब्रह्ममन्त्र तथा अंगमन्त्रोंका दशांश जप, जपसमर्पण, आत्मनिवेदन, स्तुति और नमस्कार

आदि करके पूर्वभाग में गुरुपूजा और दक्षिणभागमें गणपतिपूजा करे सब कार्यों की सिद्धिके लिये आदिमें और अन्त में देवता और ब्राह्मणों को गणपतिपूजन अवश्य करना चाहिये इसभांति एक वर्षपर्यन्त लिंगमें अथवा स्थंडिलमें शिवपूजा करनेहारा निस्संदेह शिवसायुज्य पाता है परंतु लिंगमें छः महीने शिवपूजन करनेसेही शिवसायुज्य की प्राप्ति होतीहै पूजन कर सात प्रदक्षिणा करे और दंडवत् प्रणाम भी करे प्रदक्षिणाके निमित्त एक एक पाद धरनेमें सौ सौ अश्वमेध का फल होता है सब कामनाओं की सिद्धिके लिये नित्य शिवपूजन करे भोग की इच्छावाला भोग राज्य की कामनावाला राज्य और पुत्रार्थी पुरुष इस विधि पूजन करने से उत्तम पुत्र पाताहै और रोगी असाध्य रोगसे भी मुक्त होजाता है इस भांति और भी जो जो कामना हों शिवपूजा से सब मिलती हैं॥

पच्चीसवां अध्याय॥

नंदी कहते हैं कि हे सनत्कुमारजी! अब हम शैव अग्निकार्य कहते हैं जैसा शिवजी ने कहा है प्रथम दिक्साधनकी रीति से पूर्वदिशा का साधन कर शुद्ध भूमि में तीन सूत्र पूर्वापर और तीन याम्योत्तर देकर चतुरस्र क्षेत्रका निर्माण करे उसमें सब कुण्ड बनते हैं नित्यहोम के लिये हस्तमात्रका कुण्ड तीन मेखला करके युक्त बनाना चाहिये तीनों मेखला चार तीन और दो अंगुल उँचाई की हस्तप्रमाण करके बनावे मेखलाओं के ऊपर अश्वत्थ-

पत्राकार प्रादेशमात्र की योनि बनावे कुण्ड के मध्यमें अष्टदल और कर्णिकायुक्त नाभि स्थापन करे नाभिका प्रमाण भी एक प्रादेशहै इस भांति कुण्ड रच अस्त्रमन्त्रसे उल्लेखन और कवचसे प्रोक्षण कर कुण्डको देख छः रेखा करे पूर्वापर तीन रेखा ब्रह्म विष्णु महेश्वररूप हैं और उत्तराग्ररेखा शिवहैं फिर कवचसे प्रोक्षण करे शमी अथवा पीपलके काष्ठकी षोडश अंगुल प्रमाण अरणी बनाय वह्निबीज और हृदयमन्त्रसे मथनकर अग्नि उत्पन्न करे पीछे उस अग्निको कुंड में विधिपूर्वक रख एक एक प्रादेशके याज्ञिक काष्ठके टुकड़े उसके ऊपर रक्खे जल से आठों दिशाओंमें परिसमूहन कर परिस्तरण करे पूर्व में उत्तराग्र दक्षिणमें पूर्वाग्र पश्चिममें उत्तराग्र और उत्तर में पूर्वाग्र कुशा बिछावे इसीका नाम परिस्तरण है पूर्व दिशामें ऐन्द्राग्न अर्थात् इन्द्र और अग्निका दक्षिणमें याम्याग्न पश्चिममें वारुणाग्न और उत्तरमें सौम्याग्न पात्र कुशाओंके ऊपर अधोमुख रक्खे और द्रव्य उत्तर भागमें स्थापन कर उसके ऊपर दर्भ रक्खे दक्षिणभाग में शिवको स्थापन कर मूलमन्त्र से पूजा करे पीछे हवन करे प्रोक्षणीपात्र को जलसे भर प्रादेशमात्र दो कुशा उसके ऊपर रख स्थापन करे अग्नि और सूर्यकिरणों करके कुशाग्रोंको प्लावन करे सब पात्रोंको फैलाय विधान से प्रोक्षण करे फिर प्रणीतापात्र को जल से पूर्णकर कुशाओं से ढक दोनों हाथोंसे नासिकापर्यंत उठाय ईशानदिशामें स्थापन करे वायव्य कोणमें घृतका अधिश्रयण करे भस्म सहित अंगार वायव्यकोणमें रख उनके ऊपर घृतको

तपाय ले कुशाओं को प्रज्वलित कर अग्निके चारों ओर घुमाय कुण्ड में डाल दे फिर घृत को सम्मुख स्थापन कर अंगुष्ठमात्र दो कुश विधिसे प्रक्षालन कर घृतमें डाले फिर नव कुशाको प्रज्वलित कर चारोंओर घुमाय कुण्डमें डाले इसभांति दो बार पर्यग्नि करे इसके अनंतर घृतको अग्नि से उतार वायव्यमें रखदे फिर काष्ठसे अग्निका प्रत्यूहन कर पश्चिममें स्थापन कर दो पवित्रोंसे घृतका उत्प्लवन करे पीछे अंगुष्ठ और अनामिका करके घृतमें भीगे हुये दोनों पवित्र दोनों हाथों से अलग अलग उठाय मूलमन्त्रका उच्चारण कर अग्नि में छोड़ देवे अब स्रुक् स्रुवका विधान कहतेहैं एक हस्तप्रमाण सुवर्ण चांदी अथवा यज्ञवृक्ष के काष्ठके स्रुक् स्रुव बनावे एक हस्त लम्बा स्रुक् जिसका मुख छः अंगुल चौड़ा मुख और दंडनाल तथा तीन अंगुल चौड़ा कण्ठनाल बनावे मुख मूलकी भांति रचे दण्ड गोपुच्छके समान अर्थात् ऊपरसे मोटा और नीचे क्रमसे पतला और अग्रभाग नासिका की भांति दो पुटों करके युक्त बनावे और स्रुव छत्तीस अंगुल लम्बा आठ अंगुल चौड़ा और चार अंगुल मोटा चाहिये सात अंगुल चौड़ा और बारह अंगुल लम्बा मुख बनावे उसका कण्ठ दो अंगुल चौड़ा और चार अंगुल लम्बा आठ अंगुल लम्बी और चौड़ी वेदी चार अंगुल वेदीके मध्यमें गोल बिल और कर्णिका युक्त अष्टदल बनावे बिल के बाहर चारों ओर आधी अंगुल चौड़ी पट्टिका पट्टिका के बाहर विकसित कमल और कमल के बाहर दो यव के तुल्य फिर पट्टिका बनावे

वेदी के मध्य में कनिष्ठा अंगुलि के तुल्य मुखपर्यन्त छिद्र बनावे दण्डके मूलमें छः अंगुलके बीच आधे अंगुल की वृद्धिसे तीन गंडिका बनावे और तेरह अंगुल का घट बनावे जिसका कण्ठ दो अंगुल नाभि अर्थात् मध्य दश अंगुल और एक अंगुल पाद बनावे पद्मपृष्ठ के समान नाभि और कर्णिका तुल्य पाद बनावे हाथी के ओष्ठ समान स्रुवके पृष्ठकी आकृति होती है इसी भांति अभिचार आदि कर्मों में लोहेके स्रुक् स्रुव बनावे पच्चीस कुशासे स्रुक् स्रुवका शोधन करे अग्रको अग्र से मध्य को मध्य से और मूलको मूलसे शोधन कर हृदयमन्त्र से अग्नि में तपावे आज्यस्थाली प्रणीता और प्रोक्षणी ये तीनों पात्र सुवर्ण चांदी तांबा अथवा मृत्तिका के बनावे शांतिक पौष्टिककर्मों में और किसी धातुके ये पात्र न चाहिये विशेष करके अभिचारकर्म में लोह के और शांति में मृत्तिका के उत्तम होते हैं इन पात्रोंका मुख छः अंगुल चौड़ा होताहै प्रोक्षणी दो अंगुल ऊंची प्रणीता चार अंगुल और आज्यस्थाली छः अंगुल ऊंची चाहिये जिन समिधाओं से हवन हो उनसे ही परिधि रचे सीधे छिद्ररहित सम और बत्तीस बत्तीस अंगुल लम्बे तीन परिधि चाहिये चार अंगुल के बीच प्रदक्षिण क्रमसे बत्तीस बत्तीस अंगुल लंबे तीन दर्भोंसे परिस्तरण करे आभिचारिक कर्म में शैव अग्न्याधान न करे और समिधा भी कठोर और दृढ़ लेवे परन्तु साधारण कर्मों में कनिष्ठा अंगुलिके तुल्य बारह बारह अंगुल लम्बी सीधी, व्रणरहित और स्निग्ध

समिधा ग्रहण करे हवन में गोघृत उत्तमहै और जो कपिला गौका हो तो बहुतही उत्तम है घृत की आहुति का प्रमाण परिपूर्ण एक स्रुवहै अन्न अर्थात् भात एक कर्ष तिल एक शुक्ति यव आधी शुक्ति और फल एक एक प्रति आहुति में देना चाहिये दूध दही और शहदका प्रमाण घी के तुल्यहै चार स्रुवसे स्रुक् को पूर्ण कर पूर्णाहुति देवे और इससे आधा स्विष्टकृत् और सम्पूर्ण शेष कृत्य होता है शांतिक पौष्टिक आदि हवन शिवाग्नि में करे और मोहन उच्चाटन आदि लौकिक अग्नि में करे सब कर्मों में शिवाग्नि को उत्पन्न कर सात जिह्वा कल्पना करे उनमें ही सब कार्य करे अथवा सब कार्य जिह्वाओं से ही करे और जिह्वामात्र को ही शिवाग्नि कल्पना करे अब सात जिह्वाओं के मन्त्र कहते हैं ॐ बहुरूपायै मध्यजिह्वायै अनेकवर्णायै दक्षिणोत्तरमध्यगायै शांतिकपौष्टिकमोक्षादिफलप्रदायै स्वाहा १ ॐ हिरण्यायै चामीकराभायै ईशानजिह्वायै ज्ञानप्रदायै स्वाहा २ ॐ कनकायै कनकनिभायै रम्यायै ऐंद्रजिह्वायै स्वाहा ३ ॐ रक्तायै रक्तवर्णायै आग्नेयजि-ह्वायै अनेकवर्णायै विद्वेषणमोहनायै स्वाहा ४ ॐ कृष्णायै नैर्ऋतजिह्वायै मारणायै स्वाहा ५ ॐ सुप्रभायै पश्चिम-जिह्वायै मुक्ताफलायै शांतिकायै पौष्टिकायै स्वाहा ६ ॐ अभिव्यक्तायै वायव्यजिह्वायै शत्रूच्चाटनायै स्वाहा ७ ये सातजिह्वामन्त्रहैं और "ॐ वह्नये तेजस्विने स्वाहा" यह प्रधानमन्त्र है इतना अग्निसंस्कार है अथवा नैमित्तिक अग्निकर्मों में विधिसे शिवाग्निको उत्पन्न कर अग्नि-

संस्कार करे फडन्त षष्ठमन्त्र से निरीक्षण प्रोक्षण और ताड़न करे चतुर्थसे अभ्युक्षण खनन उत्किरण षष्ठ से पूर्ण समीकरण प्रथमसे सेचन वौषडंत प्रथमसे कुट्टन षष्ठसे मार्जन उपलेपन चतुर्थ से कुण्ड परिकल्पन अघोर वामदेव और सद्योजात से कुण्डपरिधान चतुर्थ से कुंडका अर्चन प्रथम से रेखाचतुष्टयकरण फडन्त षष्ठ से वज्रीकरण अर्थात् दृढ़ करना और प्रथममन्त्र से ऐन्द्राग्न आदि चारों पदों का स्थापन करे ये अठारह कुण्ड संस्कार हैं इन संस्कारों के अनंतर षष्ठमन्त्र से अक्षपाटन अर्थात् इंद्रियोद्घाटन और प्रथममन्त्र से विष्टरका स्थापन कर वज्रासनके ऊपर वागीश्वर वागीश्वरीका आवाहन करे वागीश्वरीके आवाहन और पूजन के ये दो मन्त्रहैं॥ "ॐ ह्रीं वागीश्वरीं श्यामवर्णां विशालाक्षीं यौवनोन्मत्तविग्रहामृतुमतीं वागीश्वरशक्तिमावाहयामि १ वागीश्वरीं पूजयामि २ और वागीश्वरके आवाहन तथा पूजनके ये मन्त्रहैं॥ ॐ एकवक्त्रं चतुर्भुजं शुद्धस्फटिकाभं वरदाभयहस्तं परशुमृगधरं जटामुकुटमण्डितं सर्वाभरणभूषितं वागीश्वरमावाहयामि १ ॐ ईं वागीश्वराय नमः २ इन मन्त्रों से वागीश्वर वागीश्वरी का आवाहन स्थापन सन्निधान सन्निरोध आदि पूजापर्यन्त सब कर्म कर गर्भाधान आदि वह्नि संस्कार करे अरणी से उत्पन्न सूर्यकान्ति से उत्पन्न अथवा अग्निहोत्र से ताम्रपात्र में अथवा शराव अर्थात् मृत्तिकाकी सराई में अग्नि लाकर प्रथममन्त्र से निरीक्षण, ताड़न, अभ्युक्षण, प्रक्षालन और क्रव्यादांशका त्याग कर जठर और

भ्रूमध्यसे वह्निके नैकारण का आवाहन कर वह्निमन्त्रसे कारणमूर्तिमें आवाहन करे फिर प्रथममन्त्र से उद्दीपन कर तत्पुरुष से अमृतीकरण चतुर्थसेही अवगुण्ठन कर दोनों जानु भूमिपर टेक शराव को उठाय प्रदक्षिण-क्रमसे कुण्डके चारोंओर घुमाय वागीश्वरी को अपने सम्मुख ध्यान कर उनकी गर्भनाड़ीविषे गर्भाधान की रीति से वौषडन्त प्रथम मन्त्र करके अग्निको कुण्ड में स्थापन कर कुशार्घ्य दे प्रथम मन्त्र से इन्धन करके प्रज्वलित करे सद्योजात से गर्भाधान प्रथमसे पूजन वामदेव से पुंसवन द्वितीय से पूजन अघोर से सीमन्त तृतीयसे पूजन और अङ्गोंकी व्याप्ति करे वक्रोद्घाटन और वक्रनिष्कृति भी तृतीयसे करे जातकर्म चतुर्थ से षष्ठमन्त्रसे सूतक शुद्धिके लिये प्रोक्षण कुश और अस्त्र करके अग्निरूप पुत्रकी रक्षा करे फिर अग्निकोणमें मूल ईशान में अग्र नैर्ऋत्य में मूल वायव्यमें अग्र और वायव्य में मूल ईशान में अग्र इस भांति पूर्व-रीतिसे कुशास्तरण कर घृत से भीगीहुई समिधा अग्नि की ला ला निवृत्तिके अर्थ षष्ठमन्त्रसे हवन करे वामदेव आदि चार मन्त्रों करके परिधि और विष्टरका स्थापन कर विष्टरोंके ऊपर ब्रह्मा, रुद्र और विष्णुकी पूजा करे और वज्रादि आवरणपर्यन्त लोकपालों की भी पूजा करे पीछे वागीश्वर वागीश्वरी का पूजन कर हवन करे। अब स्रुक् स्रुवसंस्कार कहते हैं पूर्वरीतिसे निरीक्षण प्रोक्षण ताड़न अभ्युक्षण आदि करके दोनों हाथों में स्रुक् स्रुव ग्रहणकर प्रथममन्त्र से ताड़न और स्थापन

कर कुशाओं करके मूल मध्य और अग्रमें अनुलेखन कर स्रुक् को शक्ति और स्रुवको शिवमान दक्षिणभाग में कुशोंपर स्थापन कर "शक्तये नमः" "शम्भवे नमः" इन मन्त्रों से पूजन करे फिर चतुर्थमन्त्रसे सूत्र करके स्रुक् स्रुवको वेष्टन करे और पूजन भी करे पीछे धेनुमुद्रासे अमृतीकरण चतुर्थमन्त्र से अवगुंठन और षष्ठसे रक्षा करे वह स्रुक् स्रुवसंस्कार है॥ अब घृतका संस्कार कहते हैं निरीक्षण, प्रोक्षण, ताड़न, अभ्युक्षणआदि पहिली भांति कर षष्ठमन्त्र से ईशानकोण में घृतको तपाय वेदी के ऊपर रख वितस्तिमात्र कुशाके पवित्रका अग्र वामहस्तके अंगुष्ठ और अनामिका से ग्रहण कर और दक्षिणहस्त के अंगुष्ठ और अनामिका से पवित्र का मूल ग्रहण कर स्वाहान्त चतुर्थमन्त्र से अग्निज्वाला विषे उत्प्लवन करे छः दर्भ लेकर स्वाहान्त प्रथममन्त्रसे पहिली भांति संप्लवन करे पीछे दो कुशा का पवित्र बनाय प्रथममन्त्र से घृत में छोड़े यह पवित्रीकरण है घृतप्लुत दो दर्भ प्रज्वलित कर घृतके ऊपर तीन बेर घुमाय अग्नि में गेर देवे यह नीराञ्जन है फिर दर्भ लेकर घृतमें केश कीट आदि देख संप्रोक्षणकर दर्भोंको अग्निमें डालदेवे यह अवद्योतन है दो दर्भ प्रज्वलितकर घृतको देखे यह निरीक्षण है सद्योजात मन्त्रसे दर्भके अग्र करके शुक्ल कृष्णपक्षरूप घृत के दो भाग करे फिर कृष्णपक्ष के घृत के तीन भागकर स्रुव करके प्रथमभाग से घृत लेकर "अग्नये स्वाहा" दूसरे भाग करके "सोमाय स्वाहा" तीसरे भाग करके

"अग्नीषोमाभ्यां स्वाहा" और सब भागके घृत करके "अग्नये स्विष्टकृते स्वाहा" इन मन्त्रों करके चार आहुति देवे फिर कुश युक्त पवित्र लेकर नमोन्त सब मन्त्रों से घृतको अभिमन्त्रण करे पीछे धेनुमुद्रा करके अमृतीकरण कवच करके अवगुण्ठन और अस्त्र करके रक्षण करे और पवित्रों को अग्निमें डालदेवे यह घृतका संस्कार है स्रुवसे घृत ले मायाबीज करके आहुति देवे यह चक्राभिधारण है फिर "ईशानमूर्तये स्वाहा १ पुरुषवक्त्राय स्वाहा २ अघोरहृदयाय स्वाहा ३ वामदेवाय गुह्याय स्वाहा ४ सद्योजातमूर्तये स्वाहा ५" इन पांच मन्त्रों से आहुति देवे यह वक्त्रोद्घाटन है पीछे "ईशानमूर्तये तत्पुरुषवक्त्राय स्वाहा १ तत्पुरुषवक्त्राय अघोरहृदयाय स्वाहा २ अघोरहृदयाय वामगुह्याय सद्योजातमूर्तये स्वाहा ३" इन मन्त्रोंसे आहुति देवे यह वक्त्रसंधान है। "ईशानमूर्तये तत्पुरुषवक्त्राय अघोरहृदयाय वामदेवाय गुह्याय सद्योजाताय स्वाहा १" इस मन्त्र से आहुति देवे यह वक्त्रैक्यकरण है इस भांति शिवाग्नि को उत्पन्नकर सब कर्म साधन करे अथवा केवल अग्नि जिह्वाओंसेही शान्ति आदि कर्म करे गर्भाधान आदि संस्कारों में मायाबीज करके दश दश अथवा पांच पांच आहुति देवे शिवाग्निमें पहिली भांति देवता का पीठ कल्पनाकर आवाहन, न्यास, पूजन आदि सब करे और मूलको जप देवताको प्रणाम करे फिर सगर्भ तीन प्राणायाम कर अग्निको घृत और समिधाओं से प्रज्वलित कर हवन करे घृत करके अग्निमें आधार देकर

घृतके शुक्ल कृष्ण भाग से हवन करे दोनों भाग नेत्र हैं उत्तरभागसे "अग्नये स्वाहा" दक्षिणभागसे "सोमाय स्वाहा" इन मन्त्रों से आहुति देवे पश्चिमाभिमुख शिवाग्नि का दक्षिणभाग दक्षिण नेत्र और उत्तरभाग वाम नेत्र है फिर मूलमन्त्र से घृतकी दश आहुति देकर चरु और समिधा करके कल्पोक्त हवन करे पीछे मूल मन्त्र से पूर्णाहुति देवे सब आवरण देवताओं को पांच पांच आहुति ईशानादि क्रम से और शक्तिबीज क्रम से देवे अघोरमन्त्र से प्रायश्चित्तकर स्विष्ट पर्यन्त सब कर्म पूर्ववत् करे हे सनत्कुमार! यह तीन प्रकार का अग्निकार्य हमने कहा इसमें जैसा अवसर होय वैसा करे इस विधि से हवन करनेहारा पुरुष कभी नरकको नहीं जाता अवश्यही स्वर्गवास पाता है मुक्ति की इच्छावाला साधक हिंसारहित होम करे मुमुक्षु पुरुष हृदय में शिवाग्नि का चिन्तनकर सर्वभूतपति अन्तर्यामी सदा शिवकी प्रीति के लिये ध्यानयज्ञ से हवन करे प्राणायाम से शिव को जान भक्ति से नित्य हवनकरे शिव ज्ञान बिना जो केवल बाह्य हवन करे वह पाषाणदर्दुर अर्थात् पत्थर में मेंढक होवे ॥

छब्बीसवां अध्याय ॥

नन्दी कहते हैं कि हे सनत्कुमारजी! शिवभक्त और शिवध्यान में परायण ब्राह्मण लिङ्ग में शिवपूजा करे "अग्निरिति भस्म" इत्यादि मन्त्र से अग्निहोत्र की भस्म लेकर आपाद मस्तक उद्धूलन करे अर्थात् सब

अङ्गों में भस्मधारण करलेवे फिर उत्तराभिमुख बैठकर ब्रह्मसूत्री होकर ब्रह्मतीर्थ से आचमन कर और "नमः शिवाय" इस मन्त्र से देह शुद्धकर मूलमन्त्र और प्रणव से अघोर परमेश्वर का यजन करे क्योंकि सब से अधिक फल अघोर पूजनका है पूजन और अग्निकार्य पहिली भांति ही है केवल मन्त्रोंमें और ध्यानमें भेदहै। "ॐ अघोरेभ्योऽथ घोरेभ्योघोरघोरतरेभ्यः। सर्वेभ्यःसर्वशर्वेभ्यो नमस्तेअस्तुरुद्ररूपेभ्यः॥" यह मन्त्रहै और "अघोरेभ्यः प्रशान्तहृदयाय नमः १ अथ घोरेभ्यः सर्वात्मब्रह्मशिरसे स्वाहा२ घोरघोरतरेभ्यो ज्वालामालिनीशिखायै वषट् ३ सर्वेभ्यः सर्वशर्वेभ्यः पिङ्गलकवचाय हुम् ४ नमस्तेअस्तु रुद्ररूपेभ्यो नेत्रत्रयाय वौषट्५ सहस्राक्षायदुर्भेदाय पाशुपतास्त्राय हुं फट्६"इन छहमन्त्रोंसे षडङ्गन्यास करे स्नान, आचमन,मार्जन, अघमर्षण, तर्पण,सूर्यार्घ्य और सूर्यपूजन सब पहिली भांतिहै केवल अघोरपूजनमें मन्त्रभेद है मार्गशुद्धि, द्वारपूजा, वास्तुपति पूजाकर शुद्धि आदि पहिली भांति सब करकेउत्तम आसनपर बैठनासाग्रदृष्टि हो क्षुभिकाग्नि अर्थात् विरक्तिरूप अग्नि करके सब इन्द्रिय दग्धकर उस भस्म को वायु से प्रेरणाकर जलसे शोधे पीछे ब्रह्ममय उस देह भस्ममें शक्तिसहित ब्रह्मकला का कल्पन करे अघोर मन्त्रके पांच खण्ड कर पञ्चाङ्ग सहित इच्छा ज्ञान और क्रिया का न्यास करे इस भांति अघोरमूर्ति सहित न्यासकरके हृदयमें आसन के ऊपर स्थित नाभि में अग्नि मध्यस्थित और भ्रूमध्य में दीपशिखाकार परमेश्वर का चिन्तन करे शान्ति करके बीज,

अंकुर, अनन्त, सोम, सूर्य, अग्नि, तीन मूर्ति वामा आदि आठ शक्ति और मनोन्मनी सहित पीठका चिन्तन कर उसके ऊपर शिवासन में विराजमान श्रीअघोर-मूर्ति सदाशिव का ध्यान करे जिनका अड़तीस कला रूप और तीन तत्वों करके सहित अक्षयाकार स्वरूप है जिनके अठारह भुज हैं जो अघोर हाथी का चर्म ओढ़े और सिंहचर्म धारे सब भूषणों से भूषित सब देवताओं करके नमस्कृत बत्तीस अक्षररूप से बत्तीस शक्तियों करके वेष्टित कपालमाला से अलंकृत सर्प और वृश्चिकों के गहने पहिने चन्द्रकला मस्तकपर धारे नीलरूप कोटि चन्द्रके समान देदीप्यमान चन्द्रवदन और शक्ति सहितहैं जिनके दहिनीओर के हाथों में खड्ग, खेटक अर्थात् ढाल, पाश, रत्नजटित अंकुश, नाग, धनुष, पाशुपतास्त्रदण्ड और खट्वाङ्ग है बाईंओर के हाथों में वीणा, घण्टा, शूल, डमरु, वज्र, टंक अर्थात् परशु, मुद्गर और नवें हाथमें वर और अभय दोनों धारतेहैं इस भांति शिवका ध्यानकर हवन करे हवनका विधान सब पहिली भांति है केवल मन्त्रों में भेद है अष्टपुष्पाञ्जलि, गन्ध पुष्प आदि करके पूजा, स्तुति, जप, निवेदन, होम आदि सब पहिली रीति से कर विधि-पूर्वक मण्डल बनाय इस मन्त्रसे बलि देवे। "ॐरुद्रेभ्यो मातृगणेभ्यो यक्षेभ्योऽसुरेभ्यो ग्रहेभ्योराक्षसेभ्योनागेभ्यो नक्षत्रेभ्यो विश्वगणेभ्यः क्षेत्रपालेभ्य एष बलिः।" यह बलि देकर वायव्य अथवा पश्चिम में क्षेत्रपाल बलि देवे। अर्घ्य, गन्ध, पुष्प, धूप, दीप, नैवेद्य, मुखवास,

ताम्बूल आदि उपचारों से विधिपूर्वक पूजन कर अष्टपुष्पाञ्जलि देकर विसर्जन करे यह सब पूजा में साधारण है इस भांति संक्षेप से हमने अघोरपूजन का विधान कहा है स्थण्डिल अथवा लिङ्ग में अघोरपूजन करे परन्तु स्थण्डिलपूजन से कोटिगुणित पुण्य लिङ्ग-पूजा में होती है लिङ्गपूजन करनेहारा ब्राह्मण पातक उपपातकों करके लिप्त नहीं होता जलमें पद्मपत्र की भांति निर्लेप रहता है लिङ्गका दर्शन पुण्य है दर्शन से स्पर्श और स्पर्श से पूजन में अधिक पुण्यहै शिवलिङ्ग पूजन से अधिक पुण्यजनक कोई कर्म नहीं है हे सन-त्कुमारजी ! यह अघोर परमेश्वर की पूजा का विधान हमने संक्षेप से वर्णन किया है विस्तार से तो करोड़ों वर्षों में भी वर्णन नहीं करसक्ते हैं ॥

सत्ताईसवां अध्याय ॥

शौनक आदि ऋषि पूछते हैं कि हे सूतजी ! नन्दी का कहाहुआ वेदसम्मत लिङ्गपूजा का फल और प्रभाव श्रवण किया अब मेरुशिखर पर मनु के प्रति क्षत्रियों के हितके लिये शिवजीने जो जयाभिषेक का विधान उपदेश किया वह हम श्रवण किया चाहते हैं और षोडश महादान की क्या विधि है यह भी सुनने की इच्छा है यह सब आप हमारे प्रति कथन करें यह मुनियों का प्रश्न सुन सूतजी कहनेलगे कि पूर्वकाल में मनु अपना जीवच्छ्राद्ध करके मेरुपर्वत में जातेभये वहां जाय स्तुतिकर महादेवजी को प्रसन्न किया और

उनकी अनुग्रह से दिव्यदृष्टि पाय साक्षात् महादेवजी के दर्शन पातेभये और दर्शन पाय हाथ जोड़ शिर नवाय गद्गदवाणी से वारंवार प्रणामकर कहते भये कि महाराज! आपके प्रसाद से मैंने जीवच्छ्राद्ध किया और यहां आय आपके दर्शन पाये अब धर्म, अर्थ, काम और मोक्षको देनेहारा जयाभिषेक जो आपने इन्द्रसे कहा था वह कृपाकर मुझे भी उपदेश कीजिये सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो! अपने परमभक्त मनुकी यह प्रार्थना सुन श्रीसदाशिव कहनेलगे कि हे मनु! राजाओं के हितके अर्थ तेरेको हम जयाभिषेक का विधान कहते हैं जिसके करने से अपमृत्यु दूर होती है और शत्रुओं में जय होती है युद्धके समय इस भांति राजा अभिषेककर युद्ध में जाय तो अवश्य ही जय पावे विधिपूर्वक मण्डप बनाय वेदवेत्ता ब्राह्मण नव स्थानों में अग्नि स्थापनकर अभिषेक करे प्रथम सब अभिषेकों में सूत्रपात करे रँगेहुये पूर्व पश्चिम और दक्षिणोत्तर सूत्र डाले जिसमें दो हजार चारसौ कोष्ठ भूमि पर बनजावें इस भांति कोष्ठ बनाय मार्जन करे बाहरवाली वीथी में एकपद चारों ओर मार्जन करे फिर अलग अलग अङ्ग सूत्रों का मार्जनकर पूर्वादि और दक्षिणादि बत्तीस सूत्रों का मार्जन करे तब पूर्वादि सात पंक्ति और दक्षिणादि सात पंक्ति इस भांति उंचास पंक्ति होती हैं उनमें मध्य की नव पंक्ति सुगन्ध युक्त गोमय के जलसे लीप एक हाथ के विस्तार में कर्णिका और केसरों सहित शुक्ल वर्ण अतिमनोहर अष्टदल

कमल रचे जिसमें आठ अंगुलकी कर्णिका और चार अंगुल केसर बनावे आग्नेय आदि चारों कोणों में धर्म, ज्ञान, वैराग्य और ऐश्वर्य को प्रणव से स्थापन कर अव्यक्त नियतिकाल और काली को चारों दिशाओं में पीठ के गात्र रूपसे स्थापन करे धर्म आदि के क्रम से श्वेत, रक्त, पीत और कृष्ण ये वर्ण हैं और गात्रों का वर्ण हंस अथवा सुवर्ण के समान है आधार शक्ति के मध्य सृष्टि कारण कमल कला मध्य में बिन्दुमात्र और नादाकार का ध्यानकर नादके ऊपर ॐकाररूप जगद्गुरु सदाशिवका ध्यान करे मनोन्मनी और पद्म-वर्ण महादेव का मध्य में ध्यान कर पूर्वादि केसरों में वामा, ज्येष्ठा, रौद्री, काली, कलविकरणी, बलविकरणी, बलप्रमथिनी और सर्वभूतदमनी इन आठ शक्तियों को वामदेव आदि आठ शिवों सहित प्रणव से न्यास करे और "नमोऽस्तु वामदेवाय नमो ज्येष्ठाय शूलिने। रुद्राय कालरूपाय कलविकरणाय च १ बलाय च तथा सर्वभूतस्य दमनाय च। मनोन्मनाय देवाय मनोन्मन्यै नमोनमः २" इन मन्त्रों से पूजाकरे यह प्रथम आवरण है सोलह शक्तियों करके दूसरा और चौबीस शक्तियों करके तीसरा आवरण है मध्य में पिशाचवीथी और पास नाभिवीथी का मन्त्रों से पूजन करे फिर मण्डल के मध्य में अष्टकोण एकहजार आठ स्थान बनाय उनमें कर्णिका केसर सहित अष्टदलकमल, शालि अर्थात् धान, गोधूम, यव, नीवार, चावल, तिल और श्वेत सर्षप करके रचे अथवा जो अन्न उस समय हो उससे कमल

रचे प्रति कमल के लिये शालि एक आढक अर्थात् चार सेर चावल दो सेर तिल और यव आदि एक एक सेर लेवे प्रधान कलश के नीचे सोलह सेर शालि आठ सेर चावल चार सेर तिल और दो सेर यव रक्खे इस भांति कमल रच सबको प्रणव से प्रोक्षण कर सुवर्ण चांदी अथवा ताम्रके हज़ार कलश इस लक्षणसे बनावे कि वर्तुल उदर का विस्तार बारह अंगुल, नाभि छह अंगुल, कण्ठ दो अंगुल ऊंचा, ओष्ठ दो अंगुल, निर्गम अर्थात् जल निकलने का मार्ग दो अंगुल बनावे और शिवकुम्भ इस प्रमाण से द्विगुण बनाय यवप्रमाण अन्तरसे सूत्र करके वेष्टित कर विधिपूर्वक कुशाके ऊपर रख अभ्युक्षण और अवगुण्ठन कर गन्धयुक्त जल से भर कूर्च और अक्षतों सहित मध्य पद्मके ऊपर शिव-कुम्भको स्थापन करे और दो वस्त्रों से उसको लपेट रत्नजटित सुवर्णकमल से ढक देवे पीछे विधिसे वर्धनी पात्र स्थापनकर हज़ार कमलों में हज़ार कलश सुवर्ण कमलों से ढकके और वस्त्रों से आच्छादित स्थापनकर शिवकुम्भ में रुद्रगायत्री और प्रणव करके शिव का स्थापन करे। "ॐ तत्पुरुषाय विद्महे महादेवाय धीमहि तन्नो रुद्रः प्रचोदयात्।" इस रुद्रगायत्री करके सदाशिव का सान्निध्य होता है और देवीगायत्री करके वर्धनी में भगवती का आवाहन कर पूजन करे "ॐ गणाम्बिकायै विद्महे महातपायै धीमहि तन्नो गौरी प्रचोदयात्।" यह देवीगायत्री है इसभांति शिव पार्वती की पूजाकर वामाआदि आठ शक्तियोंकी प्रथम आवरण

में पूजा करे द्वितीय आवरण में ऐन्द्र व्यूह अर्थात् पूर्व दिशा में सुभद्रा, आग्नेय चक्रमें भद्रा, दक्षिणमें कनकाण्डजा, नैर्ऋत्यव्यूह में अम्बिका, पश्चिम में श्रीदेवी, वायव्य में वागीशा, उत्तर में गोमुखी इन शक्तियों की मध्य कुम्भमें पूजा कर ईशानमें भद्रकर्णाकी पूजा कर फिर पूर्व और अग्निकोण के मध्य में अणिमा, अग्निकोण और दक्षिणके मध्यमें लघिमा, दक्षिण नैर्ऋत्य के मध्य में महिमा, नैर्ऋत्य पश्चिम के मध्य में प्राप्ति, पश्चिम वायव्य के मध्य में प्राकाम्य, वायव्य उत्तर के मध्य में ईशित्व, उत्तर ईशान के मध्य में वशित्व और ईशान पूर्वके मध्यमें सर्वकामावसायित्व का पूजन करे यह दूसरा आवरण भया फिर प्रधान कलशोंमें व्यूहके मध्य विधिपूर्वक पहिली भांति इन षोड़श देवोंकी पूजा करे दक्ष दक्षायिका, चण्ड चण्डा, हर हरायी, शौण्ड शौण्डा, प्रथम प्रथमा, मन्मथ मन्मथा, भीम भीमायी, शाकुन शाकुनायी इनकी पूजा कर सुमति सुमत्यायी, गोप गोपायिका, नन्द नन्दायी पितामह और पितामहायी का विधि से स्थापन कर पूजन करे इसभांति तीसरे आवरण की पूजा कर प्रथम आवरण के सौभद्र व्यूह की आठ शक्तियों को पूर्वादि दिशाओं में स्थापनकर पूजा करे और दूसरे आवरण में सोलह शक्तियों का पूजन कर पद्ममुद्रा दिखावे अब शक्तियों के नाम कहते हैं बिन्दुका, बिन्दुगर्भा, नादिनी, नादगर्भजा, शक्तिका, शक्तिगर्भा, परा और परापरा ये पहिले आवरणकी आठ शक्ति हैं चण्डा, चण्डमुखी, चण्डवेगा, मनोजवा,

चण्डाक्षी, चण्डनिर्घोषा, भ्रुकुटी, चण्डनायिका, मनो त्सेधा, मनोध्यक्षा, मानसी, माननायिका, मनोहरी मनोह्लादी, मनःप्रीति, महेश्वरी ये सोलह दूसरे आव- रण की शक्ति हैं यह सुभद्राका व्यूह है अब भद्राका व्यूह कहते हैं ऐन्द्री, हौताशनी, याम्या, नैर्ऋती, वारुणी, वायव्या, कौबेरी और ऐशानी ये आठ शक्ति प्रथम आवरण की हैं और हरिणी, सुवर्णा, कांचनी, हाटकी, रुक्मिणी, सत्यभामा, सुभगा, जम्बुनायिका, वाग्भवा, वाक्पथा, वाणी, भीमा, चित्ररथा, सुधी, वेद- माता और हिरण्याक्षी ये दूसरे आवरणकी शक्ति हैं यह भद्राका व्यूह है अब कनकाण्डजाका व्यूह कहते हैं वज्र, शक्ति, दण्ड, खड्ग, पाश, ध्वजा, गदा और त्रिशूल ये प्रथम आवरणकी शक्ति हैं युद्धा, प्रयुद्धा, चण्डा, मुण्डा, कपालिनी, मृत्युहंत्री, विरूपाक्षी, कपर्दी, कमलासना, दंष्ट्रिणी, रङ्गिणी, लम्बाक्षी, कङ्कभूषणी, संभावा और भाविनी ये सोलह शक्ति दूसरे आवरणकी हैं यह कन- काण्डजाका व्यूह है अब अम्बिका का व्यूह कहते हैं खेचरी, आत्मनाभा, भवानी, वह्निरूपिणी, वह्निनी, वह्नि- नाभा, महिमा और अमृतलालसा ये आठ शक्ति प्रथम आवरणकी हैं और क्षमा, शिखरा, देवी, ऋतुरता, शिला, भूतपनी, धन्या, इन्द्रमाता, वैष्णवी, तृष्णा, रागवती, मोहा, कामकोपा, महोत्कटा, इन्द्रा और बधिरा ये सोलह दूसरे आवरण की शक्ति हैं यह अम्बिका व्यूह है अब श्रीव्यूह कहते हैं स्पर्शा, स्पर्शवती, गन्धा, प्राणा, अपाना, समाना, उदाना और व्याना ये आठ शक्ति प्रथम आवरण

कीहैं और तमोहता प्रभा अमोघा तेजनीदहनी भीमास्या ज्वालिनी उपाशोषणी रुद्रनायका वीरभद्रा गणाध्यक्षा चन्द्रहासा गह्वरा गणमाता और अम्बिका ये सोलह दूसरे आवरणकी शक्ति हैं यह श्रीव्यूह है अब वागीशा का व्यूह कहते हैं धारा वारिधारा वह्निकी नाशकी मर्त्यातीता महामाया वज्रणी और कामधेनु ये आठ शक्ति प्रथम आवरण कीहैं और पयोष्णी वारुणी शान्ता जयन्ती प्राविनी जलमाता पयोमाता महाम्बिका रक्ता कराली चंडाली पयस्विनी माया विद्येश्वरी काली और कालिका ये सोलह दूसरे आवरण की शक्ति हैं यह वागीशा का व्यूह है अब गोमुखी का व्यूह कहते हैं शंकिनी हलिनी लंकावर्णा कल्किनी यक्षिणी मालिनी वमनी और सात्मनी ये आठ शक्ति प्रथमावरण की हैं और चंडा घंटा महानादा सुमुखी दुर्मुखी बला रेवती प्रथमा घोरा सैन्या लीना महाबला जया विजया अजिता अपराजिता ये सोलह शक्ति दूसरे आवरणकी हैं यह गोमुखी का व्यूह है अब भद्रकरणी का व्यूह कहते हैं महाजया विरूपाक्षी शुक्लाभा आकाशमातृका संहारी जातहारी दंष्ट्राली शुष्करेवती ये प्रथमावरण की आठ शक्ति हैं और पिपीलिका पुण्यहारी अशनी सर्वहारिणी भद्रहा विश्वहारी हिमा योगेश्वरी छिद्रा भानुमती अच्छिद्रा सैंहिकी सुरभी समा सर्वभव्या वेगा ये सोलह दूसरे आवरणकी शक्तिहैं ये आठ महाव्यूह वर्णन किये अब अणिमादिकोंके आठ उपव्यूह सुनो प्रथमआवरण में अणिमा व्यूह क्रम से कहते हैं ऐन्द्रा चित्रभानु

वारुणी दंडी प्राणरूपी हंस स्वात्मशक्ति और पितामह ये आठ प्रथमावरण के देवता हैं और केशव रुद्र चंद्र सूर्यमहात्मा आत्मा अंतरात्मा महेश्वर परमात्मा जीव पिंगल पुरुष पशुभोक्ता भूतपति भीम ये सोलह दूसरे आवरण के देव हैं यह अणिमाका व्यूहहै अब लघिमा का व्यूह कहते हैं श्रीकंठ सूक्ष्म त्रिमूर्ति शशक अमरेश स्थितीश दारत ये आठ प्रथमावरण के देवहैं स्थाणु हर दंडेश भौतीस सद्योजात अनुग्रहेश क्रूरसेन सुरेश्वर क्रोधीश चंड प्रचंड शिव एकरुद्र कूर्म एकनेत्र चतुर्मुख ये सोलह दूसरे आवरण के देव हैं यह लघिमाका व्यूह है अब महिमाका व्यूह कहते हैं अजेश क्षेम रुद्र सोम अंश लांगली दण्डारु अर्द्धनारीश एकांतपाली भुजंग पिनाकी खड्गी कामईश श्वेत भृगु महिमाव्यूह में एक ही आवरण है यह महिमाव्यूह है अब प्राप्ति का व्यूह कहते हैं संवर्त लकुलीश वाडव हस्ती चण्ड यक्ष गण-पति महात्मा भृगुज ये आठ पहिले आवरण के देवता हैं त्रिविक्रम महाजिह्व ऋक्ष श्रीभद्र महादेव दधीचि कुमार परावर महादंष्ट्र कराल सूचक सुवर्धन महाध्वांक्ष महानन्द दण्डी गोपालक ये दूसरे आवरण के देवताहैं यह प्राप्ति व्यूह है अब प्राकाम्य व्यूह कहतेहैं पुष्पदंत महानाग विपुला नन्दकारक शुक्लविशाल कमलबिल्व अरुण ये आठ पहिले आवरण के देवता हैं रतिप्रिय सुरेशान चित्रांग सुदुर्जय विनायक क्षेत्रपाल महामोह जङ्गल वत्सपुत्र महापुत्र ग्रामदेशाधिप सर्वावस्थाधिप देवमेघनाद प्रचण्डक कालदूत ये दूसरे आवरण के

देवता हैं यह प्राकाम्य व्यूह है अब ऐश्वर्य व्यूह कहते हैं मंगला चर्चिका योगेशा हरदायका भासुरा सुरमाता सुन्दरी मातृका ये प्रथमावरण के देवता हैं और गणाधिप मन्त्रज्ञ वरदेव षडानन विदग्ध विचित्र अमोघ मोघ अश्वीरुद्र सोमेश उत्तमोदुम्बर नारसिंह विजय इन्द्र गुहप्रभु अपांपति ये सोलह दूसरे आवरण के देव हैं यह ऐश्वर्य व्यूह है अब वशित्व व्यूह कहते हैं गगन भवन विजय अजय महाजय अंगार व्यंगार महायशा ये आठ प्रथम आवरण के देवता हैं सुन्दर प्रचण्डेश महावर्ण महासुर महारोमा महागर्भ प्रथम कनक खरज गरुड़ मेघनाद गर्जक गज छेदकबाहु त्रिशिख मारि ये सोलह देव दूसरे आवरण के हैं यह वशित्व व्यूह है अब कामावसायित्व व्यूह कहते हैं विनाद विकट बसन्त भय विद्युत् महाबल कमल दमन ये आठ पहिले आवरण के देवता हैं और धर्म अतिबल सर्प महाकाय महाहनु सबलभस्मांगी दुर्जय दुरतिक्रम बेताल रौरव दुर्धर भोग वज्र कालाग्निरुद्र सद्यनाद महागुह ये दूसरे आवरण के सोलह देवता हैं यह कामावसायित्व व्यूह है षोड़श का पहिला आवरण है अब दूसरा आवरण कहते हैं दूसरे आवरण में दक्षव्यूह प्रथम है मनोहरा महानादा चित्रा चित्ररथा रोहिणी चित्रांगी चित्ररेखा विचित्रा ये आठ शक्ति प्रथम आवरण की हैं चित्रां विचित्ररूपा शुभदा कामदा शुभा क्रूरा पिंगला देवी खड्गिका लम्बिका सती दंष्ट्राली राक्षसी ध्वंसी लोलुपा लोहितामुखी ये सोलह दूसरे आवरण की शक्ति हैं यह

दक्षव्यूह है अब दक्षायी व्यूह सुनो सर्वासती विश्वरूपा लम्पटा आमिषप्रिया दीर्घदंष्ट्रा वज्रा लम्बोष्ठी प्राणहारिणी ये आठ प्रथम आवरण की शक्ति हैं गजकर्णा अश्वकर्णा महाकाली सुभीषणा वातवेगरवा घोरा घना घनरवा वरघोषा महावर्णा सुघण्टा घण्टिका घण्टेश्वरी महाघोरी घोरा अतिघोरा ये सोलह दूसरेआवरण की शक्ति हैं यह दाक्षायी व्यूह है अब चण्ड व्यूह कहते हैं अतिघण्टा अतिघोरा कराला करभा विभूति भोगदा कान्ति शंखिनी ये आठ पहिले आवरण की शक्ति हैं पत्रिणी गांधारी योगमाता सुपीवरा रक्ता मालांशुका वीरासंहारी मांसहारिणी फलहारी जीवहारी स्वेच्छाहारी तुण्डिका रेवती रंगिणी संगा ये सोलह दूसरे आवरण की शक्ति हैं यह चंडव्यूह है अब चण्डा व्यूह कहते हैं चण्डी चंडमुखी चंडा चंडवेगा महारवा भ्रुकुटी चंडभू चंडरूपा ये आठ प्रथम आवरण की शक्ति हैं चन्द्रघ्राणा बलाबलजिह्वा बलेश्वरी बलवेगा महाकाया महाकोपा विद्युता कंकाली कलशी विद्युत् चंडघोषा महाघोषा महारावा चंडभा अनंगचंडिका ये सोलह शक्ति दूसरे आवरण की हैं यह चंडा व्यूह है अब हर व्यूह कहते हैं चन्द्राक्षी कामदा सूकरा कुक्कुटानना गांधरी दुन्दुभी दुर्गा सौमित्री ये आठ शक्ति पहिले आवरण की हैं मृतोद्भवा महालक्ष्मी वर्णदा जीवरक्षिणी हरिणी क्षीणजीवा दण्डवक्त्रा चतुर्भुजा व्योमचारी व्योमरूपा व्योमव्यापी शुभोदया गृहचारी सुचारी विषहारी विषार्तिहा ये सोलह शक्ति दूसरे आवरण की हैं यह

हर व्यूह है अब हरायी व्यूह कहते हैं जंभा अच्युता कंकारी देविका दुर्द्धरा वहा चंडिका चपला ये आठ शक्ति प्रथम आवरण की हैं चंडिका चामरी भंडिका शुभानना पिण्डिका मुण्डिनी मुण्डा शाकिनी शांकरी कर्तरी भर्तरी भागिनी यज्ञदायिनी यमदंष्ट्रा महादंष्ट्रा कराला ये सोलह शक्ति दूसरे आवरण की हैं यह हरायी व्यूह है अब शौण्ड व्यूह कहते हैं विकराली कराली कालजङ्घा यशस्विनी वेगा वेगावती यज्ञा वेदांगा ये आठ शक्ति पहिले आवरण की हैं वज्रा शङ्खा अतिशङ्खा बला अबला अंजनी मोहनी माया विकटांगी नली गण्डकी दण्डकी घोणा शोणा सत्यवती कल्लोला ये सोलह शक्ति दूसरे आवरण की हैं यह शौण्ड व्यूह है अब शौंडा व्यूह कहते हैं दंतुरा रौद्रभागा अमृता सकुला चलजिह्वा आर्यनेत्रा रूपिणी दारिका ये आठ शक्ति प्रथम आवरण की हैं खादका रूपनामा संहारी क्षमा अन्तका करिण्डनी पेषणी महात्रासा कृतांतिका दण्डिनी किङ्करी विम्बा वर्णिनी अमलांगिनी द्रविणी द्राविणी ये सोलह शक्ति दूसरे आवरण की हैं यह शौंडाव्यूह है अब प्रथम व्यूह कहते हैं प्लवनी प्लावनी शोभा मन्दा मदोत्कटा मंदा क्षेपा महादेवी ये आठ प्रथमावरण की शक्ति हैं कामसंदीपनी अतिरूपा मनोहरा महावशा मदग्राहा विह्वला मदविह्वला अरुणा शोषणा दिव्या रेवती भांडनायका स्तंभिनी घोररक्ताक्षी स्मररूपा सुघोषणा ये दूसरे आवरण की सोलह शक्ति हैं यह प्रथम व्यूह है अब प्रथमा व्यूह कहते हैं घोरा

घोरतरा अघोरा अतिघोरा घनायिका धावनी क्रोष्टुका मुण्डा ये आठ प्रथम आवरण की शक्ति हैं भीमा भीमतरा अभीमा सुवर्तुला स्तंभिनी रोदिनी रौद्रा रुद्रवती अचला चपला महाबला महाशांति शाला शांता शिवा अशिवा बृहत्कक्षा महानासा ये सोलह दूसरे आवरण की शक्ति हैं यह प्रथम व्यूह है अब मन्मथव्यूह कहते हैं तालकरणी बाला कल्याणी कपिला शिवा इष्टि तुष्टि प्रतिज्ञा ये आठ प्रथम आवरण की शक्ति हैं ख्याति पुष्टिकरी तुष्टि जलाश्रुति धृति कामदा शुभदा सौम्या तेजनी कामतन्त्रिका धर्मा धर्मवशा धर्मशीला पापहा धर्मवर्धिनी ये सोलह शक्ति दूसरे आवरणकी हैं यह मन्मथ व्यूह है अब मन्मथा व्यूह कहते हैं धर्मरक्षा विधाना धर्मा धर्मवती सुमति दुर्मति मेधा ये आठ पहिले आवरण की शक्ति हैं शुद्धि बुद्धि द्युति कांति वर्तुला मोहवर्धिनी बला अतिबला भीमा प्राणवृद्धिकरी निर्लज्जा निर्घृणा मन्दा सर्वपापक्षयंकरी कपिला अतिविधुरा ये सोलह दूसरे आवरण की शक्ति हैं यह मन्मथा व्यूह है अब भीम व्यूह कहते हैं रक्ता विरक्ता उद्वेगा शोकवर्धिनी कामा तृष्णा क्षुधा मोहा ये आठ प्रथम आवरण की शक्ति हैं जया निद्रा भया आलस्या जलपृष्ठोदरी दरा कृष्णा कृष्णांगिनी वृद्धा शुद्धा उच्छिष्टा अशनी तृषा कामना शोभनी दग्धा दुःखदा सुखदावली ये सोलह दूसरे आवरणकी शक्ति हैं यह भीम व्यूह है अब भीमाधी व्यूह कहते हैं आनन्दा सुनन्दा महानन्दा शुभंकरी वीतरागा महोत्साहा जितरागा मनोरथा ये आठ शक्ति प्रथमावरण

की हैं मनोन्मनी मनक्षोभा मदोन्मत्ता मदाकुला मन्दगर्भा महाभासा कामानन्दा सुविह्वला महावेगा सुवेगा महाभोगा क्षयावहा क्रमणी क्रामणी वक्रा ये दूसरे आवरण की सोलह शक्ति हैं यह भीमायी व्यूह है अब शाकुन व्यूह कहते हैं योगा वेगा सुवेगा अतिवेगा सुवासिनी मनोरथावेगा जलावर्ता धीमती ये आठ प्रथमावरण की शक्ति हैं रोधनी क्षोभणी बाला विप्रा शेषा सुशोषणी विद्युता देवी भाषिणी मनोवेगा चापला विद्युज्जिह्वा महाजिह्वा भ्रुकुटी कुटिलानना फुल्लज्वाला महाज्वाला सुज्वाला क्षयान्तिका ये सोलह दूसरे आवरण की शक्ति हैं यह शाकुन व्यूह है अब शाकुनायी व्यूह कहते हैं ज्वालिनी भस्माङ्गी भस्मान्तगा तता भाविनी प्रजा विद्या ख्याति ये आठ प्रथम आवरणकी शक्तिहैं उल्लेखा पताका भोगा भोगवती खगा भोगा भोगव्रता भोगाख्या योगपारगा ऋद्धि बुद्धि धृति कान्ति स्मृतिश्रुति धरा ये सोलह दूसरे आवरण की शक्ति हैं यह शाकुनायी व्यूह है अब सुमति व्यूह कहते हैं परेष्टा परादृष्टा अमृता फलनाशिनी हिरण्याक्षी सुवर्णाक्षी कपिञ्जला कामरेखा ये आठ प्रथमावरण की शक्ति हैं रत्नद्वीपा सुद्वीपा रत्नदा रत्नमालिनी रत्नशोभा सुशोभा महाशोभा महाद्युति शाम्बरी बन्धुरा ग्रन्थि पादकर्णा करानना हयग्रीवा जिह्वा सर्वाभासा ये सोलह दूसरे आवरण की शक्ति हैं यह सुमति व्यूहहै अब सुमत्यायी व्यूह कहते हैं सर्वाशी महाभक्षा महादंष्ट्रा अतिरौरवा विस्फुलिङ्गा विलिङ्गा कृतान्ता भास्करानना ये आठ प्रथमावरण की शक्ति हैं रागा

रङ्गवती श्रेष्ठा महाक्रोधा रौरवा क्रोधनी वसनी कलहा महाबला कलन्तिका चतुर्भेदा दुर्गा दुर्गमानिनी नाली सुनाली सौम्या ये सोलह दूसरे आवरण की शक्ति हैं यह सुमत्यायी व्यूह है अब गोपव्यूह कहते हैं पाटली पाटवी पाटी बिटिपिटा कंकटा सुपटा प्रघटा घटोद्भवा ये आठ शक्ति पहिले आवरणकी हैं नादाक्षी नादरूपा सर्वकारी गमा अगमा अनुचारी सुचारी चण्डनाड़ी सुवाहिनी सुयोगा वियोगा हंसा विलासिनी सर्वगा सुविचारा वञ्चनी ये दूसरे आवरणकी शक्तिहैं यह गोप व्यूह है अब गोपायी व्यूह कहते हैं भेदिनी छेदिनी सर्व-कारी क्षुधाशनी उच्छुष्मा गान्धारी भस्माशी बड़वानला ये आठ पहिले आवरण की शक्ति हैं अन्धा बाह्वा सिती-बाली दीपक्षास्रा अक्षा त्र्यक्षा हल्लेखा हृद्गता मायिका आमयासादिनी भिल्ली सह्या सरस्वती रुद्रशक्ति महा-शक्ति महामोहा गोनदी ये सोलह दूसरे आवरणकी शक्ति हैं यह गोपायीव्यूह है अब नन्दव्यूह कहते हैं नन्दिनी निवृत्ति प्रतिष्ठा विद्या नासा खग्रसिनी चामुण्डा प्रिय-दर्शिनी ये आठ शक्ति प्रथम आवरणकी हैं ग्राह्या नारायणी मोहा प्रज्ञा देवी चक्रिणी कङ्कटा काली शिवा घोषा विरामा वागीशी वाहिनी भीषणी सुगमा निर्दिष्टा ये सोलह दूसरे आवरणकी शक्ति हैं यह नन्दव्यूह है अब नन्दायी व्यूह कहते हैं विनायिकी पूर्णिमा रंकारी कुण्डली इच्छा कपालिनी द्वीपिनी जयन्तिका ये आठ पहिले आवरण की शक्ति हैं पावनी, अम्बिका, सर्वात्मा, पूतना, मछली, मोदिनी, लम्बोदरी, संहारी, कालिनी,

कुसुमा, शुक्ला, तारा, ज्ञाना, क्रिया, गायत्री, सावित्री ये सोलह दूसरे आवरण की शक्ति हैं यह नन्दायी व्यूह है अब पितामह व्यूह कहते हैं नन्दिनी, फेत्कारी, क्रोधा-हंसा, षडंगुला, आनन्दा, वसुदुर्गा, संहारा, अमृता ये आठ प्रथमावरण की शक्ति हैं कुलान्तिका, नला, प्रचण्डा, मर्दिनी, सर्वभूता भया, दया, बड़वामुखी, लम्पटा, पन्नगा, कुसुमा, विपुलान्तका, केदारा, कूर्मा, दुरिता, मन्दोदरी, खड्गचक्रा ये सोलह दूसरे आवरण की शक्ति हैं यह पितामह व्यूह है अब पितामहायी व्यूह कहते हैं वज्रा, नन्दना, शावा, शाविका, रिपु-भेदिनी, रूपा, चतुर्था, योगा ये प्रथम आवरण की आठ शक्ति हैं भूतनादा, महाबला, खर्परा, भस्मा, कान्ता, दृष्टि, ब्रह्मरूपिणी, सह्या, वैकारिका, जाता, कर्णमोटा, महामोहा, महामाया, गान्धारी, शब्दायी, महाघोषा ये सोलह दूसरे आवरणकी शक्ति हैं यह पितामहायी व्यूह है ये सब देवी दोनों भुजाओं में पद्म और शङ्ख धारण किये बालसूर्य के समान अरुणवर्ण, शान्तस्वरूप, रक्त वस्त्र और संपूर्ण भूषणों से अलंकृत मोती और भांति भांतिके रत्नोंसे जड़े हुये मुकुटोंसे भूषित और गौरवर्ण हैं॥

इस भांति सुवर्ण आदि के हज़ार कलश रुद्रक्षेत्र में स्थापनकर प्रत्येक कलशमें विष्णु भगवान्‌के कहे हज़ार भव आदि नामों करके पूजनकर सम्मुख बाणलिङ्ग स्थापन कर अभिषेक करे इन हज़ार कलशों में चालिस व्यूहों की पूजा करे सब कलश सुगंधिजलसे पूर्ण पञ्च-रत्न और सुवर्णयुक्त चाहिये और मध्यका मुख्य कलश

गोघृतसे, दुग्धसे अथवा दहीसे पूर्ण करना चाहिये और घृत, दधि, दुग्ध, पञ्चगव्य अथवा ब्रह्मकूर्च करके रुद्राध्यायसे रुद्र का अभिषेक कर राजा का अभिषेक करे अघोरमन्त्रसे हवन कर इसी मन्त्रसे राजाका अभिषेक करे देवकुण्ड अथवा स्थण्डिल में समिधा, घृत, चरु, लाजा, शालि, नीवार चावल आदि करके अष्टोत्तरशत हवन कर पूर्वाभिमुख राजाका अधिवासन करे फिर पुण्याहवाचन और स्वस्तिवाचन कर सुवर्णका कङ्कण, भस्म और मृणाल अर्थात् कमलकी जड़ सहित राजाके दहिने हाथमें धारण करावे फिर त्र्यम्बक मन्त्रसे हवन कर राजाका अभिषेक करे फिर पञ्चब्रह्म मन्त्रों करके सब द्रव्योंसे हवन करे स्वाहान्त तत्पुरुष मन्त्रसे पूर्वदिशाके कुण्डमें होम करे कृष्णवस्त्र पहिन अघोर मन्त्रसे दक्षिण कुण्डमें होम करे वामदेव मन्त्रसे पश्चिमके कुण्डमें और सद्योजात मन्त्रसे उत्तरदिशाके कुण्डमें हवन करे अग्निकोणके कुण्डमें "यो रुद्रो अग्नौ" इत्यादि और "जातवेदसे सुनवामसोमम्" इत्यादि मन्त्र करके हवन करे नैर्ऋत्य कोणके कुण्डमें निमि निशि दिश स्वाहा खड्ग राक्षस भेदन "रुधिराज्यार्द्रनैर्ऋत्यै स्वाहा नमः स्वधा नमः" इस मन्त्रसे सब द्रव्यों करके हवन करे वायव्य कोणके कुण्डमें "ईशानाय कद्रुद्राय प्रचेतसे त्र्यम्बकाय शर्वाय तन्नोरुद्रः प्रचोदयात्" इस मन्त्रसे हवन करे ईशान कुण्डमें ईशान मन्त्रसे हवन कर प्रधानकुण्डमें भी ईशान मन्त्रसेही हवन करे इस भांति प्रतिकुण्ड में एक एक सहस्र हवन आचार्य करे अथवा शिवभक्त राजा अपने

हाथसेही हवन कर अघोर मन्त्रसे प्रायश्चित्त करे फिर आचार्य ब्रह्मकूर्च के जलसे रुद्राध्याय करके राजाका अभिषेक करे अभिषेक के समय शङ्ख, भेरी आदि बाजों के शब्द वेदघोष और जयशब्द होने चाहिये इस प्रकार रुद्राक्ष और विभूतिसे भूषित राजाका अभिषेक कर छत्र, चामर, ध्वजा, पालकी, शङ्ख, भेरी आदि उपकरण भी राजाके लिये विधिसे आचार्य साधन करे ये सब उपकरण राज्याभिषेक युक्त क्षत्रिय के लिये हैं साधारण क्षत्रियको इनका अधिकार नहीं मण्डपकी चारों दिशाओं में पूर्वादि क्रम से पलाश, गूलर, पीपल और बड़ के तोरण लगावे और रेशम के वस्त्रकी पट्टिका अर्थात् पताकाओं से भूषित करे तोरणों पर पलाश आदि वृक्षों की बारह बारह अंगुल की शाखा बांधे और आठ आठ अंगुल के दर्भोंकी माला करके मण्डपको अलंकृत करे आठों दिशाओं में ध्वजा, पताका, सुवर्ण के कलश आदिसे मण्डप को शोभित कर राजा का अभिषेक करे "तन्महेशाय विद्महे वाग्विशुद्धाय धीमहि तन्नः शिवः प्रचोदयात्" इस मन्त्र करके शिवकुम्भके जलसे गौरी गायत्री करके वर्द्धनी के जलसे और रुद्राध्याय तथा अघोर मन्त्र करके और कुम्भों के जलसे राजाका अभिषेक कर दिव्य वस्त्र, भूषण, मुकुट आदि से राजा को अलंकृत करे राजा भी अड़सठ पल सुवर्णका रत्नजटित सुदर्शनचक्र बनाय गुरुको दक्षिणा देवे और दश उत्तम गौ, वस्त्र, भूमि, सौ द्रोण तिल, सौ द्रोण चावल, वाहन तकिये और बिछौने सहित पलँग भी गुरुके अर्पण करे

और जो योगी होय उनको तीस तीस पल सुवर्ण तथा इससे आधी सामग्री देवे और इससे भी आधी प्रत्येक साधारण शिवभक्त को देवे इस भांति सबको प्रसन्न कर श्रीमहादेवजी की महापूजा करे यह जयाभिषेक का संक्षेप से विधान कहा है इस अभिषेक के करनेसे इन्द्र, ब्रह्मा, विष्णुआदि देवता उत्तम उत्तम अधिकारोंको प्राप्त भये पार्वती, सावित्री, लक्ष्मी आदि इसी अभिषेक से परम सौभाग्य को प्राप्त भईं नन्दी ने रुद्राध्याय से यह अभिषेक कर मृत्यु को जीता तारक, विद्युन्माली, हिरण्याक्ष आदि बड़े बड़े प्रतापी दैत्य विष्णु भगवान् ने इसी अभिषेक के प्रभाव से जीते नृसिंहजीने हिरण्यकशिपु स्कन्द ने तारकासुर और भगवतीने सुन्द, उपसुन्दके पुत्र बड़े वीर वसुदेवऔर सुदेव के अभिषेकके बल से मारे देवताओं ने दैत्यों को इसीके सामर्थ्य से जीता और भी अनेक राजा तथा ब्राह्मण इस अभिषेक से उत्तम सिद्धि को प्राप्त भये कहां तक इस अभिषेक का माहात्म्य वर्णन करें इससेही सिद्ध मृत्युको जीत अमर भये करोड़ों कल्पों के संचित किये हुये बड़े बड़े पाप इस अभिषेकके करने से क्षणमात्र में निवृत्त होजाते हैं क्षय कुष्ठ आदि महारोग भी इस अभिषेक से निवृत्त होते हैं जिस राजा का इस विधि से अभिषेक कियाजावे वह सदा जय पावे और पुत्र, पौत्र, धन, धान्य आदि से परिपूर्ण होजाय सब पाप निवृत्त होयँ प्रजाका उसमें दृढ़ अनुराग हो और साक्षात् इन्द्रही होजाय शिवजी कहते हैं हे स्वायम्भुवमनु ! राजाओंके हितके अर्थ यह जया-

भिषेक का विधान हमने संक्षेप से वर्णन किया है इस अभिषेकसे अवश्यही शत्रुओं से जय मिलता है॥

अट्ठाईसवां अध्याय॥

सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो! इस भांति श्रीशंकर से जयाभिषेक का विधान सुन स्वायम्भुवमनु अपना जयाभिषेक करता भया और जयाभिषेक कर महादेवजी के समीप जाय उनके दर्शन पाय भक्तिसे वारंवार शिर नवाय रुद्राध्याय से स्तुति करता भया शिवजी ने मनुकी भक्ति देख कहा कि हे मनु! बहुत काल निष्कण्टक राज्य कर अन्तमें कर्म करके तेरा मोक्ष होगा इतना कह शिव जी अन्तर्धान भये और मनु शिवजी को प्रणाम कर मेरु पर्वत को गये वहां जाय सनत्कुमारजी को देख भक्तिसे नमस्कार और स्तुति करते भये सनत्कुमारजी ने भी मनुको देख कहा कि हे राजन्! शिवजी के अनुग्रह से तुम्हारा जयाभिषेक भया अब और जो कुछ पूछनेकी इच्छा हो पूछो हम कहेंगे यह सनत्कुमारजी का वचन सुन हाथ जोड़ नम्रता से मनुने कहा कि महाराज! कर्म से क्योंकर मुक्ति होसक्ती है यह आप वर्णन करें कि कर्म से, ज्ञानसे अथवा कर्म और ज्ञान दोनों मिलने से मुक्ति होती है यह मनुका वचन सुन वेदका सार जाननेहारे सनत्कुमार बोले कि हे मनु! कर्म से और मिश्र अर्थात् कर्म युक्त ज्ञानसे क्रम करके मुक्ति होती है और शुद्धज्ञान से क्षणमात्र में मुक्ति मिलती है॥

पूर्वकालमें नन्दीका अपमान करने से नन्दीके शाप करके हम उष्ट्र होगये फिर बहुतकाल पर्यन्त शिवजीका आराधन किया तब नन्दी के अनुग्रह से उष्ट्रयोनि का त्याग कर ब्रह्मपुत्र भये और शिवधर्म की रीतिसे शिवजी का अर्चन कर उत्तम गति को प्राप्त भये नन्दिकेश्वर ने राजाओं को धर्म, अर्थ, काम और मोक्षकी प्राप्तिके लिये तुलादान आदि षोडश दान कहे हैं उस दानरूप कर्म से राजाओं की मुक्ति होती है अब हम पहिले तुलादान का विधान कहते हैं ग्रहण आदि पुण्यकालों में उत्तम क्षेत्रके ऊपर बीस हाथ, अठारह हाथ अथवा सोलह हाथका मण्डप अथवा चौतरा बनाय उसके मध्य में नव हाथ की, आठ हाथ की, सात हाथ की, दोही हाथकी अथवा डेढ़ हाथकी विस्तारवाली अतिसुन्दर वेदी बनावे जिसमें चारों ओर बारह स्तम्भ खडे होवें इस भांति वेदी रच चारोंओर नवकुण्ड रचे पूर्व और ईशानके मध्य में मुख्यकुण्ड चतुरस्र अथवा योनि के आकार बनावे स्त्रियों के लिये विशेष करके योनिकुण्ड ही बनाना चाहिये और आठों दिशाओंमें अर्धचन्द्र त्रिकोण, वर्तुल, षडस्र, योनि, पद्म, अष्टास्र और चतुरस्र बनावे जो कुण्ड न बन सके तो स्थण्डिलही बनालेवे चार द्वार, चार तोरण, आठ ध्वजा, दर्भमाला, वितान और अष्टमङ्गलों करके युक्त अतिमनोहर मण्डप बनाय उसमें तुला-स्तम्भ खड़े करे बिल्व, पीपल अथवा खदिर का तुला-स्तम्भ बनावे जिस काष्ठ का स्तम्भ बनावे उसी काष्ठके सब उपकरण रचे अथवा मिश्र काष्ठोंके बनावे वा केवल

बांसकी ही सब वस्तु बना लेवे दश दश हाथ के दो स्तम्भ गोल और निर्व्रण बनाय दो दो हाथ भूमि में गाड़दे और आठ हाथ बाहर रक्खे स्तम्भों का व्यास अर्थात् मोटाई एक एक वितस्ति चाहिये नीचे से स्तम्भों का अन्तर दो अंगुल न्यून छह हस्त और ऊपर से पूरे छह हस्त चाहिये अथवा चार हस्तही अन्तर दोनों स्तम्भों का रक्खे और तुलादण्ड के मध्यमें तथा दोनों अग्रों में सुवर्ण के छत्तीस बन्द लगावे और सुन्दर गोल तुलादण्ड बनाय ताम्र अथवा पीतल के तीन अवलम्बन अर्थात् कड़े लगावे लोहे के न लगावे मध्य का अवलम्बन ऊर्ध्वमुख बनावे तुला के मध्य में एक जिह्वा लटकावे मध्य में दृढ़शंकु और शंकुके ऊपर कड़ा लगाय उस कड़ेमें वितानसे ढकेहुये तुलादण्डको लटकावे दण्डके दोनों ओर दो छीके लगाय उनके नीचे शुभद्रव्य के दो पिण्ड अर्थात् गोले लगावे दो गोले एक हजार पल छह सौ पल अथवा अष्टोत्तरशत पल के बनावे उनका विस्तार चार ताल अथवा साढ़े तीन ताल चाहिये उसके ऊपर एक चारद्वार करके युक्त पञ्च-पात्र बांधे द्वार एक एक अंगुल के बनावे चारों द्वार अर्थात् छिद्रोंमें श्वेतवर्णके कुण्डल अर्थात् कड़े लगाय उनमें शृङ्खला बांध उस शृङ्खलाके कड़े को अवलम्बन में लटका देवे कि जिसमें भूमि से एक प्रादेश अथवा चार अंगुल ऊंचा रहे पुरुषप्रमाण दो घट बनाय बालू रेत से भर उनके ऊपर शिवजी का स्थापन कर दो हाथ गहरे गढ़े में उन घटों को रख चारों ओर बालूरेत भर

देवे जिससे वे निश्चल होजायँ फिर वेदी के ऊपर आठ अंगुल विस्तारकी भूमिको दर्पण के उदरकी भांति स्वच्छ कर उसके पास मङ्गलांकुर, धूप, दीप, पुष्प आदि रख पूर्वरीति से उस भूमि में चार द्वार शोभा उपशोभा युक्त और कर्णिका केसर सहित मण्डल लिख पांच रंगोंसे रँगकर पूर्वदिशा में वज्र, अग्निकोण में शक्ति, दक्षिण में दण्ड, नैर्ऋत्य में खड्ग, पश्चिम में पाश, वायव्यमें ध्वजा, उत्तर में गदा, ईशान में त्रिशूल और त्रिशूल के बाईं ओर चक्र और दहिनी ओर पद्म लिखे इस प्रकार मण्डल रच हवन करे मुख्य होम गायत्री मन्त्रसे कर "शक्राय स्वाहा" "अग्नये स्वाहा" इत्यादि मन्त्रों से दिग्पालहवन करे आदि में प्रणव और अन्त में स्वाहा लगा अपनी शाखाकी रीति से जयादि स्विष्ट-पर्यन्त विधिसे हवन करे इस हवन में पलाशकी इक्कीस समिधा इस मन्त्र करके हवन करे " ॐ अयन्त इध्म-आत्माजातवेदस्तेनेध्यस्व वर्द्धस्व चेद्ध वर्द्धय चास्मान्प्र-जयापशुभिर्ब्रह्मवर्च्चसेनान्नाद्येन समेधय स्वाहा भूः स्वाहा भुवः स्वाहा स्वः स्वाहा भूर्भुवः स्वः स्वाहा " चरु घृत शुक्लान्न अर्थात् भात पायस मुद्गान्न सहित समिधा का हवन करे एकहजार पांचसौ अथवा अष्टोत्तरशत हवन कर " अग्न आयूंषि पवस आसुवोर्जमिषञ्चनः आरेबाध-स्वदुच्छुनामग्निर्ऋषिः पवमानः पाञ्चजन्यः पुरोहितः तमीमहे महागयमग्ने पवस्वस्वपा अस्मेवर्च्चः सुवीर्यं दध-द्रयिं मयि पोषं प्रजापतेन त्वदेतान्यन्यो विश्वाजातानि परिता बभूव यत्कामास्ते जुहुमस्तन्नो अस्तु वयं स्याम पत-

योरयीणाम्" इस मन्त्र से भी हवन करे प्रधान होम रुद्रगायत्री करके समिधाओं से करे चरु करके इन्द्रादि दिग्पाल हवन और घृत करके वज्रादिकों को पांच सौ आहुति देवे "ब्रह्मयज्ञे" इत्यादि मन्त्र करके ब्रह्माका और "नारायणाय विद्महे वासुदेवाय धीमहि तन्नो विष्णुः प्रचोदयात्" इस नारायणगायत्री करके विष्णु भगवान् की प्रीतिके लिये हवन करे फिर॥ ॐ त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पुष्टिवर्धनम्। उर्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीय-मामृतात्॥ इस मन्त्र करके दुग्ध और दूर्वाकी पचीस आहुति देवे यह दूर्वाहोम सबसे उत्तमहै और वास्तु-होम भी उत्तमहै इसभांति हवन कर प्रायश्चित्तके लिये अघोरमन्त्र करके घृतसे दश हजार हवन करे पीछे दक्षिणभागमें ब्रह्मा वामभागमें विष्णु मध्यमें पार्वती सहित सदाशिव जिनके चारोंओर इन्द्रादि देवताओं का पूजन कर आदित्य, भास्कर, भानु, रवि, दिवाकर, उषा, प्रभा, प्रज्ञा, सन्ध्या और सावित्री की पञ्चप्रकार विधि से पूजा कर विष्टरा, सुभगा, वर्धनी, प्रदक्षिणा और आप्यायनी का यजन करे फिर पूर्वदिशामें प्रभूत दक्षिण में विमल पश्चिममें सार उत्तरमें आराध्य और मध्य में सुख की पूजा कर केसरोंमें दीप्ताआदि आठ शक्ति और बीच में सर्वतोमुखी को पूजे और सोम, भौम, बुध, बृहस्पति, शुक्र, शनि, राहु और केतुका भी अर्चन कर हवन करे पीछे शिवतत्त्व के जाननेहारे और वेदाध्ययन में निपुण शिवयोगियोंको भोजन करावे हवन के समय रुद्राध्याय का पाठ करता हुआ

आचार्य राजाको तुलाके ऊपर चढ़ावे और राजा भी एक घड़ी, आधी घड़ी अथवा पाव घड़ी ही रुद्रगायत्री जपता हुआ तुलाके ऊपर बैठा रहे और राजा भूषण वस्त्रोंसे अलंकृत खड्ग और खेटक अर्थात् ढाल धारण कर तुलापर चढ़े और ब्राह्मण कुशकूर्च हाथ में ले तुलाके ऊपर आरोहण करे इस भांति तुलापर चढ़ सूर्य-बिम्ब का दर्शन करे आदिमें तथा अन्तमें स्वस्तिवाचन पुण्याहवाचन जयमंगल शब्द वेदघोष और नृत्य गीत आदि भी करावे उत्तर दिशाकी ओर तुला में सुवर्ण चढ़ावे और दोनों तुलाधार समान तथा वर्तुल बनावे जिससे तुलाभार स्थिर रहे सौ निष्क अर्थात् मोहरका तुलापुरुष उत्तम पचास निष्कका मध्यम और पचीस निष्कका कनिष्ठ होताहै धर्मकृत्य के आरम्भ में ही दो वस्त्र पगड़ी, कटक, कुण्डल, कंठ, भूषण, अंगुली-यक आदि भस्म धारण करनेहारे शैवाचार्यको देवे एक एक धोती जोड़ा पगड़ी और भूषण सब ऋत्विजोंको देवे सौ निष्क अथवा पचास निष्क आचार्य को दक्षिणा देवे और एक एक निष्क सब योगियों को देवे तुलाका सुवर्ण प्रासाद मण्डप भूषण सुवर्णके पुष्प खड्ग और पटह आदि बाजे शिवजी के अर्पण करे और जो कुछ शेष रहे वह आचार्य को देवे बन्दीघर में जितने बँधुवे हों सबको छोड़देवे और जल, घृत, दुग्ध, दही सब द्रव्य ब्रह्मकूर्च अथवा पञ्चगव्य के हजार कलशों से शिवजी को स्नान करावे पञ्चगव्य में गायत्री से गोमूत्र प्रणव से गोबर आप्यायस्व इत्यादि मन्त्र से गोदुग्ध दधिक्राव्ण

इत्यादि मन्त्रसे गोदधि और तेजोऽसि इत्यादि मन्त्रसे गोघृत ग्रहण करे ईशानमन्त्रसे शिवजीका अभिषेक करे और देवस्यत्वा इत्यादि मन्त्र करके कुशायुक्त जलसे सदाशिव को स्नान करावे रुद्राध्याय से भी परमेश्वरका अभिषेक करे और विष्णु भगवान् के कहे तण्डिऋषि के कहे अथवा दक्षप्रजापति के कहे हज़ार शिवनामों से हज़ार कलशों करके शिवजीका अभिषेक कर भक्ति से पूजा करे परम शिवभक्त अपने गुरुको दक्षिणा देवे और तुलाद्रव्य ऋत्विजों को बांट देवे और बाल, वृद्ध, दीन, अन्ध, दुर्बल आदिकों को भोजन कराय दक्षिणा दे प्रसन्न करे ॥

उन्तीसवां अध्याय ॥

सनत्कुमार कहते हैं कि हे मनु ! सब दानों में मुख्य तुलादान का विधान तो आप को श्रवण कराया अब हिरण्यगर्भदान का वर्णन करते हैं एक पात्र हज़ार सुवर्ण अर्थात् मोहर का बनवाय पांचसौ सुवर्ण का उसके ऊपरका पात्र अर्थात् ढकना बनालेवे उन पात्रोंको सब अलङ्कारों से भूषित करे नीचे के पात्रमें त्रिगुणात्मक ब्रह्म विष्णु अग्निस्वरूपा और चतुर्विंशति तत्त्वरूपिणी भगवती का और गुणातीत तथा षड्विंशतिक अर्थात् छब्बीसवें तत्त्वरूप सदाशिव का ध्यान कर आत्मा को पच्चीसवें तत्त्व पुरुषका ध्यान करे पहिली भांति वेदी और मण्डल बनाय शालिके ऊपर उस पात्र को स्थापन कर नये वस्त्रों से ढक माष अर्थात् उड़द के उबटने से लीप

ईशान आदि पांच मन्त्रों से पंचोपचारों करके उस पात्र की पूजा करे शिवपूजा और होम भी पहिली भांति करे गायत्री का जप करता हुआ पूर्वाभिमुख बैठ विधि से गर्भाधान आदि सोलह संस्कार करे दूर्वा के अंकुरों करके दक्षिणपुटमें सेचन करे गूलर के फलों समेत इक्कीस कुशाके जल करके ईशान दिशामें सीमन्तकर्म करे तीस निष्क सुवर्ण की कन्या बनाय उसको सब भांतिके भूषण वस्त्रोंसे अलंकृत कर हवन कर शिवजीको समर्पण करे अन्नप्राशन संस्कार में पायस आदि भोजन करावे इस भांति गर्भाधानसे विश्वजित्पर्यन्त सब संस्कार वेदवेत्ता ब्राह्मण शक्तिबीजसे करे और बाकी सब कृत्य तुलादान की भांति इससे भी करे ॥

तीसवां अध्याय ॥

सनत्कुमारजी कहतेहैं कि हे मनु ! अब तिलपर्वत-दानकी विधि कहते हैं पहिले स्थान और काल में तिल-पर्वत का दान करे प्रथम भूमि को भली भांति गोबर आदि से लीप पञ्चगव्यसे उस भूमिको प्रोक्षण कर चारों ओर मण्डल बनाय बीचमें दश ताल ऊंचा एक बांस खड़ाकर उसके चारोंओर तिलों के भार गेरे उस बांससे एक प्रादेश ऊपर तक तिल चढ़ जायँ तो उत्तम प्रादेश से चार अंगुल न्यून हों तो मध्यम और बांसके तुल्यही तिल हों तो निकृष्ट पक्ष है परन्तु बांसके प्रमाणसे तिल न्यून न होने चाहिये इस भांति तिलोंका पर्वत बनाय नये वस्त्रों से वेष्टित कर सद्योजात आदि का न्यास कर

विधि से पूजा करे और तीन तीन निष्कसुवर्ण की आठ मूर्ति पहिली भांति बनाय आठों दिशाओं में स्थापन करे दक्षिणा और होम तुलादान की भांति यहां भी है तिल-पर्वत के मध्य में तिलपर्वतरूप सदाशिव का यजन करे और लोकपालों की पूजा करे सहस्र घट आदि से शिवार्चन कर तिलपर्वत के मध्य में स्थित देवदेव श्रीमहादेव जीका सबको दर्शन कराय विसर्जन करे और वेदवेत्ता सदाचार और दरिद्री ब्राह्मण को वह तिलपर्वत देवे यह तिलपर्वत का दान सब दानों में प्रधान है ॥

इकतीसवां अध्याय ॥

सनत्कुमार कहते हैं कि हे राजा मनु ! एक और तिल-पर्वत के दानकी विधि कहते हैं जिससे द्रव्य का व्यय थोड़ा सा हो और फल बहुत मिले गोबरसे भूमिको लीप उसमें उत्तम वस्त्र बिछाय उसके ऊपर तीन भार तिल गेरे और दश निष्क अथवा पांच निष्क सुवर्णका कर्णिका और केसरों सहित अष्टदलकमल बनाय उन तिलों पर रक्खे पद्मके बीच शिवजीका स्थापन करे और तीन निष्क सुवर्ण की शक्ति प्रतिमा बनावे फिर वामदेव आदि अष्ट मूर्तियों सहित सदाशिवका पूजनकर आठों दिशाओं में अष्टविनायकों की पूजा करे विनायकों की मूर्ति भी तीन तीन निष्ककी बनावे इसभांति पूजा कर सब वस्तु दरिद्र ब्राह्मणको देवे तो बहुत फल होता है ॥

बत्तीसवां अध्याय ॥

सनत्कुमार कहते हैं कि हे मनुजी ! अब सुवर्ण पृथ्वी

के दानका विधान कहते हैं पहिली भांति उत्तम स्थान और उत्तम कालमें एक हज़ार मोहरकी चतुरस्र और एक हाथ लंबी चौड़ी अतिसुन्दर भूमि बनावे उसके बीच सात समुद्र सात द्वीप संपूर्ण तीर्थ और मध्य में मेरुपर्वत बनावे अथवा मध्यखण्ड के नव भाग करे इस भांति सुवर्ण की पृथ्वी बनाय पहिली भांति मंडल और वेदी रच उस भूमिका दान कर शिवभक्तको देवे और हज़ार मोहरका सप्तमांश दक्षिणा देवे और सहस्रघट आदि करके भक्तिसे शिवजीकी पूजा करे यह सुवर्ण-मेदिनीदान सब दानों में श्रेष्ठ है और इसके करने से बहुत उत्तम फल प्राप्त होता है॥

तेंतीसवां अध्याय॥

सनत्कुमारजी कहते हैं कि हे मनु! अब कल्पवृक्ष के दानकी विधि कहतेहैं सौनिष्क सुवर्णका कल्पवृक्ष बनावे और उसकी शाखाओं में मोतियोंकी माला लटकावे मरकत अर्थात् पन्नेके अंकुर प्रबाल अर्थात् मूंगे के कोमल पत्र पद्मरागों के फल नीलमणिका मूल हीरोंके स्कन्ध वैदूर्य से वृक्षका अग्र पुखराज से मस्तक गोमेदरत्न से स्कंध और सूर्यकांत चंद्रकांत अथवा स्फटिककी वेदी वृक्ष के चारोंओर बनावे इस भांति एक वितस्ति ऊंचा कल्पवृक्ष बनावे और उसकी आठशाखा भी इसी प्रमाण से रच वृक्ष के मूल में लोकपालों सहित शिवजी को स्थापन करे पहिली भांति मण्डल और वेदी बनाय उस पर वृक्ष स्थापनकर शिवजीकी और लोकपालों की पूजा

करे और जप होम आदि तुलादानकी भांति सब करे और इस वृक्षको दान करके शिवजीके अर्पणकरे अथवा भस्मधारण करनेहारे शिवयोगियोंको देवे इस दानका करनेहारा पुरुष दूसरे जन्ममें सार्वभौम राजा होताहै॥

चौंतीसवां अध्याय॥

सनत्कुमारजी कहते हैं कि हे मनु! अब गणेशेश दान कहतेहैं पहिलीभांति मण्डपबनाय लोकपालोंसहित सदाशिवका पूजन करे दशनिष्क सुवर्णके दश दिक्पाल शास्त्रकी रीतिसे बनाय सब भूषणों से भूषितकर विधिसे पूजन करे आठोंदिशाओंके आठकुण्डोंमें पहिली भांति पञ्चावरण की रीति से और परम्पराके क्रमसे हवनकर सात ब्राह्मण और उत्तम दिशामें स्थित एक कन्याकी पूजा करे पीछे अपने अपने मन्त्रों करके क्रमसे सब देवता मूर्तियों का दान करे इस विधिसे दान करनेहारा सब पापोंसे मुक्त होता है॥

पैंतीसवां अध्याय॥

सनत्कुमारजी कहते हैं कि हे मनुजी! सब पाप और उपद्रव दूर करनेहारा और ग्रहपीड़ा तथा दुर्भिक्षका निवारक सुवर्ण धेनुदान कहते हैं हजार मोहर पांचसौ मोहर अथवा सौ मोहरकी एक गौ बनावे जिसके खुरोंमें हीरे सींगोंमें पद्मराग भ्रूमध्यमें मोती दन्तोंमें पुखराज पुच्छ में इन्द्रनील और चारों स्तनों में वैदूर्य मणि लगावे इसी भांति सब रत्नोंसहित दश निष्क सुवर्ण करके गौ का

बछड़ा बनाय दोनोंको वेदीके मध्यमें रचे हुये मण्डलके ऊपर स्थापनकर दो वस्त्रोंसे वेष्टित करे पीछे गायत्रीमन्त्र से वत्ससहित गौका पूजन कर पहिली भांति हवन करे और घृत आदिसे शिवजीको स्नान कराय गायत्रीमन्त्र से उस धेनुको शिवजीके अर्पणकरे और तीस मोहर दक्षिणा देवे॥

छत्तीसवां अध्याय॥

सनत्कुमारजी कहते हैं कि हे राजा मनु! सब ऐश्वर्योंकी वृद्धि करनेहारे लक्ष्मीदान का विधान हम वर्णन करते हैं पहिली भांति मण्डप और वेदी बनाय हजारमोहर पांचसौ मोहर अथवा एकसौ आठ मोहर की सब लक्षणों करके युक्त लक्ष्मी की मूर्ति बनाय वस्त्र भूषणों से अलंकृत कर वेदी के ऊपर मण्डल के मध्य में स्थापनकर श्रीसूक्तसे पूजाकरे और उसके दक्षिण भागमें स्थण्डिलके ऊपर विष्णुगायत्री करके विष्णु भगवान् का अर्चनकरे विधिपूर्वक लक्ष्मीका पूजनकर पहिली रीतिसे हवनकरे प्रथम समिधाहोम कर अष्टोत्तरशत आहुति घृत की देवे फिर यजमानको बुलाय पूर्व दिशामें बैठाय विष्णुसहित लक्ष्मी का दर्शनकरावे वह भी दर्शनकर दण्डवत् प्रणामकरे पीछे भक्ति से शिवपूजनकर उस मूर्तिका दानकरे और मूर्तिके बीसवें भागके तुल्य आचार्य को दक्षिणा देवे और और भी शिवभक्तों को यथायोग्य दक्षिणा देकर प्रसन्न करे आचार्य भी यजमान से शिवजीकी प्रीतिके लिये हवन करावे इस दान के करने से ऐश्वर्य की वृद्धि होती है॥

सैंतीसवां अध्याय ॥

सनत्कुमारजी कहते हैं हे मनु ! अब हम तिलधेनु-दान की विधि कहते हैं पहिली भांति मण्डप बनाय वेदी रच उसके मध्यमें मण्डल बनावे तीस निष्क पंद्रह निष्क अथवा साढ़ेसात निष्क सुवर्णकाही कमल बनाय मण्डल के मध्यमें स्थापनकर तिल पुष्प भी बनवाकर स्थापन करे पद्मके उत्तरकी ओर ग्यारह ब्राह्मणों को बैठाय उनका गन्ध पुष्प आदिसे पूजन करे और धोती जोड़ा, दुपट्टा, पगड़ी, कुण्डल, सुवर्ण की अँगूठी ब्राह्मणों को देवे और प्रतिब्राह्मण के आगे एक एक वस्त्र बिछाय उनपर तिल कांस्य पात्र, इक्षुदण्ड अर्थात् ईख उनके आगे रक्खे कांस्यके ग्यारह पात्र सौपल के बनावे दो निष्क सुवर्ण के गोशृङ्ग और दो निष्क चांदी के खुर बना कर उन तिलोंपर रक्खे और रुद्रके ग्यारह मन्त्रों करके ग्यारह रुद्रोंको वे तिल धेनु समर्पणकरे इसीभांति पद्मके पूर्वकी ओर बारह ब्राह्मणोंका पूजनकर द्वादश आदित्य के मन्त्रों करके बारह आदित्यों को तिल धेनु अर्पण करे और पद्मके दक्षिणभाग में सोलह ब्राह्मणों की पूजा कर पहिलीभांति अष्टमूर्ति और अष्टविनायक मन्त्रोंसे तिल धेनु का दानकरे इसप्रकार क्रम से यजमान दान करे अथवा केवल रुद्रों को आदित्यों को वा अष्टमूर्ति और अष्टविनायकों कोही देवे इसभांति पद्म स्थापनकर राजा दानकरे और शेष कृत्य पूर्वरीति से कर पांच निष्क सुवर्ण गुरुके अर्पणकरे ॥

अड़तीसवां अध्याय ॥

सनत्कुमारजी कहते हैं कि हे राजा मनु! अब हम गोसहस्र दानकी विधि कहते हैं एक हजार सुलक्षण और बछड़ों सहित गौ लाकर उनकी शास्त्ररीति से पूजाकरे और उनमें से आठ गौओंके सींग एक एक निष्कसुवर्णसे खुर एक एक निष्क चांदीसे मढ़ एक एक निष्क सुवर्ण का कण्ठभूषण पहिनाय कानोंमें वस्त्राभरणसे भूषित कर शिवजी के अर्पणकरे और ब्राह्मणों का पूजनकर एक एक गौ दो दो वस्त्र और दश दश पांच पांच अथवा एक एक निष्कही सुवर्ण उनके अर्पणकरे इसभांति दानकर विधिसे शिवजीका अर्चन करे और गौओं के आगे हाथ जोड़ यह श्लोकपढ़े कि " गावोमेअग्रतोनित्यं गावोनः पृष्ठतस्तथा। हृदयेमे सदागावो गवांमध्येवसाम्यहम्॥" यहपढ़ प्रदक्षिणाकर ब्राह्मणोंको देवे तो जितनेगौओं के रोमहों उतनेवर्ष स्वर्ग में आनन्दसे निवासकरे॥

उन्तालीसवां अध्याय ॥

सनत्कुमारजी कहते हैं कि हे राजा मनु! विजयको देने हारे सुवर्णाश्वदानका विधान कथन करते हैं जिसदान के करनेसे अश्वमेध से भी अधिक फल प्राप्त होता है एक हजारआठ अथवा एकसौ आठ निष्कसुवर्ण का पञ्चकल्याण अर्थात् जिसके चारोंपाद और मुख श्वेत वर्णहों और सबभूषणोंसे अलंकृत उच्चैःश्रवानाम अश्व बनाय मण्डल के मध्य में स्थापनकर उसका पूजनकरे

उसके पूर्वकी ओर एक शिवभक्त और वेदवेत्ता ब्राह्मण को बैठाय उसको इन्द्रमान पूजनकर पांच निष्क सुवर्ण और वह सुवर्णकाघोड़ा उसके अर्पणकरे और पांचनिष्क सुवर्ण आचार्य को दक्षिणादेकर यथाशक्ति सब ब्राह्मणों को दक्षिणा देवे और दीन, अन्ध, कृपण, बालक, वृद्ध, दुर्बल, रोगी और ब्राह्मणों को भोजन कराय संतुष्ट करे इसभांति जो पुरुष सुवर्णाश्वका दानकरे वह चिरकाल स्वर्गमें इन्द्रके समान भोग भोगताहै॥

चालीसवां अध्याय॥

सनत्कुमारजी कहते हैं कि हे राजा मनु! सबदानों में उत्तम कन्यादानका विधान हम वर्णन करतेहैं सबउत्तम लक्षणों करके युक्त एक कन्या देख उसके माता पिता को धनदेकर लेवे और उसकेलिये वेदवेत्ता और शिवभक्त ब्राह्मण ढूंढ़ उत्तम दिन देख कन्याको स्नान कराय वस्त्र भूषण आदि से अलंकृतकर उसे ब्रह्मचारी ब्राह्मण को देवे और दास, दासी, धन, घर, क्षेत्र, वस्त्र आदिभी यथाशक्ति देवे इसभांति जो पुरुष कन्यादान करे वह कन्या के और उसकन्या की संतान के शरीरों में जितने रोम हों उतने वर्ष स्वर्ग में आनन्द से निवासकरे॥

इकतालीसवां अध्याय॥

सनत्कुमारजी कहते हैं कि हे मनुजी! अब संक्षेपसे सुवर्ण वृषके दानकी विधि वर्णनकरते हैं एकहज़ार निष्क सुवर्णका पांचसौका अथवा एक सौ आठ निष्क सुवर्ण

का धर्मरूप वृष बनावे उस वृषके मस्तकमें स्फटिकका अर्धचन्द्र बनाय लगावे चांदी के खुर पद्मरागकी ग्रीवा गोमेद रत्नकी ककुद् अर्थात् थुही बनावे और एकजड़ाऊ सुवर्णका घण्टा उसके गले में लटकावे और अतिसुन्दर शिवजी की मूर्ति बनावे फिर उस वृषको मण्डल में पश्चिमाभिमुख स्थापनकरे भक्ति से शिवपूजाकर "तीक्ष्णशृङ्गायविद्महे धर्मपादाय धीमहि तन्नोवृषः प्रचोदयात् ॥" इस गायत्री से वृषका पूजनकरे और यथाशक्ति घृत से अथवा अन्न आदिसे हवनकर वहवृष शिवजी के अथवा सत्पात्र ब्राह्मण के अर्पण करे और वित्तानुसार दक्षिणादेवे इसभांति जो दानकरे वह शिवजी का गण हो कर शिवलोक में निवासकरे ॥

बयालीसवां अध्याय ॥

सनत्कुमारजी कहतेहैं कि हे राजा मनु! अबहम गजदान का विधान कहते हैं एक हजार पांचसौ अथवा अढ़ाईसौ निष्क सुवर्ण अथवा चांदी का हाथीबनाय विधिसे उसकी पूजाकर अष्टमीके दिन उस हस्तीको शिवजी के अर्पण करे अथवा दरिद्र वेदपाठी और अग्निहोत्री ब्राह्मणको देवे पहिली भांति शिवजीकी पूजाकर शिवजी के निमित्त यह दान देवे इसदानका करनेहारा पुरुष चिरकाल स्वर्गमें निवासकर गजपति राजाहोता है ॥

तैंतालीसवां अध्याय ॥

सनत्कुमारजी कहते हैं कि हे राजा मनु! संपत्तिकी

वृष्टिपर चक्र आदि उपद्रवों का नाश अपने देशका रक्षण और हाथी घोड़ोंकी बढ़ती करनेहारा अष्टलोक-पाल दान ब्राह्मणों के कल्याण के लिये कहते हैं पहिली भांति वेदी के ऊपर मण्डल बनाय उसमें शिवजी को स्थापन कर आचार्य उनकी भक्तिसे पूजाकरे और मण्डलकी आठों दिशाओं में आठ स्थण्डिल बनाय उनपर सुन्दर आसन बिछाय वेदके पारगामी जितेन्द्रिय उत्तम कुलों में उत्पन्न और सब लक्षणों से युक्त आठ ब्राह्मणोंको आसनोंपर बैठाय सब उपचारोंसे लोकपालों के मन्त्रों करके क्रमपूर्वक उनका पूजनकरे और दिव्य वस्त्र भूषणों से उन ब्राह्मणों को अलंकृतकरे औरपूर्वादि क्रमसे घृत और समिधाओं का हवनकर यजमानको बुलाय उन ब्राह्मणों का पूजन कराय दश दश निष्क सुवर्णका भूषण और दश दश निष्कका आसन उनको दिलावे यजमानभी ब्राह्मणों का पूजनकर शिवजीको विधिपूर्वक स्नान कराय आचार्य को यथाशक्ति दक्षिणा देवे इसरीति से जो पुरुष भक्ति करके अष्ट लोकपाल दानकरे वह चिरकाल लोकपालोंके समीप निवासकर सार्वभौम राजा होता है ॥

चवालीसवां अध्याय ॥

सनत्कुमारजी कहते हैं कि हे मनुजी! अब हम सब दानों में उत्तम त्रिमूर्तिदान कहते हैं पहिली भांति मण्डप और वेदी बनाय कुण्डके समीप स्थण्डिल के ऊपर शिवजी को स्थापनकर पूर्व भाग में विष्णु और पश्चिम

भागमें ब्रह्माजी को स्थापनकरे और प्रणव आदि अपने अपने मन्त्रों करके उनका पूजनकरे (ॐनारायणाय विद्महे वासुदेवाय धीमहि तन्नोविष्णुः प्रचोदयात्)इस मन्त्रसे विष्णुका पूजनकरे (ब्रह्मब्रह्मण वृद्धाय ब्रह्मणे विश्ववेधसे) इसमन्त्रसे ब्रह्माजीका और (शिवाय हरये स्वाहा स्वधा वौषट् वषट्तथा) इस मन्त्रसे शिवजी का पूजनकर ब्रह्मा और विष्णु के कुण्डों में यथाविधि सब हवन द्रव्योंसे होम कराय दोनों ऋत्विजों को आचार्य दक्षिणा दिलावे दोनों ऋत्विक् और तीसरा आचार्य इन तीनों को ब्रह्मा विष्णु और शिव मान वस्त्र भूषण और एकसौ आठ सुवर्ण मुद्रा (अर्थात् मोहर) प्रत्येक को देवे और भक्तिसे शिवपूजनकर ब्राह्मण भोजन करावे इस विधि से दान करनेहारा पुरुष सर्व सम्पत्ति और अन्त में सद्गति पाता है ॥

पैंतालीसवां अध्याय ॥

शौनक आदि ऋषि कहते हैं कि हे सूतजी ! षोड़श दान का विधान तो हमने श्रवण किया अब आप जीवित-श्राद्धकी विधि वर्णनकरें यह मुनियोंका प्रश्न सुन सूतजी कहनेलगे कि हे मुनीश्वरो ! जीवितश्राद्ध की विधि ब्रह्मा जीने मनु वशिष्ठ और भृगुसे कथनकरी है वही हम आपको श्रवण कराते हैं श्राद्धमार्गका क्रम श्राद्धयोग्य पुरुषोंका क्रम और जीवितश्राद्धविशेष का विधान हम विस्तारसे वर्णनकरते हैं वृद्धावस्थामें पर्वत, नदी, तीर, वन,देवस्थान आदि किसी उत्तम स्थानमें पुरुषों को

जीवत्श्राद्ध करना चाहिये जीवत्श्राद्ध करनेहारा पुरुष जीवताही मुक्त होताहै वह पुरुष कर्म करे अथवा न करे ज्ञानी हो अथवा अज्ञानी वेदवेत्ताहो चाहे मूर्ख। ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र आदि कोईहो जीवत्श्राद्ध करनेहारा योगीकी भांति मुक्ति पाता है पहिले भूमिको गन्धवर्ण रस आदि से परीक्षाकर शल्य निकाल सैकत अर्थात् बालू रेतकी वेदी बनावे वेदी के ऊपर एक हाथ लम्बा चौड़ा कुण्ड अथवा स्थण्डिल रच गोबर से लीप अग्नि स्थापन कर शास्त्रकी रीतिसे अग्निसंस्कार कर अपने शाखाक्रमसे परिस्तरण करे पीछे अग्निकी पूजा कर समिधा चरु और घृत से अलग इन मन्त्रों करके हवन करे हवनके मन्त्र ये हैं। ॐ भूः ब्रह्मणे नमः १ ॐ भूः ब्रह्मणे स्वाहा २ ॐ भुवः विष्णवे नमः ३ ॐ भुवः विष्णवे स्वाहा ४ ॐ स्वः रुद्राय नमः ५ ॐ स्वः रुद्राय स्वाहा ६ ॐ महः ईश्वराय नमः ७ ॐ महः ईश्वराय स्वाहा ८ ॐ जनः प्रकृतये नमः ९ ॐ जनः प्रकृतये स्वाहा १० ॐ तपः मुद्गलाय नमः ११ ॐ तपः मुद्गलाय स्वाहा १२ ॐ ऋतं पुरुषाय नमः १३ ॐ ऋतं पुरुषाय स्वाहा १४ ॐ सत्यं शिवाय नमः १५ ॐ सत्यं शिवाय स्वाहा १६ ॐ शर्व धरां मे गोपाय घ्राणे गन्धं शर्वाय देवाय भूर्नमः १७ ॐ शर्व धरां मे गोपाय घ्राणे गन्धं शर्वाय देवाय भूः स्वाहा १८ ॐ शर्वधरां मेगोपाय घ्राणे गन्धं शर्वस्य देवस्य पत्न्यै भूर्नमः १९ ॐ शर्व धरां मे गोपाय घ्राणे गन्धं शर्वस्य देवस्य पत्न्यै भूःस्वाहा २० ॐ भव जलं मे गोपाय जिह्वायां रसं भवाय देवाय भुवोनमः २१ ॐ भव जलं मे गोपाय

जिह्वायां रसं भवाय देवाय भुवः स्वाहा २२ ॐ भव जलं मे गोपाय जिह्वायां रसं भवस्य देवस्य पत्न्यै भुवोनमः २३ ॐ भव जलं मे गोपाय जिह्वायां रसं भवस्य देवस्य पत्न्यै भुवः स्वाहा २४ ॐ रुद्राग्निं मे गोपाय नेत्रे रूपं रुद्राय देवाय स्वरों नमः २५ ॐ रुद्राग्निं मे गोपाय नेत्रे रूपं रुद्राय देवाय स्वः स्वाहा २६ ॐ रुद्राग्निं मे गोपाय नेत्रे रूपं रुद्रस्य देवस्य पत्न्यै स्वरों नमः २७ ॐ रुद्राग्निं मे गोपाय नेत्रे रूपं रुद्रस्य देवस्य पत्न्यै स्वः स्वाहा २८ ॐ उग्र वायुं मे गोपाय त्वचि स्पर्शमुग्राय देवाय महर्नमः २९ ॐ उग्र वायुं मे गोपाय त्वचि स्पर्शमुग्राय देवाय महः स्वाहा ३० ॐ उग्र वायुं मे गोपाय त्वचि स्पर्शमुग्रस्य देवस्य पत्न्यै महरोम् ३१ ॐ उग्र वायुं मे गोपाय त्वचि स्पर्शमुग्रस्य देवस्य पत्न्यै महः स्वाहा ३२ ॐ भीम शुषिरं मे गोपाय श्रोत्रे शब्दं भीमाय देवाय जनो नमः ३३ ॐ भीम शुषिरं मे गोपाय श्रोत्रे शब्दं भीमाय देवाय जनः स्वाहा ३४ ॐ भीम शुषिरं मे गोपाय श्रोत्रे शब्दं भीमस्य देवस्य पत्न्यै जनो नमः ३५ ॐ भीम शुषिरं मे गोपाय श्रोत्रे शब्दं भीमस्य देवस्य पत्न्यै जनः स्वाहा ३६ ॐ ईश रजो मे गोपाय द्रव्ये तृष्णामीशाय देवाय तपोनमः ३७ ॐ ईश रजो मे गोपाय द्रव्ये तृष्णामीशाय देवाय तपः स्वाहा ३८ ॐ ईश रजो मे गोपाय द्रव्ये तृष्णामी-शस्य देवस्य पत्न्यै तपो नमः ३९ ॐ ईश रजो मे गोपाय द्रव्ये तृष्णामीशस्य देवस्य पत्न्यै तपः स्वाहा ४० ॐ महादेव सत्यं मे गोपाय श्रद्धां धर्मे महादेवाय ऋतन्नमः ४१ ॐ महादेव सत्यं मे गोपाय श्रद्धां धर्मे महादेवाय

ऋतं स्वाहा ४२ ॐ महादेव सत्यं मे गोपाय श्रद्धां धर्मे महादेवस्य पत्न्यै ऋतन्नमः ४३ ॐ महादेव सत्यं मे गोपाय श्रद्धां धर्मे महादेवस्य पत्न्यै ऋतं स्वाहा ४४ ॐ पशुपते पाशं मे गोपाय भोक्तृत्वभोग्यं पशुपतये देवाय सत्यन्नमः ४५ ॐ पशुपते पाशं मे गोपाय भोक्तृत्वभोग्यं पशुपतये देवाय सत्यं स्वाहा ४६ ॐ पशुपते पाशं मे गोपाय भोक्तृत्वभोग्यं पशुपतेर्देवस्य पत्न्यै सत्यन्नमः ४७ ॐ पशुपते पाशं मे गोपाय भोक्तृत्वभोग्यं पशुपतेर्देवस्य पत्न्यै सत्यं स्वाहा ४८ ॐ शिवाय नमः ४९ ॐ शिवाय सत्यं स्वाहा ५० इन मन्त्रों से मोक्षके लिये हवन करे और विरञ्चि आदि पच्चीस देवताओं का हवन पहिली भांति सृष्टिक्रम से कर पशुपति और पशुपतिपत्नी का पूजन कर घृत, समिधा और चरु करके क्रम से हवन करे हवनमन्त्र ये हैं। ॐ शर्व धरां मे छिन्धि घ्राणे गन्धं छिन्धि मेऽघं जहि भूः स्वाहा १ भुवः स्वाहा २ स्वः स्वाहा ३ ॐ भूर्भुवः स्वः स्वाहा ४ इन मन्त्रों करके समिधा आदि से अथवा केवल घृत से एक सहस्र पांचसौ अथवा अष्टोत्तरशत आहुति देवे और प्राणादि मन्त्रों करके केवल घृत से अष्टोत्तरशत हवन करे प्राणादि मन्त्र ये हैं। ॐ प्राणे निविष्टोऽमृतं जुहोमि शिवोमाविशाप्रदाहाय प्राणाय स्वाहा १ ॐ प्राणाधिपतये रुद्राय वृषान्तकाय स्वाहा २ ॐ भूःस्वाहा ३ ॐ भुवःस्वाहा ४ ॐ स्वःस्वाहा ५ ॐ भूर्भुवःस्वः स्वाहा ६ इन मन्त्रों करके श्राद्धोक्त रीति से हवनकर सातवें दिन शिवयोगी और श्राद्ध योग्य ब्राह्मणों को भोजन करावे और शर्व आदि अष्टमूर्तियों के नाम

से आठ ब्राह्मणों का पूजनकर उनको वस्त्र, भूषण, वाहन, शय्या, दास, दासी, सुवर्ण, चांदी, गौ, घर, तिल, क्षेत्र आदि देकर प्रसन्न करे और आठ पिण्डभी देवे इस भांति श्राद्ध कर एक हज़ार ब्राह्मणों को भोजन कराय दक्षिणा देवे अथवा भस्म धारण करनेहारे और जितेन्द्रिय एकही शिवयोगी को भोजन कराय दे और तीन दिन पर्यन्त नित्य रुद्रको महाचरु निवेदनकरे यह जीवत् श्राद्ध का विधान है इस प्रकार श्राद्ध करनेहारा पुरुष नित्य नैमित्तिकआदि कर्म करे अथवा त्यागदे वह साक्षात् जीवन्मुक्त है इस कारण मरण के अनन्तर उसका श्राद्ध आदि होय अथवा न होय कुछ अपेक्षा नहीं और जन्ममरण आदि अशौच भी उसको नहीं होता जीवत् श्राद्ध करनेके अनन्तर जो पुत्र उत्पन्न होय उसके सब संस्कार करने चाहिये वह पुत्र ब्रह्मवेत्ता होताहै और कन्या उत्पन्न होय तो साक्षात् पार्वती के समान होती है जीवत्श्राद्ध करनेहारे पुरुष के पितरों का भी मोक्ष होजाता है और जब उस पुरुष का मृत्यु होय तब दाह करे अथवा भूमि में गाड़देवे श्राद्ध आदि कर्म से इसको कुछ प्रयोजन नहीं है मुनीश्वरो! यह श्राद्धविधान ब्रह्माजी ने सनत्कुमार आदि मुनियों से कहा सनत्कुमारजी ने वेदव्यासजी से वर्णन किया वेदव्यासजी ने हमको श्रवणकराया हमने उनकी आज्ञा पाय अपनाभी जीवत्श्राद्ध किया यह ब्रह्मसिद्धि अर्थात् मोक्ष को देनेहारा रहस्य आपसे कथनकिया आपभी इस विधान को किसी जितेन्द्रिय शिवभक्त और व्रतनिष्ठ पुरुष को उपदेश करना और श्रद्धाहीन मनुष्य से गुप्त रखना॥

छियालीसवां अध्याय॥

शौ[illegible] आदि ऋषि कहते हैं कि हे सूतजी! अज्ञानियों [illegible] मोक्ष देनेहारा जीवत्श्राद्धविधान आपने वर्णन [illegible] अब यह कथन करें कि रुद्र, आदित्य, वसु, विष्णु, [illegible], अग्नि, यम, निर्ऋति, वरुण, वायु, सोम, कुबेर, [illegible], इन्द्र आदि देवता, पृथ्वी, लक्ष्मी, दुर्गा, पार्वती, [illegible]श, स्कन्द, नन्दी आदि शिवजी के गण और लिङ्[illegible]तें सदाशिव की प्रतिष्ठा किस विधिसे होती है आप [illegible] शास्त्र का तत्त्व जानते हो परम शिवभक्त और व्या[illegible] का साक्षात् दूसरा रूप तुम हो जैसे सुमन्त, जै[illegible] पैल और वैशम्पायन व्यासजी के शिष्य हैं ऐसेही [illegible]ी हो आपने भी व्यासजी की बहुत काल भागीर[illegible] तटपर सेवा की है हम आपको वैशम्पायन के सम[illegible] अथवा व्यासजीकेही तुल्य समझते हैं इसलिये यह[illegible] आप विस्तार से वर्णन करें इतना कथनकर सब [illegible] आनन्द में मग्नहो मौन होगये तब आकाशवाणी भइ कि यह मुनियों का प्रश्न बहुत उत्तम है सब लोक लिङ्गमय है और लिङ्ग में स्थित है इस कारण अवश्य लिङ्गस्थापन और लिङ्ग का पूजन सदा करना चाहिये लिङ्गस्थापनके पुण्यरूप खड्गसे ब्रह्माण्ड को भेदकर पुरुष निःशङ्क मुक्तिमार्ग को प्राप्त होता है विष्णु, ब्रह्मा, इन्द्र, यम, वरुण, कुबेर आदि देवता शिवलिङ्गस्थापन करनेसेही इन उत्तम उत्तम अधिकारों को प्राप्त भये हैं ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र, पृथ्वी, लक्ष्मी, धृति,

स्मृति, प्रज्ञा, दुर्गा, शची, वसु, स्कन्द, विशाख, शाख, नैगमेय, लोकपाल, ग्रह, नन्दी आदि गण, पितर, गणपति, सब मुनि, कुबेर आदि यक्ष, आदित्य, वसु, साध्य, अश्विनीकुमार, विश्वेदेव, पशु, पक्षी, मृग, कीट पतङ्ग आदि ब्रह्मासे लेकर स्थावरपर्यन्त सब जगत् शिवलिङ्ग में प्रतिष्ठितहै इस कारण सब छोड़ शिवलिङ्गका स्थापन करे शिवलिङ्गके स्थापनसे सबका स्थापन और पूजनसे सबका पूजन होताहै॥

सैंतालीसवां अध्याय॥

यह सूतजी का वचन सुन हाथजोड़ शिवजीको प्रणाम कर सब मुनि शिवलिङ्गस्थापन करनेकी इच्छा करते भये और छहों कुलके मुनियों ने हर्ष से गद्गद वाणीहो सूतजीसे लिङ्गप्रतिष्ठा का विधान पूछा मुनियों का वचन सुन सूतजी बोले कि हे मुनीश्वरो! धर्म, अर्थ, काम और मोक्षकी प्राप्तिके अर्थ हम संक्षेप से शिवलिङ्गप्रतिष्ठा की विधि वर्णन करते हैं पाषाण का सुवर्ण का अथवा ताम्र का जलहरी समेत ब्रह्मा विष्णु शिव स्वरूप लिङ्ग बनाय भलीभांति शोधनकर पञ्चसूत्रयुक्त विधिपूर्वक भक्ति से स्थापन करे लिङ्ग का मस्तक विस्तृत चाहिये लिङ्ग साक्षात् शिव और जलहरी पार्वती है उन दोनों के स्थापन से पार्वती सहित शिवका स्थापन और पूजने से पूजन होताहै इस कारण जलहरी सहित लिङ्ग अवश्य स्थापन करना उचित है लिङ्गके मूलमें ब्रह्मा, मध्यमें विष्णु और अग्रभाग में सदाशिव निवास करते हैं इस कारण जो

पुरुष भक्ति से शिवलिङ्ग को स्थापन करे अथवा पूजन करे उस पुरुष का सब देवता पूजन करते हैं और वह शिवजी का गण होता है जो पुरुष गन्ध, पुष्प, माला, धूप, दीप, स्नान, हवन, बलि, स्तोत्र, मन्त्र, उपहार आदि करके नित्य सर्वदेवमूर्ति शिवलिङ्ग का पूजन करते हैं वे जन्म मरण के भयसे छूट शिवलोक में निवास करते हैं और सब सिद्ध विद्याधर गन्धर्व आदिकों के पूज्य होते हैं इस कारण सब मनोरथ सिद्ध होने के लिये शिवलिङ्ग का स्थापन कर पूजन करे उत्तम क्षेत्रमें जलहरी के ऊपर शिवलिङ्ग स्थापनकर कुशोंके कूर्च और वस्त्र से ढंक अक्षत और कुशोंकरके युक्त चित्रसूत्र से वेष्टित वस्त्रों से आच्छादित और वज्रादि आयुधों करके भूषित लोकपालों के कलशों करके ईशानमन्त्र से प्रतिष्ठित शिवलिङ्ग का चारोंओर से रक्षण करे अर्थात् शिवलिङ्ग के पास लोकपालों के कलश स्थापन करे ऊपर वितान लगावे और मण्डप को लोकपालों के ध्वज और वाहनों की मूर्तियों करके शोभित कर चारों ओर दर्भमाला से वेष्टित करे इस प्रकार मण्डप को अलंकृत कर पांच दिन, तीन दिन अथवा एकही दिन जलमें शिवलिङ्ग को अधिवासन करे और नृत्य, गीत, वाद्य, वेदपाठ आदि करके प्रतिदिन उत्सव करता रहे प्रतिष्ठा के समय शिवलिङ्ग को जलसे निकाल कर पुण्याहवाचन करे और नवकुण्डों करके युक्त अतिसुन्दर मण्डप के बीच बहुत उत्तम और कोमल शय्या बिछाय उसके ऊपर ईशान मन्त्र से जलहरी सहित शिवलिङ्ग को स्थापन करे लिङ्गका शिर पूर्व

की ओर रक्खे और वस्त्र तथा कूर्च करके लिङ्गको ढक दे और नवरत्न सहित कलश स्थापन करे और धान्य तथा सुवर्ण भी कलश में छोड़े और वामा आदि नव शक्तियों का न्यास करे ब्रह्मरूप लिङ्गको शिवगायत्री अथवा प्रणव करके स्थापन करे लिङ्गके ब्रह्मभाग को ब्रह्मयज्ञान मन्त्र करके विष्णुभागको गायत्री करके और शिवभाग को प्रणव करके स्थापन करे अथवा सम्पूर्ण लिङ्ग को "नमः शिवाय" "नमो हंसः शिवाय" इन मन्त्रों अथवा रुद्राध्याय द्वारा शिवलिङ्ग को शोधन कर स्थापन करे और पहिली रीति से पञ्चब्रह्म मन्त्रों करके चारों ओर कलश स्थापन करे मध्य के कलश में शिव और विष्णु, दक्षिण के कलश में पार्वती, बीचके कलश में स्कन्द और ब्रह्माका स्थापन कर पूजन करे अथवा पञ्चब्रह्म का ही शिवकुम्भ में स्थापन करे शिव, महेश्वर, रुद्र, विष्णु, ब्रह्मा और पार्वती ये छह ब्रह्माङ्ग हैं इनका न्यास करे और वेदी के मध्य में प्रथम रीति से स्थापन कर गन्धयुक्त जलसे पूर्ण वर्धनीपात्र में देवीका स्थापन करे और शिवकुम्भ में चांदी, सोना तथा पञ्चरत्न डाले वर्धनीपात्र में गायत्रीके अङ्गोंका और दिशाओं के कुम्भों में दिक्पालों का स्थापन कर पूजन करे और अनन्त ईश आदि देवताओं के नाम के आदि में प्रणव और अन्तमें नमः लगाकर उनका भी पूजन करे प्रत्येक कुम्भ को नये वस्त्रसे आच्छादित करे और दिक्पालों के कुम्भों में भी सुवर्ण रत्न आदि डाले पीछे ईशान आदि मुख करके और गायत्री के अङ्ग मन्त्रों के क्रम करके

स्विष्टपर्यन्त हवन कर शिवकुम्भ, विष्णुकुम्भ, ब्रह्मकुम्भ और वर्धनीपात्र के जल से शिवजीका अभिषेककर लोकपालकुम्भोंके जलसे भी अभिषेक करे और पहिली भांति सब मन्त्रों का न्यास कर सहस्र घटसे शिवजी को स्नान कराय भक्तिसे पूजन करे और एक हज़ार पांचसौ अथवा अढ़ाई सौ मोहर दक्षिणा चढ़ावे और वस्त्र, भूषण, क्षेत्र, गौ आदि भी अपने वित्तानुसार शिवजी के अर्पण कर नव दिन, सात दिन, तीन दिन अथवा एक दिन ही होम याग बलि और बड़ा उत्सव करे नित्य शिवपूजन कर पहिली भांति होम करे और सूर्य आदि देवताओं का होम भी प्रथम रीति से करे और बाह्य तथा आभ्यन्तर अग्नि में शिवकी पूजा करे जो इसविधि से शिवलिङ्ग स्थापन करे उसने सब देवता, ऋषि, रुद्र, अप्सरा और चराचर त्रैलोक्य का स्थापन और पूजन किया और वही परमेश्वर है॥

अड़तालीसवां अध्याय॥

सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो! अब हम सब देवताओंकी प्रतिष्ठाका विधान कहते हैं अपने अपने मन्त्रों करके यागकुण्ड का स्थापन कर देवता की प्रतिष्ठा करे और उत्सव कर विधि से पूजन करे पञ्चाग्नि अथवा द्वादश अग्नि क्रम करके सूर्य का स्थापन करे सूर्य भगवान् के स्थापन में सब कुण्ड पद्माकार बनावे और भगवती के स्थापन में योनिकुण्ड बनावे और वर्धनीपात्र भी स्थापन करे सब शक्तियों के स्थापन में योनिकुण्ड मुख्य है शिव

की गायत्री से ही सबका स्थापन करे क्योंकि सब देवता सदाशिव के अंश से ही उत्पन्न हुये हैं अथवा सबकी भिन्न भिन्न गायत्री कहते हैं जिनसे सब देवताओं का स्थापन होता है॥ तत्पुरुषाय विद्महे वाग्विशुद्धाय धीमहि तन्नः शिवः प्रचोदयात् १ गणाम्बिकायै विद्महे कर्म-सिद्ध्यै च धीमहि तन्नो गौरी प्रचोदयात् २ तत्पुरुषाय विद्महे महादेवाय धीमहि तन्नो रुद्रः प्रचोदयात् ३ तत्पु-रुषाय विद्महे वक्रतुण्डाय धीमहि तन्नो दन्ती प्रचोद-यात् ४ महासेनाय विद्महे वाग्विशुद्धाय धीमहि तन्नः स्कन्दः प्रचोदयात् ५ तीक्ष्णशृङ्गाय विद्महे वेदपादाय धीमहि तन्नो वृषः प्रचोदयात् ६ हरिवक्राय विद्महे रुद्र-वक्राय धीमहि तन्नो नन्दी प्रचोदयात् ७ नारायणाय विद्महे वासुदेवाय धीमहि तन्नो विष्णुः प्रचोदयात् ८ महाम्बिकायै विद्महे कर्मसिद्ध्यै च धीमहि तन्नो लक्ष्मीः प्रचोदयात् ९ समुद्धृतायै विद्महे विष्णुनैकेन धीमहि तन्नो राधा प्रचोदयात् १० वैनतेयाय विद्महे सुवर्णपक्षाय धीमहि तन्नो गरुडः प्रचोदयात् ११ पद्मोद्भवाय विद्महे वेदवक्राय धीमहि तन्नः स्रष्टा प्रचोदयात् १२ शिवास्य-जायै विद्महे देवरूपायै धीमहि तन्नो वाणी प्रचोदयात् १३ देवराजाय विद्महे वज्रहस्ताय धीमहि तन्नः शक्रः प्रचो-दयात् १४ रुद्रनेत्राय विद्महे शक्तिहस्ताय धीमहि तन्नो वह्निः प्रचोदयात् १५ वैवस्वताय विद्महे दण्डहस्ताय धीमहि तन्नो यमः प्रचोदयात् १६ निशाचराय विद्महे खड्गहस्ताय धीमहि तन्नो निर्ऋतिः प्रचोदयात् १७ शुद्ध-हस्ताय विद्महे पाशहस्ताय धीमहि तन्नो वरुणः प्रचोद-

यात् १८ सर्वप्राणाय विद्महे यष्टिहस्ताय धीमहि तन्नो वायुः प्रचोदयात् १९ यक्षेश्वराय विद्महे गदाहस्ताय धीमहि तन्नो यक्षः प्रचोदयात् २० सर्वेश्वराय विद्महे शूलहस्ताय धीमहि तन्नो रुद्रः प्रचोदयात् २१ कात्यायन्यै विद्महे कन्याकुमार्यै धीमहि तन्नो दुर्गा प्रचोदयात् २२॥ ये बाईस गायत्री हैं इनसे देवताओं का स्थापन कर पूजन करे और प्रणव से सबके आसन की कल्पना कर अथवा विष्णु भगवान् को पुरुषसूक्त करके स्थापन करे और विष्णु महाविष्णु और सदाविष्णु की कल्पना कर विधिपूर्वक विष्णुगायत्री से स्थापन करे वासुदेव, संकर्षण, प्रद्युम्न और अनिरुद्ध ये चारमूर्ति चतुर्व्यूह कहाता है विष्णु भगवान् के प्रतियुग में जगत् के हित के लिये शापों से अनेक अवतार भये हैं जैसा मत्स्य, कूर्म, वराह, नृसिंह, वामन, राम, परशुराम, कृष्ण, बौद्ध, कल्कि इत्यादि अनेक अवतार विष्णु भगवान् के हैं इन की भी गायत्री कल्पना कर इन सबका स्थापन और पूजन करे शिवजी के और विष्णु भगवान् के गुप्तरूप यन्त्र, मन्त्र, उपनिषद् और पञ्चभूतमय पञ्चब्रह्मों का भी स्थापन कर पूजन करे। "ॐ नमो नारायणाय" इस मन्त्र करके अथवा "ॐ नमो वासुदेवाय नमः संकर्षणाय च प्रद्युम्नाय प्रधानाय अनिरुद्धाय वै नमः" इस मन्त्र करके विष्णु भगवान् का स्थापन करे और शिवजी की मूर्तियोंका भी शिवलिङ्ग की भांति स्थापन करे विष्णुस्थापन में भी शिवस्थापन की रीतिसे सब उत्सव आदि करे अचल प्रतिष्ठा की भांति चलमूर्तिकी भी प्रतिष्ठा करे

नेत्रमन्त्रसे मूर्तियों का नेत्रोद्घाटन करे आराम अर्थात् बाग और नगरका क्षेत्र प्रदक्षिण और जलाधिवासन पूर्ववत् कहाहै और कुण्ड, मण्डपरचना भी पहिली भांति ही है नवकुण्ड पांचकुण्ड अथवा एकही प्रधानकुण्ड में हवन करे यह परम्परा के क्रम से प्राप्त दिव्य प्रतिष्ठा का विधान कहा है पाषाण की मूर्तियां जिनमें रंग लगा हो और चित्र इनका जलाधिवासन न करे परन्तु वृषका जलाधिवासन करना चाहिये प्रासाद की प्रतिष्ठा करने से प्रासाद के सब अंगोंकी भी प्रतिष्ठा होजाती है वृष, अग्निमातृका, गणपति, कुमार, ज्येष्ठा, दुर्गा और चण्डी ये आठ शिवप्रतिष्ठा के अंगदेवता हैं इस कारण इनकी भी अपनी अपनी गायत्री करके प्रतिष्ठा करे शिवजी के प्रासाद के चारोंओर लोकपाल और गणोंका भी स्थापन करे और उत्तरदिशा से लेकर क्रमपूर्वक उमा, चण्डी, नन्दी, महाकाल, लकुलीश, विघ्नेश्वर, भृङ्गी और स्कन्द का स्थापन कर ब्रह्मा और जनार्दन सहित इन्द्रादि दिक्पालों को अपनी अपनी दिशा में स्थापन करे और ईशानकोणमें क्षेत्रपाल को स्थापन करे अनन्त आदिकों को और वागीश्वरी को सिंहासन के ऊपर स्थापन कर प्रणव से धर्म आदिकों का आसन कमल में स्थापन करे यह सब देव और देवियों के चलस्थापन का विधान संक्षेप से वर्णन कियाहै ॥

उन्नासवां अध्याय॥

शौनक आदि ऋषि पूछते हैं कि हे सूतजी! आपने अघोरेश का माहात्म्य पहिले वर्णन किया अब हम उन की प्रतिष्ठा का विधान सुनना चाहते हैं आप वर्णन करें यह मुनिका वचन सुन सूतजी कहने लगे कि हे मुनीश्वरो! अंगयुक्त अघोरमन्त्र करके शिवलिङ्गप्रतिष्ठा की रीति से अघोर परमेश्वर की भी प्रतिष्ठा करनी चाहिये और लिङ्गपूजा की भांति अग्निपूजा कर दधि, मधु और घृत सहित तिलों करके एकहजार पांचसौ अथवा अष्टोत्तरशत आहुति अघोरमन्त्र करके देवे घृत, सत्तू और शहदके अष्टोत्तरशत हवन करनेसे सब दुःख और व्याधियों का नाश होता है तिलोंके अष्टोत्तरशत हवन से व्याधिनाश और सहस्र हवन से ऐश्वर्य की प्राप्ति होती है केवल अघोरमन्त्रके जपसे सब दुःखोंका निवारण होता है त्रिकाल अष्टोत्तरशत जप करने से सब सिद्धियां मिलती हैं और छह महीनेपर्यन्त अष्टोत्तर सहस्र जप नित्य करे तो राज्य प्राप्त हो जिस पुरुष के निमित्त दुग्ध से एक हज़ार आहुति देवे उसका दारुण ज्वर भी छूट जाता है एक महीनेपर्यन्त नित्य दुग्ध की एक हज़ार आहुति देवे तो उत्तम सौभाग्य पावे और इसीभांति एक वर्षपर्यन्त हवन करे तो सब सिद्धि प्राप्त हों शहद, घृत, दधि, श्वेतवर्ण के चावल और यव के हवनसे अघोर परमेश्वर प्रसन्न होते हैं दधिके होमसे राजाओं को पुष्टि और दुग्धके हवन से शान्ति होती है

छह महीनेपर्यन्त घृतका हवन करने से सब रोग दूर होते हैं एक वर्षपर्यन्त तिलोंका हवन करनेसे राजयक्ष्मा अर्थात् क्षयरोग निवृत्त होता है यवके होमसे आयुष् और घृतके होमसे जय मिलता है शहद से भीगेहुये चावलों का छह महीनेपर्यन्त होम करने से सबप्रकार का कुष्ठ मिटता है घृत, दुग्ध और शहद इन तीनोंका नाम मधुरत्रय है इनके हवनसे भगन्दररोग निवृत्त होता है और सब जगत्की तुष्टि होती है केवल घृतका हवन भी सब रोगों का हरनेहारा है अघोर परमेश्वर का ध्यान स्थापन और विधिसे पूजन सब रोग हरनेहारा है और मुक्ति भी देता है यह संक्षेप से अघोर भगवान् के प्रतिष्ठा और पूजनका विधान हमने कहा है यही विधान नन्दी ने सनत्कुमार को और सनत्कुमार ने वेदव्यासजी को उपदेश किया है और व्यासजी से हमने पाया है॥

पचासवां अध्याय॥

शौनक आदि ऋषि पूछते हैं कि हे सूतजी! अपराधी पुरुषों को दण्ड देने के लिये शिवजी ने निग्रह का विधान कहा है वह आप हमको श्रवण करावें क्योंकि लौकिक, वैदिक, श्रौत, स्मार्तआदि कोई ऐसा कर्म नहीं जो आप को विदित न हो यह मुनियों का प्रश्न सुन सूतजी कहने लगे कि हे मुनीश्वरो! पूर्वकाल में भृगुके पुत्र और अघोर परमेश्वरके शिष्य शुक्राचार्य ने निग्रह का विधान हिरण्याक्ष नामक दैत्यको उपदेश किया उसके प्रभाव से देवता दैत्य और मनुष्यों सहित त्रैलोक्य को जीत बड़े

पराक्रमी अन्धक नाम पुत्रको उत्पन्न कर हिरण्याक्ष राज्य करता भया उसको विष्णु भगवान् ने वराहावतार धार मारा जो पुरुष इस विधान से स्त्री, बालक और गौवोंको पीड़ा देवे उसका कभी कल्याण नहीं होता है हिरण्याक्ष दैत्य पृथ्वीको रसातल में लेगया और ब्राह्मणोंको बहुत दुःख देने लगा इस कारण उसका निग्रह-विधान निष्फल होगया और दिव्य हजारवर्षके अनन्तर वराह भगवान्के हाथसे मारागया इस कारण ब्राह्मण गौ स्त्री आदिको अघोरमन्त्र से बाधा न करे इतना कह सूतजी बोले कि हे मुनीश्वरो! अब हम अतिगुप्त निग्रह-विधान कहते हैं आततायी अर्थात् जो अपने को मारने के लिये आया हो उस शत्रु के लिये यह विधान करना चाहिये ब्राह्मण के ऊपर कभी यह प्रयोग न करे जब शत्रु अपने को दबालेवे और अधर्मयुद्ध होनेलगे तब राजा इस विधानको करावे तो बहुत शीघ्र शत्रुका निग्रह होजाय परन्तु इस प्रयोग को क्रूरस्वभाव अर्थात् दयाहीन ब्राह्मणद्वारा करावे प्रयोग करनेहारा ब्राह्मण पहिले एकलक्ष जप अघोरमन्त्र का कर तिलोंका दशांश हवन करे और अघोरमन्त्र करके एकलक्ष श्वेत पुष्प भी महादेवजी पर चढ़ावे तब उसको मन्त्रसिद्धि होतीहै और उसका किया विधान भी सफल होताहै बाण लिङ्ग अग्नि अथवा दक्षिणामूर्ति शिवपर लक्षपुष्प अर्पण करे इस प्रकार सिद्धमन्त्र और शिवभक्त ब्राह्मण प्रेतस्थान में अथवा मातृकास्थान में बैठ अपने और राजाके कल्याणके अर्थ इस विधि को करे पूर्वसे ईशान-

पर्यन्त आठों दिशाओं में आठ त्रिशूल गाड़ कर आप भी अतिभयङ्कर वेष धार मध्य में बैठे और सबके नाश करनेहारे अघोर परमेश्वर का ध्यान करे और अपने रूप को भी करोड़ प्रलयाग्निके समान प्रकाशमान ध्यावे और अघोर परमेश्वरकी आठों भुजाओं में त्रिशूल, कपाल, पाश, दण्ड, धनुष, बाण, डमरू और खड्ग का ध्यान करे और यह भी ध्यावे कि जिनका कण्ठ नीलवर्ण दृष्टि अति क्रूर मुख बड़ी बड़ी दंष्ट्राओं से अति भयानक तीन नेत्र हुंफट्कारके शब्द से दशों दिशा भर रही हैं नागपाश करके मुकुट बांध रक्खा है वृश्चिक और सर्पोंके भूषण पहिने हैं नीलाञ्जन के पर्वतके समान जिनका वर्ण चिताकी भस्म शरीर में लपेटे सिंहका चर्म ओढ़े और हाथी का चर्म पहिने हैं भूत, प्रेत, पिशाच और डाकिनियों करके चारोंओर वेष्टितहैं इसभांति अति भयङ्कर अघोर परमेश्वर का ध्यान कर छत्तीस मात्रा करके प्राणायाम करे और महामुद्रा बांध सब कर्म करे प्रेतस्थान में पूर्वादि चारों दिशा और मध्यमें पांच कुण्ड बनाय चिताग्निका स्थापन करे मध्यके कुण्ड में सिद्धमन्त्र आचार्य और दिशाओंके कुण्डों में चार साधक हवन करने बैठें और त्रिशूल चारों ओर गाड़लेवें बत्तीस अक्षरों करके युक्त अघोर परमेश्वर का ध्यान कर विभीतक अर्थात् बहेड़े के काष्ठकी द्वादशांगुल प्रमाण राजाके शत्रुकी मूर्ति बनाय कुण्डके नीचे उस मूर्तिको अति क्रोधसे गाड़ देवे उस मूर्तिका शिर नीचे और पाद ऊपर करे और तुषों सहित चिताकी अग्नि को कुण्डों में स्थापन कर

प्रज्वलित करे और सर्प, कंचुक, तुष, कर्पासके बीज, रक्तवस्त्र और तैलका हवन करे परन्तु तैल अपने हाथसे बनालेवे कोल्हूका निकला न ले कृष्ण चतुर्दशीसे अष्टमी पर्यन्त नित्य अष्टोत्तरशत हवन प्रज्वलित अग्निमें करे इस विधिके करने से राजा के सब शत्रु सकुटुम्ब यम-लोक को जाते हैं इसी मन्त्र से मनुष्यका कपाल लेकर उसमें मनुष्य के नख, केश, अङ्गारसर्पका कंचुक, तुष, पुराने वस्त्र का टुकड़ा, राजमार्गकी धूलि, घरमें झाडूकी धूलि, विषयुक्त सर्पके दांत, वृषके दांत, गौके दांत, व्याघ्र के नख और दन्त, बिडाल और नकुलके दन्त, कृष्ण-मृग के दांत और सूकर की दंष्ट्रा स्थापन कर एकसौ आठ बार अघोरमन्त्र से उस कपाल को अभिमन्त्रण कर मृतक के वस्त्र से वेष्टित करे और जब शत्रुको अष्टम सूर्य अथवा अष्टम चन्द्र आवे तब उस कपाल को शत्रु के देश, नगर, घर, क्षेत्र अथवा श्मशान में गड़वा देवे तो उस स्थान और परिवार सहित शत्रुका नाश होजाय राजा जिस समय युद्धमें जाने लगे उस समय आचार्य राजा के शत्रुकी मूर्तिको अति उत्तम भूमिपर लिख वितान, तोरण, दर्भ, माला आदि से उस स्थानको शोभित करे पीछे अघोरमन्त्र पढ़ अपने दहिने चरणसे शत्रुकी प्रतिमा के मस्तकमें क्रोधसे ताड़न करे इस विधिके करने से राजा के शत्रुका नाश होताहै परन्तु जो दुर्बुद्धि ब्राह्मण क्रोधसे अपने देशके राजापर यह अभिचार कर्म करे वह अपना और कुटुम्बका नाश करताहै इस कारण मन्त्र औषध आदिसे अपने देशके राजाकी भलीभांति रक्षा

करे सूतजी कहतेहैं कि हे मुनीश्वरो ! यह परमरहस्य हमने आप से कथन कियाहै इसको अतिगुप्त रखना चाहिये ॥

इक्यावनवां अध्याय ॥

शौनक आदि ऋषि पूछते हैं कि हे सूतजी ! अघोरमन्त्र करके निग्रह विधान तो आपने कहा अब वज्रवाहनिका विद्या वर्णन कीजिये यह मुनियोंका प्रश्न सुन सूतजी बोले कि हे मुनीश्वरो ! सब शत्रुओंके क्षय करनेहारी वज्रवाहनिका विद्याकी विधि यह है कि उस विद्या करके वज्र अर्थात् हीरेका अभिषेक करे और उस वज्रको सुवर्ण में जड़ राजा को धारण करावे और उस विद्याका वर्ण लक्ष जपकर वज्राकार कुण्डमें घृत करके दशांश हवन करे राजा भी उस वज्रको धारण कर युद्ध में जाय तो अवश्यही शत्रुओं का संहार करे पूर्वकाल में शिवजीसे इन्द्रके उपकारके लिये ब्रह्माजीने यह वज्रेश्वरी विद्या पाई जब त्वष्टाके पुत्र विश्वरूपको इन्द्रने मारदिया तब त्वष्टाने अपने यज्ञमें इन्द्रको न बुलाया और कहा कि इन्द्रने मेरे पुत्रको मारा है इस कारण अपने यज्ञ में इन्द्र को सोमपान न करने दूंगा इतना कह अपने सम्पूर्ण आश्रमको माया से गुप्त करलिया तब इन्द्रने उस मायाका संहार कर यज्ञमें आय बलात्कारसे सोमपान करलिया और अपने गणों सहित स्वर्ग को चलागया त्वष्टाभी इन्द्रका साहस देख अति क्रोध कर जो थोड़ासा सोम शेष रहगया उसको लेकर (इन्द्रस्य शत्रो वर्धस्व स्वाहा) अर्थात् हे इन्द्रके शत्रु ! तू

वृद्धि को प्राप्तहो इस मन्त्र से अग्नि में हवन करता भया हवन करतेही अग्निकुण्ड से कालाग्नि के समान एक पुरुष उत्पन्न भया जिसका नाम वृत्र था वह उत्पन्न होते ही इन्द्र के पीछे दौड़ा इन्द्र भी अतिभयङ्कर उस पुरुष को देख अति भयभीत हो स्वर्ग छोड़ भगे और सब देवताओंको संगले ब्रह्माजी के समीप पहुँचे ब्रह्माजीने भी उनको अतिव्याकुल देख कहा कि हे इन्द्र! तुम्हारे वज्र से वृत्र का संहार नहीं होगा इस कारण हम वज्रेश्वरी विद्याका तुमको उपदेश करते हैं इतना कह ब्रह्मजी ने इन्द्रको वज्रेश्वरी विद्याका उपदेश किया इन्द्र ने भी उस विद्या के प्रभावसे शत्रुको मार फिर स्वर्गका राज्य पाया और मंदेहनाम राक्षस इसी विद्याके बलसे जीते हे मुनीश्वरो! वह विद्या यह है "ॐभूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गोदेवस्य धीमहि धियो योनः प्रचोदयात् ॐफट् जहि हुं फट् छिंधि भिंधि जहि हनहन स्वाहा" यह वज्रेश्वरी विद्या सब शत्रुओंका संहार करनेहारी है शिवजी भी इसी विद्या से प्रलय के समय सब जगत् का संहार करते हैं॥

बावनवां अध्याय॥

शौनकआदि ऋषि पूछते हैं कि हे सूतजी! इन्द्र के ऊपर परम उपकार करनेहारी वज्रेश्वरी विद्या आपके मुखसे श्रवण की हमने यह सुनाहै कि राजाओंके सब कार्य इस विद्यासे सिद्ध होते हैं इस कारण आप इस विद्याका विनियोग कहें यह मुनियोंका वचन श्रवण कर सूतजी बोले कि हे मुनीश्वरो! वशीकरण, आकर्षण,

विद्वेषण, उच्चाटन, स्तंभन, मोहन, ताड़न, उत्सादन, छेदन, मारण, प्रतिबंधन, सेनास्तंभनआदि सब कर्म इस विद्यासे सिद्ध होते हैं॥ आयातु वरदा देवी भूम्यां पर्वतमूर्द्धनि॥ यह आवाहन का मन्त्र है॥ ब्राह्मणेभ्यो ह्यनुज्ञाता गच्छ देवि यथासुखम्॥ यह विसर्जन का मन्त्र है वश्यआदि क्रिया करके इस मन्त्र से देवी का विसर्जन करे पुरश्चरण के समय प्रतिदिन आवाहन कर पूजा और जप करे तथा विधि से अग्नि स्थापन कर प्रतिदिन हवन करे और पीछे देवीका विसर्जन करे इस विधि से वज्रेश्वरी विद्या करके सब कार्य साधे चमेली के पुष्पों की तीस हज़ार आहुति देने से वशीकरण घृतयुक्त करवीर पुष्पों के हवन से आकर्षण लाङ्गली अर्थात् कलिहारी के पुष्पों के हवन से विद्वेषण तैलके हवनसे उच्चाटन शहद के अथवा सर्षपके हवन से स्तम्भन तिलों के हवन से मोहन गर्दभ हाथी और उष्ट्रके रुधिर के हवन से ताड़न रोहीतक अर्थात् रुहीड़ा वृक्षके बीजों के हवन से मारण और उच्चाटन, नागरवेलके पत्तों के हवन से बंधन और कस्तूरी के हवन से निश्चय ही सेना का स्तम्भन होता है घृतके हवन से सब सिद्धि दुग्ध के हवनसे पाप का नाश तिलके हवनसे रोगनाश कमलपुष्पों के हवन से धनप्राप्ति और मधूक अर्थात् महुवे के पुष्पों के हवनसे उत्तम कान्ति होती है इन सब प्रयोगों में तीस तीस हज़ार हवन करे पूर्वोक्त रीति से जयादि स्विष्टपर्यन्त हवन करे हे मुनीश्वरो! यह संक्षेप से हमने इस मन्त्र का विनियोग वर्णन किया है हवन करने में

समर्थ न हो तो पूजन कर केवल विद्या का जप करे तोभी सब कार्य सिद्ध होते हैं इसमें कुछ सन्देह नहीं है॥

तिरपनवां अध्याय॥

शौनकआदि ऋषि पूछते हैं कि हे सूतजी! ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और हमारे हितके लिये आप मृत्युञ्जय का विधान वर्णन करें यह सुन सूतजी कहते भये कि हे मुनीश्वरो! मृत्युञ्जयका विधान यही है कि मृत्युञ्जय-मन्त्र करके अथवा केवल रुद्राध्याय करके विधिपूर्वक घृत, तिल, कमलपुष्प, दूर्वा, गोदुग्ध, शहद, घृतयुक्त, चरु अथवा केवल गोदुग्धका ही हवन करे तो अवश्य ही मृत्यु को जीते॥

चौवनवां अध्याय॥

सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो! त्र्यम्बकमन्त्र करके स्वयंभूलिङ्ग अथवा बाणलिङ्ग का पूजन आयुष्की वृद्धिके उपाय जाननेहारे ब्राह्मणद्वारा करावे एक हजार आठ पुण्डरीक अर्थात् श्वेतकमल एक हज़ार कमल और इतने ही नीलोत्पल शिवजीपर चढ़ाय पायस घृत सहित भात मधुसहित मुद्गान्न और अति सुगन्धयुक्त भांति भांति के भक्ष्य शिवजी को नैवेद्य लगावे और पहिली रीति से पुण्डरीक आदि पुष्प और चरु करके अग्नि में हवन करे और नियमपूर्वक एक लक्ष जप करके हज़ार ब्राह्मणों को भोजन करावे और दक्षिणा देवे पीछे एक हज़ार गोदान कर सुवर्णदान भी करे यह विधान

मेरु पर्वत के ऊपर शिवजी ने स्कन्दसे कहा स्कन्द ने सनत्कुमारसे और सनत्कुमार ने व्यासजी को बताया इस भांति परम्परा क्रमसे यह विधि चली आई है जब शिवजी का दर्शन पाय शुकदेव परमधामको गये उस समय स्कन्दका सम्भव सुनकर स्थित हुये व्यासजीसे त्र्यम्बकमन्त्र का माहात्म्य सनत्कुमारजी ने कहा वह हम आपको श्रवण कराते हैं शिवपूजन कर त्र्यम्बक-मन्त्रका जप करे तो सात जन्मों के पापों से मुक्त होता है और संग्राम में जय पाय परम सौभाग्य को प्राप्त होता है एक लक्ष हवन से राज्य मिलता है और लक्ष हवन से ही पुत्रप्राप्ति होती है धनकी कामनावाला पुरुष दश लक्ष जप करे तो धन धान्य आदिसे परिपूर्ण हो चिर-काल भूमिपर आनन्द करता है और मृत्यु के अनन्तर स्वर्ग में वास पाता है इस मन्त्रके समान शास्त्र अथवा वेदमें कोई मन्त्र नहीं है इस कारण शिवपूजन कर सदा इस मन्त्रका जप करे तो अग्निष्टोमयज्ञ के फलसे आठ-गुणा अधिक फल पावे तीन लोक तीन गुण तीन वेद तीन देव ब्राह्मण आदि तीन वर्ण अकार उकार मकाररूप प्रणवकी तीन मात्रा सूर्य चन्द्र अग्नि ये तीन तेज और गार्हपत्य आदि तीन अग्नि इन सबकी माता पार्वती और त्र्यम्बक अर्थात् पिता सदाशिव हैं इस कारण उनको त्र्यम्बक कहते हैं फूलेहुये वृक्षकी सुगन्धि जिस भांति दूरतक पहुँचती है इसी भांति उस महात्मा सदाशिवकी सुगन्धि भी जगत् में व्याप्त होरही है इस कारण वह सुगन्धि कहाता है अथवा गकार गीत का वाचक

है जो सुन्दर गीत को आप धारण करे और देवताओं को भी धारण करावे वह भी सुगन्धि कहाता है अथवा शिवका सुगन्धि अर्थात् वायु आकाश में तथा इस लोक में बहता है इस कारण से भी शिवको सुगन्धि कहते हैं जिस शिवका वीर्य विष्णुरूप योनि में स्थित होकर ब्रह्माण्डरूपसे उत्पन्न होता भया और सूर्य, चन्द्र, नक्षत्र, भू आदि सात लोकपर्यन्त जिसके वीर्य की पुष्टि है और पञ्चमहाभूत अहंकार बुद्धि प्रकृति आदि सब उसके बीजकी पुष्टि हैं इस कारण उसको पुष्टिवर्धन कहते हैं उस पुष्टिवर्धन देवका घृत, दुग्ध, शहद, यव, गोधूम, उड़द, बिल्वफल, कुमुद, आक के फूल, शमीपत्र, श्वेत सर्षप और शालि आदि करके शिवलिङ्ग में भक्तिपूर्वक यजन करे और उसकी प्रीति के लिये अग्नि में हवन करे हे शिव! इस ऋत अर्थात् सत्य करके मुझको पाश से कर्मरूप बन्धन से और मृत्युके बन्धनसे अपने तेज करकेमुक्त करदे जिसभांति पका हुआ उर्वारुकफल अर्थात् ककड़ी बन्धनसे मुक्त होजाती है इसी भांति मुझको बन्धन से मुक्त कर इस प्रकार जो मन्त्र के अर्थको जान शिवलिङ्ग का पूजन कर जप करे वह मृत्युपाश से मुक्त होजाय त्र्यम्बकदेवके समान दयालु और शीघ्रही प्रसन्न होनेहारा कोई देवता नहीं है इस कारण सबको छोड़ त्र्यम्बकमन्त्र से सदा त्र्यम्बकदेव का पूजन करता रहे शिवका ध्यान करनेहारा पुरुष किसी अवस्था में प्राप्त हो परन्तु वह सब पापोंसे मुक्त रहता है और साक्षात् रुद्र ही है अनेक जीवों को मार कई प्राणियों का छेदन

भेदनकर अभक्ष्य भक्षण करके जो पुरुष एकबार भी शिव स्मरण करे वह सब पापों से छूटजाता है॥

पच्चपनवां अध्याय॥

शौनक आदि ऋषि पूछते हैं कि हे सूतजी! त्र्यम्बक देवको सब अर्थोंकी सिद्धि के लिये योगमार्ग करके किस विधि से ध्यावे यह आप वर्णन करें यद्यपि आप विस्तार से प्रथम वर्णन करचुके हैं परन्तु दृढ़ता के लिये फिर भी संक्षेपसे वर्णनकरें यह मुनियों का प्रश्न सुन सूतजी कहते भये कि हे मुनीश्वरो! यही प्रश्न मेरु पर्वत के ऊपर सनत्कुमारजी ने नन्दिकेश्वर से किया था तब नन्दिकेश्वर जीने जो उत्तर दिया वह हम आप से कहते हैं सनत्कुमारजी का प्रश्न सुन नन्दी कहनेलगे कि ब्रह्मपुत्र एक समय जगज्जननी श्रीपार्वतीजीने श्रीमहादेवजी से पूछा कि महाराज! योग कितने प्रकार का है और क्या है तथा मोक्ष को देनेहारा ज्ञान क्या पदार्थ है यह आप वर्णन करें यह पार्वतीजी का प्रश्न सुन श्रीमहादेवजी बोले कि हे प्रिये! पहिला मन्त्रयोग है दूसरा स्पर्शयोग तीसरा भावयोग चौथा अभावयोग और पांचवां सब योगों में उत्तम महायोग है ध्यानयुक्त जप का अभ्यास मन्त्रयोग कहाता है सुषुम्णानाड़ी को अधिक शुद्ध करनेहारा रेचक आदि क्रम करके युक्त समस्त व्यस्त योग करके वायु का जय करनेहारा बलकी स्थिरक्रिया करके युक्त सात्त्विक आदि तीनि धारणा करके संदीप्त, विश्व, प्राज्ञ और तैजस इन तीन भेदों का शोधन करनेहारा

कुम्भक का अभ्यास स्पर्शयोग कहाता है मन्त्रयोग और स्पर्शयोग को त्याग केवल महादेव के शरण में प्राप्त हो बाहर भीतर विलास करतेहुये मनका संहार करे यह भावयोग है इससे चित्तशुद्धि होती है सब स्थावर जङ्गम जगत् को लीन हुआ ध्यान करे और शून्य तथा निराभासस्वरूप का चिन्तन करे यह चित्त के निर्वाण अर्थात् लय करनेहारा अभावयोग है निरूप केवल शुद्ध, स्वच्छन्द, शोभन, अनिर्देश्य सदा प्रकाश-मान, सर्वव्यापी और स्वयंवेद्य अर्थात् आपही जानने योग्य जिस योग में स्वभाव भासित हो वह महायोग कहाता है क्योंकि नित्योदित, स्वयंज्योति, सब चित्तों के उत्पत्तिस्थान निर्मल और केवल आत्माको महायोग कहते हैं ये पांचों योग अणिमा आदि सिद्धि और ज्ञान को देनेहारे हैं और उत्तरोत्तर उत्तम हैं अहं संग करके रहित आकाश की भांति सर्वत्र व्याप्त सब आवरणों से रहित आत्मा को जानना यही ज्ञान है जो अहंकार से रहित आत्मा में मग्न और आनन्दस्वरूप हो वह इस ज्ञान को पाता है हे पार्वति ! यह हमारा उपदेश किया हुआ ज्ञान परीक्षित शिष्य, अग्निहोत्री ब्राह्मण, धर्मात्मा, कृतज्ञ और देवता तथा गुरु के भक्त को देना चाहिये जो विना परीक्षा किये इस ज्ञान का उपदेश करे और जिसको करे वे दोनों निन्दित रोगी और अल्पायुष् होजाते हैं इसकारण भली भांति परीक्षाकर इस ज्ञानको देवे सब संगों से रहित हमारा भक्त श्रौत स्मार्त कर्म तत्पर गुरुभक्त और पुण्यात्मा योग का अधिकारी होता

है इतना कथनकर शिवजी ने कहा कि हे पार्वति ! सब वेदों का सार यह योग का प्रकार हमने आपको उपदेश किया है इस योगरूप अमृत के पान करने से योगी मुक्त होता है यह पाशुपतयोग सब आश्रम धर्मों से अधिक उत्तम और मुक्ति को देनेहारा है इस कारण शिव-भक्तों को अवश्य इसका सेवन करना चाहिये इतना पार्वतीजी के प्रति उपदेशकर द्वारपर शंकुकर्णनाम गण को बैठाय शिवजी अपने आत्मा का ध्यान करनेलगे नन्दी कहते हैं कि हे सनत्कुमार ! इस रीति से तुमभी योगाभ्यास में प्रवृत्त होजावो प्रथम मोक्षकी इच्छावाला पुरुष भस्मस्नान कर पाशुपतयोग में रत हो ब्रह्ममूर्ति का ध्यान करे पीछे विष्णुमूर्ति को ध्यावे और सबके पीछे माहेश्वरी मूर्ति का ध्यान करे यह योग का रहस्य हमने संक्षेप से वर्णन किया है सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो ! यह पाशुपतयोग नन्दी ने सनत्कुमार को उपदेश किया सनत्कुमार ने व्यासजीको और व्यासजी ने हमको बताया हमने आपके आगे वर्णन किया शिवजी को शान्तस्वरूप वेदव्यासजी को यज्ञों को और ब्राह्मणों को हम वारंवार नमस्कार करते हैं यह ग्यारह हजार श्लोकों करके हमने लिङ्गपुराण वर्णन किया इसके पूर्वार्ध में एकसौ आठ और उत्तरार्ध में पचपन अध्याय हैं इस पुराण को पूर्वकाल में ब्रह्माजी ने रचा और यह कहा कि इस लिङ्गपुराण को जो पुरुष आदिसे अन्ततक पढ़े व श्रवण करे अथवा ब्राह्मणों को सुनावे वह परमगति को प्राप्त हो तप, यज्ञ, दान, अध्ययन, कर्म, विद्या

आदि से जो फल प्राप्तहोता है वही इस पुराण के सुनने और सुनानेसे होता है और मोक्षकी प्राप्ति होती है और हमारे में तथा नारायण में दृढ़ भक्ति होती है और उस पुरुष के वंश में कोई विद्याहीन अथवा प्रमादी नहीं उत्पन्न होता है यह ब्रह्माजीने अपने मुखसे कहा है यह सूतजी का वचन सुन प्रीतिसे रोमाञ्चित हो सब नैमिषारण्य के वासी मुनि शिवजी को प्रणामकर कहते भये कि हे सूतजी ! इसपुराण के श्रवण से जो आनन्द हमको और तीर्थयात्रा में प्रवृत्त नारदमुनिको भया है वही आनन्द शिवजी की कृपासे सम्पूर्ण जगत् में हो इस भांति सब मुनियों का वचन सुन नारदजीने प्रेमसे अपने हाथों करके सूतजी को स्पर्श किया और आशीर्वाद दिया कि हे सूत ! सदा सर्वदा शिव में तुम्हारी दृढ़ श्रद्धा बनी रहे और तुम्हारा कल्याण हो इतना कह नारदजी ने कहा कि हे शिव ! आपको हम वारंवार प्रणामकर आपके चरणों में दृढ़ भक्ति मांगते हैं और यह भी चाहते हैं कि आपके प्रसादसे सब जगत् में निरन्तर मंगल होते रहें ॥

इति श्रीलिङ्गपुराण भाषा समाप्त ॥

अनुवादक की प्रार्थना ॥

दो० भाषा माहिं विचारिकै, तजि मनको परमाद ।
रची रुचिर यह शिवकथा, बुध दुर्गापरसाद १
हरनेहारी श्रवण ते, भक्तन के भवफन्द ।
बनीरहै यह भूमिपर, जबलों सूरज चन्द २
नवलकिशोर नियोगसे, भाषा लिङ्गपुरान ।
भयो विशद जग धर्महित, देखैं सन्त सुजान ३